डॉ० रामस्वरूप आर्य स्मृति ग्रन्थ

सम्पादक : डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य

डॉ. राम स्वरूप आर्य स्मृति ग्रंथ

प्रथम पुण्यतिथि पर प्रकाशित

संपादक

डॉ.चन्द्र प्रकाश आर्य
एम.ए., पी-एच.डी.
अध्यक्ष, हिन्दी -विभाग
वर्धमान कॉलेज, बिजनौर (उ.प्र.)

डॉ. सन्तोष कुमारी
रवि प्रकाश आर्य

प्रकाशक
हरि गंगा प्रकाशन, गणपति भवन, सिविल लाइन्स
बिजनौर 246701(उ०प्र०) भारत

साज सज्जा- श्री महेश चन्द्र शर्मा
ऋषभ कम्प्यूटर, शक्ति चौक
नई बस्ती, बिजनौर (उ०प्र०)
मो. 9760906492

प्रथम संस्करण : 2018 ई०
मूल्य : 1500 रु. (पन्द्रह सौ रूपये मात्र)

मुद्रक
यश प्रिन्टिंग प्रेस
बुखारा चुंगी, विदुर कुटी रोड, बिजनौर (ऊप्र०)
मो. 9027166578

पुस्तक प्राप्ति-स्थान

डॉ. सन्तोष कुमारी
377, बी-14, नई बस्ती, बिजनौर 246701(उ०प्र०)
मो. 8445324618

रवि प्रकाश आर्य
377, बी-14, नई बस्ती, बिजनौर 246701(उ०प्र०)
मो. 8791402687

राज बुक डिपो
29, सुभाष मार्केट, बरेली(उ०प्र०)

शिक्षा प्रकाशन गृह
बड़ा बाजार, बरेली (उ०प्र०)

डॉ० रामस्वरूप आर्य स्मृति ग्रंथ समिति

मुख्य संरक्षक

माननीय संतोष कुमार गंगवार

श्रम एवं रोजगार राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार), भारत सरकार

संरक्षक

कुंवर भारतेन्द्र सिंह

संसद सदस्य, लोकसभा, बिजनौर (उ.प्र.)

श्रीमती सुचि चौधरी
सदर विधायक, बिजनौर

श्रीमती कमलेश सैनी
विधायक, चांदपुर (बिजनौर)

परामर्शदाता

1. श्री राजेन्द्र चौधरी एड०, बिजनौर
2. श्री हितेश कुमार शर्मा, बिजनौर
3. श्रीमती सौभाग्य गंगवार, बरेली
4. श्रीमती हरप्यारी देवी, बिजनौर
5. श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, बिजनौर
6. श्री योगीन्द्र द्विवेदी, लखनऊ
7. श्री अशोक मधुप, बिजनौर
8. डॉ0 बुद्धि प्रकाश शर्मा, बिजनौर
9. श्री चैतन्य स्वरूप गुप्ता, बिजनौर
10. श्री शिव बिहारी लाल भटनागर, बिजनौर
11. डॉ0 अशोक चौधरी, बिजनौर
12. डा. अजय जनमेजय, बिजनौर
13. श्री वी.पी. गुप्ता, बिजनौर
14. श्री के.एल. वार्ष्णेय, बरेली
15. डॉ. दिग्विजय चौधरी, बिजनौर
16. डॉ0 सूर्यमणि रघुवंशी, बिजनौर

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के स्वर्गवास के लगभग एक माह के अनन्तर एक दिन अचानक लखनऊ से डॉ० कौशलेन्द्र पाण्डेय जी का फोन आया और उन्होंने पिताजी से बात करने की इच्छा व्यक्त की। तब तक उन्हें पिताजी के स्वर्गवास की सूचना नहीं मिली थी। जब मैंने उनको पिताजी के स्वर्गवास की सूचना दी, तब वे बहुत दुखी हुए और उन्होंने हमें सान्त्वना दी। उन्होंने यह भी कहा कि डॉ. आर्य जी की स्मृति में ऐसा कुछ होना चाहिए जिससे उनके आत्मीयजनों को उनका स्मरण होता रहे। पत्रकारिता की अर्धशती पार कर रहे वरिष्ठ पत्रकार अग्रज बंधु श्री चन्द्रमणि रघुवंशी जी ने मुझसे पिताजी की स्मृति में दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' का परिशिष्ट प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की। दोनों आत्मीयजनों से बातचीत के उपरांत पिताजी की स्मृति में एक ग्रंथ के प्रकाशन की योजना बनी। इसके पश्चात् श्री चैतन्य स्वरूप गुप्ता, श्री शिव बिहारी लाल भटनागर, श्री हितेश कुमार शर्मा, डॉ० बुद्धि प्रकाश शर्मा, श्री अशोक मधुप, श्री जयनारायण 'अरुण', श्री वी.पी. गुप्ता आदि ने मुझे स्मृति ग्रंथ के प्रकाशन के लिए प्रोत्साहित किया। इसके अन्तर्गत मुझे प्रथम लेख डॉ० कौशलेन्द्र पाण्डेय जी का प्राप्त हुआ। हम उन सभी आत्मीयजनों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करते हैं, जिनका लेखकीय सहयोग और परामर्श हमें प्राप्त हुआ है। समयाभाव के कारण इस ग्रंथ में त्रुटियाँ रह सकती हैं , जिनके लिए हम क्षमाप्रार्थी हैं।

स्वतंत्रता दिवस **संपादक**

15 अगस्त, 2017 ई०

माता वीणापाणि के प्रति

डॉ० चन्द्र प्रकाश आर्य

पुत्र जब आंगन में किलकारियाँ भरेगा,
तो माता उसे दौड़कर गोद में लेगी ही।
सुत मुख से निकलेंगे अटपटे बोल भी,
तो पिता का हृदय उल्लास से भरेगा ही।
गो वत्स जब भूख से व्याकुल हो रँभायेगा,
गाय के थनों से धारोष्ण दूध गिरेगा ही।
माता वीणापणि से करेंगे नित्य याचना,
तो वाग्देवी से विद्या का वरदान मिलेगा ही।

पंकज प्रभा को देख पंखुड़ी खिलती है तो,
उषा स्वर्णिम प्रभात प्रदान करेगी ही।
आलस्य छोड़ मातृ-ध्यान में लीन है यदि
भक्त की मनोकामना फलीभूत होगी ही।
ज्ञान विज्ञान असीमित भाव और कल्पना,
वागीश्वरी की कृपा से दान में मिलेगी ही।
वाग्देवी का पुत्र हूँ, अनुग्रह का पात्र हूँ,
तो वे मुझे सफलता का वरदान देंगी ही।

अन्तिम संभाषण, धरोहर स्मृति न्यास समारोह, नवम्बर 2015 ई०

जीवन में हमने तुमसे ही पहचान पाई,
सौ जन्म नहीं चुकेगा तुम्हारा कर्ज पिता।

रवि प्रकाश आर्य

समर्पण

डॉ० चन्द्रप्रकाश आर्य

पिता आज तुमको गये बीत गया एक वर्ष,
नवरात्रि के पर्व में तुम चले गये सहर्ष।
बचपन में तुमसे सुने थे रामकथा के छंद,
जिनमें से याद रहे अब केवल ये बंध।

''नृप दशरथ की गोदी राम। कौशल्या के भरत ललाम।।
गोद सुमित्रा लक्ष्मण नाम। शत्रुघ्न कैकेयी अभिराम।।''

हम सबके लिए तुम संघर्षरत रहे आजन्म,
और हमें समझा गये जीवन-मरण का मर्म।
रोग तुम्हें ऐसा लगा हम कर न सके उपाय,
कैंसर के समक्ष सब उपाय हुए निरुपाय।

रामचरित पढ़ते रहे तुम आजन्म निष्काम,
अंत समय निकला मुख से श्रीराम का नाम।
लौटकर आते नहीं, तुम चले गये उस पंथ,
श्रद्धा सहित समर्पित है तुम्हें यह स्मृति ग्रंथ।

संतोष कुमार गंगवार
SANTOSH KUMAR GANGWAR

वित्त राज्य मंत्री
भारत सरकार
नई दिल्ली - 110 001
Minister of State for Finance
Government of India
New Delhi - 110 001

अगस्त 27, 2017

शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि सुप्रसिद्ध समीक्षक तथा साहित्य मनीषी स्व. डॉ. रामस्वरूप आर्य की प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर उनकी पुण्य तिथि स्मृति में एक ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है। सरल, निश्छल हृदय डॉ. आर्य ज्ञान के पुंज थे। मुझे विश्वास है कि यह स्मृति ग्रंथ शोधार्थियों और विद्वानों के लिए प्रेरणा-स्रोत का कार्य करेगा।

इस अवसर पर मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

(संतोष कुमार गंगवार)

श्री चन्द्र प्रकाश आर्य,
377, बी-14, नई बस्ती,
बिजनौर (उ. प्र.)

138. नॉर्थ ब्लाक, नई दिल्ली-110001 दूरभाष : 23093783, 23092377, 23094108 फैक्स . 23092680
138, North Block, New Delhi-110001 Phone : 23093783, 23092377, 23094108 Fax : 23092680
बरेली कैम्प ऑफिस : टेलिफैक्स - 0581-2577777, 2545555
Bareilly Camp Office : Telefax - 0581-2577777, 2545555

VIKAS SAXENA (STENO)

कुँवर भारतेन्द्र सिंह
संसद सदस्य, लोकसभा
बिजनौर (उ.प्र.)

31 अगस्त, 2017

शुभकामना संदेश

"उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्नि बोधत" के प्रेरणाप्रद संदेश को अपने जीवन का मूल मंत्र मानने वाले साहित्य महोपाध्याय स्व. डॉ० रामस्वरूप आर्य का सम्पूर्ण जीवन अध्ययन, शोध तथा हिन्दी-सेवा की त्रिवेणी रहा। उनकी प्रथम पुण्यतिथि पर एक स्मृति ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है, यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है। मुझे विश्वास है कि यह ग्रंथ विद्वानों में समादृत होगा।

इस अवसर पर मैं हार्दिक शुभकामनाएँ प्रदान करता हूँ।

(कुँवर भारतेन्द्र सिंह)

श्रीमती सुचि चौधरी
सदर विधायक, बिजनौर

02 सितम्बर, 2017

शुभकामना संदेश

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में कई दशक तक अध्यापन करने वाले स्व. डॉ० रामस्वरूप आर्य हिन्दी साहित्य-जगत् के उज्ज्वल नक्षत्र थे। वे अध्ययनशील अध्यापक, उत्कृष्ट शोध निर्देशक और श्रेष्ठ चिंतक थे। डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के विषय में मेरे ससुर श्री राजेन्द्र कुमार एडवोकेट बताते रहते हैं कि वे वर्धमान कालेज में उनके शिष्य भी रहे हैं। उनकी जीवन शैली के विषय में उन्होंने मुझे सबकुछ अवगत कराया है।

ऐसे मनीषी विद्वान की स्मृति में ग्रंथ का प्रकाशन साहित्योपयोगी कार्य है। ग्रंथ के प्रकाशन हेतु मैं अपनी शुभकामनाएँ प्रदान करती हूँ।

(सुचि चौधरी)
(श्रीमती सुचि चौधरी)
सदर विधायक
22, विधान सभा, बिजनौर, उ०प्र०

श्रीमती कमलेश सैनी

विधायक, चांदपुर 4 सितम्बर, 2017

शुभकामना संदेश

अपने कर्मठ जीवन के बल पर साहित्य-जगत् में अमिट छाप छोड़ने वाले मनस्वी स्व. डॉ० रामस्वरूप आर्य का व्यक्तित्व प्रेरणा का अजस्र स्रोत रहा है। सज्जनता तथा उदारता के प्रतिरूप डॉ० आर्य आजीवन अपने कर्त्तव्य में तल्लीन रहकर हिन्दी-सेवा करते रहे। उनकी स्मृति में ग्रंथ का प्रकाशन हर्ष का विषय है। मैं इसके लिए अपनी शुभकामना प्रेषित करती हूँ।

(कमलेश सैनी)

कमलेश सैनी
विधायक
23. चान्दपुर

डॉ. राम स्वरूप आर्य

जीवन वृत्त एवं कृतित्व

सम्पादक

बरेली में जन्मे बिजनौर निवासी डॉ. रामस्वरूप आर्य हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान, समीक्षक तथा भाषाविद् थे। आपने दीर्घ अवधि तक हिन्दी की सेवा की है जो अन्त तक निर्बाध चलती रही। उच्च शिक्षा में अध्यापन से सेवानिवृत्त डॉ. आर्य जी वास्तव में सच्चे हिन्दी सेवी थे। आपका इस क्षेत्र में बहुविध कार्य है। भाषा विज्ञान पर आपकी गहन पकड़ थी, जिस पर आपकी लगभग एक दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हैं। डॉ. आर्य के विस्तृत व्यक्तित्व एवं कृतित्व को निम्न प्रकार परखा जा सकता है।

जन्मस्थान	:	बरेली, उ.प्र.
पिता का नाम	:	लाला बांके लाल
माता का नाम	:	देवकी देवी
भाई	:	श्री रतन लाल
बहिनें	:	श्रीमती राजरानी तथा श्रीमती सावित्री
पत्नी	:	श्रीमती हरप्यारी देवी
संतान	:	चन्द्र प्रकाश आर्य, संतोष कुमारी तथा रवि प्रकाश आर्य
शिक्षा	:	एम.ए. (हिन्दी-संस्कृत), पी-एच.डी,
अध्यापन	:	प्रवक्ता हिन्दी विभाग, बरेली कॉलेज, बरेली सेवानिवृत्त अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर।

व्यक्तित्व- आप सत्यवादी, निश्छल और सरल हृदय व्यक्तित्व थे। आपका सौम्य स्वभाव आपको सबसे अलग करता था। आप में किसी प्रकार का घमंड या अहं भाव नहीं था। आपसे कोई भी किसी भी समय मिल सकता था। आप सबके लिए सदैव सहयोग की भावना रखते हुए निस्वार्थ सहयोग के लिए तत्पर रहते थे। आप अंतिम समय तक अध्ययनशील एवं रचनात्मक कार्य में रत रहे। आपके घर का वातावरण पूर्णत: साहित्यिक है। आपका परिवार साहित्यिक सेवा में संलग्न रहता है, ये आपके संस्कारों का ही प्रतिफल है।

डॉ. आर्य जी की चित्रकला में भी अभिरुचि थी। उनके द्वारा बनाये हुए अनेक सादे तथा रंगीन चित्र इसके प्रमाण हैं। उन्होंने जगन्नाथदास 'रत्नाकर' रचित

'उद्धवशतक' के कवित्तों को अपने हस्तलेख में लिखकर गोपियों की विभिन्न मनः स्थितियों के अनेक आकर्षक चित्र बनाये थे, जो दीमकों की भेंट चढ़ गए।

कृतित्व- डॉ. राम स्वरूप आर्य ने अनेक मौलिक एवं समीक्षात्मक ग्रंथों की रचना की। आपकी भाषा विज्ञान पर लिखित पुस्तकों का अध्ययन हिन्दी साहित्य एवं भाषा विज्ञान के छात्रों अथवा रचनाकारों के लिए अत्यंत उपयोगी है। आपके विस्तृत कृतित्व का निम्नलिखित रूप से अवलोकन किया जा सकता है-

1. भाषा ज्ञान एवं रचना भाग-1
2. भाषा ज्ञान एवं रचना भाग-2
3. राज हिन्दी-भाषा प्रकाश भाग-1
4. राज हिन्दी -भाषा प्रकाश भाग-2
5. भाषा-आलोक भाग-1
6. भाषा-आलोक भाग-2
7. साहित्यिक निबंध
8. सूरदासः एक विश्लेषण
9. भ्रमरगीत सार (सटीक), आगरा तथा रुहेलखंड वि.वि. के एम.ए. पाठ्यक्रम में निर्धारित
10. संक्षिप्त रामचंद्रिका (सटीक) रुहेलखंड विश्व०वि० के एम.ए. पाठ्यक्रम में निर्धारित
11. बिहारी-सतसई सुधा, रुहेलखंड वि.वि. के एम.ए. पाठ्यक्रम में निर्धारित
12. बिहारी-सतसई सार
13. प्रेमचंद विश्वकोश, पत्र खंड
14. गांठःसमीक्षात्मक अध्ययन
15. मैला आंचलः समीक्षात्मक अध्ययन
16. ध्रुवस्वामिनीः समीक्षात्मक अध्ययन
17. यशोधराः एक अध्ययन
18. कुरुक्षेत्रः एक अध्ययन
19. कालजयीः एक अध्ययन
20. विचार-बिन्दु-इस पुस्तक में विभिन्न विचारों से संश्लिष्ट अतुकांत कविताएँ हैं। पुस्तक 1995 ई० में प्रकाशित हुई तथा इसका कोई मूल्य नहीं रखा गया था।
21. परंपरा और आधुनिकता -1997 ई० में प्रकाशित निबंध-संग्रह तथा उ०प्र० हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा निबंध विधा के अंतर्गत पुरस्कृत।
22. प्रयोजनमूलक हिंदी
23. हिन्दी भाषा का विकास
24. हिंदी भाषा एवं साहित्य कां इतिहास
25. चिंतन-अनुचिंतन, 2015 ई०, निंबध- संग्रह

संपादन-

1. तुलसी-मानस संदर्भ
2. सूर-साहित्य-संदर्भ
3. पद्मसिंह शर्मा स्मृति ग्रंथ
4. संबोधि (तंत्र शास्त्र)
5. रत्नावली (सूक्ति कोश)
6. बिजनौर टाइम्सः पं० पद्मसिंह शर्मा अंक
7. बिजनौर टाइम्सः पं० रुद्रदत्त शर्मा अंक
8. अंतर्ज्वालाः गणतंत्र अंक

9. वर्धमान, 1960–1980 ई० 10. बिजनौर वार्षिकी, 1995 ई०
11. 'स्मारिका,' हिन्दी विकास संस्थान, सहारनपुर, 1995–1997 ई०

विभिन्न उपलब्धियाँ

200 से अधिक आलेख, शोध पत्र, समीक्षाएँ, कविताएँ आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। लगभग 50 पुस्तकों की भूमिकाएँ लिखीं। आकाशवाणी नजीबाबाद से अनेक वार्ताएँ तथा परिचर्चाएँ प्रसारित।

महाविद्यालय स्तर पर स्थानापन्न प्राचार्य, अनुशासन समिति के सदस्य, विभिन्न कार्यक्रमों के संयोजक, पुस्तकालय प्रभारी, छात्र कल्याण प्रभारी तथा विश्वविद्यालयीय परीक्षाओं में 25 वर्ष तक वरिष्ठ केंद्राध्यक्ष रहे। फरवरी, 1978 ई० तथा 04 मार्च, 1990 ई० को पुलिस समन्वय समिति, बिजनौर द्वारा आयोजित अखिल भारतीय वादविवाद प्रतियोगिता के संयोजक तथा संचालक।

रुहेलखंड विश्वविद्यालय की हिन्दी पाठ्यक्रम समिति तथा हिन्दी शोध-समितियों और विश्वविद्यालय की 'अनुचित साधन प्रयोग' समिति के संयोजक, रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली की विद्या परिषद तथा कार्यकारिणी परिषद के सदस्य। शैक्षिक तथा परीक्षा सम्बन्धी कार्यों के अंतर्गत उ.प्र. के रुहेलखंड , आगरा, इलाहाबाद, कानपुर, मेरठ, बुंदेलखंड, उत्तराखंड के कुमायूँ, गढ़वाल तथा गुरुकुल कांगड़ी, म०प्र० के रीवा तथा बिलासपुर, छत्तीसगढ़ के रायपुर, राजस्थान के जोधपुर और हरियाणा के रोहतक एवं कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालयों से संबद्ध रहे।

उत्तर प्रदेश तथा बिहार के लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं में प्राश्निक तथा परीक्षक रहे।

पूर्व सदस्य, परामर्श समिति, आकाशवाणी नजीबाबाद (1983–85)

पूर्व प्रधान, भारतीय साहित्यकार संघ, बिजनौर (1967–70)

पूर्व सदस्य, जिला स्तरीय प्रचार-प्रसार समिति, बिजनौर (2000–2001)

पूर्व मुख्य अनुसंधाता (हिन्दी), विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की प्रसार-भाषण योजना के अंतर्गत कॉलेजों तथा संस्थाओं में प्रसार-भाषण-

1. क० मु० हिंदी भाषाविज्ञान विद्यापीठ, आगरा में 'जायसी की भाषा' विषय पर व्याख्यान (1964ई०)
2. तीर्थंकर नैतिक शिक्षा पत्राचार संस्थान, नजीबाबाद में 'हिन्दी संत-साहित्य में जैन साहित्यकारों का योगदान' विषय पर व्याख्यान (22.10.75)

3. कुमायूँ विश्वविद्यालय नैनीताल में 'पर्यायवाची, विलोम और अनेकार्थी शब्द' विषय पर व्याख्यान (18-24 अक्टूबर, 1976 ई०)

4. जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर में सूर पंचशती समारोह के अवसर पर 'सूर-साहित्य में युग-बोध' विषय पर व्याख्यान (21-22 अप्रैल, 1979ई०)

5. अभियंता प्रशिक्षण शिविर, कालागढ़, उ.प्र. में 'देवनागरी लिपिः उद्भव और विकास' विषय पर व्याख्यान (6-7 मई, 1979 ई०)

6. डी.ए.वी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर में 'मालिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य' विषय पर व्याख्यान (1984 ई०)

7. के.वी.डिग्री कॉलेज, माछरा (मेरठ) में 'साहित्य में परंपरा और आधुनिकता' विषय पर व्याख्यान (18.11.1987 ई०)

8. पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज (सांध्य) दिल्ली में 'सुमित्रानंदन पंत के काव्य का क्रमिक विकास' विषय पर व्याख्यान (फरवरी 1978 ई०)

9. डी.ए.वी.कॉलेज , देहरादून में 'जयशंकर प्रसाद के काव्य का मूल उत्स' विषय पर व्याख्यान।

10. फीरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली में 'मलिक मुहम्मद जायसी के काव्य में रहस्यवाद' विषय पर व्याख्यान (31.3.90 ई०)

11. भारतीय स्टेट बैंक, बिजनौर में 'बैको में हिन्दी का प्रचार-प्रसार' विषय पर व्याख्यान, (14.9.96ई०)

12. वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में यू.जी.सी. द्वारा प्रायोजित राष्ट्रीय संस्कृत, सेमिनार में 'संस्कृत का विश्वव्यापी स्वरूप' विषय पर व्याख्यान (दिनांक 06 मार्च, 2005 ई०)

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के प्राचीन हस्तालिखित ग्रंथ, खोज विभाग के अनेक वर्षों तक अवैतनिक निरीक्षक रहे। इसके अंतर्गत खोज में प्राप्त प्राचीन ग्रंथों की लगभग 300 पांडुलिपियाँ और उनके विवरण तैयार कराकर सभा को प्रदान किए, जिनका साभार उल्लेख सभा की खोज रिपोर्टों में किया गया है।

शोध-निर्देशन- 17 शोधार्थियों ने डॉ. आर्य जी के निर्देशन में आगरा तथा रुहेलखंड विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

पी-एच०डी० उपाधि हेतु निर्देशित शोध-प्रबंधों का विवरण

शोधकर्ता का नाम	शोध विषय का शीर्षक	वि.वि. का नाम	उपाधि-वर्ष
1. डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी	ठा० जगमोहन सिंहः आलोचनात्मक अध्ययन	आगरा विश्वविद्यालय आगरा	1968

2. डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल	हिन्दी नाट्य-साहित्य में हास्य-व्यंग्य	"	1973 ई०
3. डॉ० शंभुशरण शुक्ल	थारूलोक-गीतों का आलोचनात्मक अध्ययन	"	1973 ई०
4. डॉ० चन्द्रपाल शर्मा 'मधु'	संत प्राणनाथ और उनका हिन्दी-काव्य	"	1974 ई०
5. डॉ० श्रीमती उषा जैन	भैया भगवती दास और उनका साहित्य	"	1976 ई०
6. डॉ० श्रीमती सुषमा त्यागी	प्राचीन ऐतिहासिक उपन्यास: इतिहास और कला	"	1976 ई०
7. डॉ० श्रीमती दीप्ति गुप्ता	अमृतलाल नागर के उपन्यास: समाजशास्त्रीय अध्ययन	"	1978 ई०
8. डॉ० श्रीमती पुष्पलता मिश्र	भगवती प्रसाद वाजपेयी और उनका कथा-साहित्य	"	1980 ई०
9. डॉ० ओमदत्त आर्य	बिजनौर की ग्रामोद्योग शब्दावली का अध्ययन	रुहेलखंड विश्व. बरेली	1983
10. डॉ० अर्चना अवस्थी	केशव-काव्य का सांस्कृतिक एवं दार्शनिक अध्ययन	"	1987 ई०
11. डॉ० ज्ञानेन्द्र सिंह	हिन्दी कवि सम्मेलन : स्वरूप और विकास	"	1988 ई०
12. डॉ० मुरारी लाल शर्मा	हिन्दी यात्रा-साहित्य में डॉ. भगवतशरण उपाध्याय का योगदान	"	1988 ई०
13. डॉ० मधु वर्मा	जयशंकर प्रसाद तथा आ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के साहित्य में संस्कृति और इतिहास की अवधारणा	"	1988 ई०
14. डॉ० शुभा माहेश्वरी	बिजनौर जनपद के स्थानाभिधानों का अध्ययन	"	1991 ई०
15. डॉ० साधना	यशपाल के उपन्यासों में नारी-विद्रोह के स्वर	"	1992 ई०
16. डॉ० ऋतु राजपूत	डॉ० हरिवंशराय बच्चन के काव्य में प्रेम और सौन्दर्य	"	1992 ई०
17. डॉ० उषा किशोर	रामधारी सिंह दिनकर के काव्य में पुरुषार्थ चतुष्ट्य	"	1993 ई०

पिता जी ने मेरठ विश्वविद्यालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर (गढ़वाल), अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.), कानपुर विश्वविद्यालय, गुरु घासीदास विश्वविद्यालय, विलासपुर (म.प्र.) के अनेक शोध-प्रबंधों का मूल्यांकन भी किया।

सम्मान- डॉ. आर्य जी को साहित्यिक सेवाओं के लिए अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया, जिनमें से कतिपय निम्न प्रकार हैं-

1. जनपद बिजनौर के साहित्यकारों एवं पत्रकारों द्वारा सम्मानित-7.12.67 ई०
2. आर.एस.एम. कॉलेज, धामपुर में अभिनंदन- 28.3.68 ई०
3. पं० बनारसीदास चतुर्वेदी की अध्यक्षता में 'संगम' संस्था, फीरोजाबाद द्वारा सम्मानित- 20.8.77 ई०
4. 'साहित्यांचल' संस्था, कोटद्वार (उत्तराखंड) द्वारा सम्मान- 09 मार्च, 1981 ई०
5. युवा साहित्यकार संघ, धामपुर द्वारा 'सरस्वती श्री' उपाधि से सम्मानित - 28.11.1981 ई०
6. विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार) द्वारा 'विद्यासागर' उपाधि से सम्मानित (28.10.84 ई०)
7. जी.एस. हिन्दू कॉलेज, चांदपुर बिजनौर द्वारा सम्मानित (1985 ई०)
8. उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, आकू (नहटौर) में सुभाष जायंती के अवसर पर सम्मानित (23.1.86 ई०)
9. 'जिला बिजनौर के जवाहर' (उर्दू, फुरकान अहमद सिद्दीकी, दिल्ली, प्र०सं०, सितंबर, 1991 ई०, ग्रंथ में विभिन्न संदर्भों में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का पृ० 5, 7, 39, 40, 80 एवं 86 पर बिजनौर के गौरव के रूप में उल्लेख किया गया हैं।)
10. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा 14 सितंबर, 1994 ई० को राजर्षि टंडन मंडपम् इलाहाबाद में सभापति प्रख्यात् साहित्यकार श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' द्वारा साहित्य महोपाध्याय उपाधि से विभूषित।
11. बिजनौर की अनेक संस्थाओं द्वारा 'परंपरा' (अध्यक्ष डॉ० अजय जनमेजय)संस्था के संयोजन में सम्मानित (4.10.94 ई०)
12. आर.बी.डी. महिला कॉलेज, बिजनौर द्वारा सम्मानित (16.11.1994ई०)
13. रोटरी क्लब, बिजनौर द्वारा साहित्यिक सेवाओं हेतु सम्मानित (9.9.96ई०)
14. आखिल भारतीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद द्वारा 'साहित्य श्री' उपाधि से सम्मानित (17.11.1996 ई०)
15. परंपरा और आधुनिकता निबंध-संग्रह उ०प्र० हिन्दी, संस्थान, लखनऊ द्वारा

निंबध-विधा के अंतर्गत पुरस्कृत, 1997 ई०

16. सबरंग संस्था द्वारा सम्मान (24.9.98 ई०)

17. 'बिजनौर टाइम्स' द्वारा द्वितीय बाबूसिंह चौहान, स्मृति समारोह में सम्मानित (6.4.2001 ई०)

18. लायंस क्लब, बिजनौर द्वारा साहित्य सेवाओं के उपलक्ष्य में सम्मानित (14.9.2003 ई०)

19. जिलाधिकारी, बिजनौर द्वारा स्वंतत्रता दिवस पर साहित्यिक योगदान के लिए सम्मानित (15.8.2004 ई०)

20. 'बिजनौर टाइम्स' द्वारा द्वादश बाबूसिंह चौहान स्मृति समारोह में सम्मानित (16.4.2011 ई०)

21. नगर कल्याण समिति, बिजनौर द्वारा वरिष्ठ नागरिक सम्मान-समारोह में सम्मानित (5.5.2014)

22. धरोहर स्मृति न्यास, बिजनौर द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में योगदान के लिए समग्र सेवा पुरस्कार से सम्मनित (29.11.2015 ई०)

23. साहित्य-मंडल श्रीनाथद्वारा, राजस्थान द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा हेतु 14.9.2016 ई० को 'हिन्दी भाषा भूषण' की मानद उपाधि प्रदत्त। डॉ० आर्य जी अस्वस्थ होने के कारण श्रीनाथद्वारा नहीं जा सके थे। अत: 21 सिंतबर, 2016 ई० को प्रसिद्ध साहित्यकार श्री हितेश कुमार शर्मा के संयोजन में बिजनौर के साहित्य-प्रेमियों ने डॉ० आर्य ज़ी के निवास पर एकत्रित होकर, उनको यह उपाधि प्रदान की।

24. संस्कार भारती, जनपद बिजनौर द्वारा हिन्दी साहित्य में अविस्मरणीय योगदान के लिए डॉ. आर्य जी को मरणोपरांत सम्मानित किया गया (03.जून 2017 ई०)

विमोचन-लोकार्पण

1. प्रसिद्ध पत्रकार, कवि और दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' के संपादक श्री चन्द्रमणि रघुवंशी के प्रथम काव्य-संग्रह 'कोख से सूरज की कारा तक' तथा द्वितीय काव्य-संग्रह 'अंदर की आग और बर्फ का फूल' का लोकार्पण डॉ. आर्य जी ने क्रमश: 17.11.96 ई० तथा 31.3.2004 ई० को किया।

2. साहित्यकार और समाज-सेविका श्रीमती सुमन चौधरी के प्रथम व्यंग्य संग्रह 'नेता, टिकट और गिरगिट' तथा द्वितीय व्यंग्य संग्रह 'चाय-पानी जिंदाबाद' का लोकार्पण डॉ. आर्य जी ने क्रमश: 31.3.2004 ई० तथा 29.8.2014 ई० को किया।

3. प्रसिद्ध साहित्यकार श्री हितेश कुमार शर्मा जी के काव्य-संग्रहों का लोकार्पण डॉ० आर्य जी ने क्रमश: 'वसीयत' का 30.8.87 ई०, 'सोनचिरैया' का 4.9.1999 ई०, 'बारादरी' का 1.4.2012 ई० तथा 'त्रयंबकम्' का 20.1.2013 ई० को किया था।

4. डॉ. आर्य जी ने डॉ. गजेंद्र बटोही के काव्य-संग्रह 'प्रत्यंचा' का विमोचन मित्र' संस्था के तत्वावधान में 26.2.2001 ई० को किया था।

5. डॉ० आर्य जी ने डॉ० ज्ञानेश दत्त हरित जी के शोध-प्रबंध 'नागार्जुन का कथा-साहित्य' का विमोचन 7.11.1999 ई० को किया था।

6. डॉ. आर्य जी द्वारा श्री रमेश राजंहस जी के लघुकथा संग्रह 'मोती के आँसू' का लोकार्पण हिन्दी दिवस 14.9.2006 ई० को किया गया।

7. डॉ. आर्य जी ने श्री राजकुमार रसिक के उपन्यास 'धीरज' का विमोचन 5.12.1993 ई० को किया ।

8. डॉ. आर्य जी ने सुश्री इंदिरा गुर्टू द्वारा संपादित संग्रह 'अंतस' का विमोचन 22.6.2008 ई० को किया।

9. डॉ. आर्य जी ने जिला दूरसंचार विभाग के अंतर्गत दूरभाष निर्देशिका का लोकर्पण 27.9.1999 ई० को किया।

10. राजकीय इंटर कॉलेज, बिजनौर की वार्षिक पत्रिका 'संकल्प' का विमोचन (17.2.93 ई०) को डॉ. आर्य जी ने किया।

समर्पित पुस्तकें

1. उर्दू अदब पर हिन्दी अदब का असर-डॉ. प्रकाश मूनिस, अधिवक्ता, जिला न्यायालय, बिजनौर। आगरा विश्वविद्यालय द्वारा 1971 ई० में उर्दू में पी-एच.डी उपाधि प्राप्त शोध-प्रंबध 1प्र०सं० 1979 ई।

2. सोलह सिंगार - डॉ० शंभु शरण शुक्ल 'अभीत', अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, उपाधि पी.जी महाविद्यालय, पीलीभीत, उ०प्र०, प्र०सं०, 1994 ई०

3. सिद्धांत शतक-राजनारायण प्रसाद मिश्र शास्त्री 'नूतन', एम.ए. संस्कृत, आयुर्वेदाचार्य, पीलीभीत।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ने वर्धमान कालेज, बिजनौर में 26 फरवरी, 2005 ई. को यू.जी.सी. द्वारा प्रायोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय सेमिनार का उद्घाटन किया था-सेमिनार का विषय था-'राष्ट्रीयता और साम्प्रदायिकता के सूत्र'। डॉ. आर्य जी ने बिजनौर में 18 जून, 1992 ई० को मुरादाबाद क्षेत्र के अधिकारियों की कार्यशाला का उद्घाटन किया था, विषय था-'बैंकों में हिन्दी'।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी बिजनौर में रहते हुए अनेकानेक कार्यक्रमों के अध्यक्ष रहे। वे जिला पत्रकार सम्मेलन के दो दशकों (1982-2002 ई०)के मध्य अनेक बार अध्यक्ष रहे। उन्होंने 3 मई, 2014 ई० को नारद जयंती की अध्यक्षता की। वे अक्टूबर, 1983 ई० में गठित श्री बाबूसिंह चौहान नागरिक अभिनंदन समिति के अध्यक्ष चुने गये। उन्होंने 9.12.1984 ई० को हिन्दी प्रचारिणी सभा, धामपुर के तृतीय वार्षिकोत्सव की अध्यक्षता की। 18.3.1986 ई० को वे जनपदीय पं० पद्मसिंह शर्मा स्मारक समिति, बिजनौर के अध्यक्ष बने।

डॉ. आर्य जी ने 1985 ई०, 1989 ई०, 1992 ई०,1993 ई० आदि कई वर्षों में जिला कृषि एवं औद्योगिक प्रदर्शनी के कवि सम्मेलनों में अध्यक्ष पद सुशोभित किया। 1994 ई० तथा 1995 ई० में उन्होंने राजा ज्वाला प्रसाद आर्य इंटर कॉलेज के वार्षिकोत्सव के कार्यक्रमों की अध्यक्षता की। डॉ० आर्य जी जनपद के वरिष्ठ साहित्यकार श्री हितेश कुमार शर्मा जी के आवास पर आयोजित कार्यक्रमों की अध्यक्षता करते थे। वे प्रथम बार 03.12.1964 ई० को श्री हितेश जी के आवास पर संपन्न संगोष्ठी के अध्यक्ष थे। इनके अतिरिक्त जनपद की विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं-परंपरा, सबरंग, दर्पण, मित्र, कविकुल, साहित्य संगम, परिचय, साहित्यकार परिषद, हिन्दी परिषद आदि के द्वारा विभिन्न साहित्यकारों की जयंतियों, पुण्यतिथियों, हिन्दी दिवस आदि पर आयोजित कार्यक्रमों, संगोष्ठियों की अध्यक्षता भी डॉ० आर्य जी करते थे।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी अनेक संस्थाओं द्वारा विभिन्न कार्यक्रमों में मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किये जाते थे। इस प्रकार के कार्यक्रमों में उल्लेखनीय हैं- हिन्दू इंटर कॉलेज, किरतपुर में आयोजित विवेकानंद शताब्दी वर्ष 12.1.1964 ई०, आर.एस.एम. कॉलेज, धामपुर में हिन्दी साहित्य परिषद के वार्षिक कार्यक्रम 28.1.1965 ई० तथा 5.4.1968 ई०, के०वी०डिग्री कॉलेज, माछरा, मेरठ में यू.जी.सी. द्वारा प्रायोजित राष्ट्रीय सेमिनार 18.11.1987 ई०, आर.बी.डी. महिला पी.जी कॉलेज, बिजनौर में महाकवि जयंशकर प्रसाद शताब्दी वर्ष 30.9.1989 ई०, भारतीय स्टेट बैंक, बिजनौर में आयोजित हिन्दी दिवस 14.9.1996 ई०, उत्तर प्रदेश जर्नलिस्ट एसोसियेशन द्वारा हिन्दी दिवस पर आयोजित कार्यक्रम 14.9.2003 प्रातः, लायंस क्लब, बिजनौर द्वारा मनाया गया हिन्दी दिवस कार्यक्रम 14.9.2003 रात्रि आदि।

काव्यांजलि

1. साहित्य के संत : डॉ० रामस्वरूप आर्य
   डॉ० अनिल शर्मा 'अनिल'
2. डॉ० रामस्वरूप आर्य : विनम्र श्रद्धांजलि
   श्री योगेन्द्र कुमार
3. डॉ० रामस्वरूप आर्य : पावन स्मरण
   श्री पंकज कुमार
4. पूज्य पिताजी : पुण्य स्मरण
   डॉ० चन्द्रप्रकाश आर्य
5. मेरे पापा
   डॉ० संतोष कुमारी
6. पूज्य पिता जी : पावन स्मरण
   श्री रवि प्रकाश आर्य

साहित्य के संतः डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. अनिल शर्मा 'अनिल'

डॉ. थे साहित्य के, अध्ययन-लेखन नित्य।
देश-धर्म हित आपने, लिखा प्रचुर साहित्य।।
राष्ट्र-साहित्य-धर्म पर, चिन्तन था अविराम।
प्रगति हित साहित्य में, अभिव्यक्ति-निष्काम।।
मन से करते रहे सदा, शिक्षण-लेखन कर्म।
सत्साहित्य शोधरत, ये ही माना धर्म।।
स्वस्थ विचारों का किया, सृजन और प्रचार।
मिलता जो उसके प्रति, सहज सरल व्यवहार।।
वक्त रहा हो कोई भी, थी चुनौती स्वीकार्य।
पाठ्यक्रम-शोध समिति में, किये सार्थक कार्य।।
रुद्रदत्त शर्मा पर किया, आपने बहुत ही काम।
साहित्य के साधक रहे, साधना थी निष्काम।।
पढ़ने -लिखने में कभी, किया नहीं आलस्य।
सबके संग आत्मीय रहे, ज्यों परिवार सदस्य।।
आय विचारों के धनी, जीवन था एक यज्ञ।
साहित्यिक जीवन जिया, थे साहित्य मर्मज्ञ।।
जीवन आदर्श आपका, हे! साहित्य के सन्त।
आर्य धर्म की मर्यादा, रखी जीवन पर्यन्त।।

गुजरातियाब, धामपुर, बिजनौर

डॉ. राम स्वरूप आर्य : विनम्र श्रद्धांजलि

योगेन्द्र कुमार

रामचंद्र शुक्ल, द्विवेदी, निराला सरीखे कार्य।
मनीषी मम्मट जैसे विद्वान थे राम स्वरूप आर्य।।
विज्ञान की मूर्धन्य हस्ती कहाते हैं आइन्सटीन।
ऐसे ही डॉ. आर्य ने रची श्रेष्ठ कृतियां नवीन।।
हिन्दी थी जिनका कर्मक्षेत्र हिन्दी ही अन्वेषण।
लिखी हिन्दी की गौरव गाथा है सुन्दर-सम्प्रेषण।।
भाषा ज्ञान, साहित्यिक निबंध , औ' बिहारी सतसई।
पूंजी लगा दी हिन्दी में, बचाया न अपने तई।।
हिन्दी के इतिहास का ये स्वर्णिम पृष्ठ आपका।
साहित्याकाश में नक्षत्र है राम स्वरूप नाम का।।
सूर, तुलसी, प्रेमचंद, कुरुक्षेत्र और नई परम्परा।
भ्रमरगीत, ध्रुवस्वामिनी, बिंदु और यशोधरा।।
शतकाधिक रचनायें लिखने-सम्पादन का गौरव।
हे रामस्वरूप! तेरा अमर रहेगा सृजन सौरभ।।
आयु कभी बाधा न बनी सतत् सृजन के बीच।
आलोचकों ने चाहा, पर न उंड़ेल पाये कीच।।
खिताबे-सरकार रेबड़ियों की तरह बंटते रहे।
डॉ. राम स्वरूप आर्य अपनी राह चलते रहे।।
हिन्दी के नाम जिसने कर दिया सर्वस्व बलिदान।
इस युग पुरुष को योगेन्द्र का लख-लख सम्मान।।

एम.आई.जी. 55, निकट विल्सोनिया डिग्री कॉलेज,
रामगंगा विहार द्वितीय विस्तार, कांठ रोड, मुरादाबाद

डॉ. राम स्वरूप आर्य: पावन स्मरण

पंकज कुमार

एम. ए., शोध छात्र

श्री राम प्रभु का स्मरण कर,
महादेव का करके ध्यान।
गिरिजा-सुत का है अभिनंदन,
गुरुदेव को मेरा प्रणाम।।१।।
मानव-मन कभी निराश न हो,
यह शास्त्र हमें समझाते हैं।
घोर निराशा के क्षण में,
प्रभु अपनी छवि दिखाते हैं।।२।।
शंकित मानव-मन तो फिर भी,
प्रभु-कृपा समझ न पाता है।
महाप्रभु की इच्छा में,
निज-अहं-बेलि फैलाता है।।३।।
द्वापर में जब द्वन्द्व कठिन,
अर्जुन कुछ समझ न पाते हैं।
तब केशव ही उनके मन में,
कर्म की ज्योति जगाते हैं।।४।।
भारत! कितने जन्म हुए,
इसको तुम समझ न पाओगे।
मार्ग तुम्हें दिखलाऊँगा,
जब भी तुम मुझे बुलाओगे।।५।।
अज्ञान रूपी यह तम गहरा,
अवनि पर जब भी छा जाए।
उन परम ब्रह्म की कोई किरण,
जगती को प्रकाशित कर जाए।।६।।
श्री रामकृष्ण और हरिश्चन्द्र,
वही नरेन्द्र-वही दयानन्द।
विद्या-प्रकाश को फैलाते,
जड़ को करते चेतन-आनन्द।।७।।
दासता भरी नींद सदियों की,
थी मानो अब टूट रही।

ऋषि दयानन्द की आत्मशक्ति,
शत्रु से मानो जूझ रही।।८।।
माँ भारती की सेवा में,
अर्पित सहस्रों सुमन-अनूप।
ज्ञान-दायिनी की कृपा ले,
आए तब श्री राम स्वरूप।।९।।
उत्तर प्रदेश की ज्ञान भूमि,
है ईश-चेतना की अठखेली।
श्री राम स्वरूप की जन्मभूमि,
है बना पुरातन नगर बरेली।।१०।।
एक अप्रैल उन्नीस सौ तेंतीस,
बसंत में धरा सँवरती है।
हम सबको राह दिखाने को,
एक दिव्य ज्योति उतरती है।।११।।
जननी श्रीमती देवकी देवी,
जनक हैं लाला बाँकेलाल।
चक्र समय का चला घूमता,
युवा हुए कभी के बाल।।१२।।
मात शारदे की कृपा से,
शिक्षा सारी पूर्ण हुई।
जन्मभूमि को छोड़ दिया,
कर्म भूमि बिजनौर हुई।।१३।।
श्रीमती हरप्यारी देवी संग,
परिणय से जीवन हो सुरभित।
श्री चन्द्र-रवि-सन्तोष सहित,
जग को करते हैं सदा कुसुमित।।१४।।
वर्धमान कॉलेज मानो,
वर्धमान की ज्योति है।
संसार के सागर में जैसे,
छिपा ज्ञान का मोती है।।१५।।
ज्ञान के मोती खोज-खोज,
शिष्यों को सदा दिखाते थे।
सहज स्वभाव और निश्छल मन,
सबको ही अपना बनाते थे।।१६।।

समय अल्प अनथक परिश्रम,
कुछ कार्य पूर्ण-अपूर्ण किए।
श्री राम प्रभु का निज स्वरूप,
निज में ही उन्होंने मिला लिए।।१७।।
दीपक अन्य प्रज्ज्वलित कर,
जब कोई ज्योति बुझती है।
अन्य दीपक की ज्योति में,
वह पूर्ण ज्योति ही दिखती है।।१८।।
दो हजार सोलह अक्टूबर में,
वे रामचरण में लीन हुए।
सुगन्ध को अपनी कर विकीर्ण,
वे सुमन समान विलीन हुए।।१९।।
उनके विषय में कुछ कहना,
सूर्य को दीप दिखाना है।
साहित्य-महोपाध्याय उपाधि से ही,
सुनकर हमने जाना है।।२०।।
पश्चिमी उत्तर प्रदेश में केवल,
दो महानुभाव ही पाए हैं।
श्री राम स्वरूप और श्री पद्म सिंह,
इस उपाधि तक आए हैं।।२१।।
वह दिव्य-ज्योति-प्रकाश-स्तम्भ,
सबको प्रकाश दिखलाएगा।
जो भी पथ से भूले-भटके,
उन सबको राह दिखाएगा।।२२।।
मानवता के हित में हो रत,
समर्पण जिसने स्वीकारा है।
उन महापुरुष के चरणों में नत,
स्मरण सदा हमारा है।।२३।।
उन्हीं के पद-चिह्नों पर चलते,
उनकी छवि दिखाते हैं।
श्री चन्द्रप्रकाश-श्री रविप्रकाश,
उनका प्रकाश फैलाते हैं।।२४।।

पो० नवादा चौहान, बिजनौर, उ०प्र०

पूज्य पिताजी : पुण्य स्मरण

डॉ० चन्द्रप्रकाश आर्य

1

वाग्देवी प्रसन्न हुईं, अज्ञान का तम मिटा,
भाँति-भाँति के भाव उमड़ पड़े मन में।
बासंती प्रभात में भीनि-भीनि बयार बही,
भाँति-भाँति के पुष्प खिलने लगे भुवन में।
रिमझिम फुहारों बीच पुलक उठा तन
सतरंगी रम्य दृश्य दीख पड़े गगन में।
सृष्टि के रचयिता यही वरदान दे दो,
पिता की पावन स्मृति बसी रहे अंतर्मन में।

2

जैसे पर्वतों में है पर्वतराज हिमालय,
नदियों में देवनदी गंगा है अनुपम।
जैसे व्यक्ति के समस्त बलों में आत्मबल,
और देवालयों में शिवालय है श्रेष्ठतम।
जैसे विश्व में महर्षि दधीचि का अस्थिदान,
सांसारिक असंख्य दानों में है महत्तम।
वैसे ही चराचर जगत् के समस्त त्यागों में,
पिता का आत्म-त्याग माना गया सर्वोत्तम।

3

तुम थे जनक, पालक और शिक्षक भी
सच्चे अर्थों में थे तुम जीवन के ताज पिता।
जीवन में तुमने सदा खुशियाँ ही बाँटीं
हमें आजन्म तुम पर रहेगी नाज पिता।
सामने आती थीं जब ऊँची-ऊँची लहरें
तुम ही बन जाते थे तत्काल जहाज पिता ।
तुम्हारे कंधों पे बैठे देखे जग के मेले
अपने कंधों पे ले चले आज बैराज पिता।

4

दिन व्यतीत हो रहे निर्जन वन जैसे,
अपनी सपनों भरी अब वह रात कहाँ?
रस-रंग ध्वस्त हुए, आनंद क्षीण हुआ,
अब उल्लास भरी वह बरसात कहाँ?
भ्रमरों की गुंजार भी विलीन हो चुकी,
अब सरोवर में खिले वह जलजात कहाँ?
स्वर्ग सिधार गये जब से पिता तुम,
तब से जीवन में वह रसीली बात कहाँ?

5

बचपन में जिनकी गोद में खेलकर,
भाँति-भाँति मोदमग्न हो किलोल करा करें।
जिनके होठों से सुन राम-वचनामृत,
आंगन में उल्लास से किलकारी भरा करें।
सादगीपूर्ण जीवन और कर्तव्य निष्ठा से,
जो अपने शिष्यों के सुचरित्र गढ़ा करें।
नेत्रों में हमारे जो रहते थे सदा ही बसे,
उनकी कहानियाँ अब कान सुना करें।

6

तुम्हें भुलाँएगे नहीं इस शहर के लोग,
और तुम सामाजिक यथार्थ भूल गये।
आदर्शों में जीकर, जीना सिखाया औरों को,
अपने पौधों को निष्कर्ष लिखाना भूल गए।
हर शिष्य को नेह और द्वार को प्यार दिया,
अपने तन का स्वेद सुखाना भूल गए।
आगत ऐसा मीठा था, परिणाम नहीं सोचा,
इतनी गल्ती की, एहसान जताना भूल गए।

मेरे पापा

डॉ० सन्तोष कुमारी

मैं पापा की लाड़ली बेटी थी
घर में सब अपना प्यार दिखाते थे
पर कोई बिना दिखाए भी
इतना प्यार किए जा रहा था
वो थे मेरे पापा।
ढेरों किस्से हैं मेरे और पापा के
उन्हें किस से कहूँ, किसे सुनाऊँ
आज आप मुझसे बहुत दूर हो गये हो
आप मेरी शक्ति व प्रतिष्ठा थे पापा।
आज भी जब आप की याद आती है
तो आँख की हर कोर नम हो जाती है
पापा आप न जाने कहाँ खो गये
आप हमसे इतनी दूर क्यों हो गए?
एक दिन प्रातः खोजने निकली
सब कुछ मिल गया शोहरत, पैसा, संतुष्टि
पर आप नहीं मिले।
आप मेरे पापा ही नहीं
मित्र और सखा भी थे
सिर्फ शब्द नहीं, शब्दकोश भी थे।
अब मैं आपको सपनों में ही देख सकती हूँ
अपने मन में आपकी स्मृति ही संजो सकती हूँ
मेरा आपको शत्-शत् नमन।

पूज्य पिताश्री: पावन स्मरण

रवि प्रकाश आर्य

पिता श्री थे स्नेह प्रेम की ऐसी भव्य मूर्ति।
जीवन में जिनकी कभी हो नहीं सकती पूर्ति।।

पिता श्री का व्यक्तित्व था सदा इतना महान।
सादा जीवन उच्च विचार थी उनकी पहचान।।

उनके कुशल निर्देशन में किया सत्रह ने शोध।
पाया साहित्य की सूक्ष्म गहनता का बोध।।

पदम सिंह के बाद मिला सम्मान साहित्य महोपाध्याय।
पाकर सम्मान लिख गये एक नया अध्याय।।

पुरस्कृत हुआ निबंध संग्रह परंपरा और आधुनिकता।
नहीं आयी उनमें जरा अहंकार की संलिप्तता।।

उनकी अनुपम काव्य कृति थी विचार-बिन्दु।
अतिश्योक्ति न होगी हम कहें उसे ज्ञान-सिंधु।।

पिता श्री की अंतिम कृति थी चिंतन-अनुचिंतन।
जिसे पढ़ने को करता बार-बार मेरा मन।।

उन्होंने सदा द्वेष स्वार्थ को दी तिलांजलि।
उनके आदर्शों का पालन है सच्ची श्रद्धांजलि।।

स्मृति-खण्ड

1. विगत व्यक्तित्व के लिए मेरे क्षत-विक्षत हृदयोद्गार

डॉ. कौशलेन्द्र पाण्डेय
वरिष्ठ साहित्यकार एवं पूर्व उपायुक्त, बिक्रीकर

बारंबार कई दिनों से मैं स्वयं को बहुत असहज अनुभव कर रहा था। उन क्षणों में वासुदेव कृष्ण मेरे कानों में जैसे कह रहे थे- तुम अकारण क्यों विचलित हो रहे हो- ''क्लैव्यं मा अस्म हृदयस्थ'' - अपनी आत्मा को पहचानो, वह पुरुष स्वरूप स्वयं प्रकाशमान है, सभी के शरीर में विद्यमान और सर्वथा अबध्य है। वह सनातन है। वध्य अथवा विनष्टय है तो मात्र उसका तन, जिसके लिए अकारण ही चिन्ता क्यों? कुछ समय पश्चात सामान्य हो गया तो दूरदर्शन के पर्दे पर दृष्टि जमा ली। तब भी सोचने लगा कि ऐसा क्यों हो रहा है? ऊपर छत की ओर देखा- छत का पंखा निष्कंप था, बिल्कुल शांत। पुनः सोचने लगा था- ''पहले कभी भी मुझे ऐसे शैथिल्य का अनुभव नहीं हुआ।'' मन को किसी प्रकार नियंत्रित किया तो तकिये के नीचे रखी डायरी निकाली और उसके पृष्ठ पलटने लगा। निश्चय किया कि बिजनौर निवासी अप्रतिम विद्वान (डॉ.) राम स्वरूप आर्य से ही कुछ बात कर ली जाए। यदि वह सुलभ न हों तो सुकवि एवं वाणिज्य कर के वरिष्ठतम अधिवक्ता श्री हितेश कुमार शर्मा से ही वार्तालाप कर सभी मित्रों की कुशल क्षेम से अवगत हो लूँ। (डॉ.) आर्य जी का मोबाइल नंबर थोड़े प्रयास से ही डायरी में मिल गया। मैंने (डॉ.) आर्य जी को फोन किया तो दूसरे छोर से आने वाली आवाज कुछ अपरिचित सी प्रतीत हुई, तो मैंने कहा- ''आप (डॉ.) आर्य तो नहीं हैं, लगता है कि मेरे पास गलत नंबर लिखा है।'' फिर सोचने भी लगा- लेकिन इसी मोबाइल नंबर पर वर्ष में औसतन दो बार तो हम परस्पर बतियाते भी रहे हैं- तो फिर दूसरे छोर से कौन बात करना चाहता है। मोबाइल निष्क्रिय ही करना चाहता था कि तुरंत वही आवाज हुई-''जी! मैं उनका पुत्र बोल रहा हूँ। ...और मैं लखनऊ से (डॉ.) कौशलेन्द्र पाण्डेय।'' मैंने उन्हें बताया।

''आपको पता नहीं है शायद-पापाजी अब इस संसार में नहीं हैं। जा चुके हैं हम सब के बीच से।'' अस्वस्थ थे क्या इन दिनों? बहुत ज्यादा... उनकी परिचर्या में व्यस्त रहे हम लोग। मुझे सूचना होती तो भैया जी! मैं आता अवश्य उनके अन्तिम दर्शनार्थ। ...बहुत बड़ी क्षति है उनका अवसान, हम लोगों के लिए... साहित्यिक जगत के लिए।'' (डॉ.) आर्य जी के पुत्र से बात करते-करते मेरा कंठ रुंध गया था। तो भी बोलता गया-''बेटा जी! अपनी माता को सँभालना,

इस दारुण दु:ख के आघात के समय ही नहीं–बाद में भी, उन्होंने अपने जीवन में दिवंगत पति के साथ–साथ आप लोगों के प्रति बड़े–बड़े दायित्व निभाये हैं– आप लोगों की बारी है अब। उन्हें अनुभव होते रहना चाहिए कि उनकी लगाई हुई पूरी बगिया की सुगंधि में पापा जी की अनुपस्थिति में भी पूर्ववत् लयात्मकता है।''

महानतम 'महान' थे वह। सारस्वत सक्रियता के क्षेत्र में अप्रतिम। हमने सदा ही उन्हें एक साहित्यक 'संत' के रूप में देखा। बिजनौर नगर ही नहीं, संपूर्ण जनपद ही नहीं, अखिल रचनाधर्मी जगत के राजा थे वह, तत्वत: राजा या नरेश से भी श्रेष्ठतर क्योंकि नरेश केवल अपने राज्यसीमा के भीतर ही संपूज्य होता है जबकि साहित्यकार अपनी विद्वता के कारण सर्वत्र। संस्कृत की यह उक्ति किसके संज्ञान में नहीं है– ''स्वदेशे पूज्यते राजा–विद्वान सर्वत्र पूज्यते।'' नरेश की संपूज्यता एक अन्य कारण से भी है– वह एक बहुत बड़े कोष का स्वामी कहा गया है जबकि विद्वान कोषाधिकारी होता है– इस कारण कीर्तिसंपन्न भी। इस विशिष्टता के रहते वह आसृष्टि अनन्त पीढ़ियों अथवा पीढ़ियों–दर–पीढ़ियों तक सभी के मन–मस्तिष्क पर छाया रहता है। वेद की यह उक्ति कदापि झुठलाई नहीं जा सकती– ''कीर्ति यस्य स: जीवति।''

बिजनौर में मैं लगभग चौदह माह रहा था। 'बिजनौर टाइम्स' के कुशल संपादक श्री बाबू सिंह चौहान, श्री त्रिपुरारी शरण 'डंठल' (ए.पी.पी.), श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' (जिला मनोरंजन कर अधिकारी), श्री हितेश कुमार शर्मा (वरिष्ठ बिक्रीकर अधिवक्ता), श्री ईश्वर शरण अग्रवाल आदि सभी काव्यप्रेमी थे, रचनाकार भी थे। हम अधिकतर काव्य गोष्ठियों में ही एक दूसरे के साथ होते। इन गोष्ठियों में अध्यक्ष के रूप में हम सभी (डॉ.) राम स्वरूप आर्य जैसे उद्भट साहित्य मर्मज्ञ को ही वरीयता देते थे। उनकी अन्यान्य विशिष्टताएँ भी हम सभी के आकर्षण का केंद्र होती थीं। इनमें प्रमुख हैं– वह कभी भी किसी के भी प्रति कटु नहीं थे। उन्होंने हँसी–हँसी में भी कभी किसी की आलोचना नहीं की। विद्वान रूप में वह सब कुछ बड़ी ही सुसंयत, सुमधुर, और गरिमामयी वाणी में कहते थे। प्रखर चिंतक के रूप में, गोष्ठी के अंत में वह अपने अध्यक्षीय भाषण में विद्वता गुंफित वाक्य ही बोलते, मंद मृदु स्वर में ही सामान्यत: बोलते लेकिन सुविचारित और ढले–ढलाये शब्दों में। शायद ही वह कभी गुस्से में बोले हों, अधिकतर उनका चेहरा मृदुहासपूरित रहता।

इस श्रद्धांजलि आलेख में यह आवश्यक नहीं है कि पाठकों के संज्ञान में उनका कृतित्व लाया जाए क्योंकि वह प्राय: ही बड़े–बड़े समारोह की शोभा बढ़ाते

थे। वह प्रोफेसर एवं उत्तमकोटिय वक्ता होने के कारण सर्वत्र और सभी में पर्याप्त लोकप्रिय भी रहे। उनकी अधिकांश कृतियाँ श्रेष्ठ और ज्ञानार्जन में सहायक हैं। उनका गद्य काव्यमय होता था तथा संवाद रोचक एवं शालीन थे। यहाँ तक कि दूसरा व्यक्ति कहीं जाते-जाते रुक गया तो उसे भाषा और आत्मीयता का आनंद लेने में ध्यान ही नहीं रहता कि वह क्यों और किस कार्य से अपने आवास से चला था।

मेरा सौभाग्य था कि वह एक बार मेरे घर आये थे- संभवत: छह-सात वर्ष पूर्व। उन्हें देखकर मैं मन ही मन उत्फुल्लित होकर बुदबुदाया था- ''मेरा आवास धन्य हुआ श्रीमन्.... मैं भी और शहरे लखनऊ भी।'' किसी व्यक्तिगत कार्य से पधारे थे वह एक-दो दिन पूर्व। उसी दिन उन्हें अपनी साधना-भूमि को वापस भी लौटना था। मेरी औपन्यासकि कृति 'श्यामली' का उन्होंने बड़े मनोयोग से अवगाहन किया होगा, तभी तो उन्होंने उसके प्रकाशन वर्ष 2008 से लेकर अपने नि:शेष होने के एक वर्ष पूर्व के अंतराल में मुझे तीन अंतर्देशीय पत्र भेजे, यह निर्देशित करते हुए कि युवा वर्ग के सर्वथा मर्यादित प्रेम प्रसंगों से ऊर्जान्वित 'श्यामली' पर सीरियल बनाना बहुत जरूरी है- इस दिशा में क्या कोई प्रयत्न कर रहे हैं आप ? वस्तुत: इसका सुविचारित कथानक सांप्रतिक ही नहीं अपितु युवाओं की अनागत पीढ़ियों को चिरकाल तक संस्कारित करेगा। इस विषय में प्रयत्न करने का कई बार मैंने मन बनाया, तुरंत ही अतिनिष्क्रियता से समझौता भी कर लिया। विवशता थी, मेरी पत्नी की लगभग छह वर्षों की लम्बी बीमारी। अंतत: सितंबर, 2015 में उनकी मृत्यु हो गयी। इस प्रकार हिन्दी साहित्य और भारत की सांस्कृतिक परंपराओं को कालजयी बनाये रखने के लिए अग्रज (डॉ.) आर्य जी के परामर्श के हम ऋणी ही रह गये। मुझे विश्वास है कि अन्यान्य साहित्यधर्मियों को भी लेखन के क्षेत्र में लंबी रेस का घोड़ा समझकर, उन्होंने मुझ जैसा ही समुचित परामर्श दिया होगा। तात्पर्यत: उत्कृष्ट चिंनतधर्मी थे ही वह; अगले जन्मों में भी माँ सरस्वती को प्रसन्न करने के लिए, उन्होंने उनके समक्ष जो भी आत्मनिवेदन प्रस्तुत किया होगा- अवश्य ही उस सूची में एक नाम इस अल्हड़ रचनाधर्मी कौशलेन्द्र पाण्डेय का भी होगा। उनके स्तर से संभावित हुआ 'प्रसाद' मेरे लिए 'गुरु प्रसाद' तुल्य है, यद्यपि कभी भी उन्होंने मुझे एकलव्यता से ग्रस्त नहीं समझा।

इन क्षणों में मेरे मानस-लोक में उनकी लोकग्राह्य सहृदयता से सम्बन्धित कुछ अन्य संस्मरण भी स्फुरित हो रहे हैं किन्तु उन्हें निराशा की दृष्टि से देखना मेरी

विवशता है। श्रद्धांजलि-आलेख में हृदयोद्गारों की अपनी सीमाएँ हैं। अत: 'ऊँ शांति ऊँ शांति' उच्चारित करने से पूर्व अपने प्रति उनकी आत्मीयता के स्तर से आदेशित शुभीक्षा के अनुपालन में राँची (झारखंड) निवासी (डॉ.) ज्ञानेन्द्र की लघु कविता प्रस्तुत है, जो (डॉ.) राम स्वरूप आर्य जैसे मनस्वी की अनश्वर आत्मा का चरैवेति-चरैवेति का संदेश देती है-

हमने बनाया है 'ताज'/हमें कोई नहीं जानता
तुम चाहो तो किसी से पूछ लो/ शाहजहाँ को सभी जानते हैं
लेकिन क्यों नहीं जानेगा कोई तुमको/तदर्थ जरूरत है
अनागत कितने ही जन्मों तक सतत् रूपेण क्रियाशील रहने की।

मुझे प्रसन्नता है कि विद्वान गुरुदेव (डॉ.) आर्य जी की कृतित्वजन्य कीर्ति भविष्यगर्भा होने के कारण कीर्तिजीवी है, शतश: अन्यान्यों के साथ प्रलयान्तर तक जीवित रहेगी। अनन्त आकाश में कभी चंद्रमा की सुषमा के समान सुशोभित होगी और कभी सूर्यदेव की ऊष्मा की भाँति चतुर्दिक विकीर्ण होती रहेगी। समष्टि के समापन तक निरन्तर...निरन्तर...निरन्तर... चरैवेति चरैवेति का महामंत्र गुनगुनाते हुए... बताते हुए सभी को कि चिंतन-अनुचिंतन की कोई अन्तिम संख्या नहीं होती, सर्वस्वीकार्य ही होगी वह, जब हम ताजमहल की रचना को समझ लेंगे। वह केवल और केवल सामान्य व्यक्तियों की हथेलियों द्वारा ही पूर्ण किया गया चमत्कार था, न कि किसी अकूत संपत्ति की स्वामी की मुठ्ठियों में कैद कुछ अशर्फियों का। पैसा तो निर्धन व्यक्ति की मुठ्ठियों का मैल होता है, जो दो बूँद पसीने के दखल से ही जगह छोड़ देता है। (डॉ.) राम स्वरूप आर्य जी को जब-जब मैंने देखा, उनमें काफी कुछ श्रीराम के दर्शन हुए। यह मेरा सौभाग्य था कि मैंने अपने जीवन के कुछ महीने उनके साथ व्यतीत किए। मैंने कभी भी उन्हें लेशमात्र भी क्रोध से उद्विग्न होते नहीं देखा, संकत-संकेत में वह सभी को मनोनुकूल समाधान सुलभ करा देते थे। वह सारस्वत योग्यता के अतिरिक्त अनगिनत विशिष्टताओं से सम्पन्न नितान्त निरहंकारी पुष्पगुच्छ थे।

प्रणम्य महात्मा-महानात्मा थे वह। ईश्वर उनकी आत्मा को शांति प्रदान करके समस्त परिजनों के साथ-साथ मनस्ताप ग्रस्त हम स्वजनों को इस असह्य अपस्थिति से उबारने की कृपा करें।

130, मारुतिपुरम, लखनऊ

2. डॉ. राम स्वरूप आर्यः मेरे साहित्यिक गुरु

हितेश कुमार शर्मा
वरिष्ठ साहित्यकार एवं वाणिज्यकर अधिवक्ता

आज मैं साहित्य में जिस स्थान पर हूँ उसमें सबसे प्रमुख योगदान डॉ. रामस्वरूप आर्य का है। वह मुझसे पुत्रवत् स्नेह रखते थे और मेरा मार्गदर्शन करते रहते थे। स्वयं मेरी रचनाओं को पढ़कर निःसंकोच भाव से उसमें कमियों की ओर मेरा ध्यान आकर्षित करते थे और स्वयं मुझसे ही उस कमी को दूर कराने का प्रयास करते थे। कभी भी पैन के द्वारा उन्होंने स्वयं संशोधन नहीं किया बल्कि पेंसिल से हाशिए में लिखते थे और जब मुझसे विचार-विमर्श कर लेते थे, तब मुझसे उसमें संशोधन करने के लिए कहते थे। कविता में पिंगल का ज्ञान मुझे उनके द्वारा ही दिया गया तथा उर्दू गजल में रदीफ़ काफ़िया क्या होता है, यह उन्होंने ही मुझे बताया, लेकिन इससे पहले कि मैं इसमें परिपक्व हो पाता, वह हम सबको छोड़कर ब्रह्मलीन हो गए। मेरे निवास स्थान पर ऐसी कोई गोष्ठी नहीं होती थी, जिसमें वह उपस्थित न हों और मुझे रचना के सन्दर्भ में शाबासी या सुझाव न देते हों। इन गोष्ठियों में दिये गये उनके अध्यक्षीय भाषण मेरे स्मृति-पटल पर सदा के लिए अंकित हैं।

डॉ. रामस्वरूप आर्य स्वयं तो मेरी रचनाओं से सरोकर रखते ही थे, मेरी प्रकाशित रचनाओं और पुस्तकों को उन विद्वानों के पास भेजने के लिए भी प्रेरित करते थे, जिनका साहित्य में उच्च स्थान है। उन्होंने श्री राजन चौधरी से मेरा परिचय कराया। मैं श्री राजन चौधरी से मिलने हैदराबाद गया। यह डॉ. रामस्वरूप आर्य की ही कृपा का फल था कि मुझे स्व. राजन चौधरी से मिलने और उनके परिवार में लगभग 8 दिन रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। एक महीने में कम से कम चार-पाँच बार उनके फोन आ जाते थे। मैं उनकी स्मृति में बस गया था और यह सब कीर्तिशेष डॉ. रामस्वरूप आर्य की कृपा का फल था।

मुझे साहित्य के क्षेत्र में 200 से अधिक सम्मान प्राप्त हुए हैं, जिसका आरम्भ डॉ. रामस्वरूप आर्य ने कराया। एक बार मैं अपने कार्यालय में बैठा था, तभी डॉ. रामस्वरूप आर्य आए और उन्होंने कहा कि 'बिजनौर टाइम्स' में तुम्हारी जो कविता आज छपी है, वह बहुत अच्छी है। साथ ही उन्होंने मुझे एक पता दिया जिसमें कवियों की श्रेष्ठ कृतियों को सम्मानित करने के लिए प्रविष्टियाँ आमंत्रित की गई थीं, डॉ. आर्य ने कहा कि तुम अपनी प्रविष्टि इस रचना के साथ भेज दो।

मैंने उनके कथनानुसार वह प्रविष्टि भेज दी और मुझे उस रचना की प्रविष्टि पर साहित्यिक संस्था द्वारा सम्मानित किया गया। उसके बाद यह सिलसिला चलता रहा। महीने में एक या दो बार डॉ. रामस्वरूप आर्य से मैं मिलने जाता और एक या दो बार वह मुझसे मिलने आते। जब भी हम आपस में मिलते थे, तब साहित्य पर ही चर्चा होती थी। मैं भी उनको अपनी कोई नयी रचना अवश्य सुनाता था और उनसे आशीर्वाद प्राप्त करता था। रचनाओं की परिपक्वता, रचनाओं की उत्कृष्टता पर उनका विशेष ध्यान रहता था। उनकी दृष्टि से रचना में किसी भी कमी का छूट जाना असम्भव था।

विलक्षण बुद्धि के व्यक्ति थे कीर्तिशेष डॉ. रामस्वरूप आर्य। इतना विनम्र और मृदुभाषी तथा साहित्य के क्षेत्र में अपना विशेष स्थान रखने वाला उनके अतिरिक्त कोई दूसरा व्यक्ति मुझे अब तक नहीं मिला। क्रोध करना तो जैसे वह जानते ही नहीं थे। उचित बात की प्रशंसा वे इस प्रकार करते थे कि आपके हृदय में उतर जाए और यदि कोई अनुचित बात भी सामने वाला करता था तो उसका भी इतनी विनम्रतापूर्वक उत्तर देते थे कि सामने वाले को स्वयं ही लज्जा आती थी और वह तुरंत ही झुककर उनके चरण स्पर्श कर लेता था। कई व्यक्तियों को उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में विशेष स्थान पर पहुँचाया। जब वह वर्धमान कालेज में विभागाध्यक्ष थे तब उन्होंने विभाग से सम्बन्धित कई अध्यापकों का इस प्रकार मार्गदर्शन किया जैसे कोई अपने पुत्र का करता है। कभी किसी से द्वेष, किसी से दुर्व्यवहार उनके स्वभाव में ही नहीं था। सदा मुस्कराते हुए समझाने वाली भाषा में बात करना और शब्दों का इस प्रकार प्रयोग करना कि सुनने वाला अभिभूत हो जाए, उन्हीं को आता था। कई व्यक्तियों को उन्होंने अपने निर्देशन में पी-एच.डी. कराई और डॉ. की उपाधि दिलाई। अपने छात्रों की बुराई सुनने की उनकी आदत नहीं थी। वे सदैव अपने छात्रों की, अपने सहअध्यापकों की, अपने सहपाठियों, अपने गुरुजनों की प्रशंसा ही करते रहते थे। यही संस्कार उन्होंने अपने पुत्रों और पुत्री को दिए हैं। उनके पुत्रो डॉ. चन्द्र प्रकार आर्य तथा रविप्रकाश आर्य में भी उन जैसे ही गुण विद्यमान हैं। उनकी पुत्री डॉ. संतोष कुमारी भी एक विदूषी महिला हैं और उनके लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

मुझे इस बात का गर्व है कि मेरी कई पुस्तकों की भूमिका (डॉ.) राम स्वरूप आर्य ने लिखी है। अन्तिम पुस्तक 'बेटियाँ' है, जिसकी भूमिका उन्होंने लिखी। वस्तुतः डॉ. रामस्वरूप आर्य हिन्दी के अद्वितीय विद्वान थे। जिस पुस्तक की भूमिका उन्होंने लिखी अथवा जिस पुस्तक की समीक्षा उन्होंने लिखी, वह पुस्तक

अपने-आप में अद्वितीय हो गई। कोई भी सन्दर्भ उनसे अछूता नहीं बचता था। जिस पुस्तक की समीक्षा अथवा भूमिका वह लिखते थे, उसका सन्दर्भों सहित वर्णन उनकी अद्वितीय प्रतिभा का परिचायक होता था। डॉ. रामस्वरूप आर्य ने कई पुस्तकें लिखीं। बड़ी-बड़ी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में उनके लेख आदि प्रकाशित होते थे। बड़ी-बड़ी ख्यातिप्राप्त पत्रिकाओं के सम्पादक उनसे लेख भेजने के लिए अनुरोध किया करते थे।

अभी कुछ समय से गले की बीमारी के कारण वह अस्वस्थ रहे किन्तु उस अस्वस्थता में भी (डॉ.) रामस्वरूप आर्य कभी-कभी मेरे निवास स्थान पर आना नहीं भूलते थे। जब भी उनका मन करता, आ जाते थे और हम बहुत-बहुत देर तक साहित्य पर चर्चा करते रहते थे। किस विषय पर क्या लिखना सटीक रहेगा, किस विषय को कैसे आरम्भ किया जाए, यह सब वह मुझे बताया करते थे। उनके लेख, उनकी समीक्षाएँ और लघु कथाएँ, जिन पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं, वह अक्सर मुझे पढ़ने को दे देते थे। बहुत उच्च स्तर के लेखक, विचारक, चिन्तक और साहित्यकार थे, मेरे गुरु तुल्य डॉ. रामस्वरूप आर्य। अभी उनकी अंतिम पुस्तक 'चिन्तन अनुचिन्तन' प्रकाशित हुई थी, जिसमें कई बिन्दुओं पर अनुशीलन करके, अनुचन्तिन करके उन्होंने लिखा, जिसकी बहुत वृहत स्तर पर प्रशंसा हुई और जहाँ-जहाँ भी वह पुस्तक गई, वहाँ-वहाँ से उनको सम्मान सूचक पत्र प्राप्त हुए। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि स्व. डॉ. रामस्वरूप आर्य की पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' एक अद्वितीय पुस्तक है, जिस पर साहित्य मण्डल, श्रीनाथद्वारा ने उनको सम्मानित किया।

श्रीनाथद्वारा, राजस्थान से दो बार डॉ. रामस्वरूप आर्य को सम्मानित करने के लिए वहाँ आमंत्रित किया गया किन्तु अस्वस्थता के कारण वह जा नहीं सके। अतः श्रीनाथद्वारा के प्रधानमंत्री श्री श्याम प्रकाश देवपुरा ने हिन्दी दिवस 2016 ई. को उनका सम्मान पत्र मुझे दिया, इस अनुरोध के साथ कि मैं यह डॉ. रामस्वरूप आर्य को साहित्य मण्डल, श्रीनाथद्वारा की ओर से ससम्मान भेंट करूँ। 21 सितम्बर, 2016 ई. को बिजनौर में कई साहित्यिक विभूतियों के साथ मैं डॉ. रामस्वरूप आर्य के निवास पर गया और वहाँ उनको साहित्य मण्डल, श्रीनाथद्वारा से लाया गया सम्मान पत्र भेंट किया। वह अस्वस्थ थे किन्तु फिर भी उठकर आए और उस सम्मान को ग्रहण किया। मैंने उस समय का चित्र अपनी पत्रिका 'ब्राह्मण अन्तर्राष्ट्रीय समााचार' के अक्टूबर, 2016 ई० के अंक के मुखपृष्ठ पर प्रकाशित किया है। बिजनौर नगर का प्रत्येक साहित्यकार उनका सम्मान करता था और

उनकी विद्वता को प्रणाम करता था। आज भी वह हमारे मन-मस्तिष्क में बसे हुए हैं और अक्सर उनकी याद, उनके सुझाव चित्र की भाँति आँखों के सामने आते रहते हैं। अपनी पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' में जो लेख स्व. डॉ. आर्य ने दिए हैं, उनको बार-बार पढ़ने पर भी वह नवीनतम लगते हैं। बहुत विस्तृत और गहन चिन्तन था डॉ. आर्य का प्रत्येक बिन्दु पर। मैं ही नहीं अनेक लोग डॉ. रामस्वरूप आर्य को साहित्य का प्रकाश स्तम्भ मानते थे। उनमें से स्व. ओम प्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' (गाजियाबाद) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। स्व. श्री पराग से जब भी मैं मिलता था, वह डॉ. रामस्वरूप आर्य के बारे में अवश्य बात करते थे।

मेरी स्मृति में डॉ. रामस्वरूप आर्य अक्षुण्ण हैं, अमिट हैं और मैं कभी भी डॉ. रामस्वरूप आर्य का यह उपकार नहीं भूल सकता कि उन्होंने डॉ. राजन चौधरी से मेरा साहित्यिक परिचय कराया। मैं इसको भी डॉ. रामस्वरूप आर्य का आशीर्वाद ही मानता हूँ कि जब मैं स्व. श्री राजन चौधरी के निवास स्थान पर लगभग 8 दिन रहा। उसी बीच में स्व. श्री राजन चौधरी ने मेरा तिरुपति बालाजी के दर्शन करने का प्रबन्ध कर दिया और साथ ही भगवान आशुतोष शंकर के एक ज्योर्तिलिंग (मल्लिकार्जुन) के दर्शन का भी सौभाग्य प्राप्त कराया। यदि डॉ. रामस्वरूप आर्य ने स्व. श्री राजन चौधरी से मेरा परिचय न कराया होता और मैं हैदराबाद न जाता तो भारत के इन दो विशिष्ट स्थानों को देखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त न होता। यह स्व. डॉ. आर्य का ही आशीर्वाद था कि स्व. राजन चौधरी ने मुझे अपने छोटे भाई जैसा स्नेह दिया। मैं प्रणाम करता हूं डॉ. रामस्वरूप आर्य को जो मेरे साहित्यिक गुरु के रूप में विद्यमान थे और उन्होंने अपना कर्त्तव्य अन्तिम समय तक निर्वहन किया। मेरे श्रद्धासुमन उन्हें अर्पित हैं, ईश्वर से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को शांति मिले और हमें पुनः इसी जीवन में किसी ना किसी रूप में उनके दर्शन हों।

मैं डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य को उनके इस प्रयास को नमन करता हूँ और आयु में बड़ा होने के कारण आशीर्वाद देता हूँ और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि उनका डॉ. रामस्वरूप आर्य के सन्दर्भ में प्रकाशित होने वाले स्मृति ग्रंथ का प्रयास सफलतापूर्वक सम्पन्न हो और वह भी साहित्य के क्षेत्र में उस ऊँचाई तक पहुँचें, जहाँ डॉ. रामस्वरूप आर्य जीवनपर्यन्त विद्यमान रहे।

डॉ. रामस्वरूप आर्य के प्रति सश्रद्ध नमन।

गणपति भवन, सिविल लाइंस,
बिजनौर-246701 (उ.प्र.)

3. समर्पित शब्द-साधक डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण'
पी-एच.डी., डी.लिट्.

कभी मैंने एक मुक्तक रचा था, जो आज यहाँ फिर से लिखने का मन हो आया है-

बहता जाता है जीवन, चलता जाता है।
आता है इंसान यहाँ जो, जाता है!!
पर विश्व याद करता है केवल उसको ही-
जो समय-रेत पर अपना पाँव जमाता है!!

आज जब सरस्वती के वरदपुत्र, समर्पित शब्द साधक डॉ. रामस्वरूप आर्य का पावन स्मरण कर रहा हूँ, तो इस मुक्तक का एक-एक शब्द मुझे प्रासंगिक लग रहा है। वर्धमान पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, बिजनौर के हिन्दी विभाग में अध्यक्ष-पद पर कार्यरत डॉ. रामस्वरूप आर्य से लगभग चालीस वर्षों के अपने सारस्वत सम्बन्ध में मैंने यही पाया है कि डॉ. आर्य ने अपनी प्रतिभा और कर्मशीलता के बल पर 'समय के फिसलते हुए रेत' पर अपने पाँव इतनी दृढ़ता से जमाए हैं कि आज वे हम सबके लिए प्रेरणा-स्रोत बन गए हैं।

मैं सन् 1974 में रुड़की के बी.एस.एम. पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज के हिन्दी विभाग में रीडर एवं अध्यक्ष पद पर गाजियाबाद से आया था। तब महाकवि तुलसीदास प्रणीत 'रामचरितमानस' की 'चतुश्शती' पूरे भारत में मनाई जा रही थी और इसी सन्दर्भ में हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर द्वारा डॉ. रामस्वरूप आर्य के सम्पादकत्व में 'तुलसी मानस सन्दर्भ' शीर्षक से एक वृहद ग्रंथ प्रकाशित करने की योजना बनी थी। अतः 'तुलसी मानस संदर्भ' के लिए आलेख भेजने का आग्रह करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य का पत्र जब मिला तो मैं उनसे जुड़ा और फिर तो निरन्तर जुड़ा ही रहा। प्रतिभा, ज्ञान और विनम्रता के 'संगम' डॉ. रामस्वरूप आर्य से मेरा सारस्वत संपर्क निरन्तर बढ़ता गया और उनका सहज स्नेह-सम्मान मुझे सदैव मिला।

कर्त्तव्य परायण शिक्षक- डॉ. रामस्वरूप आर्य मूलतः शब्द साधक के रूप में मुझे मिले थे, लेकिन उनके व्यत्तिक्तव का एक पक्ष अत्यन्त 'कर्त्तव्य परायण शिक्षक' का ऐसा रहा है, जिसे मैं कभी भूल नहीं सकता।

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली द्वारा आयोजित

एम.ए. हिन्दी की मौखिक परीक्षा में 'बाह्य परीक्षक' बनकर मैं जब परीक्षा लेने पहुँचा तो डॉ. रामस्वरूप आर्य मौखिक परीक्षा के 'आन्तरिक परीक्षक' थे।

वे मुझ से आयु के साथ ही अनुभव में भी बहुत बड़े थे, लेकिन उनके व्यवहार में कहीं भी मैंने 'अहं' या 'बड़प्पन' का भाव नहीं देखा। सहज रूप में मैंने डॉ. आर्य से जब पूछा कि ''क्या आप मुझे अच्छे विद्यार्थियों के नाम बताएँगे, जिनसे मैं अधिक प्रश्न पूछ कर उन्हें पुरस्कृत कर सकूँ?'' तो अत्यन्त सहज भाव से जो उत्तर डॉ. आर्य ने मुझे दिया था, वह मेरे हृदय को छू गया था। उन्होंने कहा- ''अरुण जी! ये सब तो मेरे बच्चे हैं, इसलिए सभी मुझे प्रिय हैं। आप इस समय 'परीक्षक' हैं और मैं केवल आपका 'सहायक' हूँ। आप विवेकशील हैं, मेरे प्रिय हैं, मेरा सम्मान करते हैं, अतः बिना कुछ भी सोचे या मेरी परवाह किए उनकी परीक्षा लीजिए।''

आज डॉ. रामस्वरूप आर्य का स्मरण करते समय उनके भीतर बैठे एक अत्यन्त समर्पित, निष्ठावान और विनम्र सच्चे शिक्षक को मैं मन-ही-मन याद करके स्वयं को धन्य मान रहा हूँ।

सहृदय गुणग्राहक समीक्षक- कविकुल-गुरु महाकवि कालिदास की परम विदुषी पत्नी विद्योत्तमा पर केन्द्रित मेरा महाकाव्य 'वैदुष्यमणि विद्योत्तमा' हिन्दी साहित्य निकेतन, बिजनौर से छपा था। प्रकाशक ने डॉ. रामस्वरूप आर्य को इस काव्य कृति की प्रति भेजी होगी, जिसका कोई ज्ञान मुझे तो दूर-दूर तक भी नहीं था।

एक दिन डाक में एक लिफाफा मुझे मिला, जिस पर प्रेषक के रूप में डॉ. रामस्वरूप आर्य का नाम लिखा था। मैंने उत्सुकतावश लिफाफा खोला, तो मुझे डॉ. रामस्वरूप आर्य द्वारा लिखी गई 'वैदुष्यमणि विद्योत्त्मा' महाकाव्य की समीक्षा मिली। उसी के साथ डॉ. आर्य का 'मोतीजड़ा पत्र' भी था, जिसमें उन्होंने अपनी प्रसन्नता के साथ-साथ मेरे प्रति अपनी सहज शुभकामनाएँ भी लिखकर मुझे उपकृत किया था।

ऐसा सहृदय गुणग्राहक समीक्षक मुझे माँ शारदा की कृपा से मिला, जिसने लिखा था- ''यह महाकाव्य कृति 'वैदुव्यमणि विद्योत्तमा' डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण' को अपार यश एवं कीर्ति दिलाएगी, इस विश्वास के साथ मैं डॉ. 'अरुण' का अभिनंदन-वन्दन करता हूँ।''

आज जब श्रद्धेय डॉ. रामस्वरूप आर्य इस संसार में नहीं है तब भी मुझ जैसे हजारों कृतज्ञ सरस्वती -साधक उनकी इस 'गुणग्राहक दृष्टि' को इसलिए नमन

करते हैं कि यह प्रेरणा का अक्षय स्रोत बनकर हमारे विकास में सहायक बनी है। मैं आज निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ कि एक सहृदय समीक्षक के रुप में माँ वाणी के यशस्वी एवं निष्ठावान साधक डॉ. रामस्वरूप आर्य ने जो प्रेरणा का अमृत रचनाकारों को दिया, उसने सत्साहित्य के सृजन की शक्ति नवोदित रचनाकारों को दी है।

वरेण्य वट-वृक्ष- श्रद्धेय डॉ. रामस्वरूप आर्य से मेरी अन्तिम भेंट डॉ. अजय जन्मेजय द्वारा आयोजित 'धरोहर-सम्मान समारोह' में हुई, जिसमें डॉ. आर्य को भी सम्मानित किया गया था। जब डॉ. आर्य सभागार में पधारे तो मैंने श्रद्धाभाव से उन्हें प्रणाम किया। जाने किस अदृश्य प्रेरणा से मैंने उनके दोनों हाथ पकड़ कर अपने सिर पर रखते हुए कहा- "डाक्टर साहब, मुझे आशीर्वाद दीजिए, आप मेरे प्रेरक अग्रज हैं।" और डॉ. रामस्वरूप आर्य ने मुझे खींच कर अपने गले से लगाया और मेरे सिर पर हाथ रखकर "यशस्वी भव: " कहते हुए अपना भावपूर्ण आशीष देकर कृतार्थ किया। "जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु" के अनुसार डॉ. रामस्वरूप आर्य की देह भी पंचतत्व में विलीन हो चुकी है, लेकिन उनकी 'अक्षर साधना' की सुगंध तो हमें सदा अनुप्राणित करती ही रहेगी-

"अक्षर-साधक बनकर तुम तो,
अमृत रूप में जीवित हो!
हे वाणी के वरद पुत्र तुम तो,
अक्षर रूप में जीवित हो!!"

पूर्व प्राचार्य एवं सदस्य, साहित्य अकादमी
74/3, न्यू नेहरु नगर, रुड़की, 247667

4 . डॉ. रामस्वरूप आर्यः मेरी नजर में

(प्रो.)शिव बिहारी लाल भटनागर
एम.ए., एम.एड्.

डॉ. रामस्वरूप आर्य और मैं अगस्त, 1960 ई0 में पहली बार सपंर्क में आये तथा दोनों ने एक-दूसरे को भली भाँति प्रभावित किया। इसके फलस्वरूप मौहल्ला भाटान में दोनों ने एक बड़ा मकान किराये पर ले लिया। सात वर्ष तक दोनों परिवार प्रेमपूर्वक रहे। बच्चे दोनों के छोटे-छोटे थे। इस अवधि में मैत्री इतनी बढ़ गयी कि दोनों ने शक्ति चौराहे के निकट नई बस्ती में एक साथ जमीन खरीदी और रहने लायक मकान बना लिए। मैं लगभग बाईस वर्ष आर्य जी के साथ रहा और एक ऐसा मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बना, जैसे हम एक ही परिवार से हों। मैं आर्य जी के व्यक्तित्व के विषय में जितना जानता हूँ, उतना और कोई नहीं जानता। वे सादा जीवन और उच्च विचार वाले व्यक्ति थे।

स्वभाव- आर्य जी बरेली के एक सभ्रांत परिवार से थे और मैं मुजफ्फरनगर के एक संभ्रात परिवार से सम्बन्धित था। आर्य जी सरल स्वभाव, कोमल हृदय और मृदुभाषी थे। वे कहीं आते-जाते नहीं थे क्योंकि उनका व्यक्तित्व अंतर्मुखी था। जो उनसे मिलने आता था, उसका आदर सत्कार वे भली प्रकार करते थे। यहाँ पर हम दोनों में कुछ भिन्नता थी। वे अंतर्मुखी स्वभाव के थे और मैं बहिर्मुखी स्वभाव का हूँ। आर्य जी मुझे बड़े भाई के समान आदर देते थे।

विद्वान व्यक्ति- आर्य जी हिन्दी भाषा एवं साहित्य के बहुत बड़े विद्वान थे। उन्हें पढ़ने-लिखने के अतिरिक्त और कोई काम नहीं था। उन्होंने अपनी बैठक में एक तख्त पर अपने पढ़ने का प्रबंध का रखा था और उसी पर बैठकर वे पी-एच.डी. का कार्य करते थे। आर्य जी ने 1967 ई0 में आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपधि प्राप्त की। उनके निर्देशन में 17 छात्रों ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। आर्य जी वर्धमान कालेज की वार्षिक पत्रिका 'वर्धमान' के अनेक वर्षो तक प्रधान संपादक रहे और मैंने कई वर्षो तक पत्रिका के प्रबंध संपादक के रूप में कार्य किया। 'वर्धमान' पत्रिका के संपादन में आर्य जी ने अथक परिश्रम किया। अपनी विद्वता से उन्होंने पत्रिका को पर्याप्त प्रतिष्ठा दिलाई।

कुशल शिक्षक- आर्य जी के शिक्षण के विषय में उनके शिष्यों ने बहुत कुछ कहा है। मैं तो यह जानता हूँ कि उनकी शिक्षण-विधि बहुत प्रभावपूर्ण थी। कॉलेज में कक्षा में पढ़ाते समय उनकी आवाज कमरे के बाहर भी भली प्रकार सुनाई देती थी। इसके आधार पर ही लोग यह अनुमान लगा लेते थे कि इस कमरे

में कोई व्यक्ति बहुत प्रभावपूर्ण तरीके से शिक्षण कार्य कर रहा है। आर्य जी को अनेक साहित्यिक संस्थाओं ने सम्मानित किया।

गोस्वामी तुलसीदास रचित 'रामचरितमानस' उनका बहुत प्रिय ग्रंथ था और उन्हें कंठस्थ भी था। इसका सजीव वर्णन वे अपनी प्रभावपूर्ण शैली में करते थे।

निर्भीक एवं निडर व्यक्ति- आर्य जी का शारीरिक गठन सामान्य व्यक्ति का था। वे जब कॉलेज की वार्षिक परीक्षाओं में वरिष्ठ केन्द्राध्यक्ष के रूप में कार्य करते थे अथवा स्थानापन्न प्राचार्य के रूप में कार्य करते थे, तब उनके निर्भीक स्वभाव का पता चलता था। आर्य जी किसी भी परिस्थिति में भयभीत नहीं होते थे।

निरभिमानी प्राध्यापक- आर्य जी को अपनी योग्यता एवं पद का अभिमान बिल्कुल नहीं था। मुजफ्फरनगर के डी.ए.वी. इंटर कॉलेज में हाईस्कूल कक्षाओं को हिन्दी पढ़ाने वाले श्री वेद प्रकाश गर्ग मेरे मित्र थे ओर मेरे घर के पास ही रहते थे। उनका कार्यक्षेत्र प्राचीन ग्रंथों की खोज करना और उनकी समीक्षा करना था। आर्य जी उनके कार्य से बहुत प्रभावित थे। आर्य जी ने उनसे मिलने की इच्छा व्यक्त की। वे मेरे साथ मुजफ्फरनगर जाकर उनसे मिले, और उनके कार्य को देखकर उनकी पर्याप्त सराहना की।

पारिवारिक सम्बन्ध- आर्य जी के और हमारे पारिवारिक सम्बन्ध थे। उन्होंने अपने छोटे बेटे के विवाह में हमारे परिवार के उसी प्रकार चित्र खिंचवाये जैसे अपने अन्य सम्बन्धियों के खिंचवाये। आर्य जी हमें अपने परिवार के सदस्यों के समान आदर देते थे।

अन्तिम भेंट- यह केवल एक संयोग ही नहीं था बल्कि इसे हम दो हृदयों का परस्पर जुड़ने का संकेत कहेंगे। आर्य जी के स्वर्गवास से लगभग एक माह पहले मैंने उन्हें फोन पर सूचित किया कि मैं पिछले एक वर्ष से बीमार हूँ और आर्य जी अगले ही दिन मुझे देखने घर पर चले आये। उन्होंने अपनी बीमारी के विषय में बताया। उन्हें उस समय तक अपनी वास्तविक बीमारी का पता नहीं था। मेरे घर पर थोड़ी देर बैठकर आर्य जी चले गये। दो-तीन बाद उनके पुत्र (डॉ.) चन्द्र प्रकाश से मुझे सूचना मिली कि आर्य जी को कैंसर है। अगले दिन मैं और मेरा पुत्र सुनील भटनागर, आर्य जी से मिलने उनके घर गये तथा थोड़ी देर बाद लौट आये। उन्होंने लौटते समय हमें धन्यवाद दिया और कहा कि आप बीमार होने के बाद भी मुझसे मिलने आए। मैंने कहा कि हमारा आपसे बहुत पुराना सम्बन्ध है और यह तो हमारा कर्तव्य था। इस प्रकार उनके स्वर्गवास से लगभग एक माह

पहले हमारी उनसे दो बार भेंट हो गयी। यह भी एक दैवी संयोग था। तीसरी बार 03 अक्टूबर, 2016 को हमें केवल उनके पार्थिव शरीर के दर्शन ही हो सके। ऐसा लगा मानो हमसे कह रहे हों–

लाई हयात आये और ले चली कजा।
अपनी खुशी न आये, न अपनी खुशी चले।

पूर्व अध्यक्ष, बी.एड़. विभाग, वर्धमान कालेज, बिजनौर

***

5. हिन्दी के यशस्वी साधकः डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. सरोज मार्कण्डेय
एम.ए., पी–एच.डी.

नितांत अपने निकटस्थ सहकर्मी के बारे में पूर्णतः निरपेक्ष होकर लिखना सहज नहीं है। कारण? ऐसे में अपना ही बिंब, प्रतिबिंब बनकर अंकित होने लगता है लेकिन करें भी तो क्या? अपने अग्रज के समान, शुभचिंतक, सतत हितैषी डॉ. रामस्वरूप आर्य के विषय में कुछ न लिखना भी तो प्रकारान्तर से उनके अवदान की अवहेलना ही होगी। आज के इस स्वतः घोषित आत्मप्रदर्शन के युग में, गुटबाजी की क्षुद्रवृत्ति से दूर, संकोची किन्तु वैचारिक चेतना से संपन्न, जनप्रतिबद्ध भावनाओं से परिपूर्ण, स्वयंसिद्ध व्यक्तित्व से आवेष्टित डॉ. आर्य जी के निर्लिप्त औदात्य का अंकन तो होना ही चाहिए।

लाला बांकेलाल के आत्मज डॉ. राम स्वरूप आर्य की स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा बरेली कालेज में हुई थी। अपने विद्यार्थी जीवन में उन्होंने डॉ. गुणानंद जुयाल तथा डॉ. कुंदन लाल जैन से हिन्दी साहित्य परंपरा का मूल तत्व जाना तो पं. भोलानाथ शर्मा से विभिन्न आधुनिक भाषाओं का पारस्परिक सम्बन्ध पहचाना। इस गुरुमंत्र से प्राप्त विचार और संवेदना को अपने सहज ज्ञान तथा शिल्प से परिष्कृत कर डॉ. आर्य जी ने हिन्दी भाषी क्षेत्र के अध्येता वर्ग के लिए एक नई भाव सरणि निर्मित की जिसमें प्राचीन और अर्वाचीन युगीन भाषा और साहित्य का अनुभवजन्य उपयोगी निदर्शन है।

पी–एच.डी., साहित्यमहोपाध्याय, विद्यासागर, सरस्वती श्री, साहित्य श्री तथा हिन्दी भाषा भूषण जैसी उपाधियों से विभूषित डॉ. आर्य की आजीविका का क्षेत्र बरेली से बिजनौर तक महाविद्यालयी हिन्दी प्राध्यापक का रहा। प्राणवंत गुरु–शिष्य परंपरा के सुधी विद्यार्थी, सजग शिक्षक, जिज्ञासु शोधार्थी और व्याख्या विश्लेषित मूल्यांकन के पक्षधर, समीक्षक के रूप में उन्होंने वाम और दक्षिण पक्ष

से परे वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन बोध से समसामयिक विषयों के चिंतन को प्रतिष्ठित किया। प्राचीन और अर्वाचीन जीवन मूल्यों का संतुलन कर उन्होंने वस्तुनिष्ठ मध्यमार्गीय दृष्टिबोध से विकसित किया।

हिन्दी जगत में उनके प्रदेय को शिक्षक, शोधार्थी, समीक्षक, लेखक तथा वक्ता के रूप में मूल्यांकित किया जा सकता है। अपने सहज ज्ञान से संपन्न वे अपने विद्यार्थियों के प्रेरणा स्त्रोत बने। एक सजग शिक्षक के रूप में उन्होंने अपने सभी शिष्यों की मेधा और प्रतिभा को पहचान कर उसे सही दिशा प्रदान की। उन्होंने शिक्षक तथा छात्रवर्ग के पारस्पारिक अंतर को कम करके गुरु-शिष्य की स्वस्थ परंपरा का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया।

हिन्दी साहित्य के समीक्षक के रूप में उन्होंने विचार संपन्न प्रतिबद्धता को सार्थकता प्रदान की। परंपरा को आधुनिक परिवेश में उपादेयता के निकष से संबद्ध कर उन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य की प्रासंगिकता को नई अर्थवत्ता प्रदान की। शोध तथा अनुसंधान की विस्मृत हो चुकी और अनछुई सरणियों के अनुसरणपरक उनके खोजपूर्ण आलेख भाषाओं, बोलियों तथा लोक इतिहास के समुच्चयपूर्ण अवदान से भरे पड़े हैं। छात्रोपयोगी लेखन से लेकर परंपरावादी शोध तक उन्होंने लेखन की एक परिपाटी को स्वीकार किया है तो उपाधि निरपेक्ष शोध द्वारा उन्होंने विभिन्न भाव भूमियों को समाहित कर चिंतन-अनुचिंतन की नई परंपरा का श्रीगणेश किया है। उनके द्वारा संपादित विभिन्न ग्रंथ तथा पत्रिकाएँ, उनके परिश्रम साध्य अवदान से हिन्दी-साहित्य-संसार की धरोहर सिद्ध हुई हैं।

डॉ. आर्य जी के लेखन तथा मान्यताओं के मध्यमार्गीय पक्ष के समान ही उनका व्यक्तित्व भी सौम्य और संवदेनशील रहा। अति व्यंजना तथा अति आत्माभिमान के चाकचिक्य में निस्पृह किन्तु भावप्रवण उनका सरल व्यक्तित्व ''तुमुल कोलाहल कलह में, तू हृदय की बाट रे मन'' के समान सहज संवेदनशील बना रहा। आज के प्रदर्शनप्रिय युग में यह बहुत बड़ी साधना है। हिन्दी के ऐसे यशस्वी साधक (डॉ.) आर्य जी की ऐसी चिरस्मरणीय साधना को मेरा शत-शत नमन।

पूर्व प्राचार्या तथा पूर्व संयोजिका, हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोध समिति,
एम.जे.पी. रुहेलखंड विश्वविद्यालय, बरेली।

***

6. साहित्य के मर्मज्ञः श्रद्धेय डॉ. आर्य जी

डॉ. उषा जैन

एम.ए., पी-एच.डी.

आज श्रद्धेय डॉ. आर्य जी – डॉ0 रामस्वरूप आर्य हमारे बीच नहीं हैं, उनकी स्मृतियाँ ही अब शेष हैं। कुछ समय पहले उनसे एक गोष्ठी में भेंट हुई थी, तत्पश्चात उनकी अस्वस्थता का समाचार तो मिला था, पर इतनी जल्दी वे संसार से विदा ले जायेंगे, सोचा भी नहीं था। मैं अपने स्मृति पटल से विस्मृति की धूल हटा कर सुदूर अतीत में झाँकने का प्रयास कर रही हूँ। सन् 1960 में हमारे नगर बिजनौर में वर्धमान कॉलेज की स्थापना हुई थी। यह कॉलेज पूरे बिजनौर जनपद में उच्च शिक्षा प्रदान करने वाला पहला कॉलेज था, जिसने बिजनौर के शिक्षार्थियों के लिये उच्च शिक्षा के द्वार खोल दिये थे। मैने सन् 1961 में कॉलेज में एम.ए. हिन्दी साहित्य के द्वितीय वर्ष में प्रवेश लिया था। उस समय हिन्दी विभाग में केवल तीन प्रवक्ता ही थे, डॉ. रामस्वरूप आर्य विभागध्यक्ष थे, दो अन्य थे डॉ. नरेन्द्र कुमार शर्मा और डॉ. श्रीमती सुधा गुप्ता। डॉ. आर्य जी हमें दो प्रश्नपत्र पढ़ाते थे, तब ही हमें हिन्दी साहित्य में उनकी परम विद्वत्ता, उनकी गम्भीर प्रकृति किन्तु साथ ही उनकी सरलता और सादगी का परिचय मिला था। साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी गहरी पकड़ थी। वे अध्यापन कला में पारंगत थे, कठिन से कठिन विषय को सरलता से समझा देने की कला उनके पास थी। भाव साम्य के लिये उनकी स्मृति कोश में साहित्य के अनेक उद्धरण , काव्य खंड, साहित्यकारों के अनेक प्रसंगों का भंडार भरा रहता था, जिससे कठिन और नीरस विषय भी सरल और रोचक हो जाता था। उनके प्रवचन श्रोत्रपेय होते थे।

सन् 1965 में वर्धमान कॉलेज में हिन्दी विभाग में प्रवक्ता के पद पर मेरी नियुक्ति हुई, तब से सन् 1993 तक, जब डॉ. आर्य जी ने अवकाश ग्रहण किया-28 वर्ष तक मैंने उनके सान्निध्य में विभाग में कार्य किया। उनका व्यवहार सदैव ही सहयोगपूर्ण और सौहार्दपूर्ण रहता था। उनकी ही प्रेरणा से और उनके ही निर्देशन में मैंने शोधकार्य संपन्न किया और शोध-उपाधि प्राप्त की। शोध के लिए जब विषय चयन का प्रश्न उठा, तब मेरे पिता जी ने कहा कि मैं जैन साहित्य से संबंधित विषय का ही चयन करूँ, डॉ. आर्य जी ने तत्काल ही इसके लिए अपनी सहमति दे दी और पूरी शोध प्रक्रिया में यथासंभव मेरा सहयोग किया। इस प्रक्रिया में मैंने अनुभव किया कि जैनधर्म के गूढ सिद्धान्तों के विषय में जानने की

उन्हें जिज्ञासा रहती थी और उनके प्रति सम्मान का भाव रहता था।

इतनी दीर्घ अवधि में डॉ. आर्य जी के व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं का परिचय मिला, जिन्हें इस छोटे से लेख में पूरी तरह उजागर करना संभव नहीं है। कभी-कभी किसी कारण से जब कक्षाएँ नहीं होती थीं ,तब रिक्त कालांश में स्टाफरूप में डॉ. आर्य जी प्राय: साहित्यकारों से संबंधित अनेक रोचक प्रसंग, संस्मरण आदि सुनाते थे। प्राचीन तथा आधुनिक कवियों के अनेक काव्य खंड उन्हे कंठस्थ थे। उनका ज्ञान का क्षेत्र अपरिमित था, साहित्य का कोई विषय ऐसा नहीं था, जहाँ उनकी गहरी पकड़ न हो। क्या छंद शास्त्र , क्या अलंकार शास्त्र, कभी संस्कृत के सूत्रवाक्य तो कभी उर्दू के शेर, कभी पौराणिक आख्यान, सभी जगह उनकी गहरी पैठ थी। वे सच्चे अर्थो में साहित्य के मर्मज्ञ अध्येता थे, उन्हें चलता फिरता शब्दकोश कहें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। उनके सामीप्य में व्यतीत हुआ समय बहुत आनन्दप्रद होता था।

उच्च कोटि के विद्वान होने के साथ साथ डॉ. आर्य जी एक भले और सहृदय इंसान भी थे। अभिमान तो उन्हें छू भी नहीं गया था। विनम्रता, विनयशलिता उनके स्वभाव में सदैव झलकती थी। साहित्यकारों तथा अपने गुरुओं के नाम वे बड़े आदर के साथ लेते थे। मैंने उन्हें कभी किसी साहित्यकार अथवा किसी साथी की निंदा करते नहीं सुना। इस लम्बी अवधि में बहुत से ऐसे अवसर आये जब उनके भावुक हृदय का परिचय मिला। बरेली में जब उनकी माता जी का निधन हुआ, वहाँ से लौट कर आने के पश्चात वे बहुत अधिक द्रवित हो उठे थे। मेरी बहुत सी पारिवारिक कठिनाइयाँ सम्मुख आने पर उनका संवेदनशील , परदुखकातर तथा आत्मीयतापूर्ण व्यवहार मन में साहस और सम्बल भर देता था। उनकी अध्यक्षता में बीते समय में ऐसा लगता था कि जैसे हम विशाल छायादार वृक्ष की छाया में निश्चित बैठे हैं।

डॉ. आर्य जी का साहित्यिक योगदान भी विस्तृत है। इस विषय पर एक स्वतंत्र लेख अपेक्षित है। उन्होंने छात्रों का हित दृष्टि में रखकर अनेक छात्रोपयोगी पुस्तकों का लेखन किया। कॉलेज से अवकाश ग्रहण करने के पश्चात उनकी भावपूर्ण प्रकाशित पुस्तिका 'विचार बिन्दु' में विचार गद्यगीतों के रूप में अंकित हैं। सन् 1997 में प्रकाशित 'परम्परा और आधुनिकता' तथा सद्यप्रकाशित उनकी पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' में उन्होंने साहित्य और हिन्दी साहित्याकारों से संबंधित अनेक नवीन और अछूते विषयों पर लेखनी उठाई है। इन दोनो पुस्तकों में लगभग सभी निबन्ध ऐसे हैं, जिनकी सामग्री अन्यत्र मिलना कठिन है।

'परम्परा और आधुनिकता' में जैसे 'मुसलमान कवियों द्वारा श्री राम-स्तवन', 'काशी-नागरी प्रचारिगी सभा के सौ वर्ष'। 'चिन्तन-अनुचिन्तन' में 'उत्तरप्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग ,' 'साहित्यिक संशोधन' आदि। ये लेख डॉ. आर्य जी के खोजी, शोधपरक और जिज्ञासु स्वभाव के परिचायक हैं, बहुत रोचक हैं, इनका ऐतिहासिक महत्व है। इनके अतिरित्त उनके 200 से भी अधिक लेख और समीक्षाएँ विभिन्न सम्मानित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। उनके द्वारा सम्पादित ग्रंथों और पत्रिकाओं की तालिका बहुत विस्तृत है। वे विभिन्न साहित्यिक संस्थाओं के सम्मानित और महत्वपूर्ण पदों पर आसीन रहे। अनेक संस्थाओं के द्वारा उन्हें सम्मानित और अलंकृत किया गया।

डॉ. आर्य जी मृत्यु-पर्यन्त हिन्दी साहित्य साधना में लीन रहे। उनकी पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' मृत्यु से कुछ समय पूर्व ही प्रकाशित हुई थी। उनके लेख भी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते थे। कुछ समय पूर्व ही 'साहित्य-अमृत' पत्रिका में उनके द्वारा रचित संस्मरण 'वृषभ' पढ़ा था। उनके अकस्मात ही संसार से प्रयाण कर जाने पर मुझे पं0 रुद्रदत्त शर्मा वाले उनके ही आलेख में पं0 पद्म सिंह शर्मा की, उनके ही द्वारा उद्धृत पंक्तियाँ स्मरण आ रही हैं, जो स्वयं उनके लिए भी उपयुक्त लग रही हैं-

जिए जब तक, लिखे खबरनामे।
चल दिये हाथ में कलम थामे।।

अंत में उनकी स्मृतियों को- उनकों मैं श्रद्धा-सुमन अर्पित करती हूँ। 'विचारबिंदु' में उनके ही द्वारा कहा गया यह कथन उनके लिए भी कितना सटीक बैठता है-

फूल झर जाता है पर/उसकी सुगन्धि कभी समाप्त नहीं होती।
'धनि सोई जस कीरति जासू।'/ फूल मरै पै मरै न वासू।।

अपने विपुल साहित्यिक कृतित्व और अपनी स्मृतियों में डॉ. आर्य जी सदैव अमर रहेंगें।

पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्षा, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

***

7. मूर्धन्य साहित्यकार डॉ. राम स्वरूप आर्य

वी.पी. गुप्ता
वरिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार

हिन्दी साहित्य जगत में डॉ. राम स्वरूप आर्य एक ऐसा प्रतिष्ठित नाम है जिनकी असीम विद्वता और ज्ञान की गहराई के कायल साहित्य के प्रकाण्ड पण्डित सदा ही रहे हैं। साहित्य की विविध विधाओं, यथा गद्य, पद्य, निबन्ध, समीक्षा, संपादन, प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज इत्यादि में उनका कार्य, गहन अध्ययन और लेखन उनकी विलक्षण प्रतिभा का द्योतक है।

अपने गृह जनपद के प्रसिद्ध कॉलेज , बरेली कॉलेज के हिन्दी विभाग में प्रवक्ता पद से अपने शिक्षण कैरियर का प्रारंभ करने वाले डॉ. रामस्वरूप आर्य वर्ष 1960 ई० में बिजनौर में वर्धमान कॉलेज की स्थापना होने पर, हिन्दी, संस्कृत विभाग के अध्यक्ष पद पर नियुक्त होकर यहाँ चले आये। उस समय हिन्दी-संस्कृत का संयुक्त विभाग होता था। डॉ. आर्य दोनों विषयों में एम.ए. थे और प्रारम्भिक वर्ष में उन्होंने कॉलेज में हिन्दी व संस्कृत, दोनों विषयों का अध्यापन किया था। वर्ष 1967 में उन्होंने हिन्दी में आगरा विश्वद्यिालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। वर्ष 1960 ई० से लेकर वर्ष 1993 ई०में अपनी सेवानिवृत्ति तक डॉ. आर्य ने इस पद पर रहते हुए कितने जिज्ञासु छात्र-छात्राओं को ज्ञान बांटा, कितनों को शोध कार्य कराया तथा अपनी पुस्तकों, शोध-पत्रों एवं आलेखों के माध्यम से हिन्दी साहित्य की कितनी अभिवृद्धि की, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

जिस समय डॉ. रामस्वरूप आर्य ने वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में हिन्दी विभागाध्यक्ष पद सँभाला, उस समय उनकी आयु 27-28 वर्ष रही होगी। उनसे मेरा परिचय उनके बिजनौर आगमन के एक-दो वर्ष बाद ही हो गया था। वे शान्त, गम्भीर और विनम्र स्वभाव के व्यक्ति थे और बहुत मृदु स्वर में और नपे तुले शब्दों में, बहुत सहजता के साथ बात करते थे। मैं बिजनौर के एक कॉलेज में अंग्रेजी विषय का अध्यापक था। हिन्दी साहित्य में मेरी गहरी रुचि थी। अपने कॉलेज में आयोजित एक साहित्यिक कार्यक्रम में डॉ. आर्य को आमन्त्रित करने के लिए मैं उनके आवास पर गया था। वे मौहल्ला भाटान में एक किराये के आवास में रहते थे। बाद में डॉ. आर्य ने नई बस्ती मौहल्ले में अपना निज का आवास निर्मित करा लिया था। उनसे प्रथम भेंट में ही मैं उनकी सरलता, सादगी और विनम्र व्यवहार से अत्यधिक प्रभावित हुआ। जिस एक अन्य बात ने मुझे

विशेष आकर्षित किया, वह था डॉ. आर्य का दुर्लभ साहित्य-संग्रहण। उस कक्ष में जहाँ हम बैठे थे, चारों ओर , दीवारों के सहारे, नीचे से उपर तक रखे लकड़ी के रैकों में नये-पुराने प्रसिद्ध साहित्यकारों और लेखकों की पुस्तकें बड़े करीने से सजी हुई थीं, तथा वे प्रसिद्ध पत्रिकाएँ, जिनका प्रकाशन भी कभी का बन्द हो चुका था, अपने सम्पूर्ण अंकों में संगृहीत थीं। मैं देखता रह गया। अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि राबर्ट सदी की कविता 'द स्कालर' की निम्न पंक्तियाँ मेरे मस्तिष्क में कौंध गईं जो पुस्तकालय में बैठा विद्यानुरागी कहता है-

संग दिवंगत बीत रहे दिन/मेरे चारों ओर उपस्थित, (लेखक द्वारा
जहाँ कही भी दृष्टि जाती/ हैं अतीत के दिग्गज पण्डित। अनुदित)

इसके बाद तो डॉ. आर्य से मिलते रहने का सिलसिला चल पड़ा। अक्सर किसी साहित्यिक कार्यक्रम में, किसी काव्य गोष्ठी में, किसी सांस्कृतिक आयोजन में उनसे भेंट हो जाती और वे अपनी स्वाभाविक मुस्कान के साथ बड़ी आत्मीयता से बातें करते। कभी कोई जिज्ञासा लेकर मैं उनके आवास पर पहुँच जाता, और कभी मैं अपने आवास पर कोई साहित्यिक कार्यक्रम आयोजित करता तो वे समय निकालकर अवश्य पहुँचते। कहना न होगा कि डॉ. आर्य जी की उपस्थिति से किसी भी गोष्ठी का चिन्तन स्तर उठ जाता और सभी उपस्थित जन उनके द्वारा किये गये विवेचन को सुनकर लाभान्वित होते।

डॉ. रामस्वरूप आर्य हिन्दी और संस्कृत साहित्य के परम विद्वान होने के साथ ही, उर्दू काव्य में भी गहरी रुचि रखते थे। उर्दू के प्रसिद्ध कवियों की शायरी व गजलगोर्ह का उन्होंने भली प्रकार अध्ययन किया था, जिसकी झलक उनके अनेक ललित निबन्धों में देखने को मिलती है। कुछ ही समय पहले उनकी एक पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' प्रकाशित हुई थी जिसमें उन्होंने विविध साहित्यिक, सामाजिक, आध्यात्मिक व सांस्कृतिक विषयों पर शोध-परक निबंध लिखे हैं। लगभग सभी लेखों में प्रस्तुत विचारों को उन्होंने हिन्दी साहित्य के प्रख्यात कवियों के सम्बंधित काव्यांशो को उद्धृत करके, पूरे संग्रह को ही काव्यमय बना दिया है। केवल हिन्दी कवियों के ही नहीं बल्कि कहीं-कहीं उर्दू के प्रसिद्ध कवियों की रचनाओं से भी उद्धरण लिए हैं जिससे लेखों में विशेष रोचकता उत्पन्न हो गई है।

डॉ. रामस्वरूप आर्य बहुत ही सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। वे न तो स्वयं किसी की निन्दा करते थे, ना ही किसी के द्वारा की जा रही किसी की निन्दा में रुचि लेते थे। किसी व्यक्ति के बारे में अपनी राय सोच-समझ कर बनाते थे और फिर

अपनी राय को आसानी से बदलते नहीं थे। वे किसी से भी स्वाभाविक रूप से स्नेह करते थे, दिखावा करना उनको नहीं आता था। जब मैंने अपने काव्य-संग्रह 'मधुबन' की प्रति उनको भेंट की तो वे बहुत प्रसन्न हुए। कुछ ही दिन पश्चात एक सामाचार पत्र में उस पुस्तक पर उनके द्वारा लिखी गई समीक्षा पढ़कर मैं सुखद आश्चर्य से भर गया। मेरा सौभाग्य है कि डॉ. आर्य जी ने मेरी अन्य कृतियों की भी समीक्षाएँ लिखीं जिससे निश्चय ही मेरा मनोबल बढ़ा।

एक बार की बात है मुझे आकाशवाणी नजीबाबाद से एक वार्ता का आमन्त्रण मिला, जिसका तीन शब्दीय शीर्षक भी साथ आया-'रहिमन जिह्वा बावरी'। मैं मन में इस अधूरे शीर्षक का ताना-बाना बुनते हुए किसी कार्यवश बाजार की ओर गया, तो वहाँ एक प्रतिष्ठान पर डॉ. आर्य जी से भेंट हो गई, जो वहाँ संयोग वश आये थे। मैंने उनसे इस आमन्त्रण और शीर्षक के बारे में बताया। डॉ. आर्य जी ने मेरी बात शान्ति से सुनी और फिर रहीम के दोहे को न केवल पूर्ण किया-

रहिमन जिह्वा बावरी, कहे सरग-पताल,
आप तो कह भीतर गई, जूती खाये कपाल।

बल्कि कुछ ही मिनटों में इस दोहे के मर्म की व्याख्या तथा वाणी पर नियन्त्रण रखने की आवश्यकता की भी सटीक विवेचना कर दी।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी जैसे विद्वान मनीषी के निधन से हिन्दी साहित्य की जो अपार क्षति हुई है, उसकी पूर्ति निकट भविष्य में हो पाना कठिन हैं। उनकी पावन स्मृति को शत-शत नमन।

जाटान स्ट्रीट, बिजनौर

***

8. डॉ. आर्य जी को मैंने जितना जाना और परखा

चन्द्रमणि रघुवंशी
वरिष्ठ पत्रकार एवं साहित्यकार

दुबले-पतले कृशकाय व्यक्ति जिनके अधरों पर तो मुस्कराहट की महीन रेखा खिंची रहती थी लेकिन वे कभी ठहाका मारकर हँसे नहीं, उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली नहीं था, पर उनके चेहरे पर विद्वता की छाप थी लेकिन उनकी बॉडी लैंग्वेज बताती थी कि वे विद्वान हैं, साहित्यकार हैं लेकिन उनके चेहरे तथा हावभाव में सरलता और विनम्रता ही टपकती थी। मेरे अनुज डा. सूर्यमणि रधुवंशी ने जब वर्धमान कॉलेज में अपनी शिक्षा पूरी करके विदाई ली थी, तब उसने डॉ. रामस्वरूप् आर्य जी से जीवन की सफलता का मूल मंत्र माँगा था, डॉ.

रामस्वरूप आर्य जी ने जी स्नेह से सिंचित होकर उनके सिर पर हाथ रखकर मंत्र दिया था-"सदैव निष्कपट भाव से प्रशंसा करो, वह प्रसन्न होगा तो तुम्हें भी प्रसन्नता का आशीर्वाद मिलेगा।"

लेकिन डॉ. आर्य जी ने मुझे ऐसा कोई मंत्र नहीं दिया जिससें मैं जीवन की पाठशाला में अनुत्तीर्ण छात्र बनकर रह गया हूँ। डॉ. आर्य जी के मंत्र में जीवन की सार्थकता निहित है, काश इस सार्थकता को सभी लोग समझ पाते और अपनाते, अगर ऐसा होता तो सभी का जीवन प्रसन्नता से भरा-पूरा होता।

मैंने बी.ए. तथा एम.ए. की परीक्षाएँ वर्धमान कॉलेज, बिजनौर से उत्तीर्ण की हैं। मैं डॉ. आर्य जी की कक्षा का हठी और शरारती छात्र रहा हूँ। मुझे एक प्रसंग याद आ रहा है कि एम.ए. हिन्दी साहित्य की कक्षा में डॉ. आर्य जी मलिक मौहम्मद जायसी का काव्य 'पद्मावत' पढ़ा रहे थे, जिसमें महारानी पदमावती के नख-शिख के सौन्दर्य का वर्णन था। आलंकारिक भाषा में नख-शिख सौन्दर्य सुनकर मेरे अन्दर का शरारतीपन जाग उठा। डॉ. आर्य जी ने रानी पद्मावती की नाभि तक के सौन्दर्य का वर्णन व्याख्या सहित पढ़ा दिया लेकिन उसके बाद बोले कि आगे का भाग बच्चों तुम खुद पढ़ लेना। पर मेरा शरारती मन कैसे मानता, मैंने कक्षा में खड़े होकर सवाल पूछा-"गुरुजी, नाभि से अगले भाग के सौन्दर्य वर्णन पर कोई सवाल आ गया तो हम क्या जवाब लिखेंगे क्योंकि यह भाग तो आप पढ़ा नहीं रहे हैं।" कक्षा में हम तीन छात्र और शेष 63 छात्राएँ थीं। छात्राओं की उपस्थिति देखकर डॉ. आर्य की आंखें विवशता में भीग आईं और मुझे अलग बुलाकर कहा-"चन्द्रमणि, आज के बाद तुम कोई सवाल मत पूछना, चाहे तुम कक्षा में आओ या न आओ और झपकी भी ले लो तो मैं तुम्हें डाटूँगा नहीं।"

डॉ. आर्य जी की आँखों की तरलता को देखकर मैं लज्जित हो उठा और मुझे अहसास हुआ कि मैंने एक भद्र पुरुष की सीमा लाँघने का दुस्साहस किया है। उसके बाद मैंने कभी भी डा. आर्य जी से किसी भी प्रसंग पर कोई सवाल नहीं पूछा, शायद यह ऐसा पश्चाताप था।

मैंने डॉ. आर्य जी के सहयोग से 'बिजनौर टाइम्स' के दो विशेषांको का संपादन किया, इन दोनों विशेषांकों के संपादन में मुझे डॉ. आर्य जी की विद्वता, साहित्यिक पैठ तथा योगदान का परिचय मिला, आचार्य पद्म सिंह शर्मा विशेषांक के संपादन सहयोगी की भूमिका का निर्वाह करते हुए मुझे डॉ. आर्य जी का संपादकाचार्य डॉ. बनारसी दास चतुर्वेदी के सान्निध्य और आत्मीयता का भी प्रमाण मिला। श्रद्धेय डॉ. बनारसी दास चतुर्वेदी भी डॉ. आर्य जी का, उनकी

योग्यता तथा विद्वता के लिये बहुत सम्मान करते थे। इस विशेषांक के संपादन के दौरान श्रद्धेय डॉ. बनारसी दास चतुर्वेदी अपने पुत्र के पास कोटद्वार में रहते थे और उनसे बिना किसी पूर्व सूचना के मिलने का अधिकार मेरी दृष्टि में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को ही था और डॉ. बनारसी दास चतुर्वेदी उनसे अपनी बीमारी भी नहीं छिपाते थे। डॉ. आर्य जी से ही मुझे पता चला कि श्री चतुर्वेदी जी बबासीर के असाध्य रोग से पीड़ित हैं। उनके इस रोग से डॉ. बनारसी दास चतुर्वेदी का अंतिम काल कष्टप्रद बीता। डॉ. आर्य जी उन्हें समय -समय पर सांत्वना देते थे और उपचार भी बताते थे लेकिन डॉ. आर्य जी चिकित्सक तो नहीं थे, इसलिये वे श्री चतुर्वेदी जी के रोग का स्थायी उपचार नहीं कर पाये।

मैं डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को अपना गुरु मानते हुए श्रद्धासुमन अर्पित करना अपना कर्तव्य मानता हूँ। डा. रामस्वरूप आर्य जी अपने जीवन के अंतकाल में कैंसर से पीड़ित होते हुए भी अपना असाध्य रोग छिपाते थे और जब भी मिलते थे, तब वे अपनी साहित्य साधना की चर्चा करते थे। डॉ. आर्य जी ने अपने असाध्य रोग को छुपाते हुए मुझे सदैव साहित्यिक संदेश दिया, जो कि मेरे लिये तपोभूमि है।

मेरी हार्दिक आकांक्षा थी कि डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को उनकी साहित्यिक सेवाओं, विद्वता के लिये उत्तर प्रदेश सरकार किसी यथा योग्य सम्मान से सम्मानित करे, मैंने बहुतेरा प्रयास भी किया, लेकिन मैं सफल होकर एकलव्य की तरह गुरु द्रोणाचार्य को अपना अंगूठा भेंट न कर सका।

संपादक, दैनिक 'बिजनौर टाइम्स', बिजनौर

***

९. डॉ. राम स्वरूप आर्य : मेरे पथ प्रदर्शक

अशोक मधुप
वरिष्ठ पत्रकार

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी मेरे शिक्षक ही नहीं रहे अपितु मेरे पथ प्रदर्शक भी थे। जब आवश्यकता होती, मेरी सहायता करते थे। जब उनका मन होता, मेरे पास आ जाते थे।

डॉ. आर्य जी से मिलने से पूर्व ही शिवदयालु गंगवार जी से मेरा परिचय हो गया था। शिवदयालु जी बरेली के मूल निवासी थे। बिजनौर में रोडवेज में बुकिंग क्लर्क के पद पर कार्य करते थे। वे डॉ. आर्य जी के परम प्रिय शिष्य थे और हमारे बड़े भाई जैसे थे।

डॉ. आर्य जी गर्मियों में वर्धमान कॉलेज में ग्रीष्मावकाश होने पर अपने मूल निवास बरेली चले जाते थे। तब वे शिवदयालु जी को अपने आवास की देखभाल का दायित्व सौंप जाते थे। शिवदयालु जी डॉ. आर्य जी के निवास की चाबी हमें दे देते थे। गर्मियों में प्राय: बिजनौर में जिला कृषि एवं औद्योगिक प्रदर्शनी भी नुमाइश ग्राउंड में लगती थी। मैं और झालू का रहने वाला मेरा साथी सुशील अग्रवाल सांय काल की ट्रेन से बिजनौर आ जाते थे। रात में हम दस-ग्यारह बजे तक नुमाइश देखते थे। उसके पश्चात डॉ. आर्य जी के आवास पर जाकर सो जाते थे। प्रात: काल उठकर ट्रेन से अपने घर झालू चले जाते थे।

इससे पूर्व डॉ. आर्य जी से मिलना नहीं हुआ था। ग्रीष्मावकाश में वह अपने मकान के कमरे में चीनी का डिब्बा छोड़ गये थे। हम कई बार इस चीनी से शरबत बनाकर पीते थे। इस समय तक हमारे यहाँ बिजली नहीं थी। डॉ. आर्य जी के आवास में बरामदे में पंखा लगा था। रात में उसे चलाकर हम सो जाते थे। इस समय गर्मी से राहत तो बहुत मिलती थी लेकिन रात्रि में पंखे में सोने की हमारी आदत नहीं थी, इसलिये सवेरे हमारे सिर में दर्द भी प्राय: हो जाता था। धीरे-धीरे डॉ. आर्य जी के साथ मेरा संपर्क बढ़ता चला गया। बहुत से विषयों पर उनसे बातें होती थीं। जब मेरा मन होता, तब मैं उनके पास वार्तालाप करने चला जाता था।

बिजनौर जनपद का इतिहास कला, संस्कृति के सरंक्षण के लिए मैंने बिजनौर जिले पर ब्लाग पोस्ट के काम पर काम करना शुरू किया था। डॉ. आर्य जी ने इस कार्य के लिए मुझे बहुत प्रोत्साहित किया। इस पर सँजोने के लिए उन्होंने अपने कई आलेख मुझे दिये, जो यहाँ सुरक्षित हैं।

डॉ. आर्य जी की बहुत इच्छा थी कि इस संदर्भ में मेरी एक पुस्तक अवश्य प्रकाशित हो। जो मैंने लिखा है, उसे पुस्तक का रूप दिया जाना चाहिए। उन्होंने इस संदर्भ में मुझे बहुत प्रोत्साहित किया किन्तु ऐसा नहीं हो सका। मुझे आज भी इसका दु:ख है कि मेरी कोई पुस्तक नहीं छप सकी जबकि डॉ. आर्य जी इसके लिए सदैव प्रयास करते रहे । मुझे वे इस संदर्भ में निरन्तर प्रेरित भी करते रहे।

डॉ. आर्य जी का इस लौकिक संसार से विदा होना मेरे लिए बड़ी व्यक्तिगत क्षति है। आज मेरे पास कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जो एक अभिभावक के समान आकर मुझे समझाए और मुझे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करे। डॉ. आर्य जी को नमन के साथ श्रद्धांजलि।

25, अचारजान, बिजनौर।

10. अनूठे व्यक्तित्व के धनी: डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. कौशलनंदन गोस्वामी
एम.ए,पी-एच.डी.

संसार में कतिपय ऐसे विरले लोग होते हैं, जिनका जीवन, व्यक्तित्व, व्यावहारिक ज्ञान तथा उनकी विलक्षण प्रतिभा जनमानस के हृदय को छू लेती है। उनकी लोकोपकारी भावना और सबके प्रति ज्ञान-संवर्द्धन की प्रवृत्ति प्रेरणास्पद होती है। ऐसे विरले सत्पुरुषों में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। वे सज्जन और सरल स्वभाव के व्यक्ति ही नहीं थे अपितु विद्वान और सफल प्राध्यापक भी थे। लेखन के क्षेत्र में बहुमुखी प्रतिभासंपन्न डॉ. आर्य जी ने अपना विशिष्ट स्थान बनाया था। वे शोधपरक लेख और समीक्षा लेखन में अद्वितीय थे। निष्पक्षता उनका विशेष गुण था। मैंने उनकी 'परंपरा और आधुनिकता' तथा 'चिंतन-अनुचिंतन' पुस्तकों की समीक्षाएँ लिखी हैं। इन पुस्तकों में उनके अनुकरणीय व्यक्तित्व और गहन चिंतन की झलक मिलती है। वस्तुत : लेखन के क्षेत्र में मुझे आगे लाने वाले डॉ. आर्य जी ही हैं। उनकी प्रेरणा और आशीर्वाद मेरे लिए वरदान सिद्ध हुआ।

मुझे उनके अनेक उपकारों का स्मरण हो रहा है। जब मैं राजेन्द्र प्रसाद डिग्री कॉलेज, मीरगंज, बरेली में वरिष्ठ रीडर, हिन्दी विभाग के पद पर कार्यरत था। तब मैंने शोध निर्देशक के रूप में स्वीकृति प्राप्त करने के लिए एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली में आवेदन किया था। उस समय विश्वविद्यालय की हिन्दी शोध समिति के संयोजक महोदय ने मुझे शोध-निर्देशन के लिए संस्तुत नही किया क्योंकि उनका विचार था कि स्नातक स्तर तक अध्यापन करने वाले प्राध्यापकों को शोध-निर्देशन हेतु अनुमति प्रदान नहीं की जा सकती। कुछ समय पश्चात जब डॉ. राम स्वरूप आर्य जी विश्वविद्यालय की हिन्दी पाठ्यक्रम और शोध समिति के संयोजन हुए तो उन्होंने मेरी योग्यता और शोध-पत्रों के आधार पर मुझे शोध-निर्देशन की अनुमति प्रदान कर दी। ऐसे गुणग्राहक और उदारमना व्यक्ति थे डॉ. आर्य जी।

यही नहीं उन्होंने समय -समय पर मुझे प्राध्यपक के गुरुतर दायित्व का भी बोध कराया तथा अध्यापन प्रकृति पद्धति का भी ज्ञान दिया। बाद मे मैं उन्हीं के पदचिह्नों पर चलकर सफल और कुशल अध्यापक की श्रेणी में गिना जाने लगा तथा छात्र-छात्राओं के सम्मान का पात्र बना।

डॉ. आर्य जी सहयोगी प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। जब हम 'पं0 धर्मदत्त वैद्यस्मृति

ग्रंथ' का संपादन कर रहे थे, तब समय-समय पर उनके सुझाव और उनका मार्गदर्शन हमें निरन्तर मिलता रहा, जिससे वह ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी और संग्रहणीय बन गया।

इसी प्रकार मेरे शोध प्रबंध 'छायावादी काव्य में संगीत तत्व' और 'आकाशवाणी वार्ताएँ' नामक पुस्तकों के प्रकाशन के अवसर पर उनका मार्गदर्शन पर्याप्त उपयोगी सिद्ध हुआ। वस्तुतः विभिन्न क्षेत्रों में उनका सहयोग और योगदान अविस्मरणीय है। वे 'सादाजीवन और उच्च विचार' के आदर्श पुरुष थे। महापुरुषों तथा संतों के गुण उनमें समाहित थे। वस्तुतः वे ऐसे चंदन थे, जिसके स्पर्श मात्र से सभी सुगन्धित हो जाते हैं। जो भी विद्यार्थी, अध्यापक और विद्वान उनके संपर्क में आये, वे आज भी उनके व्यक्तित्व और विद्वता की प्रशंसा करते हैं। यदि यह कहा जाए कि डॉ. आर्य जी मानव नहीं अपितु महामानव थे, उनमें दैवीय गुणों का भंडार था तो यह अत्युक्ति नहीं होगी। यद्यपि डॉ. रामस्वरूप आर्य जी इस नश्वर संसार में आज जीवित नहीं है तथापि वे यश-काया से अमर हैं।

25, रियल इस्टेट, गेहू खेड़ा, कोलार रोड, भोपाल (म0प्र0)

***

11. डॉ. राम स्वरूप आर्यः प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व

डॉ. राजमणि शर्मा,एम.ए ,पी-एच.डी.

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी मेरे गिने-चुने शुभचिंतकों, सलाहकारों तथा आत्मीय मित्रों में से थे। शील स्वभाव, शालीन व्यवहार और प्रभावोत्पादक व्यक्तित्व के धनी डॉ. आर्य जी, 'आर्य' जीवन-संस्कृति और सभ्यता के जीवंत उदाहरण थे। वे एक यशस्वी प्राध्यापक थे लेकिन वे जीवनपर्यन्त एक जिज्ञासु विदयार्थी के रूप में निरन्तर नये-नये शोधविषयक कार्यों, विभिन्न विषयों पर गम्भीर चर्चा तथा लेखन-कार्य में संलग्न रहे। वे वर्तमान हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि थे। हिन्दी साहित्य के इतिहास की रचनाओं तथा उनके रचनाकारों पर उन्होंने घिसी-पिटी लकीर से हटकर नये सिरे से विचार किया था। डॉ. आर्य जी ने अपनी नवीन चिंतन-धारा से साहित्य के क्षेत्र में नूतन मापदंड स्थापित किये। वे हिन्दी साहित्य के साथ-साथ हिन्दी भाषा के भी निष्णात विद्वान थे। पं0 पद्मसिंह शर्मा एवं पं0 रुद्रतत्त शर्मा जैसे हिन्दी के प्रख्यात् साहित्यकारों और पत्रकारों को हिन्दी साहित्य जगत के सामने पुनःप्रस्तुत कर उन्होंने साहित्येतिहास को नया दृष्टिकोण प्रदान किया।

वस्तुतः डॉ. रामस्वरूप आर्य जी निष्काम कर्मयोगी एवं त्यागी साहित्यकार

और तपस्वी व्यक्तित्व के रूप में सदैव याद किए जायेंगे। वे अजातशत्रु थे। उनसे मैं बहुत तो नहीं किन्तु तीन-चार बार ही व्यक्तिगत रूप से मिला था। यद्यपि उनसे दूरभाष पर प्रायः वार्तालाप होता रहता था। डॉ. आर्य जी की सहनशीलता और उदारमना व्यक्तित्व का मैं कायल रहा हूँ। मेरी दृष्टि में वे रुहेलखण्ड क्षेत्र के गौरव थे।

ऋषि तुल्य स्व0 डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की प्रथम पुण्य-तिथि के अवसर पर प्रकाशित होने वाले स्मृति ग्रंथ के माध्यम से मैं उनके प्रति अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करता हूँ।

पूर्व प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

***

12. आदरणीय डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. रमेश चन्द्र मिश्र

एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच.डी, डी.लिट्.

आदरणीय डॉ. राम स्वरूप आर्य के दिवंगत होने की सूचना पाकर चित्त विचलित हो उठा। डॉ. आर्य जी बरेली कॉलेज, बरेली में मेरे शिक्षक भी रहे और शोध-कार्य के लिए प्रेरित करने वाले दिशा निर्देशक भी। पूज्य गुरुवर्य पं0 भोलानाथ शर्मा जी (पूर्व अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, बरेली कॉलेज, बरेली) के पश्चात् मेरे शोध-कार्य के प्रेरक डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ही रहे। संत साहित्य के अध्ययन और शोध-कार्य के संदर्भ में मुझे बिजनौर से ही सघन सहयोग प्रदान करते रहे। ऐसे मनीषी सज्जन साहित्यकार डॉ. आर्य जी का दिवंगत हो जाना, मेरे लिए अपूरणीय क्षति है।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की प्रेरणा से ही मेरा संत-साहित्य-संदर्भ कोश पूर्ण हुआ। लगभग 6500 पृष्ठों का यह कोश पंद्रह खण्डों में है, जो पैंतीस वर्षो में लिखा गया और बारह वर्षों में प्रकाशित हुआ। इसमें लगभग 400 संतों का वाणी-परिचय समाहित है। डॉ. आर्य जी ने उपर्युक्त कोश को मध्यकाल विषयक शोधार्थियों के साथ-साथ सामान्य अध्येताओं के अध्ययन के लिए भी बहुत उपयोगी माना है। कोश के प्रथम खण्ड की भूमिका में मैंने डॉ. आर्य जी का साभार उल्लेख किया है। मैं उनकी स्मृति को प्रणाम करता हूँ।

पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग,

राम लाल आनंद कालेज, दिल्ली विश्व विद्यालय, दिल्ली

***

13 .प्रेरणाप्रद साहित्यकारः डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. एल.बी.रावल
एम.ए. (भूगोल), पी-एच.डी.

श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के देहावसान का दुखद समाचार सुनकर मेरा मन व्यथित हो उठा। उनके साथ बिताए हुए विभिन्न अवसरों के परिदृश्य मेरी आँखों के सामने सहसा घूम गये।

वास्तव में डॉ. आर्य जी हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार थे। उन्हें आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, आचार्य किशोरीदास वाजपेयी, रांगेय राघव, डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ. नगेन्द्र, डॉ. मनोहर लाल गौड़ प्रभृति साहित्यकारों की कोटि की अन्तिम कड़ी माना जा सकता है।

डॉ. आर्य जी ने वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में हिन्दी विभागध्यक्ष रहते हुए विश्वविद्यालयीय अनेक समितियों तथा परिषदों के उत्तरदायित्वों का भी अत्यन्त कुशलता के साथ निर्वहन किया था।

मेरा डॉ. आर्य जी के साथ निकट का सम्बन्ध रहा है। मेरे ससुर डॉ. ओमदत्त आर्य जी मुझे उनके निकट लाए थे, जिससे मुझे उनसे हिन्दी साहित्य से सम्बन्धित विभिन्न बारीकियों को समझने का सुअवसर मिला। मेरे चर्चित काव्य-संग्रह 'रश्मियाँ' पर अपना अभिमत प्रेषित कर उन्होंने मुझे साहित्य-सृजन हेतु प्रोत्साहित किया था। डॉ. आर्य जी ने मेरी कुछ कविताओं में सटीक संशोधन किये थे। मैं इसके लिए उनका सदैव आभारी रहूँगा।

24.8.2015 ई0 को उन्होंने मुझे अपने सद्यः प्रकाशित निबंधों की पुस्तक 'चिंतन-अनुचिंतन' भेंट स्वरूप प्रेषित की थी। इस पुस्तक को पढ़कर उनके हिन्दी के साहित्यिक ज्ञान की गहराई को समझा जा सकता है। सूर, तुलसी, कबीर, जायसी, रहीम, प्रेमचन्द, दुष्यंत कुमार, काका हाथरसी एवं अन्य अनेक साहित्यकारों के सम्बन्ध में लिखे गये उनके ये निबंध निश्चय ही उच्चकोटि की शैली में लिखे गये हैं, जो हिन्दी साहित्य-प्रेमियों को कोई ना कोई नई जानकारी प्रदान करते हैं। इसी पुस्तक में उनके संगृहीत लेख- 'शब्दार्थ चिन्तन', 'जय देवनागरी चिर महान', 'साहित्यिक संशोधन', 'धर्म और राजनीति', 'कहाँ गए वे गाँव', 'लौट चल मिट्टी की ओर', 'बूढ़ी आयु होउ तुम', 'मृत्यु से हम क्यों डरें,' तथा 'अन्तिम इच्छा' परंपरा से हटकर लिखे गए उच्चकोटि के निबंध हैं, जिनसे आने वाली हिन्दी साहित्य प्रेमी संतति चिरकाल तक लाभान्वित होती रहेगी।

श्रद्धेय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी यद्यपि आज हमारे बीच नहीं हैं तथपि उनका

प्रेरणाप्रद साहित्य हमारे बीच सदैव रहेगा और हमें लाभान्वित करता रहेगा। मैं उन्हें अपनी धर्मपत्नी डॉ. श्रीमती रश्मि शर्मा, एसोसिएट प्रोफेसर एवं भूगोल विभागाध्यक्षा, आर.एस.एम. कॉलेज, धामपुर के साथ अत्यधिक विनम्र भाव से स्मरण करते हुए श्रद्धासुमन अर्पित करता हूँ।

प्राचार्य, आर.एस.एम. कॉलेज, धामपुर, बिजनौर।

***

14. डॉ. राम स्वरूप आर्य: प्रेरक व्यक्तित्व

डॉ. पूनम चौहान

एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की पावन स्मृति में 'स्मृति ग्रंथ' के प्रकाशन का शुभ विचार मेरी दृष्टि में पितृऋण चुकाने तथा सार्थक श्रद्धांजलि स्वरूप है।

आदरणीय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से मेरी सर्वप्रथम भेंट एम. ए. (हिन्दी) के मौखिक परीक्षा के प्रश्नपत्र के समय पर हुई थी, जब उनका आगमन एस.बी.डी. महिला महाविद्यालय, धामपुर में उक्त परीक्षा में बाह्य परीक्षक के रूप में हुआ था। मैं इस परीक्षा में आंतरिक परीक्षक थी। डॉ. आर्य जी दो बार हमारे महाविद्यालय में बाह्य परीक्षक के रूप में मौखिक परीक्षा लेने आए थे । मेरी उनसे तीसरी और अन्तिम भेंट 29 नवम्बर 2015 ई0 को बिजनौर में धरोहर स्मृति न्यास के सम्मान समारोह में हुई थी। इस समारोह में उनको जीवन पर्यंत विभिन्न क्षेत्रों में योगदान के लिए, समग्र सेवा पुरस्कार प्रदान किया गया था।

अल्प काल के ही साहचर्य में मैंने उनके प्रेरक तथा गुणी व्यक्तित्व को परखा था। मैंने अनुभव किया कि अपने साथी प्राध्यापकों तथा कर्मचारियों के प्रति उनका अत्यन्त ममत्व भरा व्यवहार रहता था। वहीं अपने छात्र-छात्राओं के प्रति उनके मन में अपार वात्सल्य की भावना विद्यमान थी। उनकी बोलचाल तथा व्यावहारिक प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व की अविस्मरणीय छवि मेरे हृदय पटल पर सदैव अंकित रहेगी। मैं उन्हें शत शत नमन करते हुए अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित करती हूँ।

प्राचार्या,

एस.बी.डी. महिला कॉलेज,

धामपुर, बिजनौर

15. मेरा उन्हें विनम्र प्रणाम

डॉ. रमेश चन्द्र जैन
एम.ए., पी-एच.डी, डी.लिट्., जैन दर्शनाचार्य

मैंने 2 अग्रस्त 1969 ई0 को वर्धमान कॉलेज, बिजनौर (उ.प्र.) में संस्कृत प्रवक्ता के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया था। जून 2007 ई० में मैं इसी विभाग में रीडर तथा विभागाध्यक्ष के रूप में सेवानिवृत्त होकर दिसम्बर 2013 ई0 तक जैन विद्या अध्ययन एवं अनुशीलन केन्द्र के निदेशक के रूप में कार्य करता रहा। इस प्रकार चौबालिस वर्ष के कार्यकाल में वर्धमान कॉलेज, बिजनौर के जिस व्यक्ति से मैं अभिन्न मित्र के रूप में जुड़ा रहा, वे थे डॉ. रामस्वरूप आर्य , रीडर तथा अध्यक्ष-हिन्दी विभाग। मूलत: वे हिन्दी के अध्यापक होने पर भी संस्कृत से एम.ए. होने के कारण संस्कृत विभाग के सम्पर्क में भी रहे। संस्कृत व्याकरण या जैन साहित्य सम्बन्धी कोई बात पूछनी हो तो वे मुझसे परामर्श लेते थे। आल इण्डिया रेडियो, नजीबाबाद कई बार मुझे वार्ता हेतु हिन्दी के विषय पर आधारित शीर्षक पर बोलने हेतु भी आमन्त्रित करता था। कभी विषय सामग्री की आवश्यकता होती थी तो मैं डॉ. रामस्वरूप आर्य जी से पूछा करता था। एक बार मुझे हिन्दी नुक्कड़ नाटकों के विषय में बोलने हेतु आमन्त्रित किया गया था। मैंने तब तक नुक्कड़ नाटकों का नाम भी नहीं सुना था। मैं डॉक्टर आर्य जी के पास गया, उन्होंने यथोचित पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकायँ प्रदान कीं, जिनके सहारे मैं नजीबाबाद आकाशवाणी में वार्ता रिकार्डिंग कराने में सफल हुआ। इसी प्रकार मुझे आकाशवाणी के कार्यक्रम में एक बार ''गंगेव तव दर्शनान्मुक्ति'' इस विषय पर बोलना था। जैन धर्म का अनुयायी होने के कारण मैं किसी नदी या समुद्र में स्नान करने से मुक्ति होती है, यह नहीं मानता तथापि उक्त विषय पर बोलने हेतु मुझे आमन्त्रित किया गया था। मैंने डॉ. आर्य जी के परामर्श से लिखकर उक्त विषय पर अपनी वार्ता प्रस्तुत की। उसी प्रकार वे भी कतिपय विषयों पर वार्ता प्रसारित कराने या भाषण देने पर मुझसे परामर्श करते थे। उम्र में मुझसे बड़े होने के कारण मैं उनको सदैव आदर देता था, वे भी मुझे सदैव स्नेह और सम्मान प्रदान करते थे। जब तक मैं बिजनौर में रहा, हम लोगों के सम्बन्ध समरस रहे।

आदरणीय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की हिन्दी जगत में पर्याप्त प्रतिष्ठा थी। हिन्दी से जुड़ाव होने के कारण उनका बिजनौर में सभा, सोसाइटी में भाषण देने हेतु प्राय: आमन्त्रित किया जाता था। वे एक सरल हृदय विद्वान थे, अत: विरोधियों के भी आदर के पात्र थे। बात तो यह है कि उनका कोई विरोधी नहीं था, क्योंकि

वे विरोधों के चक्कर में पड़ते ही नहीं थे।

परिस्थितियाँ उन्हें अवश्य प्रभावित करती थीं। एक बार उन्होंने यू.जी.सी. की वृहत् शोध योजना के अंतर्गत हिन्दी के संत कवि तथा जैन कवियों का तुलनात्मक अध्ययन विषय पर एक प्रोजेक्ट लिया। ऐसे कार्यों में कॉलेज की संलग्नता भी होती है। इस संदर्भ में कुछ लोगों ने अवरोध उत्पन्न किए। ऐसी स्थिति में उन्हें बड़ी मानासिक पीड़ा हुई थी। इस विषय में वे किसी से अधिक न कहकर अपनी पीड़ा मुझे सुनाया करते थे। मैं उनके साथ सहानुभूति रखकर उन्हें सदैव ढाढ़स बँधाता था।

उनकी शिक्षा बरेली कॉलेज में हुई थी। बरेली कॉलेज के पूर्व हिन्दी विभागध्यक्ष डॉ. कुन्दनलाल जैन मेरे ग्राम मड़ावरा की तत्कालीन तहसील महरोनी के मूल निवासी थे। वे डॉ. रामस्वरूप आर्य के प्रति बहुत स्नेह परायण थे। डॉ. राम स्वरूप आर्य जी भी उन्हें पितृवत् सम्मान देते थे। उनके माध्यम से डॉ. कुन्दनलाल जैन से मेरा परिचय हुआ था और यह परिचय प्रगाढ़ता में बदल गया। मैं जब भी बरेली जाता, डॉ. जैन साहब से अवश्य मिलकर आता था, कभी कभी उनके घर भी रुक जाता था। वे मुझे बेटा कहकर अपना स्नेहाशीष प्रदान करते थे। मैं उनके घर के सदस्यों से घुल मिल गया था। अम्मा जी भी मुझे स्नेह प्रदान करती थीं। वे सब डॉ. आर्य जी की प्रशंसा करते थे।

आदरणीय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी एक अच्छे अध्यापक थे। जब तक वे हिन्दी विभाग के अध्यक्ष रहे, हिन्दी की कक्षायें नियमित रूप् से चलती रहीं तथा हिन्दी विभाग ने अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की। कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'वर्धमान' के वे सदैव अपने कार्यकाल में प्रधान सम्पादक रहे तथा उनके सम्पादकत्व में हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी में अच्छे लेख प्रकाशित होते रहे। पत्रिका के संपादन और प्रकाशन में वे कठिन परिश्रम करते थे। 'वर्धमान' पत्रिका के 'राजेंद्र कुमार जैन स्मृति अंक' तथा 'भगवान महावीर विशेषांक' ने पर्याप्त ख्याति प्राप्त की।

डॉ. आर्य जी के आवास पर हिन्दी भाषा एवं साहित्य का उपयोगी पुस्तकालय है। पुरानी लेखन सामग्री को सुरक्षित रखने में उनकी विशेष रुचि थी। वे पुरानी पत्रिकाओं के उत्तमोत्तम विशेषांकों को सँजोकर रखते थे। उनका नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से भी अच्छा सम्बन्ध था। एक बार इस संस्था ने उन्हें पुरस्कृत भी किया था। विनम्रता उनके जीवन का अभिन्न अंग थी। वे स्वयं अनुशासनप्रिय थे, दूसरों को भी अनुशासित देखना चाहते थे। आज वे हमारे बीच नहीं हैं। एक अच्छे अध्यापक, लेखक, वक्ता, सदाचारी, सम्पादक तथा समाज को दिशा

निर्देश देने वाले के रूप में मैं उन्हें याद करता हूँ। उनका स्मृति ग्रंथ प्रकाशित करना, एक अच्छा प्रयास है। आदरणीय मित्र के रूप में वे सदैव स्मरणीय हैं। मेरा उन्हें विनम्र प्रणाम।

पूर्व अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

***

16 .सादगी और सज्जनता समन्वित गुरु : डॉ. आर्य जी

कर्मयोगी डॉ. सुरेन्द कुमार जैन 'भारती'

एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत, जैन दर्शन, राजनीति शास्त्र), पी-एच.डी.

महामंत्री, श्री अखिल भारतीय दिंगबर जैन विदृत्परिषद (पंजी.)

बात सन् 1991 की है, जब मैंने वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में बी.ए.प्रथम. वर्ष में प्रवेश लिया था, वहाँ मेरे अग्रज डॉ. रमेशचन्द जैन, संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे। उन्होंने मेरा परिचय उस समय के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. रामस्वरूप आर्य जी से करवाया और मुझसे कहा ये डॉ. आर्य जी हैं, तुम्हें हिन्दी पढ़ायेंगे। फिर डॉ. आर्य जी से कहा- ये मेरा छोटा भाई सुरेन्द्र है। मैंने उनके चरणों का स्पर्श किया, उन्होंने मुझे गले लगा लिया और कहा तुम जैन साहब के ही नहीं, मेरे भी छोटे भाई हो। किसी विद्यार्थी को यदि गुरु अपना छोटा भाई बना ले तो फिर जो गौरव विद्यार्थी को अनुभव होता है, वही अनुभव मुझे हुआ और मैं उनकी कक्षा का अग्र पंक्ति वाला नियमित विद्यार्थी बन गया। मैं उनसे मिलने के पूर्व ही उनका 'अनेकांत: कुछ दृष्टान्त' नामक लेख पढ़ चुका था। अत: उनकी विद्वत्ता से परिचित था ही। उनका उक्त लेख भगवान महावीर की 2500 वीं जयंती के उपलक्ष्य में कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'वर्धमान' के भगवान महावीर विशेषांक में प्रकाशित हुआ था। इस विशेषांक के प्रधान संपादक डॉ. आर्य जी ही थे। उन्होंने बड़े मनोयोग से इस विशेषांक का संपादन किया था।

मुझे डॉ. आर्य जी का सहजता, सरलता से पढ़ाना, विद्यार्थियों से संवाद करना अच्छा लगता था। महाविद्यालयीन सभी प्राध्यापकों में उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार की छाप थी। वे सही के पक्षधर थे, किसी से कोई अपेक्षा नहीं रखते थे और कभी ऐसा दिन नहीं जाता था जबकि वे पढ़ाते नहीं हों। उन्हें अध्ययन और अध्यापन का व्यसन था। यही कारण है कि विद्यार्थियों में उनका सम्मान सदा बना रहा। उन्हें देखकर ही शायद यह विश्वास बना कि अच्छे लोगों की इज्जत कभी कम नहीं होती, सोना हर स्थिति में सोना ही रहता है। बुद्धि और विवेक के समन्वित रूप थे वे। उनके निधन से हिन्दी साहित्य जगत् की अपूरणीय क्षति हुई है।

इस समय हम लोग बिजनौर में दिगम्बर जैन युवा परिषद् चलाते थे। जब भी कोई आयोजन होता था, हम लोग वक्ता के रूप में अग्रज डॉ. रमेशचन्द जी, डॉ. रामस्वरूप आर्य जी आदि को आमंत्रित करते थे। उस समय प्रो. गोविन्दराम गुप्ता परिषद् के अध्यक्ष एवं डॉ. नरेन्द्रकुमार जैन, महामन्त्री थे। डॉ. आर्य जी जैन धर्म के सिद्धान्तों की सटीक व्यावहारिक मीमांसा करते थे।

जब मैंने सन् 1983 में एम.ए. (हिन्दी), पूर्वार्द्ध में प्रवेश लिया तो उन्होंने मुझे पाली विषय का अध्ययन कराया। कक्षा में मैं एकमात्र विद्यार्थी था जिसने पाली विषय लिया था।

डॉ. आर्य जी आज भी मेरी चेतना में विराजमान हैं। मेरे कॉलेज में जब भी कोई विद्यार्थी मेरे पास सहायता के लिए आता है तो मैं उसकी भरपूर मदद करता हूँ। उस समय मुझे अपने गुरु डॉ. आर्य जी की सहजता और सहयोग भावना स्मृत हो आती है। कितनी ही यादें गुरुवर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के विषय में अन्तस चेतना में सुप्त पड़ी हैं लेकिन जो यादें स्मृत हैं वे उनकी यादों को बनाये रखने के लिए पर्याप्त हैं। मैं उनकी स्मृति में प्रकाशित किये जाने वाले स्मृति ग्रन्थ के अवसर पर उनके प्रति अपनी भावपूर्ण श्रद्धांजलि व्यक्त करता हूँ।

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सेवासदन महाविद्यालय, बुरहानपुर (म.प्र.)

***

17. डॉ. रामस्वरूप आर्य : एक प्रेरक व्यक्तित्व

डॉ. अरविन्द शर्मा

एम.ए., पी-एच.डी, ज्योतिषाचार्य (वाराणसी)

आदरणीय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी से मेरा व्यक्तिगत परिचय सन् 1975 में हुआ था। मैं उस समय राजा ज्वाला प्रसाद आर्य इण्टर कालिज में ग्यारहवीं कक्षा का छात्र था। अवसर था, आर.जे.पी.इण्टर कालिस में फरवरी में आयोजित होने वाला वार्षिक उत्सव। इस वार्षिक उत्सव को छात्रों के व्यक्तित्व को परिष्कृत करने वाला संस्कार महोत्सव कहा जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। इस कार्यक्रम में विभिन्न सामयिक विषयों पर भाषण व अन्त्याक्षरी प्रतियोगिताएँ आयोजित होती थीं। इनमें मुख्य विषय गीता व रामचरितमानस होते थे। मानस के आधार पर अन्त्याक्षरी का आयोजन होता था। गीता के विभिन्न विषयों पर भाषण होते थे। दोनों ही विषयों पर विभिन्न जनपदों से छात्र-छात्राएँ अपनी पूर्ण तैयारी करके आते थे। याद रखिए - गीता व रामचरितमानस भारतीय धर्म व संस्कृति के आधार ग्रन्थ हैं। इन कार्यक्रमों के सूत्रधार आर. जे. पी. कालिज के सुयोग्य

प्रबन्धक साहित्यिक अभिरुचि के धनी स्व. कुँवर सत्यवीर जी थे। उनके सुयोग्य सहयोगी थे विद्यालय के यशस्वी प्रधानाचार्य श्री चैतन्य स्वरूप गुप्ता जी। जो आज अपनी आयु के नौ दशक पूरे कर चुके हैं परन्तु आज भी शिक्षा जगत् में सक्रिय हैं प्रभु उनको शतायु प्रदान करें। इन कार्यक्रमों के निर्णायक पद के लिए श्री चैतन्यस्वरूप गुप्ता जी जनपद के सर्वाधिक सुयोग्य विद्वानों का प्रतिवर्ष चयन करते थे। ऐसी ही एक गीता पर आयोजित प्रतियोगिता में मेरा भाषण था। निर्णायक थे वर्धमान कॉलेज, बिजनौर के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. रामस्वरूप आर्य जी।

डाक्टर साहब ने मेरा भाषण सुना। मेरे भाषण से वह बहुत प्रभावित हुए। प्रथम स्थान तो उन्होंने मुझे दिया ही। बाद में मुझे अपने पास बुलाकर मेरा बहुत उत्साहवर्धन भी किया। उसी दिन रामचरितमानस के विषय के निर्णायक मेरे पूज्य पिताजी भारत के प्रख्यात ज्योतिषाचार्य आचार्य राजाराम शास्त्री भी थे। जब डॉ. साहब को पता चला कि मैं शास्त्री जी का पुत्र हूँ तब से मेरे प्रति उनका स्नेह और भी अधिक बढ़ गया। डॉ. रामस्वरूप आर्य धर्म शास्त्रों में निष्ठा रखने वाले सात्विक प्रकृति के पुरुष थे। वह मेरे पूज्य पिताजी आचार्य राजाराम शास्त्रीजी के पास हमारी गद्दी पर पधारा करते थे। मृत्यु के कुछ मास पूर्व भी वह हमारी गद्दी पर पधारे थे।

डॉ. साहब बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वह हिन्दी के भारत विख्यात विद्वानों में से एक थे। संस्कृत-हिन्दी जगत् के भारत विख्यात विद्वानों से मुझे बहुत बार मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। बिजनौर की चर्चा आने पर जब भी हिन्दी जगत् से सम्बन्धित कोई चर्चा होती थी तो सर्वप्रथम डा. रामस्वरूप आर्य जी की चर्चा न हो- ऐसा सम्भव नहीं था।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के विषय में मैं एक बात निश्चित रूप से कह सकता हूँ वह हिन्दी के अद्‌भुत विद्वान होने के साथ-साथ निरंहकारी एवं विनम्र स्वभाव के धनी थे। मैंने देखा है कि विद्वत्ता अधिकतर व्यक्ति को अहंकारी बना देती है। पर डाक्टर आर्य साहब इसके सर्वथा विपरीत थे। डॉ. साहब हिन्दी के पारगामी विद्वान् थे। इसके साथ-साथ संस्कृत साहित्य की अधिकांश विधाओं में उनकी गहरी पैठ थी। वैदिक, पौराणिक तथा परवर्ती संस्कृत साहित्य पर उनका अध्ययन अपूर्व था। दर्शन शास्त्रों का भी उन्होंने गहन परिशीलन किया था।

सम्प्रति उच्चशिक्षा में शोध की बड़ी दुर्दशा है। डाक्टर साहब इस स्थिति से बहुत चिन्तित रहते थे। उनका स्पष्ट मत था कि जब तक शोधार्थी का अध्ययन अत्यन्त व्यापक न हो तब तक शोधार्थी को शोध के विषय में सोचना भी नहीं

चाहिए। सत्रह शोध छात्रों ने उनके निर्देशन में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। वह शोध का स्तर बनाए रखने के लिए सर्वदा सचेष्ट रहते थे।

किसी भी शोधार्थी की सहायता के लिए वह सदा तत्पर रहते थे। सन् 1987-88 में मेरा शोध कार्य जोरों से चल रहा था। मैं नित्य निरन्तर 12 से 14 घण्टे अपने शोध कार्य में व्यस्त रहता था। मुझे वेदान्त दर्शन से सम्बन्धित कुछ महत्तवपूर्ण पुस्तकों तथा दर्शन के एक महत्त्वपूर्ण भाष्य की आवश्यकता पड़ी। बहुत से पुस्तकालयों व विद्वानों से सम्पर्क करने पर भी निराशा ही हाथ लगी। अकस्मात् मुझे डा. रामस्वरूप आर्य जी का ध्यान आया। मैं तुरन्त डॉ. आर्य साहब के पास गया तथा अपनी जिज्ञासा उनके सम्मुख रखी। डॉ. साहब ने बहुत ध्यानपूर्वक मेरी समस्या सुनी। डॉ. आर्य साहब का व्यक्तिगत पुस्तकालय बहुत समृद्ध है। मैं तो डॉ. साहब के पास यह सोचकर गया था कि वह मुझे पुस्तक प्राप्ति का स्रोत बताएँगे। मेरी बात सुनकर डॉ. साहब अन्दर गए और थोड़ी देर बात कुछ पुस्तकें लेकर आए। मुझसे बोले कि आपका काम मेरे विचार से इन पुस्तकों से हल हो जाएगा। मुझे उन पुस्तकों को देखकर एक सुखद आश्चर्य की अनुभूति हुई कि वे ठीक वही पुस्तकें थीं जिनको मैं कई मास से खोज रहा था। मुझे बिल्कुल आशा नहीं थी कि एक हिन्दी विद्वान् के यहाँ वेदान्त दर्शन से सम्बन्धित जटिल पुस्तकें मिल सकेंगी। मेरी कार्य हो गया। मैंने डॉ. आर्य साहब से कहा कि मुझे बिल्कुल आशा नहीं थी कि ये पुस्तकें आपके पास भी मिल सकती हैं। यह सुनकर डॉ. साहब मुस्करा दिए।

सन् 1987 में 'कनकप्रभा' त्रैमासिक पत्रिका का शुभारम्भ किया। उद्घाटन बहुत भव्य था। समाज के प्रत्येक क्षेत्र की हस्तियाँ वहाँ उपस्थित थीं। डॉ. रामस्वरूप आर्य जी पूरे समय वहाँ उपस्थित रहे। उनका बहुत ही प्रेरक व उत्साहवर्धक भाषण हुआ।

सन् 2006 में 'कनकप्रभा' मासिक का शुभारम्भ हुआ। तब भी डाक्टर आर्य साहब का पूर्ण सहयोग मुझे मिला। डॉक्टर साहब अधिकतर अपने लेख पत्रिका में छपने के लिए भेजते थे। कभी-कभी तो स्वयं भी आकर पत्रिका की प्रगति के विषय में पूछते रहते। हर बार नए-नए सुझाव देकर मेरा मार्गदर्शन करते थे। वह मुझसे सदा यह कहते थे कि अरविन्द जी! आप कर्मवीर पुरुष हैं। आप निरन्तर आगे बढ़ें। आपकी पत्रिका में दम है। आप चिन्ता न करें। 'कनकप्रभा' एक दिन भारत की ही नहीं अपितु विश्व की सिरमौर पत्रिका होगी। वास्तव में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की शुभकामनाओं से आज 'कनकप्रभा' बहुत तेजी से अपने

लक्ष्य की ओर बढ़ रही है।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी आज हमारे मध्य नहीं हैं। परन्तु मुझे आज भी ऐसा लगता है कि धीरे से डाक्टर साहब मेरे दफ्तर का दरवाजा खटखटाकर कह रहे हैं कि अरविन्द जी, कहाँ हो...।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का आशीर्वादरूपी पाथेय मेरे और 'कनकप्रभा' के सदैव साथ है। उनका भौतिक शरीर हमारे मध्य नहीं है परन्तु उनका चिन्मय शरीर हम सबके साथ है।

उनके सुयोग्य सुपुत्र डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य हिन्दी विभागाध्यक्ष, वर्धमान कालिज, बिजनौर तथा उनके दूसरे सुपुत्र श्री रविप्रकाश आर्य, वास्तव में डॉ. आर्य साहब के प्रतिरूप हैं। मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि डॉ. साहब का परिवार भारतीय धर्म, संस्कृति व हिन्दी साहित्य की अपने पूज्य पिताजी की भाँति समर्पित भाव से सेवा करता रहे।

सम्पादक-'कनकप्रभा' मासिक, मंदिर चित्रगुप्त, बिजनौर

***

18. हिन्दी साहित्य का वह साधक हमेशा याद आयेगा

डॉ. पंकज भारद्वाज

एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

बात दिसम्बर 1998 की है, मैं उन दिनों धामपुर में रहता था तथा समाचार पत्र-पत्रिकाओं में मेरी रचनाएँ छपती रहती थीं। एक दिन डाक में मुझे एक पत्र मिला जो डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का था। पत्र में आर्य जी ने मेरे एक आलेख की प्रशंसा की थी जो दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' में प्रकाशित हुआ था। उन्होंने पत्र में मेरा हौसला बढ़ाते हुए लिखा था कि "यदि आपका लेखन आपकी छोटी उम्र में भी इतना परिपक्व है तो वह दिन दूर नहीं जब आप लेखक से संपादक बन जाओगे।" डॉ. आर्य जी की यह पंक्तियां मुझे हमेशा याद रहेंगी। उस समय मेरी उम्र महज 17 साल थी। मुझे लिखने-पढ़ने और छपने की बहुत ललक थी। इसी बीच मैं पत्रकारिता से जुड़ चुका था। कई वर्षों तक कई बड़े- छोटे मंझले दैनिक समाचार पत्रों से जुड़कर संवाददाता से लेकर अखबारों के संपादन का अवसर मिला।

पत्रकारिता की संघर्ष यात्रा में एक दिन अचानक विचार आया कि कब तक पूंजीपतियों के यहाँ गुलामी करता रहूंगा? क्यों न अपना ही दैनिक अखबार शुरु करूँ जिससे पत्रकारों को उनका खुद का मंच दे सकूँ किन्तु पर्याप्त पूँजी न होने के

कारण ये विचार शिथिल पड़ गया। मगर फिर से प्रेरणा हुई और मैने 24 जून 2010 ई० को बिजनौर मुख्यालय से सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन' का प्रकाशन शुरू किया जिसका संपादक भी मैं था और स्वामी भी मैं ही था। मुझे उस समय डॉ. आर्य जी का कथन बहुत याद आया। उनकी दूरदर्शिता, प्रतिभा को समझने की क्षमता का मैं कायल हो गया। तुरन्त ही डॉ. आर्य जी से मिलने का समय लिया और उनसे मिलने पहुंचा। आर्य जी को उनके पत्र में लिखे शब्दों की सत्यता सिद्ध होने की सूचना दी। बहुत खुश हुए, मुस्कुराए और बोले – अभी भी पंकज जी, आप में बहुत संभावनाएँ हैं। यदि आप निरन्तर स्वाध्याय के लिए समय निकालो तो हिन्दी साहित्य आप जैसे नौजवानों की ओर देख रहा है।

सरल व्यवहार, सादगी भरा जीवन और विनम्र स्वभाव वाले आर्य जी कभी किसी का बुरा नहीं चाहते थे। पुस्तकों से उन्हें इतना प्यार था कि कई बार मुझे उनकी कुछ पुस्तकें पंसद आईं किन्तु उन्होंने पुस्तकें मूल रूप से न देकर पास की दुकान पर जाकर फोटो स्टेट करा लेने का ही सुझाव दिया। दरअसल, उनकी तमाम दुर्लभ पुस्तकें लोग पढ़ने के नाम पर माँगकर ले गये और वापस नहीं लौटाईं इसलिए पुस्तकें न देने का कारण उनकी विशेष सतर्कता के दृष्टिकोण से जुड़ा था किन्तु जब भी किसी को खास पुस्तक की आवश्यकता पड़ी तो आर्य जी ने उसे उपलब्ध कराया। मैं अक्सर उनसे मिलने जाता था, कई बार वह फोन कर मुझे बुला लेते थे। मैं उनसे बहुत कुछ सीखना चाहता था लेकिन कुछ समय से उनका स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ता जा रहा था। जिस कारण मैं संकोच में कई चर्चाओं को उनके सम्मुख जाकर स्थगित कर देता था। वास्तव में आर्य जी चाहते थे कि युवा वर्ग हिन्दी की ओर बढ़े, हिन्दी साहित्य के प्रति युवाओं में अनुराग उत्पन्न करने का उनमें जज्बा था। यहाँ मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि बिजनौर जिले के साथ-साथ आसपास के जिलों में भी डॉ. आर्य जी जैसा हिन्दी साहित्य का विद्वान दूसरा नहीं था। उनका विनम्रता का भाव हम सभी के लिए प्रेरणादायी है। अहं उन्हे पूरे जीवन छू नहीं सका।

वर्धमान कॉलेज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष के तौर पर उनका शानदार और सफल कार्यकाल रहा। उन्होंने हिन्दी साहित्य को श्रेष्ठ विद्वान अपने शिष्यों के रूप में दिए। आर्य जी की कई पुस्तकें प्रकाशित तो हुईं किन्तु वे सभी पुस्तकें पाठ्यक्रम से जुड़ी रहीं, जिससे उनके शुभचिंतक हमेशा उनसे यही उम्मीद करते थे कि डॉ. आर्य जी अपनी स्वतंत्र पुस्तकें प्रकाशित करायें। मुझे जब-जब डॉ. आर्य जी मार्ग में मिले, मैंने उनसे दो ही प्रश्न किए ''आपकी तबियत कैसी है

और दूसरे पुस्तक पर काम कुछ आगे बढ़ा क्या ?'' आर्य जी मुस्कुराकर हर बार एक ही उत्तर देते , ''तबियत में पहले से सुधार है और पुस्तक पर काम चल रहा है।'' एक दिन डॉ. आर्य जी ने मुझे बुलवाया और पुस्तक प्रकाशन के खर्च के विषय में विस्तार से जानकारी हासिल की। इसके बाद वह कुछ दिन तक चुप हो गये और थोड़े दिन बाद फिर फोन आया कि पुस्तक छप गई है, तुम्हें उसकी समीक्षा लिखनी है। डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की पुस्तक की समीक्षा मुझे जैसा नासमझ लिख सकता है ? यह मैंने सोचा भी नहीं था। संकोच करते हुए मैंने उन्हें कहा भी लेकिन उन्होंने कहा कि ये काम तुम्हें ही करना है। तुम्हारी लिखी समीक्षा ही मैं दूसरे पत्रों में भेजूंगा। मैंने उनकी पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' पढ़ी और फिर उसकी समीक्षा लिखकर ' पब्लिक इमोशन' में प्रकाशित की और उसकी प्रति उन्हें दी तो वे बहुत प्रसन्न हुए। बोले - इतनी अच्छी और विस्तार से समीक्षा लिखी है, पर कुछ कमियाँ तो लिख देते। मैंने कहा कि इसमें कमियाँ थी ही नहीं, कहाँ से लिखता। फिर खिलखिलाकर हँसे और बोले तुमने बहुत परिश्रम से पुस्तक पढ़ी हैं तभी इतना अच्छा लिख पाए हो। तुम मेरे विश्वास पर खरे उतरे हो। ये था डॉ. आर्य जी का प्रेम और उनका अपनों के प्रति लगाव। व्हाटसअप और ईमेल तथा फेसबुक के जमाने में भी डॉ. आर्य जी लोगों को पत्र लिखा करते थे। मैंने उनसे कहा भी कि आर्य जी आप व्हाटसअप क्यों नहीं चलाते तो उन्होंने कहा कि पत्र लेखन की विधा को नई पीढ़ी कैसे समझेगी ? पत्र लिखने का उनका यह चाव लोगों को उनके नजदीक ले आता था। मेरा खुद ही उनसे संबंध और संपर्क पत्र व्यवहार के जरिए ही हुआ था। आज भले ही डॉ. आर्य जी हमारे बीच मौजूद नहीं हैं लेकिन उनके आदर्श, उनकी सादगी, उनका ज्ञान और उनका प्रेरणादायी व्यक्तित्व हमेशा हमारे लिए प्रेरणदायी रहेगा। उनके दोनों पुत्र श्री डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य व रविप्रकाश आर्य उनके व्यक्तित्व और कृतित्व को हमेशा प्रचारित करते रहेंगे, ये मुझे उनसे आशा है। मेरा व्यक्तिगत सहयोग उनके लिए हमेशा इस दिशा में तत्पर रहेगा। साहित्य के ऐसे यशस्वी मनीषी को उनकी प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर शत्-शत् नमन।

प्रधान संपादक, सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन'
शांतिपुरम कालोनी, निकट सेल्स टैक्स आफिस,बिजनौर

19. डॉ. राम स्वरूप आर्यः निस्पृही सन्त

डॉ. ज्ञानेश दत्त हरित

एम.ए. (हिन्दी-सस्कृत), एम.एड., पी-एच.डी,

जब भी मानस पटल पर बिजनौर में हिन्दी के अग्रदूत की स्मृति कौंधती है, तब एक ही नाम स्मृति में कौंध जाता है, डॉ. राम स्वरूप आर्य। छोटा कद, गेहुँआ रंग, शरीर मध्यम, भावना से परिपूर्ण छोटी-छोटी आँखें, सूक्ष्म रेखाओं से युक्त उन्नत ललाट और ओजपूर्ण मुखाकृति , ना जाने महर्षि दधीचि सम उस महामानव की मुठ्ठी भर वज्र सरीखी हड्डियों की ठठरी में हिमालय जैसा अडिग विश्वास, अदम्य पौरुष का महा संकल्प कहाँ और कैसे समाया हुआ था। मैं लगभग वर्धमान कॉलेज में 35 वर्ष उनके साथ रहा। मैंने देखा कि आर्य जी की संकल्प शक्ति बड़ी ही प्रबल थी। बस एक बार जो ठान लिया, उस कार्य को शक्तिभर सम्पन्न करके ही सांस ली।

डॉ. आर्य जी एक लम्बे समय तक कॉलेज में हिन्दी के विभागाध्यक्ष के रूप में बहुत ही लोकप्रिय रहे। उन्होंने न केवल अध्ययन और अध्यापन के क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ी अपितु एक समीक्षक और शोध निर्देशक के रूप में सांस्कृतिक पटल पर अपनी सशक्त उपस्थिति भी दर्ज करायी। एक अध्यापक का वास्तविक मूल्यांकन उसके छात्र ही करते हैं। जब भी उनका कोई पूर्व छात्र मुझे मिला, उनकी वाणी की कोमलता और विद्वत्तता की प्रशंसा करते नहीं थकता था। सरल शब्दों में गूढ़ से गूढ़ भाव को अभिव्यक्त करने की कला उनमें थी।

''यथा चित्तं तथा वाचोयथा वाचस्तथा क्रिया।
चित्ते वाचि क्रियायां च साधु नामेन रूपता।''

अर्थात जो बात चित्त में होती है, वही वचन प्रकट करते हैं और जो कहते हैं, वही करते हैं। साधुजन मनसा-वाचा-कर्मणा एक से होते हैं। ये बातें डा. राम स्वरूप आर्य जी पर शत-प्रतिशत लागू होती हैं। अपनी विद्वत्ता और प्रतिभा के कारण भारत के समस्त हिन्दी प्रेमी विद्वान उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखते थे। हिन्दी के प्रति उनका अनुराग अनुकरणीय रहा है। देश के जितने भी निकलने वाली पत्र-पत्रिकाएँ हैं, सभी में समीक्षक के रूप में वे स्थापित रहे हैं। मैंने जब अपना प्रथम काव्य-संग्रह तैयार किया 'सीपियां दर्द की'-- तब उन्होंने एक-एक गीत की इतनी सुंदर समीक्षा की कि मैं आश्चर्यचकित था कि गीतों के बारे में उनको कितना गहरा ज्ञान था।

बिजनौर जनपद में जब कहीं, जहाँ कहीं साहित्यिक गोष्ठी होती थी, उन सबके

केन्द्र में स्व. डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ही रहते थे। जो भी विद्वान बाहर से बिजनौर आता था ,उनसे मिलने के लिए लालायित रहता था। मैं जब अपना शोध ग्रन्थ 'नागार्जुन : व्यक्तित्व और कृतित्व' लिख रहा था, तब उन्होंने बाबा नागार्जुन से संबंधित प्रचुर सामग्री उपलब्ध कराई और उचित मार्गदर्शन भी किया था। वे साहित्य को जीने वाले साहित्यकार और शिक्षक थे। 1978 ई. में आर्य समाज, बिजनौर में नागार्जुन जी ने जब काव्य पाठ किया था, तब उसकी अध्यक्षता भी डा. आर्य जी ने ही की थी। बाबा नागार्जुन उनकी सरलता और विद्वता से बहुत प्रभावित हुए थे। उनकी वाणी बहुत रसवती थी। किसी से कटु शब्द बोलना उन्हें नहीं आता था। हाँ, जब कोई अप्रिय घटना घट जाती थी, तब उनका क्रोध भी देखने लायक होता था। उनके विषय में यह श्लोक कहना सर्वथा उचित है-

वदनं प्रसाद सदनं हृदयं सुधामुचो वचः।
कारणं परोपकारण येषां न ते वन्द्याः।

अर्थात जिनका मुख प्रसन्नता का घर है, जिनका हृदय दयामय है, जिनके वचन अमृत तुल्य हैं, जिनका कार्य परोपकार करना है, उनकी वंदना कौन नहीं करेगा ? अर्थात सब करेंगे। इन्हीं सद्‌गुणों के कारण हम डा. राम स्वरूप आर्य जी को याद कर रहे हैं। उन्हें मेरा शत-शत नमन।

पूर्व अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

***

20. ज्ञान, वैदुष्य और सादगी की त्रिवेणी : गुरूवर डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. विपिन कुमार गिरि
एम.ए, पी-एच.डी

जीवन-काल में प्रारंभिक दो दशक के बाद की 'फ्लैशबैक स्टोरी' पर नजर डालते हुए कुछ अविस्मरणीय पलों और घटनाओं का समुच्चय अनुभव कर रहा हूँ। लगभग साढ़े तीन दशक पहले का बिजनौर नगर स्मृतियों में कौंध जाता है। न जाने कितनी यादें जीवंत हो उठती हैं, जब कभी उस शहर को अनुभव करता हूँ। उस कालावधि में अपने शहर बिजनौर की सूरत/सीरत दोनों बदली हैं लेकिन नब्बे के दशक वाला यह शहर रह-रहकर सम्मोहित करता है।

अपने शहर बिजनौर का यह आकर्षण उसकी सादगी, जीवट और सौहार्द के कारण नहीं था, अपितु उस समय के अकादमिक एवं ज्ञान-विज्ञान से संपन्न माहौल भी मुख्य कारण था। 1983में व्यक्तिगत रूप से मुझे बी.ए. करने के पश्चात्

एम.ए.हिन्दी से वर्धमान कॉलेज में नियमित विद्यार्थी के रूप में प्रवेश लेने का सौभाग्य मिला था, किन्तु इस कॉलेज में नियमित नियुक्ति के कारण् एम.ए. उत्तरार्द्ध में मैं नियमित न हो सका। वर्धमान कॉलेज के समूचे स्टाफ से इतनी आत्मीयता मिली, मार्गदर्शन मिला, जिसके स्मरण-मात्र से आज भी अभिभूत हो उठता हूँ। आज जीवन के उस सोपान और उपलब्धियों की पृष्ठभूमि में वर्धमान कॉलेज परिवार एवम् बिजनौर शहर का योगदान वरेण्य है। आत्मीयता-मार्गदर्शन की इस श्रृंखला में न जाने कितने नाम हैं, जिनके प्रति जीवनपर्यन्त ऋण मुक्त होना असंभव है। ऐसे ही मार्गदर्शक गुरुजन की परंपरा में गुरुवर डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का नाम सर्वोपरि है। लगभग चार दशक पर्यन्त मुझे उनके परोक्ष-अपरोक्ष मार्गदर्शन एवं आत्मीयता का सौभाग्य मिला है। उनके साहचर्य में मैंने उनके जीवन के अनेकानेक आयामों का स्पर्श पाया है।

गुरुवर डॉ. आर्य जी का प्रथम स्वरूप, जिसने मुझे सर्वाधिक प्रभावित किया है, वह है-उनका विशिष्ट अध्यापन कौशल। एम.ए.के लगभग सभी प्रश्न पत्रों पर उनकी गहरी पकड़ थी। कोई भी प्रश्नपत्र हो, उसे वे बड़े अधिकार एवं प्रभावी अध्यापन शैली से पढ़ाते थे। विषय के प्रतिपादन में छोटे-छोटे बिंदुओं को अपने संभाषण कौशल से इतना ग्राह्य बना देते थे कि छात्र/छात्राओं पर सम्मोहन-सा हो जाता था। आपके अध्यापन की यह विशेषता थी कि वह पूरी तरह लयबद्ध और कुमबद्ध होता था। भावों-विचारों की ऐसी धारा प्रवाहित होती थी, मन करता था कि अध्यापन एवं संभाषण का सिलसिला यूँ ही चलता रहे। प्रसंगवश न जाने कितनी कविताएँ, सूक्तिपरक पंक्तियाँ या कभी-कभी बड़े-बड़े गद्यावतरण की प्रस्तुति इतने प्रवाह में कह जाते थे कि छात्र/छात्राएँ अवाक् -से रह जाते थे। मुझे आज भी असंख्य उद्धरण याद हैं, जो उन्होंने अपने व्याख्यानों में प्रस्तुत किये थे। कुछ पंक्तियों को जीवन देने के लिए डायरी में आज भी अंकित कर रखा है।

अध्यापन-कौशल के उस वैशिष्ट्य की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि उनकी सहजता एवं सादगी का आवरण उसको द्विगुणित कर देता था। हर बात को, चाहे वह छोटी हो या बड़ी, उसका समाधान-निदान सहज और सादगी भरा ही होगा। अपने अध्यापक-जीवन में न जाने कितने टोटके अपनाये, जिनमें गुरुवर डॉ. आर्य जी के भी अंसख्य सूत्र अपनाने से प्रभावी शिक्षण संभव हो पाया। जीवन में गुरुजन तो असंख्य मिलेंगे, लेकिन जिनकी गिनती उँगलियों पर हो सके, वे प्रायः दुर्लभ होते हैं।

महाविद्यालय स्तर के अनेकानेक आयोजनों में उनके नेतृत्व-कौशल एवं मंच

को नियंत्रित करने की कला को देखने का मौका मिला है। इस कला में भी उन्हें महारथ हासिल थी। वाद-विवाद प्रतियोगिता, कवि-गोष्ठी एवं कवि-सम्मेलन जैसे विविध आयोजनों में उनकी संयोजन शैली लाजवाब थी। उनके उस कौशल को देखकर लगता था कि सम्मोहित करने के लिए भारी-भरकम व्यक्तित्व की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि वह कला होती है, जो व्यक्ति अपने संघर्ष एवं जीवट के बल पर अर्जित करता है।

वर्धमान कॉलेज परिसर से बाहर भी डॉ. आर्य जी की अपनी पहचान थी। अपने जीवनकाल के कई दशकों तक अपने शहर बिजनौर ने उन्हें सर-आँखों पर बैठाया। नगर में कला-साहित्य एवं संस्कृति से जुड़ी संस्थाओं की हलचल में उनकी उपस्थिति आवश्यक ही नहीं, अपरिहार्य थी। सैकड़ों गोष्ठियों तथा सभाओं में उन्हें अध्यक्षीय अथवा मुख्य अतिथि आसन से सुनना बिजनौर के लिए गौरव का विषय था। कई आयोजनों में उनके सान्निध्य में बोलने-सुनने का अवसर मिला, ऐसे पल मेरे लिए धरोहर हैं।

नवबंर 2015 ई० में मुझे बिजनौर की संस्था 'धरोहर स्मृति न्यास' के वार्षिक आयोजन में प्रतिभाग का अवसर मिला, जिसमें अन्य महानुभावों के साथ ही आदरणीय डॉ. आर्य जी को साहित्यिक सरोकारों-योगदान के लिए सम्मानित किया गया था। वृद्धावस्था का तकाजा था, दृष्टि कमजोर थी किन्तु इच्छाशक्ति पूर्ववत् थी। संबोधन छोटा था किन्तु गरिमा पूर्ववत थी। यह संयोग ही था कि गुरुवर का यह अंतिम संबोधन था, जिसे मैंने मंच पर सुना। मंच से उतरने के बाद उन्होंने पुस्तकालय के लिए मुझे दो पुस्तकें दीं (चिंतन-अनुचिंतन), जो कि 2015 ई० में ही प्रकाशित हुई थीं। इस पुस्तक का महत्व मेरे लिए इसलिए अधिक है, क्योंकि पुस्तक के अंतिम आलेख 'नायक नगला की तीर्थ-यात्रा' में उस पावन भूमि को नमन है, जहाँ स्व. पद्म सिंह शर्मा जी का जन्म हुआ था और मेरी जन्मभूमि (ग्राम-गाजीपुर) भी निकट ही है। उस लेख के विषय में देर तक बात होती रही। उनके यात्रा-वर्णन से ऐसा लगा कि अपनी जन्मभूमि का परिवेश आँखों के सामने जीवंत हो गया हो। पं. पद्मसिंह शर्मा जी और पं.रुद्रदत्त शर्मा जी पर संपादित उनकी कृतियाँ हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर हैं। दो दर्जन से अधिक उनकी कृतियों के रचना संसार से उनके ज्ञान, वैदुष्य, प्रतिभा एवं मौलिक सृजन का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है। कृतियों में उनका अध्यापकीय व्यक्तित्व मुखर हुआ है, इसलिए सभी कृतियाँ पठनीय एंव संग्रह योग्य हैं। अध्यापन-कार्य में संलग्न रहते हुए अपने दायित्व को निभाना और बाहरी दुनिया से रू-ब-रू

रहना, उनके जीवन का महत्त्वपूर्ण सोपान था। इसीलिए एक आयोजन में उनके सम्मान में मेरे मुँह से निकला-

अपना मिजाज ही है, बहुत सादगी पंसद,
ऐसा नहीं है, हम हैं, जमाने से बेख़बर।

गुरुवर के साहचर्य के अनेक प्रसंग स्मृति में जीवंत हैं लेकिन इन प्रसंगों में से एक प्रंसग प्रस्तुत करना आवश्यक लग रहा है। सन् 1985 ई० में मैंने आदरणीया डॉ. उषा जैन जी के निर्देशन में शोध्र-कार्य करने के लिए अपनी शोध रूपरेखा रुहेलखंड विश्वविद्यालय में प्रस्तुत की थी। उसके दो माह बाद डॉ. आर्य जी ने मुझे हिंदी विभाग में बुलाया और बताया कि तुमने पी-एच.डी. के लिए आवेदन किया था।

मैंने कहा-''जी''! उन्होंने प्रसन्नता पूर्वक बताया कि तुम्हारा पी-एच.डी. का विषय हमने स्वीकृत कर दिया है, अपना कार्य आरंभ कर दो। बाद में ज्ञात हुआ कि डॉक्टर साहब आर.डी.सी. के संयोजक थे।

न जाने कितनी स्मृतियों की मंजूषा में गुरुवर की महानता की कहानियाँ हैं। उनसे न जाने कितनी सीख मिली है, प्रेरणा मिली है और जीवन को सादगी से जीने का सलीका सीखा है। दुनिया की भीड़ में बहुत लोग मिलेंगे, लेकिन सच्चे, अच्छे और सादगी भरे जीवन के पर्याय मार्गदर्शक मिलना मुश्किल ही नहीं, असंभव है। आज गुरुवर पार्थिव रूप से हमारे मध्य में नहीं हैं लेकिन उनका सृजनलोक और आदर्श हमारे सामने है। उनके सृजन और आदर्श की रोशनी आने वाली पीढ़ी को मिलती रहेगी। एक आदर्श अध्यापक एवं मार्गदर्शक व्यक्तित्व के प्रति भावसुमन अर्पित करने का इससे बेहतर कुछ नहीं हो सकता कि हम उनके मुल्यों का प्रचार-प्रसार करें।

एसोसिएट प्रोफेसर एवं प्रभारी, हिन्दी विभाग
राजकीय महाविद्यालय, पुँवारका (सहारनपुर)

***

21. श्रद्धा के फूल

डॉ. उषा किशोर
एम.ए. (हिन्दी एवं भाषा विज्ञान), पी-एच.डी.

वर्ष 1974 ई0 दिसम्बर में रानी भाग्यवती देवी महाविद्यालय बिजनौर में प्राचार्य पद पर मेरी नियुक्ति हुई थी। कुछ ही समय बाद आर. जे. पी. इण्टर कॉलेज, बिजनौर के वार्षिकोत्सव पर वाद-विवाद प्रतियोगिता के लिए निर्णायक के रूप में मुझे आंमित्रत किया गया था। उसी वर्षिकोत्सव में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी भी आंमत्रित थे। तभी कॉलेज के तत्कालीन प्रधानाचार्य श्री सी.एस. गुप्ता जी ने मेरा परिचय श्री आर्य जी से करवाया। तप्रश्चात डॉ. आर्य जी से कई अवसरों पर साहित्यिक गोष्ठियों, कवि गोष्ठियों, सार्वजनिक स्थलों एवं शिक्षण संस्थाओं में भेंट होती ही रहती थी। इस प्रसंग में स्व. डॉ. कुन्दन लाल जैन, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बरेली कॉलेज का उल्लेख करना अति आवश्यक है। हमारी परिस्थितियों ने हमें ऐसा मोड़ा कि मैं स्व. कुन्दन लाल जैन की मुँह बोली बेटी बन गई और डॉ आर्य जी मेरे भाई।

आदरणीय गुरु जी डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के बारे में कुछ भी कहना मानों उदीप्त (परन्तु शांत एवं शीतल) सूरज को दीपक दिखाने के बराबर होगा। फलों से लदी, विनम्रता के बोझ से झुकी डालियों की तरह स्थिर एवं उदार व सादगी में हिन्दी जगत के प्रख्यात उपन्यासकार श्री प्रेमचन्द जी के ही प्रतिरूप डॉ. आर्य जी लगते थे। वे एक सात्विक विचार वाले, गंभीर चिन्तक, विद्वता के असीम भण्डार थे, ऐसे व्यक्तित्व वाले डॉ आर्य जी के बारे में कुछ भी कहने के लिए मुझे अकिंचन के पास शब्द ही नहीं हैं।

पिता स्वरूप श्री कुन्दन लाल जैन जी के ही सुझाव पर मुझे डॉ रामस्वरूप आर्य जी जैसे शिक्षक गुरु से साक्षात्कार हुआ। वैसे मै अपने से बड़ों को गुरु ही मानती हूँ। श्री आर्य जी के ही निर्देशन में मुझे पी-एच.डी. करने के लिए आदरणीय डॉ. कुन्दन लाल जैन जी ने सुझाव दिया था।

डॉ. आर्य जी के निर्देशन में ही मैंने 'दिनकर के काव्य में पुरूषार्थ-चतुष्टय' विषय पर शोध कार्य प्रांरभ किया। शोध-कार्य करने के वर्षो में जब मुझे संदर्भ ग्रंथो, पत्रिकाओं की आवश्यकता पड़ी, तभी गुरु जी अपनी व्यक्तिगत अलमारियाँ, पुस्कालय बिना हिचक मेरे लिए खोल देते थे। अलमारी टटोलते समय कितनी सारी पाण्डुलिपियाँ देखकर मैं दंग रह गई। ऐसी सैंकड़ों वर्ष पुरानी पाण्डुलिपियाँ मैंने नेशनल लाइब्रेरी, अलीपुर, कलकत्ता में ही देखी थीं। यह सब देखकर मैं

बहुत खुश होती थी। इसके अतिरिक्त डॉ. आर्य जी के पास जैसे ही मैं सहयोग के लिए जाती थी–वे अपने पुत्र–पुत्री से पानी मंगवा कर पानी पिलवाते थे, चाय–नाश्ता भी करवाते थे जैसे एक बड़ा भाई अपनी बहन को करवाता है। मैं गद्‌गद् हो जाती थी। ऐसे संवेदनशील थे मेरे गुरु डॉ. आर्य जी। जब मैं समस्याओं को लेकर जाती थी तो संकोच करती थी परन्तु वे शोध समस्याओं का इतने सहज ढंग से निराकरण करते थे कि मैं पूर्ण सहज हो जाती थी। उनके इस सहयोग के लिए मैं निरन्तर क्या, जन्म–जन्मातर तक आभारी रहूँगी।

अन्ततोगत्वा, यह सबको विदित है कि प्रत्येक प्राणी को अंत में इस संसार से विदा होना ही पड़ता है। परन्तु किसी अपने संवेदनशील व्यक्ति के जाने पर एक व्यथा निरंतर हृदय के किसी कोने में नि:शब्द सिसकियाँ भरती रहती है और वही उसके .... श्रद्धा के फूल होते हैं।

मेरी श्रद्धा के आंसू ही मेरे गुरु जी डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के चरणों पर अर्पित हैं–

माता–पिता गुरुदेव का कर्ज, चुकाए नहीं चुकाया जा सकता
स्नेह सुमन श्रद्धांजलि भरकर, अर्पित तो किया जा सकता।

पूर्व प्राचार्या, आर.बी.डी. (पी.जी.) महिला कॉलेज, बिजनौर

***

22. जिनकी स्मृति पाथेय बनी है...

डॉ. पाण्डेय रामेन्द्र
एम.ए. हिन्दी, पी–एच.डी.

मैं सन् 1967 में पहली बार बिजनौर गया था। तब मैं बेकार था। शोध छात्र के रूप में भटकता हुआ विद्वानों के बीच ज्ञानार्जन कर रहा था। शोध के नए क्षितिजों की खोज में किसी वैज्ञानिक की भाँति निमग्न था। बिजनौर में उन दिनों मेरे अग्रज श्री कौशलेन्द्र पाण्डेय बिक्रीकर अधिकारी थे। उन्हें बहुमुखी साहित्यिक प्रतिभा पूज्य पिता (स्व0) चन्द्रशेखर पाण्डेय 'चन्द्रमणि' (1908–1982 ई०) से विरासत के रूप में प्राप्त हुई थी। अत: बिजनौर पहुँचते ही वे डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के सम्पर्क में आकर, वहाँ के साहित्यिक आयोजनों में सक्रिय भूमिका निभा रहे थे। जब मैं वहाँ पहुँचा तो मुझे अपनी ओर से कोई प्रयास नहीं करना पड़ा बल्कि अग्रज स्वयं मुझे अपने साथ वर्धमान पोस्टग्रेजुएट कॉलेज में आयोजित तुलसी जयन्ती के कार्यक्रम में ले गए थे और पाँच–छ: दिन बाद डॉ. आर्य जी के घर पर भी ले कर गए थे। उन दिनों डॉ. आर्य साहब बिजनौर में मौहल्ला भाटान में

किराये के घर में रहते थे। उस दिन की भेंट मेरे लिए विशेष थी, क्योंकि वह बैठक एक प्रकार से मुझ पर ही केन्द्रित थी। मैं जिज्ञासायें करता जाता और डॉ. आर्य साहब उन जिज्ञासाओं के साधिकार उत्तर दे रहे थे।

इस भेंट के उपरान्त तो बिजनौर के साहित्यिक आयोजनों में हम दोनों भाई अवश्य पहुँचते थे, पर एक जिज्ञासु की भाँति मैं मौन रहता जबकि अग्रज की सक्रिय भूमिका होती थी। वहाँ हास्य के कवि डण्ठल जी, उनकी धर्मपत्नी साधना डण्ठल, मनोरंजन कर अधिकारी ओम प्रकाश चतुर्वेदी पराग जी, डॉ. चन्द्रपाल शर्मा 'मधु' और जाने कितने ही साहित्यिकों से उत्तरोत्तर मेरी भेंट होती गई। फलतः शोध की नई-नई दिशायें खुलती गईं। मेरे शोध कार्य में डॉ. आर्य जी की भूमिका सर्वोपरि थी, उन्हें एक ऐसा जिज्ञासु मिला था जिसकी जिज्ञासाओं का जैसे कोई अन्त न रहा हो।

संयोग से उसी वर्ष वर्धमान कॉलेज का वार्षिक समारोह भी मेरे वहाँ रहते हुए सम्पन्न हुआ। इसके अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर का कवि-सम्मेलन भी हुआ, जिसमें गोपाल दास 'नीरज' का आगमन सबसे बड़ी बात थी। उनके सम्मान में 'नीराजन' शीर्षक से एक स्तरीय स्मारिका का प्रकाशन भी हुआ था तथा 'नीरज-अभिनंदन-समिति' के तत्वावधान में नीरज जी का अभिनंदन भी हुआ था। डॉ. आर्य जी इस समिति के प्रमुख सदस्य थे। कवि-सम्मेलन में दिल्ली और रुहेलखण्ड क्षेत्र के स्तरीय कवियों का अच्छा समागम था।

डॉ. आर्य जी पल्लवग्राही नहीं अपितु सदैव तलस्पर्थी विचारक रहे। परम्परा और आधुनिकता (1997 ई0) तथा 'चिंतन-अनुचिंतन' (2015 ई०) उनके ऐसे निबंध-संग्रह हैं, जिनमें उनकी व्यापक एवं नीर-क्षीर विवेकी शोध-दृष्टि का सहज परिचय मिलता है। दोनों ही निबंध-संग्रहों में डॉ. आर्य ने नवीनता तथा उपयोगिता का विशेष ध्यान रखा है। विषयों के चयन के आधार पर निबंधकार डॉ. आर्य जी की विलक्षण प्रतिभा का आकलन किया जा सकता है। समीक्षक का प्राचीन और नवीन (आधुनिक) साहित्यकारों के प्रति एक जैसा लगाव है। कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, रहीम, प्रेमचन्द, सुमित्रानंदन पंत, काका हाथरसी इत्यादि सभी के साहित्य से उनका पूर्ण लगाव रहा है। हिन्दी भाषा और उसके साहित्य की दुर्लभ जानकारियों के वे अद्‌भुत भण्डार थे। डॉ. आर्य जी के प्रायः सभी निबंध शोध प्रधान हैं। इन संग्रहों से डॉ. आर्य जी के गंभीर चिन्तन, गहन अध्ययन, मनन तथा विश्लेषण का परिचय मिलता है। आर्य जी के ये निबंध सर्वसाधारण को नया संदेश देते हैं। निबंधों में लेखक के विचारों तथा शिल्प का

अदभुत सामंजस्य है, जिसे उनकी दुर्लभ उपलब्धि कहना असंगत न होगा।

'चिंतन-अनुचिंतन' में काव्यशास्त्र, अध्यात्म, सर्व धर्म समभाव, समीक्षक की अगाध आस्था, विश्वास तथा निष्ठा का जहाँ संगम है, वहीं शहर से लेकर गांव के प्रति उनकी पैठ, घोर निराशा, सामाजिक पीड़ा की अभिव्यक्ति प्रत्येक सहृदय पाठक को कचोटती है। विवेच्य संग्रह में गुरु गुन लिखा न जाई, महिमा श्री सर्वेश्वर शिव की, गंगा माता तुम्हें प्रणाम, जहाँ लेखक की निष्ठा के प्रामाणिक दस्तावेज हैं वहीं जय हिन्दी जय राष्ट्र भारती डॉ. आर्य जी की अगाध हिन्दी-निष्ठा का परिचायक निबंध है। इस संग्रह में प्रथम अखिल भारतवर्षीय महिला कवि सम्मेलन, प्रेमचन्द और फिल्मी संसार, साहित्यिक संशोधन, कविता का अचूक प्रभाव तथा धर्म और राजनीति इत्यादि निबंध ऐतिहासिक सत्य और तथ्यों को आत्मसात किए हुए हैं। आज के तथाकथित विद्वानों के साहित्य में सत्य के दर्शन न होकर उनमें शब्दों का इन्द्रजाल होता है। ऐसे लोगों के लिए डॉ. रामस्वरूप आर्य जी और उनका साहित्य आदर्श है।

साहित्यिक संशोधनों से सम्बन्धित विवेचन अनुसंधान की दृष्टि से ऐतिहासिक है, साथ ही 'अल्पकाल विद्या सब पायी' समझने वालों हेतु 'गहरे पानी पैठ' का संदेश देने वाला है। कहाँ गए वे गांव और लौट चल मिट्टी की ओर, जैसे निबंधो में डॉ. आर्य जी अपनों को, अपने जनपद (बिजनौर) को कभी भूले नहीं बल्कि उनके लिए निरन्तर यात्रायें की। ऐसे स्थलों पर उनके संयमित पर चुटीले व्यंग्य शिष्ट-समाज को बहुत भले लगते हैं।

सन् 1968 में फीरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली में हिन्दी-विभाग को परास्नातक कक्षाएं खोलने की कानपुर विश्वविद्यालय ने अनुमति दे दी थी। अतः अगस्त 1968 ई० में मैं वहाँ नियुक्त हो गया था। इस खुशखबरी की सूचना मैंने अपने जिन गुरुजनों को दी थी उनमें डॉ. देवकीनन्दन श्रीवास्तव (लखनऊ वि0 वि0) और डॉ. राम स्वरूप आर्य, बिजनौर प्रमुख थे। इसके उत्तर में डॉ. आर्य का बधाई पत्र आया, साथ ही उन्होंने लिखा- ''बिजनौर जल्दी से जल्दी आओ। एम0ए0 कक्षाओं में पढ़ाने का ढंग, महत्वपूर्ण प्रश्न, व्याख्यायें तथा सम्बन्धित ग्रन्थों की जानकारी यहाँ आने पर मैं तुम्हे दे दूंगा।'' इस प्रकार अध्ययन की गुरुता को ध्यान में रखते हुए उन्होंने मुझे सदैव पूरा संरक्षण दिया। सन् 1968 में न तो टेलीफोन का विशेष चलन था और न मोबाइल का । अतः दीवाली की छुट्टी तक पूरी मेहनत से तैयारी कर मैं सदैव कक्षा में जाता रहा। दीवाली में मैं अपने भाई श्री कौशलेन्द्र पाण्डेय के पास पहुँचा और उसके बाद डॉ. आर्य जी से मिलने चल

पड़ा। गुरुवर डॉ. आर्य जी के पास जाते समय मेरे अग्रज ने बताया कि उनका अब मकान बन गया है, जो वर्धमान कॉलेज से कुछ पहले ही दायीं ओर पड़ेगा। मैं नई बस्ती पहुँच गया था। उस समय उनके परिवार के सदस्य नवनिर्मित भवन को सजाने में व्यस्त थे, जबकि डॉ. साहब अपने व्यक्तिगत अध्ययन कक्ष को सर्वथा नवीन व्यवस्था दे रहे थे। उनके पास पुस्तकों और दुर्लभ पत्र-पत्रिकाओं का अकूत भण्डार था, जिनकी सफाई तथा आवरण की नवीन साज-सज्जा में वे व्यस्त थे। मेरे पहुँचते ही उनका काम रुक गया। वहीं पर हिन्दी के जाने-माने विद्वानों के बहुत से पत्रों की अलग-अलग ढेरियाँ लगी हुई थीं। जिज्ञासा वश मैंने, पूछा डॉ. साहब, ये पत्रिकाएँ तो दुर्लभ हैं ,साथ ही पत्रों की ढेरी भी किसी ऐतिहासिक रिकार्ड से कम महत्व की नही है। वहाँ उपलब्ध पत्रो में कुछ पत्र डॉ. राम विलास शर्मा के थे जिन्होंने अनेक दुर्लभ पुस्तकों और पत्रिकाओं की डॉ. आर्य जी से माँग की थी। डॉ. आर्य जी उन पत्रों को मुझे सुना भी रहे थे।

शिष्यों को पढ़ना-लिखना, मार्ग-दर्शन देना तथा विषयों की अतल गहराई में उतरना-सिखाना, डॉ. आर्य का यही व्यसन रहा। वे हिन्दी और संस्कृत दोनों के अच्छे विद्वान थे। इसीलिए तुलनात्मक विवेचन में उनकी विशेष रुचि और पैठ थी। भाषाविज्ञान में भी उनकी विशेष रुचि और गहरी पैठ रही, जिसे उनके शोध-प्रबन्ध 'मलिक मुहम्मद जायसी की भाषा का भाषाशास्त्रीय अध्ययन' तथा उनके अन्य भाषाविज्ञान विषयक ग्रन्थों में बराबर देखा जा सकता है। उनकी ऐसी उल्लेखनीय कृतियों में-भाषा ज्ञान एवम् रचना, (भाग 1-2), राज हिन्दी भाषा प्रकाश (भाग 1-2), भाषा आलोक (भाग 1-2), प्रयोजनमूलक हिन्दी, हिन्दी भाषा का विकास प्रमुख हैं।

डॉ. आर्य जी की सम्पादन कला बेजोड़ थी। 'तुलसी मानस-संदर्भ', 'सूर साहित्य-संदर्भ', 'पद्म सिंह शर्मा स्मृति-ग्रन्थ , 'धर्मदत्त वैद्य स्मृति-ग्रन्थ', 'वर्धमान' पत्रिका के राजेन्द्र कुमार जैन स्मृति अंक तथा भगवान महावीर विशेषांक जैसी कितनी ही कृतियों में डॉ. आर्य जी की सूक्ष्म दृष्टि और अदभुत पकड़ की बानगी प्रत्येक पाठक को स्वत: मिल जाती है। आकाशवाणी के नजीबाबाद केन्द्र की परामर्शदात्री समिति के वे सम्मानित सदस्य रहे। नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ खोज -विभाग के लम्बे समय तक वे निरीक्षक रहे। यही नहीं वे आगरा तथा रुहेलखण्ड विश्वविद्यालयों के शोध-निर्देशक भी रहे। इस प्रकार डॉ. रामस्वरूप आर्य का समग्र जीवन हिन्दी के उत्कर्ष के लिये सदैव समर्पित रहा। उन्होंने अपनी सन्तानों-डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य, डॉ. सन्तोष कुमारी

और रवि प्रकाश आर्य को हिन्दी के उत्तरोत्तर विकास हेतु हिन्दी-पथ पर निरन्तर अग्रसर होने हेतु प्रेरित और प्रोत्साहित किया। रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय की पाठयक्रम समिति एवम् शोध समिति के डॉ. आर्य जी संयोजक रहे। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली ने आप को मुख्य अनुसंधाता के रूप में नियुक्त कर आपकी विद्वता और सामर्थ्य के प्रति सम्मान व्यक्त किया था।

गहन चिन्तन और मनन से आद्योपांत आप्लावित उनके क्रमशः दो निबंध संग्रह-परम्परा और आधुनिकता तथा चिन्तन-अनुचिन्तन, हिन्दी-जगत के मध्य सदैव चिर स्मरणीय रहेंगे। शोध प्रधान इन-निबन्ध संग्रहों में डॉ. आर्य की विविध विषयों में असाधारण पैठ तथा अनुभव की प्रधानता है, साथ ही लेखक का स्वचिन्तन भी विशेष ध्यान देने योग्य है।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी में गुरुजनों के प्रति सदैव अपार श्रद्धा और भक्ति रही है। डॉ. गुणानन्द जुयाल,, पं. भोलानाथ शर्मा तथा डॉ. कुन्दनलाल जैन प्रभृति गुरुजनों ने सदैव अपने आशीर्वाद एवम् कुशल मार्ग-दर्शन तथा सूझ-बूझ से डॉ. आर्य के उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त किया। इस परिप्रेक्ष्य में 'चिन्तन-अनुचिन्तन' निबंध-संग्रह में संकलित 'गुरु गुन लिखा न जाय' शीर्षक निबंध उल्लेखनीय ही नहीं अपितु सभी के लिये पठनीय है।

पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, फीरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली

***

23. मेरे गुरु: डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. सविता मिश्र ,

एम.ए, पी-एच.डी, डी. लिट्.

परम श्रद्धेय गुरुवर डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से मेरा पहला परिचय 1981 ई० में हुआ था, जब मैंने एम.ए. हिन्दी में वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में प्रवेश लिया था। अति विनम्र, आडंबर और प्रदर्शन से सर्वथा रहित, विद्वता के पर्याय डॉ. आर्य जी ने पहली ही भेंट में प्रभावित कर लिया था। पहला परिचय उनके आवास पर ही हुआ था, जब मेरे पिता श्री विष्णुकांत मिश्र जी मुझे उनसे परिचय कराने के लिए उनके घर ले गये थे। उस समय वे अपने घर के बाहरी हिस्से में लगे पेड़-पौधों की देखभाल में व्यस्त थे। उनके कमरे में अनगिनत पुस्तकें और पुरानी पत्रिकाओं के दुष्प्राप्य अंक भी रखे हुऐ थे। उनसे हुई वार्ता के दौरान यह उसी दिन ज्ञात हुआ कि अपने संपर्क में आने वाले रचनाकारों को वे प्रोत्साहित करते हुए उनका मार्गदर्शन करते हैं। उनके निवास पर मुझे यह अनुभव हुआ कि

प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँचने का आधार उनकी यह अध्ययनशीलता ही है। अपनी साहित्य-सेवा के लिये वे न केवल बिजनौर जनपद में अपितु दूर-दूर तक प्रख्यात रहे हैं। हिंदी-भाषा, हिंदी-साहित्य और हिंदी के साहित्यकारों से जुड़ी अनेक संस्थाओं से वे आजीवन जुड़े रहे और निरंतर सम्मानित होते रहे।

हृदय औदार्य उनका सबसे बड़ा वैशिष्ट्य था। किसी का अहित नहीं, किसी के प्रति ईर्ष्या नहीं.... सबके प्रति सद्भावना से मुक्त वे अत्यन्त उदार मना मानव थे। उनका जीवन एक संत का-सा जीवन रहा है। हिंदी की उन्होंने बहुमूल्य सेवा की है। सच्चे अर्थों में वे माँ भारती के साधक रहे हैं- अथक साधक। सहज मानवीय उदात्त भावनाओं से परिपूर्ण उनका व्यक्तित्व सदैव श्रद्धा का पात्र रहा है। उनके व्यवहार की सज्जनता, आत्मीयता और निस्पृहता सदैव प्रभावित करती रही है।

प्रकाश-स्तंभ-सा उनका व्यक्तित्व सामान्य क्षणों में भी प्रणम्य प्रतीत होता है। जब भी वे हमारे महाविद्यालय में एम.ए. की मौखिकी में बाह्य परीक्षक के रूप में आते थे, बातों ही बातों में छात्राओं के साथ-साथ हम लोगों का भी बहुत ज्ञानवर्धन कर जाते थे। उनके ज्ञान का खजाना अक्षय था। अपनी विद्वता का उन्हें लेशमात्र भी अहंकार नहीं था और न ही वे सामने वाले को कभी छोटा अनुभव कराते थे। जब मैंने एम.ए. में प्रवेश लिया था, डॉ. रामस्वरूप आर्य जी उस समय विभागाध्यक्ष थे। विभागीय दायित्वों के पश्चात् भी कोई दिन ऐसा नहीं रहा, जब उन्होंने कक्षा न ली हो। विद्यार्थियों द्वारा पुस्तकें न लाने पर भी उन्हें कभी क्रोधित होते हुए नहीं देखा। रामचरितमानस, पद्मावत के न जाने कितने अध्याय उन्हें कंठस्थ थे। वे अपनी पुस्तकें विद्यार्थियों को दे देते थे और स्वयं बिना पुस्तक के पढ़ाते रहते औरं हम सभी मंत्र-मुग्ध से उन्हें सुनते रहते थे।

'तुलसी मानस संदर्भ ', 'सूर साहित्य संदर्भ', 'पद्म सिंह शर्मा स्मृति-ग्रंथ,' 'सम्बोधि' आदि पुस्तकों के साथ-साथ उन्होंने बिजनौर टाइम्स के अनेक महत्वपूर्ण विशेषांकों का भी संपादन किया है। कुरुक्षेत्र, मैला आँचल, यशोधरा, कालजयी, ध्रुवस्वामिनी आदि पर उन्होंने समीक्षात्मक पुस्तकें लिखी हैं, जो अत्यन्त उपयोगी हैं। वे रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय की हिंदी पाठ्यक्रम समिति तथा हिंदी शोध समिति के संयोजक होने के साथ साथ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, दिल्ली के मुख्य अनुसंधानदाता भी रह चुके थे। नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के प्राचीन हस्तलिखित खोज ग्रंथ-विभाग में अनेक वर्षों तक अवैतनिक निरीक्षक भी रहे थे।

शैक्षिक और साहित्यिक समारोहों में वे अटूट भाव से योगदान करते थे। साहित्यिक समारोहों में उनके परिपक्व विचार और गहन चिंतन-दृष्टि श्रोताओं को

अभिभूत कर देती थी। साधारण-सा दिखने वाला उनका व्यक्तित्व बहुआयामी और असाधारण था।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की 'विचार-बिंदु,' 'चिंतन-अनुचिंतन,' 'परंपरा और आधुनिकता' आदि पुस्तकों को पढ़ते समय उनकी प्रखर चिंतनशील दृष्टि एवं उनकी संवेदना से परिचय तो होता ही है, साथ ही यह भी पता चलता है कि उनके ज्ञान का आकाश कितना विस्तृत था। 'विचार बिंदु' नामक पुस्तक उन्होंने अनन्त शक्ति को समर्पित करके हुए यह स्वीकार किया है कि इसी शक्ति की कृपा से बिंदु-सिंधु का रूप धारण करते हैं। विचार-बिंदुओं में महापुरुषों तथा विचारकों द्वारा प्रस्तुत सूत्रों का विस्तार है। ये विचार-बिन्दु 'वर्धमान' पत्रिका के संपादकीय होने के साथ-साथ अनेक प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुए हैं। 'अमर कौन' शीर्षक के अंतर्गत डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ने उस फूल का वर्णन किया है, जो अपने संपूर्ण सौंदर्य के साथ हवा के मंद-मंद झोंकों से झूमते रहते हुए अपनी सुगंध विकीर्ण कर रहा था और उसके पास ही पड़ा था एक पत्थर.... सर्वथा निस्पंद, चेतन के द्वार बंद किये हुए। पत्थर सैकड़ों वर्ष तक वहीं पड़ा रहा, रहेगा पर क्या उसके अस्तित्व को अमर माना जायेगा, कदापि नहीं। डॉ. आर्य जी ने यही प्रेरणा देने का प्रयास किया है कि फूल ही अमर है। यहाँ उन्होंने प्रतीक रूप में फूल के माध्यम से लोक-कल्याण की महिमा प्रतिपादित की है, 'खुद हँसो दूसरों को हँसाया करें' में उन्होंने कहा है-''**रुदन जीवन का/लक्ष्य नहीं है/खुद हँसो, दूसरों को हँसाओ/जीवन का सार्थकता इसी में हैं।**'' 'जो निज मन परिहरै विकारा' में वे कहते हैं कि हृदय को विकारों से मुक्त करने की अत्यन्त आवश्यका है। बाँसुरी का उदारहण देते हुए उन्होंने कहा है-''**बाँसुरी के निर्माता ने/उसके अंदर के ध्वनि-अवरोधक तत्वों को निकाल फेंका है/अब उसमें ध्वनि सहज रूप में आ रही है।**''

'चिंतन-अनुचिंतन' डॉ. आर्य जी के शोध परक 32 निबंधों का संग्रह है। इसमें उन्होंने ऐसे विषयों का चयन किया है जिनके विषय में सर्व साधारण को जानकारी उपलब्ध नहीं है। पुस्तक रूप में प्रकाशन से पूर्व सभी निबंध सम्मेलन पत्रिका, नवभारत टाइम्स, साप्ताहिक हिंदुस्तान, साहित्य अमृत आदि पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। 'चिंतन-अनुचिंतन' का पहला निबंध 'शब्दार्थ चिंतन' है, जिसमें उन्होंने शब्द के अंतर में अनेकानेक अर्थों को उद्घाटित करने की क्षमताओं पर प्रकाश डाला है। उड़द की दाल की 'बड़ी' शब्द की व्युत्पत्ति के बारे में वे कहते हैं- ''उडद की दाल की पीठी से 'बड़ी' बनाई जाती है, जो आकार में

छोटी होने पर भी 'बड़ी' कहलाती है। इसका क्या रहस्य है? वास्तव में 'बड़ी' बरगद के फल को कहते हैं। उड़द की दाल की 'बड़ी' आकार-प्रकार में उससे मिलती हुई है। अतः इसी साम्य के आधार पर उसका नाम 'बड़ी' रखा गया है।''

'गुरु गुन लिखा न जाइ' निबंध में स्कंदपुराण में वर्णित गुरु महिमा से आरंभ करते हुए तुलसी, कबीर, दादूदयाल, संत सुंदरदास, संत पलटू दास, संत चरण दास आदि के साथ-साथ मुलसमान संत रज्जबजी, संत दरिया साहब आदि के साहित्य को भी उद्धृत करते हैं। 'महिमा श्री सर्वेश्वरशिव की,' 'महावीर प्रभु की जय-जय हो,' 'जय हिंदी जय राष्ट्र भारती,' 'जय देवनागरी चिर महान' आदि उनके अनेक महत्वपूर्ण निबंध हैं। 'उत्तर प्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग: संघर्ष गाथा' निबंध के पूर्वार्द्ध में उन्होंने भारत में मुसलमानों की सत्ता स्थापित होने पर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिंदी आदि के पृष्ठभूमि में चले जाने और फारसी भाषा के आधिपत्य के कारणों पर प्रकाश डाला है। लार्ड मैकाले की संस्तुति और उनकी मानसिकता से अवगत कराते हुए उन्होंने अदालतों में हिंदी के प्रयोग के लिए पं. मदन मोहन मालवीय तथा डॉ. श्याम सुंदरदास के योगदान पर प्रकाश डाला है।

'बहुमुखी प्रतिभा के धनी दुष्यंत कुमार' निबंध में दुष्यंत की ग़ज़लों, कविताओं, उपन्यासों, नाटक, गीति नाट्य आदि विधाओं का परिचय देते हुए उनके विषय में अत्यन्त महत्वपूर्ण टिप्पणियाँ दी गयाी हैं। 'प्रेमचंद और फिल्म-संसार' निबंध में उन्होंने प्रेमचन्द के फिल्मी दूनिया से सम्बन्ध से पाठकों को अवगत कराया है। उपन्यासकार, कहानीकार, निबंध लेखक तथा पत्रकार के रूप में तो पाठक प्रेमचंद जी को जानते हैं लेकिन प्रेमचंद के फिल्म सम्बन्धी अनुभवों व विचारों से उनका अधिक परिचय नहीं है। डॉ. आर्य जी लिखते हैं- ''प्रेमचंद जी की दृष्टि में जो 'बैलगैरिटी' थी, प्रोड्यूसर उसे इनटरटेनमेंट वैल्यू मानते थे। उनके द्वारा लिखित सामाजिक कहानियाँ प्रोड्यूसरों द्वारा निरस्त कर दी जाती थीं।'' पुस्तक में 'प्रथम अखिल भारतवर्षीय महिला कवि-सम्मेलन' शीर्षक से अत्यन्त महत्वपूर्ण निबंध संकलित है। इसमें बताया गया है कि हिन्दी का प्रथम 'अखिल भारतवर्षीय महिला कवि सम्मेलन' 15 अप्रैल 1933 ई० को सुभद्रा कुमारी चौहान की अध्यक्षता में 'प्रयाग महिला विद्यापीठ' में सम्मन्न हुआ था। सुभद्रा कुमारी चौहान का अध्यक्षीय भाषण अत्यन्त महत्वपूर्ण था।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के व्यक्तित्व की सरलता, सहजता और विद्वता उनके निबंधो में भी परिलक्षित होती है। उनके पास हिंदी भाषा और साहित्य से संबंधित

अत्यन्त मूल्यवान सामग्री थी पर इस मूल्यवान संपदा का घमंड उन्हें बिल्कुल नहीं था। जब भी भेंट होती, बहुत सादगी से बातों ही बातों में अमूल्य संपदा का उल्लेख करते हुए हमारा ज्ञानवर्धन कर देते थे। उनकी स्मरण शक्ति अद्‌भुत थी। कभी वे 'कासिद' नामक उर्दू साप्ताहिक का उल्लेख करते जिसको भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा प्रस्तावित तो किया गया था पर जो प्रकाशित नहीं हो सका था। 'परम्परा और आधुनिकता' नामक अपने निबंध-संग्रह में उन्होंने 'कासिद' के अतिरिक्त 'नीति प्रकाश' और 'पंच' आदि के प्रकाशित होने के विज्ञापन का उल्लेख किया है पर शर्तें पूरी न हो पाने के कारण उनका प्रकाशन संभव नहीं हो सका था।

अपने गुरुवर पं. भोलानाथ जी शर्मा को पावन स्मृतियों को संस्मरण में संजोते हुए वे लिखते हैं-''पूज्य पं. भोलानाथ जी शर्मा का ध्यान आते ही मेरे मानस पटल पर प्राचीन काल के ऋषिकल्प गुरुजनों का चित्र उभरने लगता है''‘दिनकर की काव्य-यात्रा,''हिंदी पत्रकारिता के दधीचि पं. रुद्रदत्त शर्मा,''सहृदय समीक्षक पं. पद्म सिंह शर्मा,''काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सौ वर्ष ,''निर्भीक पत्रकार पं. श्रीराम शर्मा' आदि उनके अन्य महत्वपूर्ण आलेख हैं।

उनके निबंधों को पढ़ते-पढ़ते 1981 ई० से लेकर 1983 ई० तक का समय स्मृति में कौंध रहा है और स्वयं पर गर्व हो रहा है कि इतने विद्वान और ज्योति स्तंभ सदृश मनीषी की शिष्या होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। ऐसा व्यक्तित्व आज के समय में दुर्लभ है। उनकी पुण्य स्मृति को मेरा शत-शत् नमन।

एसोशिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग , आर.बी.डी कॉलेज, बिजनौर

***

24. बिजनौर के गौरव: डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. शशि प्रभा

एम. ए., पी-एच.डी.

डॉ. रामस्वरूप आर्य एक ऐसा नाम है, जिन पर बिजनौर को हमेशा गर्व रहेगा। हिंदी साहित्य के क्षेत्र में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का योगदान अविस्मरणीय है। साहित्य की कोई भी विधा क्यों न हो, उनकी लेखनी, हर विधा में सक्षम रही है। उन्होंने कई पुस्तकें लिखी हैं, जो हिंदी भाषा के विद्यार्थियों के लिए किसी वरदान से कम नहीं हैं। रुहेलखंड विश्वविद्यालय के विभिन्न पाठ्यक्रमों में उनकी पुस्तकें हैं- हिंदी भाषा का विकास, प्रयोजनमूलक हिंदी, हिंदी भाषा एवं साहित्य का विकास आदि। भाषा पर उनकी पकड़ अद्वितीय है या हम कह सकते हैं कि डॉ. रामस्वरूप आर्य जी एक ऐसे भाषा-विशेषज्ञ थे, जिन्हें भाषा की नब्ज की

पहचान थी। ऐसे भाषा विशेषज्ञ क्या बिजनौर की सीमाओं में समा सकते थे। तब ही तो उनकी ख्याति बिजनौर की सीमाओं को तोड़कर संपूर्ण भारतवर्ष में व्याप्त है।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी न सिर्फ भाषा-विशेषज्ञ थे बल्कि एक अच्छे समालोचक भी थे। समीक्षा से संबंधित उनकी पुस्तकें हैं-सूरदासः एक विश्लेषण, भ्रमर गीत सार सटीक, गांठः समीक्षात्मक अध्ययन, मैला आंचलः समीक्षात्मक अध्ययन, यशोधराः एक अध्ययन, कुरुक्षेत्रः एक अध्ययन, कालजयीः एक अध्ययन आदि। ये सभी कृतियाँ हिंदी साहित्य में मील का पत्थर हैं। डॉ. आर्य जी की पारखी दृष्टि ऐसी रही कि छोटी से छोटी बात भी उनकी आँखों से बच नहीं पायी। सिर्फ समीक्षा ही नहीं, निबंध लेखन जैसा दुष्कर कार्य भी डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ने किया है। उनके निंबध संग्रह हैं- साहित्यिक निंबध, परम्परा और आधुनिकता, चिंतन-अनुचिंतन आदि। परम्परा और आधुनिकता नामक निंबध संग्रह के लिए वर्ष 1997 ई0 में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को पुरस्कृत भी किया गया।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ने न केवल साहित्यिक लेखन के क्षेत्र में ख्याति अर्जित की अपितु संपादन में भी आपको महारथ हासिल थी। आपने अनेक ग्रंथों एवं पत्रिकाओं का संपादन किया। आपके द्वारा संपादित ग्रंथ एवं पत्रिकाएँ हैं- तुलसी मानस संदर्भ, सूर साहित्य संदर्भ, पद्म सिंह शर्मा स्मृति ग्रंथ, बिजनौर टाइम्स-पं. पद्म सिंह शर्मा अंक, अंतर्ज्वाला- गणतंत्र अंक, बिजनौर टाइम्स- पं. रुद्रदत्त शर्मा अंक एवं वर्धमान महाविद्यालय से प्रकाशित होने वाली 'वर्धमान' पत्रिका का संपादन 1960 ई0 से लेकर 1980 ई0 तक निंरतर किया।

डॉ. रामस्वरूप आर्य एक ऐसे व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने लेखन और संपादन समान रूप से किया। डॉ. आर्य जी की 200 से अधिक लेख, समीक्षाएँ, कविताएँ आदि विभित्र पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई। उन्होंने लगभग 50 पुस्तकों की भूमिकाएँ भी लिखीं। आकाशवाणी नजीबाबाद से आपकी अनेक वार्ताएँ प्रसारित हुई हैं। आप रुहेलखंड विश्वविद्यालय की हिंदी पाठ्यक्रम समिति तथा हिंदी शोध समिति के संयोजक रहे और विद्या परिषद एवं कार्यकारिणी परिषद के सदस्य भी रहे। आपके निर्देशन में आगरा एवं रुहेलखंड विश्वविद्यालय से अनेक शोध-छात्रों ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ने साहित्य के क्षेत्र में बुलंदियों को छुआ है लेकिन उनके व्यक्तित्व की पहचान है- उनकी सादगी, सरलता, विनम्रता और सहृदयता।

आप समझ सकते हैं कि इतना बड़ा साहित्यकार जब मिलता है, तो उनसे मिलकर बहुत कुछ सीखने को मिलता है। मेरा यह सौभाग्य है, कि मुझे अपने जीवनकाल में अनेक बार डॉ. आर्य जी से मिलने का अवसर मिला है, देखते ही वे खड़े हो जाते थे और नमस्ते का जवाब हमेशा हाथ जोड़कर देते थे। ऐसा विराट व्यक्तित्व था डॉ. आर्य जी का। मैं पिछले 21 वर्ष से उनके सुपुत्र डॉ. चंद्रपकाश आर्य जी के साथ वर्धमान महाविद्यालय के हिंदी विभाग में कार्यरत हूँ। आप भी अपने पिता के समान ही सरल एवं सहृदयी हैं। अंत में मैं कहना चाहूँगी कि असाधारण प्रतिभा के धनी डॉ. रामस्वरूप आर्य जी हमेशा बिजनौर के गौरव बने रहेंगे।

एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, वर्धमान कालेज, बिजनौर

***

25. बहुमुखी प्रतिभा के धनी: परम श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. अर्चना शर्मा

एम.ए., हिंदी, पी-एच.डी.

मैं परम श्रद्धेय डॉ. आर्य जी की वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में एम.ए, हिन्दी की छात्रा रही, तत्पश्चात् आपके निर्देशन में 'केशव-काव्य का सांस्कृतिक एवं दर्शनपरक अध्ययन,' विषय पर पी-एच.डी. का शोध कार्य किया।

डॉ. राम स्वरूप आर्य कर्त्तव्यनिष्ठ एवं अध्ययनशील शिक्षक के रूप में मेरे प्रेरणा स्रोत रहे। वे शिक्षण को अपना धर्म समझकर इतनी तन्मयता से पढ़ाते थे कि रचनाकार के द्वारा वर्णित वही परिवेश और दृश्य सामने दृष्टिगोचर होने लगते थे। आपने सफल और लोकप्रिय अध्यापक के रूप में ख्याति अर्जित की। आप अपने शिष्यों के साथ केवल पुस्तकीय ज्ञान-दान का ही सम्बन्ध नहीं रखते थे वरन् आत्मीयता के साथ जीवन के हर मोड़ पर समुचित मार्ग-प्रशस्त करते थे। एक कुशल एवं सच्चे शिक्षक के रूप में आपके व्यक्तित्व की संजीदगी ने मुझे प्रभावित किया।

डॉ. आर्य जी के स्नेहिल आशीर्वाद और पूर्णप्रोत्साहनमय निर्देशन का ही प्रतिफल है, जिनकी छत्र-छाया में मेरा शोध प्रबन्ध पूर्ण हो सका। आप केवल मेरे निर्देशक मात्र ही नहीं, अपितु मेरे पिताजी डॉ. शिवसवेक अवस्थी जी, पूर्व अध्यक्ष, भूगोल विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर के सहयोगी मित्र भी थे। आप प्रेरणा स्वरूप वत्सलता के साथ निरन्तर लक्ष्य सिद्धि की ओर प्रगति करने के लिये प्रेरित करते रहे। शोध-प्रबन्ध के विषय चयन से लेकर स्वरूप का निर्धारण आपके तार्किक सुझावों का ही प्रतिफल है कि अति व्यस्तता से समय निकालकर

आपने मेरा मार्गदर्शन एवं उत्साहवर्धन किया।

आपके योग्य निर्देशन एवं सहयोग के बिना शोध मेरे लिये निःसन्देह कठिन होता, मैं आपका शब्दों में धन्यवाद ज्ञापित करने में असमर्थ हूँ तथा शिष्ट-भिष्ट व्यवहार और विद्वतापूर्ण निर्देशन की प्रशंसा करते नहीं अघाती।

स्वभाव से सरल, वाणी से समर्थ डॉ. आर्य जी अनेक सामाजिक , साहित्यिक संस्थाओं के सदस्य रहे। हिंदी साहित्य की सेवा में ही अपना समग्र जीवन समर्पित करते हुए विभिन्न साहित्यिक संस्थाअें से जुड़े रहे। आपकी अनेक पुस्तकें तथा संपादित ग्रंथ के साथ-साथ लेख-समीक्षाएँ, कविताएँ आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। डॉ. आर्य जी को समय-समय पर अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया।

निरन्तर अध्ययन-अध्यापन एवं साहित्यिक गतिविधियों में विशेष रुचि रखने के साथ हिंदी भाषा एवं साहित्य की सेवा करते हुए साहित्य-जगत में अत्यधिक यश प्राप्त किया। आप प्रखर वक्ता, प्रकांड पण्डित, उद्‌भट विद्वान तथा हिन्दी जगत के ऐसे उज्ज्वल नक्षत्र के रूप में प्रतिष्ठित रहे कि वर्धमान कॉलेज, बिजनौर जैसी संस्था के हिन्दी विभाग को बहुमूल्य और निष्ठापूर्ण सेवाओं से लाभान्वित किया। आपने साहित्य की सेवा स्वाभिमान, गौरव और वैदुष्य की पताका फहराते हुए की। हिन्दी विभाग तथा हिन्दी साहित्य की सेवा आपके गुणधर्म के कारण न केवल विद्यार्थियों और विद्वानों में याद की जायेगी बल्कि सम्पर्क में आने वाले विद्वानों तथा साहित्य प्रेमियों ने भी आपको यथा योग्य मान दिया।

कथन और करनी की एकरूपता डॉ. आर्य जी के जीवन का लक्ष्य था। आतिथ्य सत्कार उनके आचार-व्यवहार का मेरू था। उनमें अपार ज्ञान के भण्डार के साथ कवि सुलभ भावुकता, शिक्षक सुलभ गम्भीरता एवं चिन्तक-सुलभ दार्शनिकता का अनुपम संगम था। उनके व्यक्तित्व में सज्जनता और विद्वता का मणिकांचन योग देखने को मिला। डॉ. आर्य जी सदैव अपने छात्रों एवं सहयोगियों के मध्य एक आदर्श प्रेरक बिन्दु रहे। वे अपने कार्यो में विचारशील, मननशील एवं चिंतनशील व्यक्तित्व के रूप में दिखाई दिये। हिन्दी साहित्य जगत की जीवनपर्यंत सेवा करते हुए वे निरन्तर नवोदित साहित्याकारों का मार्ग अनवरत प्रशस्त करते रहे। आपकी महत्वपूर्ण कृतियों से सभी साहित्य-प्रेमियों का मार्ग प्रशस्त होता रहेगा। मैं गुरुवर्य डॉ. आर्य जी की प्रथम पुण्यतिथि पर उनके प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित करती हूँ। शतशः नमन करती हूँ।

एसोशिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, एल.आर.कॉलेज, साहिबाबाद, गाजियाबाद

26. डॉ. रामस्वरूप आर्य : अध्ययनशील अविस्मरणीय व्यक्तित्व

डॉ. ओमदत्त आर्य

एम.ए. (हिन्दी-अर्थशास्त्र), पी-एच.डी.

श्रद्धेय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के स्मृति में ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है। निश्चय ही स्मृति-ग्रन्थों का अपना विशेष महत्व है। स्मरणीय व्यक्ति के सम्पर्क से ज्ञात-अज्ञात, गुणावगुण, आकर्षण-विकर्षण आदि विषयक प्रसंग जीवित काल में तो किसी प्रमादवश, अज्ञानवश अथवा अपरिहार्य कारणों से विचार व्यक्त नहीं कर पाते या हो पाते किन्तु वे संस्मरण और श्रद्धांजलियों के माध्यम से व्यक्त हो जाते हैं। काश! डॉ. आर्य की पूण्य आत्मा भी स्मृति-ग्रंथ में रेखांकित संस्मरण को सुन पाती तो उसके आनन्द की कोई सीमा न रहती। स्मृति-ग्रंथ का प्रकाशन अत्यन्त वांछनीय कार्य है क्योंकि यह उनके चाहने वालों, शिष्यों, अध्यापक-साथियों, समकालीन साहित्यकारों तथा उनके सान्निध्य में आए साहित्य-प्रेमियों के लिए उनकी स्मृति में अपने भावों, विचारों तथा अनुभव-अनुभूतियों के द्वारा श्रद्धांजलियाँ अर्पित करने का अवसर है। सम्पूर्ण हिन्दी जगत डॉ. आर्य जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से पूर्ण परिचित है। बाह्य तथा जनपद बिजनौर के भी अनेक महानुभाव तथा साहित्य-अनुरागी उनके सम्पर्क में थे, प्रमुख इक्कीस व्यक्तियों का नामोल्लेख तो उन्होंने अपनी अन्तिम कृति 'चिन्तन-अनुचिन्तन' (निबंधावली) के अपने 'निवेदन' पृष्ठ पर भी किया है। उनमें से मैं भी एक हूँ, मेरा नामोल्लेख भी हुआ है, मेरे तो वे शिक्षा, साहित्य के गुरुवर थे, अन्यों की भाँति मैं भी अपने नामोल्लेख से अभिभूत हूँ, मेरा उनक्र सम्बन्ध मृत्यु पर्यंत रहा है।

मैं वृद्धावस्था में हूँ, स्वभावत: मेरे मानस-पटल पर अनेक सुखद-दुखद अनुभूतियों की स्मृतियाँ सघन-घन की भाँति छायी हुई हैं। इन स्मृतियों में कोई अमृत-वर्षण कर सकती है तो कोई विष-वर्षण। डॉ. आर्य जी के आकस्मिक निधन की सूचना मुझे उस समय प्राप्त हुई, जब मैं महाविद्यालय-कार्य से एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली में था। सुनकर आघात पहुँचा। जब वापस आया तब तक उनका दाह-संस्कार हो चुका था। मैं उनके अन्तिम दर्शन न कर सका, इसकी पीड़ा मुझे आजीवन सालती रहेगी। यह विष-वर्षण हम सबने सहन किया। इस समय डॉ. आर्य जी से सम्बन्धित अनेक सुप्त स्मृतियाँ जाग रही हैं, जिन्हें व्यक्त करना चाहता हूँ क्योंकि-

छिपाने को छिपा लेता सकल, दुख-सुख मैं जग के,
मानव-सुलभ अभिव्यक्ति की, यदि इच्छा नहीं होती।

किन्तु भावातिरेक के कारण न वाणी अच्छा काम कर रही है और न पाणि (लेखनी)-''वाणी रह जाती मौन, पाकर भावों का पारावार।''

डॉ. आर्य जी से मेरा प्रथम परिचय बी.ए., भाग-एक में प्रवेश लेने के समय दिनांक 18.07.1960 को हुआ था, उनकी नियुक्ति भी वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में हिन्दी-संस्कृत प्रवक्ता पद पर दिनांक 18.07.1960 को हुई, इससे पूर्व वे हिन्दी विभाग, बरेली कॉलेज, बरेली में नियुक्त थे। नवस्थापित महाविद्यालय, बिजनौर के संस्थापक प्राचार्य डॉ. श्रीराम त्यागी जी ने मुझे डॉ. आर्य जी से मिलाया। 27 वर्षीय, छोटी कद-काठी के नवयुवक प्रवक्ता से मिलकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। मैं उनकी प्रतिभा पर मुग्ध हो गया। वे साधारण पैन्ट-शर्ट धारण किए हुए, सौम्य सूरतवाले, विनम्रता और सादगी की प्रतिमा थे, अध्ययनशीलता का परिचय उनकी विद्वतापूर्ण मधुर वाणी दे रही थी, नेत्रों में आशा और विश्वास की किरणें झलक रही थीं। उन्होंने मेरा बी.ए. भाग एक मे प्रवेश मान लिया। डॉ. आर्य जी उस समय पी-एच.डी. धारक नहीं थे, यह उपाधि उन्हें सन् 1967 में प्राप्त हुई थी। मैंने प्रथम एम.ए. अर्थशास्त्र विषय में उत्तीर्ण किया था, तप्पश्चात महाविद्यालय में नौकरी करते हुए डॉ. आर्य जी की प्रेरणा एवं सात्परामर्श से एम.ए. हिन्दी में भी उत्तीर्ण किया था। यह वह समय था जब मुझे डॉ. श्रीराम त्यागी एवं डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का सान्निध्य साथ-साथ मिला। ऐसी स्थिति में मुझे अपने भविष्य की प्रगति के स्वप्न भी दिखाई देने लगे। मैंने लिखा भी था-

मिल गया 'स्वरूप' मुझको, देवता 'श्रीराम' का,
निश्चय ही बन जाएगा, साहित्य जीवन काम का।

क्योंकि मुझे एक 'श्रीराम (डॉ. श्रीराम त्यागी) तथा दूसरे 'राम' का स्वरूप (डॉ. रामस्वरूप आर्य) की कृपा जो प्राप्त होनी थी। डॉ. आर्य जी के निर्देशन में मुझे 'बिजनौर क्षेत्र की ग्रामोद्योग शब्दावली का अध्ययन' विषयक शोध-कार्य पर एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली से पी-एच.डी. की उपाधि 1983 ई० में प्राप्त हो गई थी। शोध-विषय स्वीकृत होने से पूर्व डॉ. आर्य जी ने निर्देश दिया था कि पहले आप मुझे एक शोधपूर्ण लेख 'तुलसी के दार्शनिक विचारों' पर लिखकर दिखाएँ, अच्छा प्रतीत हुआ तो इसे डॉ. कुन्दन लाल जैन जी द्वारा सम्पादित किये जाने वाले ग्रंथ 'तुलसी वाङ्मय विमर्श' में प्रकाशित करा दिया जायेगा, मेरा वह लेख प्रकाशित हो गया। शोध-विषय स्वीकृत होने पर मुझे उनका निर्देश प्राप्त हुआ था, शोध-प्रबन्ध का 'प्रथम अध्याय' मुझे लिखकर दिखाएँ, मैंने यह अध्याय भी यथा समय पूर्ण कर दिखाया। डॉ. आर्य जी अत्यन्त

प्रसन्न हुए और आश्वस्त हो गए कि मैं शोध कार्य करने में सफल हो जाऊँगा, उन्होंने मुझे आशीर्वाद दिया कि तुम अपने शोध-कार्य में अवश्य सफल होगे। लिखने-पढ़ने का अभ्यास निरन्तर बना रहे, जीवन में सफलता का यही एकमात्र उपाय है। डॉ. आर्य जी की प्रेरणा से मेरी पाँच पुस्तकें तथा अन्य निबन्ध प्रकाशित हुए हैं, लेखन कार्य जारी है।

डॉ. आर्य जी त्याग-तपस्या, विनम्रता और सादगी के जीवन्त उदाहरण थे, उनका अभिवादन स्वीकार करने का ढंग अत्यन्त आकर्षक था। अपने दाहिने हाथ की तर्जनी तथा मध्यका अंगुलियों को मस्तक तक लाते हुए बड़े विनम्र भाव से कहते ''नमस्ते भाई, अच्छे हो?'' अभिवादन करने की भी उनकी अपनी शैली थी लेकिन वे इतने सीधे-साधे भी नहीं थे कि लोग उन्हें चकमा दे जाएँ और न वे इतने विनम्र थे कि जो चाहे उन्हें झुका दे, उनका यह रूप महाविद्यालय में स्थानापन्न प्राचार्य के रूप में कर्तव्य का निर्वाह करते हुए पाया गया।

डॉ. आर्य अत्यन्त कुशल एवं सफल प्राध्यापक थे, उन्हें अपने विषय-पर पूरा अधिकार था, साहित्य की जिस विषय-विधा का पठन-पाठन अध्यापन करते, उस समय उनके चेहरे पर वैसे ही हाव-भाव (अनुभाव) तथा 'यथा वाणी तथा पाणि' की मुद्रा परिलक्षित होती थी। एक बार कक्षा में करुण रस की कविता 'जल की मछलियाँ' का उदारहण दे रहे थे। इस इतिवृत्तात्मक कविता का कथानक-भाव यह था- सासू माँ ने रुष्ट होकर नव-वधू को मछलियों के स्थान पर साँप के टुकड़े कर हाँडी में पकाकर खिला दिये। वधू की मृत्यु हो गई। वधू ने स्वप्न में अपने प्रवासी पति को विलाप करते हुए सब किस्सा सुना दिया। यह कहते-कहते गुरुवर डॉ. आर्य जी के नेत्रों में आँसुओं की अविरल धारा प्रवाहित होने लगी थी। हम सब छात्रों की भी लगभग यही दशा थी। आँसू पोछते हुए डॉ. आर्य जी ने करुण-रस के पूर्ण परिपाक की स्थिति का सबको बोध करा दिया था।

एक बार वे कक्षा में पशु-पक्षियों के प्रति मानवीय सम्वेदना पर व्याख्यान दे रहे थे- उपदेशात्मक शैली में कहा ''जीवों पर दया करनी चाहिए। यदि किसी मकान में पक्षियों ने अपना घोंसला बना रखा है अथवा कोई पशु घर में पलता है तो उस मकान अथवा घर पर उन पक्षियों तथा पशुओं का समान अधिकार होना चाहिए, ये उनके भी निवास स्थान हैं।'' यह कथन डॉ. आर्य जी की पशु-पक्षियों के प्रति करुणा, प्रेम तथा सदाशयता का प्रमाण है। इसी संदर्भ में उन्होंने सभी छात्रों को महान कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा द्वारा रचित पुस्तक 'मेरा परिवार' पढ़ने की सलाह दी, इसमें नीलकण्ठ-मोर, गिल्लू-गिलहरी, सोना-हिरनी, दुर्मुख-

खरगोश, गौरा-गाय, नीलू-कुत्ता, रोजी-कुत्ती, रानी-घोड़ी, निक्की-नेवला आदि पालतू पशु-पक्षियों का अत्यन्त मार्मिक तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। ये अद्भुत रखाचित्र हिन्दी साहित्य की अनुपम धरोहर है। मुझे डॉ. आर्य जी ने इस पुस्तक के साथ, पं. रामचन्द्र शुक्ल की हिन्दी साहित्य का इतिहास, श्री मैथिली शरण गुप्त की 'यशोधरा' तथा श्री जयशंकर प्रसाद की 'आँसू', 'स्कन्दगुप्त' पुस्तकें सप्रेम भेंट की थीं। इस प्रकार वे अपने छात्र/छात्राओं की सहायता किया करते थे।

साहित्य-सृजन के क्षेत्र में डॉ. आर्य जी का योगदान भी कम नहीं रहा। उन्होंने लगभग 25 पुस्तकों की रचना की है इनका उल्लेख उनकी पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' के कवर के अन्तिम पृष्ठ पर अंकित है। 'साहित्यिक निबंध', 'परम्परा और आधुनिकता' तथा 'चिन्तन-अनुचिन्तन' उनकी निबन्ध-कला के उदाहरण हैं। 'विचार-बिन्दू' भी लघु किन्तु महत्वपूर्ण कृति है। उनके अनेक लेख समय-समय पर विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में यथा-कादम्बिनी, विशाल भारत, अमर उजाला, धर्मयुग आदि में प्रकाशित हुए। डॉ. आर्य जी मूलतः गद्यकार थे और गद्य ही कवियों की सच्ची कसौटी होता है-गद्यं कविनां निकषं वदन्ति। वे हिन्दी साहित्य के उद्भट विद्वान थे, हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू, अवधी तथा ब्रजभाषा पर समान अधिकार रखते थे। उन्होंने अनेक ग्रन्थों तथा पत्रिकाओं का उत्कृष्ट सम्पादन किया है, जिनमें 'तुलसी-मानस संदर्भ', 'सूर-साहित्य संदर्भ', 'पं. पद्म सिंह शर्मा स्मृति-ग्रंथ', 'सम्बोधि,' 'रत्नावली', 'वर्धमान', 'अन्तर्ज्वाला'-गणतंत्र अंक, बिजनौर टाइम्स आदि के कई विशेषांकों में सहयोग दिया है। पत्र-लेखन तथा चित्रकला उनकी अभिरुचि में सम्मिलित थे। उनके चित्रकार व्यक्तित्व से बहुत कम लोग परिचित हैं। उनके अनेक रेखाचित्रों, तैलाचित्रों तथा रंगीन चित्रों का संग्रह एक पत्रावली में प्राप्त हुआ है, किन्तु रत्नाकर के खण्डकाव्य 'उद्धव शतक' में गोपी-कृष्ण के भावों, चित्रों का चित्रांकन प्राप्त नहीं हो सका। ऐसा उनके सुपुत्र डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य से ज्ञात हुआ। मेरे प्रकाशित शोध प्रबन्ध में संगृहीत मेरे द्वारा रचे चित्रों की डॉ. आर्य जी ने प्रशंसा की थी। यह उनके 'अन्तर्दर्शन' लेख से स्पष्ट होता है।

डॉ. आर्य जी ने अनेक भाषा वैज्ञानिक लेख लिखे हैं। भाषा विज्ञान उनका परम प्रिय विषय था। भाषा विज्ञान तथा साहित्य की दृष्टि से उन्होंने कवियों-साहित्यकारों की समालोचनाएँ भी की हैं। मलिक मौहम्मद जायसी की भाषा (पद्मावत) पर उनका पी-एच.डी. का शोध प्रबन्ध प्रशंसनीय है, जिसे पद्मावत

के प्रसिद्ध टीकाकार डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने भी श्रेष्ठ माना है। कठिन काव्य के प्रेत कहलाने वाले केशवदास की भाषा पर भी डॉ. आर्य जी का असाधारण अधिकार था, जिसका लोहा केशव साहित्य के अधिकारी विद्वान बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. विजयपाल सिंह ने भी माना है। उनकी अध्ययनशीलता का परिचय इस तथ्य से ज्ञात होता है कि पुस्तकों, साहित्यकारों, कवियों के संदर्भ ढूँढने में उनका कोई सानी नहीं था, उनकी शैक्षिक योग्यता भी उल्लेखनीय है। वे सरस्वती के वरदपुत्र थे। वे एम.ए. (हिन्दी, संस्कृत), साहित्य महोपाध्याय, विद्यासागर, सरस्वती श्री, साहित्य श्री से भी सम्मानित थे, उन्हें मरणोपरान्त कई साहित्यिक संस्थाओं ने सम्मानित किया है। 14 सितम्बर, 1916 ई0 को साहित्य मण्डल , श्रीनाथद्वारा (राजस्थान) द्वारा उन्हें 'हिन्दी भाषा भूषण ' से सम्मानित किया गया। उनके अनेक पत्र अनेक अभिनंदन ग्रंथों, स्मृति ग्रन्थों तथा अन्य विधा की पुस्तकों में प्रकाशित हुए हैं। लगभग सभी समकालीन कवियों तथा साहित्यकारों से उनका पत्र-व्यवहार होता था, डॉ. अम्बा प्रसाद सुमन, डॉ. भगवान शरण भारद्वाज, डॉ. शम्भुशरण शुक्ल जी के अतिरिक्त अनेक स्थानीय साहित्य प्रेमियों से निरन्तर उनका संपर्क बना रहता था। 'कविता का अचूक प्रभाव' शीर्षक निबन्ध उनकी काव्य-मर्मज्ञता का प्रबल प्रमाण है।

वे गुरु-शिष्य परम्परा के पोषक थे। उन्होंने अपने गुरुगण त्रय-डॉ. गुणानंद जुयाल, पं. भोलानाथ शर्मा तथा डॉ. कुन्दन लाल जैन जी को ही 'चिन्तन-अनुचिन्तन' निबन्धावली समर्पित की है। उनकी अध्ययनशीलता का सबसे बड़ा प्रमाण उनका गृह-पुस्तकालय है, जिसमें सभी विख्यात पत्र-पत्रिकाएँ, पुरातन-नवीन पुस्तकें, शोध ग्रंथ, अभिनन्दन ग्रंथ, स्मृतिग्रंथ, शब्दकोश आदि पुस्तकें विद्यमान हैं। उन्होंने अपने 'महाभारत' के सभी खण्डों सहित अनेक मूल्यवान हिन्दी-संस्कृत पुस्तकों को वर्धमान कॉलेज, बिजनौर के पुस्तकालय में सुरक्षित रखवा दिया है। डॉ. आर्य जी के निर्देशन में 17 शोधार्थियों ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। उन्होंने अनेक कवियों, साहित्यकारों की पुस्तकों की भी समीक्षाएँ तथा भूमिकाएँ लिखी हैं, उनका अन्तिम समीक्षात्यक लेख श्री हितेश कुमार शर्मा जी की साहित्यिक रचना 'बेटियाँ' पर लिखा गया है। इससे पूर्व वे डॉ. बुद्धि प्रकाश शर्मा जी की दोहावलियाँ 'मैं, मैं हूँ' तथा 'कर्मबोध' पर अपनी सम्मतियाँ लिख चुके हैं, जिन्हें भूमिका भी कह सकते है। मेरी निबंधावली 'फूलों की महक' पर की गइ उनकी साहित्यिक टिप्पणी भी गद्य विधा पर उनकी

मर्मज्ञता एवं अध्ययनशीलता का परिचय देती है, वे लिखते हैं- 'फूलों की महक' में डॉ. ओमदत्त आर्य ने विभिन्न व्यवसायों तथा लोक-जीवन में प्रचलित शब्दों का संकलन तथा उनके सम्बन्ध में विशद जानकारी दी है। उन्होंने अपने लेख के माध्यम से उन्हें सहेज कर सराहनीय कार्य किया है। शब्दों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन नीरस विषय माना गया है, पर डॉ. ओमदत्त आर्य ने इनका अध्ययन करते हुए काव्यात्मक उद्धरणों , लोकोक्तियों तथा मुहावरों के प्रयोग से इन्हें सरस बना दिया है। 'अभिज्ञान', 'हम पर लिखो', 'तीन !तीन !तीन !', 'किसान के कायाकष्ट' आदि निबन्ध लेखक की मौलिक सूझ के परिचायक हैं। 'किसान के कायाकष्ट' लेख अत्यधिक मार्मिक है, ऐसा लेख कोई भुक्तभोगी ही लिख सकता है।''

डॉ. आर्य जी में काव्य की कारयित्री तथा भावयित्री दोनों प्रकार की प्रतिभाओं के दर्शन होते हैं। उनकी सन्तानें पी-एच.डी. धारक हैं- डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य, वर्धमान-कॉलेज, बिजनौर में हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं। डॉ. आर्य जी अपने साहित्यिक तथा व्याकरणिक ज्ञान के संवर्धन हेतु किसी से भी सहायता लेने-देने के पक्षधर थे। मैंने कई बार उन्हें स्थानीय वैद्य श्री रमेशचन्द्र शर्मा जी के साथ गम्भीर साहित्यिक-वार्ता करते सुना हैं। उनसे पाणिनी सूत्रों पर बातचीत, तर्क-वितर्क भी हुआ करता था। इसके फलस्वरूप डॉ. आर्य जी साहित्यिक ज्ञान के भण्डार थे। मैं भी अनेक बार अपनी शंकाओं के निवाराणार्थ उनसे भेंट करता रहता था। उनकी मृत्यु से मैं साहित्यिक रूप से अनाथ हो गया हूँ--

मौत गुरु की क्या हुई, बुझी ज्ञान की ज्योति।
दुविधा-बाधा में फँसा, देगा कौन सुनीति।।

उनके निधन से हिन्दी साहित्य की अपूर्णीय क्षति हुई है। आज डॉ. आर्य जी हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उनका सौम्य सूरतवाला चित्र, उनकी साहित्यिक कृतियाँ, उनके संस्मरण एवं साहित्यिक संकलन तथा समृद्ध गृह पुस्तकालय उनकी स्मृति को चिरस्थायी बनाये रखेंगे। मृत्यु उनकी छवि तथा अद्भुत व्यक्तित्व की आभा को समाप्त नहीं कर सकती। वैसे भी डॉ. आर्य जी मृत्यु से नहीं डरते थे। 'मृत्यु से हम क्यों डरें' ? निबन्ध में अन्य भक्त-कवियों तथा साहित्यकारों के समान उन्होंने ने भी अपने विचार व्यक्त किये हैं। मृत्यु के सम्बन्ध में वे श्री गोपालदास नीरज के दर्शन से पूर्णत: सहमत थे- न जन्म कुछ, न मृत्यु कुछ, बस इतनी सिर्फबात है। किसी की आँख खुल गई, किसी को नींद आ गई।।

मृत्यु तो भगवान से मिलाती है। एक कवि ने कहा भी है, मौत ने हँसकर कहा

इंसान से, जिन्दगी हरदम तुझे देगी दगा, मैं मिला दूँगी तुझे भगवान से।। अन्तिम समय में डॉ. आर्य जी के मुख से राम !राम !राम ! शब्द निकले और वे सदा के लिए दिनांक- 03.10.2016 को प्रात: 7:00 बजे आँखे बन्द कर चिरनिद्रा में लीन हो गये, परिजन बिलखते रह गये। यह शाश्वत सत्य है कि मृत्यु आयेगी अवश्य आयेगी और सभी की आयेगी, किन्तु कुछ सज्जन अपने पीछे अपने स्मारक छोड़ जाते हैं-

यथा समय सब जायेंगे, राजा-रंक फकीर।
खींच समय के वक्ष पर, अपनी एक लकीर।।

डॉ. आर्य जी ने भी अध्यापन एवं साहित्यि के क्षेत्र में अपनी लकीर खींची है। अन्त में मैं उन्हें हार्दिक श्रृद्धांजलि अर्पित करता हूँ तथा ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि दिवंगत आत्मा को परम शान्ति एवं सद्गति प्रदान करें तथा संतप्त परिवार को यह दारुण दु:ख सहन करनी की सामर्थ्य प्रदान करें।

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर, उ.प्र.

27. डॉ. राम स्वरूप आर्य**: हिन्दी की ऋषि परम्परा की अनमोल धरोहर

श्री योगीन्द्र द्विवेदी
वरिष्ठ पत्रकार

लगभग चार साल पहले अचानक एक दोपहर दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' के प्रधान संपादक और चर्चित कवि श्री चंद्रमणि रघुवंशी जी का फोन आया। कुछ औपचारिक बातचीत के बाद अचानक उन्होंने पूछा-"आप डॉ. रामस्वरूप आर्य जी से परिचित हैं? उनकी लगभग छह दशकों में फैली हिन्दी सेवा अनन्य है। मेरे गुरु जी हैं। सामने बैठे हैं।"

"आपके गुरु जी हैं तो मेरे भी गुरु जी हुए। मेरे प्रणाम उन तक पहुंचायें" मैंने कहा। बाद में कई बार टेलीफोन पर डॉ. रामस्वरूप आर्य साहब से बातचीत हुई। यह मेरा दुर्भाग्य ही था कि उनसे प्रत्यक्ष मुलाकात कभी नहीं हो सकी, फिर भी दो दर्जन से अधिक पुस्तकों व ढेरों शोधपरक आलेखों में से जो कुछ देख सका, उससे इतना तो स्पष्ट है कि वह हिन्दी साहित्य की ऋषि परम्परा की अतुलनीय विभूति, असाधारण विद्वान और महान चिंतक थे। खासकर बिजनौर का जहाँ तक संबध है, उन्हें नि:संकोच अनन्य हिन्दी सेवी पं. पद्मसिंह शर्मा से लेकर महान पत्रकार और लेखक बाबूसिंह चौहान तक की यशस्वी हिन्दी सेवी परम्परा का एक महत्वपूर्ण हस्ताक्षर माना जा सकता है, माना भी गया है।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के कृतित्व पर एक नजर डालते ही उनके प्रेरक

व्यक्तित्व का सहज ही अनुमान लगता है। सहसा विश्वास नहीं होता कि कैसे अनेकानेक व्यस्तताओं के बीच भी उन्होंने शब्द, विचार और उनकी अभिव्यक्ति की अनन्यतम ऊँचाईयों को अपनी साधना और अनथक प्रयासों से निरंतर धन्य किया होगा। हिन्दी भाषा एवं साहित्य का विकास , प्रयोजनमूलक हिन्दी, विचार बिन्दु, भाषा ज्ञान एवं रचना, भाषा-आलोक तथा परंपरा और आधुनिकता जैसी उनकी पुस्तकें इसकी प्रमाण हैं। ध्रुवस्वामिनी, कुरुक्षेत्र, गांठ, सूरदास, बिहारी, मैला आंचल, यशोधरा जैसी कालजयी महान पुस्तकों/व्यक्तिवों को भी उन्होंने अपने सारगर्भित लेखन में अनेकानेक नये विचारों के साथ जाँचा-परखा था। डॉ. आर्य जी ने अनेक ग्रंथ और पत्र-पत्रिकाओं आदि का संपादन भी किया था।

पं. पद्मसिंह शर्मा, पं. रुद्रदत्त शर्मा, तुलसी, सूर व रत्नावली आदि को समर्पित विभिन्न ग्रंथों का संपादन हो या विभिन्न विषयों पर लेख/वार्ताएँ आदि, सभी में डॉ. आर्य जी के गहन अन्वेषक को देखना आह्लादित करता है। शोध में उनकी गहरी निष्ठ इसी से प्रमाणित होती है कि वह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, दिल्ली के काफी समय तक मुख्य अनुसंधानकर्ता रहे थे। सुप्रसिद्ध हिन्दी सेवी संस्था नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी से भी वह सक्रिय रूप से जुड़े थे। उनका समूचा जीवन अध्ययन और अध्यापन में बीता। जिस तरह से लगभग डेढ़ दर्जन छात्रों ने उनके निर्देशन में अपने शोध कार्य पूरे किये थे, उससे भी स्पष्ठ है कि हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि के लिये वह कितना समर्पित रहे।

उनकी जिस एक मात्र पुस्तक 'चिंतन-अनुचिंतन' को मैं गहरे खंगाल सका, वह गागर में सागर सरीखी है। (वैसे जहाँ तक निबंधों का प्रश्न है, उनका एक अन्य संग्रह 'परम्परा और आधुनिकता' भी काफी चर्चित है, पर दुर्भाग्य से मैं इसे देख नहीं सका।) 'चिंतन-अनुचिंतन' निबंध संग्रह उन्होंने मुझे निधन से कुछ समय पूर्व विशेष रूप से भेजा था। इसमें उनके 32 आलेख संगृहीत है। इन आलेखों की जो विशेषता मुझे अंदर तक भिगो गई, वह है संक्षिप्तता और सारगर्भिता। कोई भी आलेख अधिकतम चार-पांच पृष्ठों से बड़ा नहीं है। उनमें उदाहरणों आदि की भरपूर विविधता है। कहीं भाषा का सौंदर्य, कहीं गांव व प्रकृति की निश्छल आभा, कहीं प्रेम व मनुष्यता जैसे शाश्वत जीवन मूल्य और कहीं सूर, तुलसी, कबीर, रहीम एवं जायसी जैसे महान कवियों के संदर्भ में हिन्दी साहित्य की विविधता और लावण्य को शब्द देने की सार्थक कोशिशें। अपनी डेढ़-दो हजार पुस्तकों की लाइब्रेरी में से भी जो गिनी-चुनी पुस्तकें हमेशा मेरी मेज पर रहीं, उनमे उनका यह संग्रह 'चिंतन-अनुचिंतन' भी है। जाहिर है कि इसके

छोटे-छोटे विविधतापूर्ण सारगर्भित निबंधों को मैं कभी नहीं भूल सका। मैंने इसकी समीक्षा लिखी, जो उत्तर प्रदेश सूचना विभाग के चर्चित प्रकाशन 'उत्तर प्रदेश' में प्रकाशित भी हुई थी। उसी के बाद उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने उन्हें अपने सम्मानित विशेषज्ञों में शमिल किया था और कई पुस्तकों पर उनकी राय भी ली थी।

यद्यपि मुझे गुरुजी डॉ. रामस्वरूप आर्य के निधन का समाचार देर से मिला, मगर जब मिला तो मैंने इस संग्रह का एक निबन्ध विशेष रूप से पढ़ा- 'मृत्यु से हम क्यों डरें?' इसमें वह प्रारम्भ में ही मृत्यु को महोत्सव मानते हुए आचार्य शिवानंद जी के इस संबंध में विचार प्रस्तुत करते हैं- ''मृत्यु एक प्राकृतिक घटना है जो प्रत्येक शरीरधारी के साथ घटित होती है। मृत्यु को सहज भाव से स्वीकार किया जाना चाहिए। जैसे कहीं से उड़कर आता हुआ पक्षी एक प्रकाशपूर्ण कमरे में प्रवेश करके थोड़ी देर वहाँ उड़ते हुए उसमें से निकलकर फिर कहीं बाहर अंधकार में लुप्त हो जाता है, ऐसे ही क्षणभंगुर प्रतीत होता है ऐहिक जीवन। मनुष्य मृत्यु में विलीन होने के भय से भयभीत रहता है। जीवन और मृत्यु का रहस्य समझ लेने पर भय समाप्त हो जाता है। मृत्यु से भय मानने पर जीवन दूभर हो बोझ बन जाता है-- '''जब फना ठहरी तो फिर क्या सौ बरस, क्या एक दिन/ मृत्यु को आना है, वह आए हम क्यों डरें।'' इस आलेख का अन्त वह कविवर गोपादास नीरज जी की इन पक्तियों के साथ करते हैं-''न जन्म कुछ न मृत्यु कुछ, बस सिर्फ इतनी बात है/ किसी की आंख खुल गयी, किसी को नींद आ गयी।'' ऐसा लगता है कि जैसे हम सभी को अपनी स्थूल रिक्तता के बाद के क्षणों के प्रति डॉ. आर्य जी सम्बल बंधा रहे हैं। ठीक किसी अभिभावक और शिक्षक की तरह।

फिर भी, किसी का एकबारगी अतीत बन जाना दुखद तो है ही। लौकिक उपस्थिति और सम्बंधों को आँकने के मापदंड औसत जीवन की चितंन प्रक्रिया से अलग नहीं हो सकते। सांत्वना सिर्फ यही सोच कर मिलती है कि उन्होंने अपने जीवन के एक-एक पल का सदुपयोग हिन्दी सेवा के लिए किया। उसे नई ऊचाईयाँ दीं। उनके कृतित्व और व्यक्तित्व का महत्व तब और बढ़ जाता है, जब उनके लेखकीय सरोकारों को हम मानव मूल्यों और ज्ञान की ज्योति निंरतर जलाये रखने के महान लक्ष्यों के साथ हर कदम पर साथ-साथ आगे बढ़ते हुए देखते हैं, उनके लिए समर्पित पाते हैं। गुरुजी की पुण्य स्मृतियों को नमन!

- 355/123 ख, आलमनगर, लखनऊ

28. यह सूरज फिर फिर उगेगा

डॉ. बुद्धि प्रकाश शर्मा
एम.एस-सी. (भौतिकी एवं गणित), एम.एड्, पी-एच.डी.

मेरे वर्धमान कॉलेज में नियुक्त होने के कुछ ही समय उपरान्त डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के प्रति मेरी सकारात्मक मानसिकता बन गई थी, क्योंकि वे बहुत ही सहजभाव से शिक्षक-संघ की सभाओं में अथवा महाविद्यालय द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में ऐसे जैसे सामान्य बातचीत कर रहे हैं, अपनी सतर्क भावामिव्यक्ति प्रस्तुत करते थे। सदैव ही उनके बातचीत करने में ऐसा प्रतीत होता था जैसे उनके कथनों में हृदय की परिशुद्धता एवम् सरलता, उच्चस्तरीय चिन्तन एवम् विवेक व्यक्त हो रहे हों। कोई बनायी हुई या रटी हुई बात या बोलते हुए चेहरे पर असहजता, मंच से बोलते हुये भी डॉ. आर्य जी के अमिभाषण में मैंने कभी नहीं देखी। उनकी बातचीत में सदैव अपनापन ही अनुभव होता था।

मैं भी अपने कर्तव्यों में सत्याराही था इसलिये डॉ. आर्य जी मेरे प्रति बहुत ही सम्मान और प्रेम भाव रखते थे। मेरे स्वभाव में कुछ लेखन-वृत्ति थी, जिस हेतु यदा कदा डॉ. आर्य जी से मैं स्वाभाविक प्रतिक्रिया प्राप्त करता रहता था। मेरे प्रति ही नहीं, मैने सभी के प्रति डॉ. आर्य जी को सदैव प्रत्यक्ष देखा कि अगर किसी की साहित्य में लेशमात्र भी रुचि उन्हें प्रतीत होती थी तो वह उसे सतत् प्रोत्साहन देते रहते थे। मूलत: मैं कहना चाहूँगा कि हिन्दी के क्षेत्र में सकारात्मक सृजन-वृत्ति रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उसके घर जा जाकर भी हृदय से उठाने वाले प्रेरक व्यक्तित्व थे डॉ. आर्य जी। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि मैंने पीठ पीछे या आमने-सामने किसी के लिये कभी भी डॉ.आर्य जी को हल्की निराशापूर्ण अभद्र भाषा का प्रयोग करते नहीं देखा और न ही किसी के साथ व्यंग करते हुये सुना। लेशमात्र मजाक, हँसी ठिठोली तक भी उनके स्वभाव में नहीं थी। वह वस्तुत:आदर्श व्यवहार व सदाचार की पराकाष्ठा के प्रतीक थे।

मेरे प्रति उनकी घनिष्ठ आत्मीयता एवम् अभिभावक प्रतिक्रिया तब प्रारम्भ हुई जब मैंने'अपने द्वारा रचित प्रथम पद्यात्मक कृति पर उनसे एक दृष्टि डालने और उस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने का अनुरोध किया और उन्होंने उस समय अपनी अस्वस्थता की स्थिति में भी ध्यान देकर उस कृति पर अपने आशीर्वाद का उपहार मुझे दिया। इसके उपरान्त भी डॉ. आर्य जी ने मुझे दो अन्य कृतियों पर भी अपना समीक्षात्मक आशीर्वाद दिया। डॉ. आर्य जी द्वारा दिये गये आशीर्वाद के इन शब्दों से विदित होता है कि उनमें वेद, पुराणों, उपनिषदों, रामचरितमानस

तथा गीता आदि समस्त भारतीय सांस्कृतिक ग्रन्थों का भी गम्भीर चिन्तन व मनन के साथ विस्तृत, गहन ज्ञान समाया हुआ था। कुछ अंश प्रस्तुत हैं-''ईशावास्योपनिषद में कहा गया है- योअ्सावसौ पुरुषः सोअ्हमास्मि' (मंत्र सं.२) अर्थात यह जो मुझमें व्याप्त है, वह ब्रह्म ही है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं- 'ईश्वरः सर्वभूतानाम् हृददेशेअ्र्जुन तिष्ठति' (श्री मद्भगवद्गीता) अर्थात् हे अर्जुन! ईश्वर सब भूत-प्राणियों के हृदय में स्थित है। गोस्वामी तुलसीदास संसार के सभी जीवों को सीताराममय जानकर दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं -- सीय राममय सब जरा जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। (रामचरितमानस, बालकाण्ड, 8:1)

यजुर्वेद के महान ऋषि का कथन है - ''तन्मेमनः शिव संकल्पमस्तु।'' (यजुर्वेद, 34:1)

अर्थात् मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो। दोहा संग्रह 'अविकल्प' के रचनाकार डॉ. बुद्धि प्रकाश शर्मा ने अपनी इस रचना में लोक-कल्याण की इसी भावना का विस्तार किया है, जो स्पृहणीय है।''

दुर्भाग्य कि लगभग आठ वर्ष पूर्व डॉ. आर्य जी गले में एक छोटी सी गाँठ उभरी हुई दिखाई दी थी। विशेषज्ञ चिकित्सकों की सम्मति से वे उपचार ले रहे थे और गाँठ लगभग उतनी ही बनी हुई थी। लगभग सात वर्ष के अन्तराल पर एकाएक उनके सिर में असह्य स्तर का लगातार दर्द प्रारम्भ हुआ। इसके उपचार में चिकित्सकों ने उनकी गले की गाँठ सम्बन्धी औषधि रोक दी ओर सिर दर्द सम्बन्धी उपचार देना प्रारम्भ कर दिया। इस चिकित्सा ने कुछ मास में सिर का दर्द तो ठीक कर दिया लेकिन उनके गले की गाँठ पर्याप्त रूप से बढ़ गई। इस गाँठ हेतु पुनः पूर्व में ली गई औषधि डॉ.आर्य साहब ने निरन्तर लेना प्रारम्भ कर दिया तथा अन्य अनेक ख्याति प्राप्त चिकित्सकों का उपचार भी लिया जो कि सभी निष्प्रभावी रहे। अन्ततः दिल्ली में चिकित्सा के मध्य यह सूरज दिनांक 03-10-2016 ई० को अस्त हो गया। जैसे ही मुझे ज्ञात हुआ तो मेरी तत्काल प्रतिक्रिया थी कि विद्वततापूर्ण युग का अन्त हो गया।

मेरा अनुभव है कि मैंने हिन्दी के क्षेत्र में सुदूर प्रदेशों तक में ऐसा ज्ञाता अपने जीवन में नहीं देखा। वह किसी भी विषय पर वार्तालाप में जो ज्ञानराशि प्रस्तुत करते थे, वह किस लेखक की प्रामाणिक काव्य-कृति से उद्धृत कर रहे हैं, इसका भी सविस्तार उल्लेख करते थे और फिर उस ग्रन्थ को अपने घर पर संग्रहीत पर्याप्त भव्य पुस्तकालय से निकालकर उस प्रकरण को अक्षरशः दिखाते

थे और उस लेखक के विषय का गम्भीर आशय क्या है,इसको समझाते भी थे। यहाँ उल्लेख करना उचित होगा कि डॉ. आर्य जी के पास हिन्दी क्षेत्र के प्रायः सभी प्रमुख स्तम्भों द्वारा लिखित साहित्य का घर पर एक विशाल संग्रह है, जिसमें लुप्त प्रायः ग्रन्थ उपलब्ध हैं। मेरा यह रहस्योद्‌घाटन स्पष्ट दर्शाता है कि डॉ. आर्य जी कितने लगनशील अध्ययनकर्ता थे। ईश्वर कृपा से जैसे वे अध्ययन कर्ता थे वैसी ही उन्हें चेतन स्मरण शक्ति, विवेक, चिन्तन व कल्पना शक्ति, शारीरिक व मानसिक सामर्थ्य के साथ प्राप्त थीं। उनके ज्ञान-भण्डार के कुछ अंशों को सुनकर ऐसा लगता था कि बचपन से संज्ञा प्राप्त करने की आयु से लेकर, जो कुछ भी उन्होंने आजीवन सीखा, पढ़ा, उस पर चिन्तन-मनन किया, वह सम्पूर्ण उनके विलक्षण मस्तिष्क में विद्यमान था।

अपने अध्ययनकाल में जिन गुरुओं से शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की, उनकी विद्वता और अपने समस्त ज्ञान व अनुभवों को विद्यार्थियों को दे देने हेतु लगनशील सम्पूर्णता की प्रशंसा करते हुए डॉ. आर्य जी अघाते नहीं थे तथा सदैव ही उनके प्रति नतमस्तक भाव से कृतज्ञता व्यक्त करते थे। स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्ति के समय शिक्षक रहे डॉ. कुन्दन लाल जैन, डॉ. गुणानन्द, जुयाल, पं. भोला नाथ शर्मा का प्रायः ही स्मरण करते हुये बताते थे कि वे कैसे प्रतिदिन हिन्दी व संस्कृत का ज्ञान अतिरिक्त निःशुल्क शिक्षण द्वारा दिया करते थे। यहाँ तक कि स्वयम् अपनी लालटेन लाकर रात्रि में ग्यारह बजे तक नियमित जिज्ञासुओं का शिक्षण किया करते थे तथा उनके गुरुजन कैसे अत्यन्त सरल जीवन जीते हुए हृदय से शिक्षा दान में रत रहते थे।

मैं संक्षेप में डॉ. आर्य जी द्वारा रचित साहित्य की अनुपमता पर भी इतना कहना चाहूँगा कि उनके अपने जीवन-काल के और उससे पूर्व के हिन्दी साहित्य जगत् के असंख्य कवियों व लेखकों के कृतित्व की विशेषताओं का उनकी रचनाओं सहित ऐतिहासिक परिदृश्य प्रस्तुति का सागर है, डॉ. आर्य जी द्वारा रचित साहित्य। जिससे ज्ञात होता है कि हिन्दी भाषा और साहित्य के स्वर्णिम युग को लाने में छोटे समझे जाने वाले विद्वानों तक किन-किन का अनथक योगदान रहा है। डॉ. आर्य जी को लेखनी में प्राचीन से आधुनिक समय तक के साहित्यकारों की अनगिनत प्रकाश में न आई हुई विशेषताओं का उल्लेख भी मिलता है। यह डॉ. आर्य जी के स्वयम् के गम्भीर चिन्तन से उजागर हुई विशेषताएँ हैं। डॉ. आर्य जी के सम्पूर्ण लेखन में सम्बान्धित विभिन्न साहित्यिक आयामों में क्रम से अनेक कवियों एवम् लेखकों के उदगारों के अंश भी प्रस्तुत करना, डॉ. आर्य जी के गहन

अध्ययन द्वारा उनकी सूक्ष्म खोज की प्रवृत्ति को व्यक्त करता है। डॉ. आर्य जी की सभी कृतियों के सन्दर्भ में सार रूप में इतना अवश्य कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य विषयक शोधों में वे सदैव शोध-विद्यार्थियों को ऐसी प्रामाणिक सामग्री देते रहेंगे जो शोधार्थी वर्षों का परिश्रम करके भी उपलब्ध करने मे असमर्थ ही रहेगा।

यह डॉ. आर्य जी की विलक्षण प्रतिभा और हिन्दी भाषा व साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र का विस्तृत ज्ञान ही था कि साहित्य सभाओं में वे अन्त में चर्चा के विषय के अनुसार सम्बन्धित विद्वानों की लेखनी को उद्धृत करते हुए धारा प्रवाह सहज भाव में रहते हुए एक मृदु सम्भाषण देते थे। उनके ऐसे प्रत्येक सम्भाषण में नवीन तथ्यपरक ज्ञान की विद्वता स्पष्ट झलकती थी। कम्प्यूटर वर्तमान काल की देन है लेकिन डॉ. आर्य जी, हिन्दी भाषा तथा साहित्य को समस्त विशेष-विभूतियों द्वारा दिये गये योगदान का ज्ञान रखने वाले वास्तव में जीवन्त कम्प्यूटर थे।

मुस्लिम शासकों द्वारा प्राय:समस्त भारतीय साहित्य के नष्ट कर देने के बाद कैसे-कैसे हिन्दी भाषा व साहित्य तथा समस्त सांस्कृतिक उत्थान की धरोहरों को गाँव-गाँव जाकर एकत्र किया गया, इस भगीरथ प्रयास में किन विद्वान सज्जनों ने कठोर भूमिकायें निभाई, स्वयं डॉ. आर्य जी ने सौंपी गयी किन-किन भूमिकाओं को पूर्ण किया, ऐसी आद्योपान्त जानकारी के कोष थे डॉ. आर्य जी। कुल मिलाकर डॉ. आर्य जी हिन्दी भाषा व साहित्य के विकास के युग के प्रत्यक्ष साक्ष्य-समान दृष्टा थे। मेरा मत है कि डॉ. आर्य जी अपनी रचित साहित्यिक कृतियों द्वारा सदैव जीवित रहेंगे और भावी शोधार्थियों हेतु मूल सामग्री प्रदान करने वाले सन्दर्भ-पुरुष तथा साहित्यिक कला व सौन्दर्य के आयामों की गहनतम समझ प्रदान करने वाले चिन्तक के रूप में सुधी पाठकों के समक्ष सदैव उपस्थित रहेंगे।

मैं पूर्व में उल्लेख कर चुका हूँ कि हिन्दी के प्रति सृजनात्मक रुचि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिये डॉ. आर्य जी प्रेरणा के स्रोत थे। इसी क्रम में वे इतने मिलनसार हो गये थे कि ऐसे सज्जनों के घर जा जाकर उनकी सृजन प्रगति की जानकारी लेते थे और तब पहले से भी अधिक उत्साहित और प्रोत्साहित करते थे। इसीलिये आज की तिथि में देश के कोने-कोने में ही नहीं अपितु विदेशी धरती पर भी उनके हजारों प्रशंसक फैले हुए हैं।

आज जहाँ कोई भी हिन्दी भाषा एवम् साहित्य निष्णात, त्रुटिहीन चार शब्द का वाक्य नहीं लिख सकता और वर्तमान शिक्षक भी उन्हीं निष्णातों में से चुने हुये

हैं, मेरी अनुभूति है कि डॉ. आर्य जी के साथ ही हिन्दी के उत्कृष्ट, ज्ञान व चिन्तन का युग भी चला गया। अतः ईश्वर से प्रार्थना है कि भारत भूमि में ही डॉ. आर्य जी को दैवी-प्रतिभा के साथ पुनः भेजें जिससे कि वे इस राष्ट्र की सन्तानों को आकर वे प्रतिभासंपन्न बनायें। ईश्वर से इस प्रार्थना के साथ मेरा आत्मिक विश्वास है कि यह सूरज, देवों की इस भारत-भूमि में विकास का प्रकाश फैलाने के लिये फिर फिर उगेगा। अन्त में मुझे अभिभावकतुल्य प्रेमदाता डॉ. श्री राम स्वरूप आर्य जी के चरणों में मेरे कोटि कोटि अश्रुपूर्ण प्रणाम।

पूर्व अध्यक्ष, शिक्षा शास्त्र विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

***

29. आत्मीयता के पुंज- डॉ.राम स्वरूप आर्य

डॉ. करुणा पाण्डेय

एम.ए, पी-एच.डी.

डॉ.आर्य जी को याद करना एक शीतोष्ण ऋतु से गुज़रना है। यह विश्वास करना कि गुरुजी यानि डॉ.आर्य जी अब हमारे बीच नहीं हैं, बहुत कठिन है । लगता है कि वह यहीं कहीं हैं और अचानक आकर अपने गम्भीर और उपदेशात्मक स्वर में हमें समझाना शुरू कर देंगे। उनसे मिलना हमेशा अपनत्व और प्यार की सौगात रही है। अपने स्तर पर मैं कह सकती हूँ कि अहम् और नक्शेबाजी से दूर गम्भीरता की चादर में खुद को समेटे डॉ. आर्य जी एक तरलमना और अपनत्व से भरे इंसान थे।

डॉ.आर्य जी, जो मेरे गुरु समकक्ष थे ,उनसे मेरा परिचय जरा देर से हुआ पर एक बार जो परिचय की गंगा बही तो गुरुजी ने उसे कभी कम नहीं होने दिया और निरन्तर अपने वरद आशीष पुष्प से मुझे प्रेरित करते रहे। डॉ० शम्भू शरण शुक्ल बरेली कालेज, बरेली में बी.ए. की कक्षा में डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के छात्र रहे थे, बाद में उन्हीं के निर्देशन में डॉ० शुक्ल जी ने अपना शोध कार्य भी सम्पन्न किया। डॉ० शुक्ल जी मेरे गुरु थे। अतः डॉ० आर्य जी की चर्चा अक्सर हमारे बीच होती थी जिससे उनके विषय में नयी-नयी बातें पता चलती थीं। उनके आवास पर ही पांच छह बार उनसे भेंट हुई थी। पहली ही भेंट में लगा कि न जाने कितना पुराना परिचय है हमारा। गंभीरता के साथ ही शब्दों से चुटकी लेने का उनका स्वभाव उनको सबसे अलग बनाता था।

डॉ. आर्य जी के लेखन का संसार बहुरंगी, बहुपरती और विविध आयामों को अपने अन्दर समेटे था। उनके निबन्ध हिन्दी की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित

होते थे। बाद में उन बिखरे निबन्धों के पुष्पों को जब पुस्तकों के रूप में पिरोया तो एक अलौकिक गुलदस्ता तैयार हो गया । हर निबन्ध की खुशबू भीनी-भीनी मगर जीवन की सत्यता का सन्देश देती है। डॉ.आर्य जी की लेखनी ने प्राचीन और आधुनिक युग के प्रबुद्ध साहित्यकारों की उन विशेषताओं को धार दी है जो अभी तक सर्व साधारण के सामने प्रकाश में नहीं आईं थीं । उनके निबन्धों में गहन और खोजपूर्ण चिंतन और अनुभव का अद्‌भुत संगम है। उनकी ज्ञान-पिपासा का अनुमान इसी से लग जाता है कि अगर उन्होंने हिन्दी भाषा ज्ञान पर लिखा है तो बिहारी ,जायसी, सूर ,तुलसी, रहीम जैसे कवियों के काव्य को भी अपनी लेखनी का विषय बनाया। एक ओर 'ध्रुवस्वामिनी' की समीक्षा की तो दूसरी ओर 'मैला आँचल' को भी अपनी समीक्षात्मक दृष्टि प्रदान की है। ऐसा शख्स, जिसने हिन्दी भाषा की हर विधा और हर साहित्यकार पर अपना पैना दृष्टिकोण स्थापित किया,आजकल कम ही देखने को मिलता है। निश्चय ही डॉ. आर्य जी सबके हृदय में सबकी यादों में सदा मौजूद रहेंगे।

मेरे पी-एच.डी. के शोध प्रबंध 'रामचरितमानस और रघुवंश का तुलनात्मक अध्ययन' पर दिया गया उनका आशीर्वाद मेरे लिए अमूल्य धरोहर है।

गुरुजी डॉ. आर्य जी भौतिक रूप से आज हमारे बीच नहीं हैं और यह वेदना हिन्दी जगत का हर हिन्दी प्रेमी अनुभव कर रहा है ,पर उनके द्वारा लिखे साहित्य के हर शब्द में वह अपने गंभीर व्यक्तित्व के साथ हमेशा मौजूद रहेंगे। वैसे भी साहित्यकार कभी मरता नहीं है। उनकी इन भौतिक लोक की विदाई के शोक से जल्दी उबर पाना कठिन है। डॉ० आर्य जी का साहित्य हमारी पीढ़ी और आगे की पीढ़ी को बेलौस और बेख़ौफ़ अंदाज में लिखना सिखाता रहेगा। डॉ० आर्य जी का व्यक्तित्व और कृतित्व हमें हमेशा याद दिलाते रहेंगे कि एक अच्छा साहित्यकार होने के लिए एक अच्छा इंसान होना जरूरी है। उनकी स्मृति हमें हमेशा प्रेरणा देती रहेगी और सन्मार्ग की तरफ ले जायेगी। वह हम सबके भीतर से अनुपस्थित नहीं रहेंगे। उनके साहित्य का मान करते हुए सत्साहित्य में लगना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

2 /62 C, विशाल खंड, गोमतीनगर, लखनऊ

***

30. डॉ. राम स्वरूप आर्यः पुण्य स्मरण

डॉ. बीना रुस्तगी
एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के स्वर्गवास के आकस्मिक समाचार से मैं विचलित हो उठी। निश्चय ही हिन्दी के वरिष्ठ एवं लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के वियोग की दुखद सूचना मेरे लिए स्तब्धकारी थी। यद्यपि मुझे श्रद्धेय डॉ.आर्य जी से कभी भी साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ तथापि उनके साहित्यिक अवदान के कारण मैं उन्हें 1989 ई० से ही जानती थी। मेरे गुरु डॉ० शम्भुशरण शुक्ल 'अभीत' जी (डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के पूर्व छात्र) की चर्चाओं में हमेशा उनका नाम रहता था।

डॉ. आर्य जी के निधन की सूचना पाते ही मैं अतीत की स्मृतियों में खो गयी। तुरन्त मैंने उनके द्वारा प्रेषित पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन', उसके भीतर रखा डॉ० साहब की लेखनी से लिखा पत्र, जो आज मेरे लिए एक धरोहर के समान है, मुझे प्राप्त हुआ, जिसमें उन्होंने 'इनमैं लिख्यो है कहा' के लिए लिखा है कि "आपके द्वारा सम्पादित डॉ0 शम्भूशरण शुक्ल के पत्रों का संग्रह उनकी स्मृति दिलाता रहता है। पीलीभीत के लोकसाहित्य, लोकजीवन तथा संस्कृति के संरक्षण हेतु उन्होंने अपना जीवन ही समर्पित कर दिया।" मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मैंने अपनी पुस्तक (डॉ० शम्भूशरण शुक्ल 'अभीत' के पत्रों का संग्रह) उन्हें भेजी, तो उन्होंने जिस रूप में मेरा उत्साहवर्धन किया, वह मेरे लिए अमूल्य निधि है। उनकी साहित्यिक कृति 'चिन्तन-अनुचिन्तन' प्राप्त होते ही मैंने पढ़ ली थी किन्तु मुझे दु:ख है कि मैं उस पर कुछ भी लिख पाने में असमर्थ रही। कदाचित् मेरे लिए यह पीड़ा का विषय रहेगा।

माँ सरस्वती के इस वरद पुत्र के योगदान से हिन्दी संसार सदैव उपकृत रहेगा। यूं तो इस जगत में आना और जाना सृष्टिक्रम का एक हिस्सा है, पर कुछ लोग अपनी लेखनी से अमर हो जाते हैं, उनका जाना सिर्फ देह का पंचतत्व में विलीन होना होता है। उनकी आत्मा अजर-अमर रहती है। अपने रचना-संसार से दिग-दिगन्त में उनकी यशकीर्ति फैली रहती है।

नि:संदेह डॉ० रामस्वरूप आर्य का निधन हिन्दी जगत के लिए अपूर्णनीय क्षति है। उनके शब्दाशीषों की छाया में हम सदैव ऊर्जावान बने रहेंगे, ऐसा मेरा विश्वास है।

जाने कितने ही गए इस राह से, इसका पता क्या,
पर गये कुछ छोड़ इस पर, अपने पैरों की निशानी
जो निशानी मूक होकर भी बहुत कुछ बोलती है।

अध्यक्षा- हिन्दी विभाग, जे0एस0एच0 (पी0जी0) कालेज, अमरोहा

31. आमत्संतोषी मित्र : माननीय डॉ. रामस्वरूप आर्य

आचार्य जयनारायण 'अरुण'

प्रसिद्ध साहित्यकार, पत्रकार और समाज-सेवी

बात उन दिनों की है जब मैं एक गाँव के विद्यालय में शिक्षक था और रविवार की छुट्टी में कभी अपने ताऊ जी के परिवार से भी मिलने बिजनौर में मौहल्ला भाटान में आया करता था। एक रविवार को जब मैं घर जाने से पूर्व राम के चौराहे पर उस समय स्थित एक नाई की दुकान पर अपने बाल कटाने बैठा तो एक पतले-दुबले और छोटे से कद-काठी के नवयुवक से मेरी भेंट हो गई, जो मेरे बाद आये थे और मेरे निवृत्त होने की प्रतीक्षा में पीछे स्थित खाली बेंच पर बैठ कर वहाँ पड़े अख़बारों के पर्चे उलटने-पलटने लगे थे। नाई शेर-ओ-शायरी का शौकीन था और बाल काटते कुछ अधकचरे से शेर मुझे सुनाकर, मुझे सुनने की इच्छा से उकसाता रहता था। मैं भी नये-नये मुल्ला की तरह था, उसके चक्कर में आकर उसी प्रकार के एक के बदले कई-कई शेर जड़ देता। वह समय भी ऐसा ही था। आज की तरह समय को पैसे से नहीं आंका जाता था। समाज का हर स्तर का व्यक्ति एक-दूसरे की मन: स्थितियों और भावनाओं के मूल्य को समझता था।

मेरे उठने की प्रतीक्षा में बैठा नवांगतुक युवक इस सब रोचक बातचीत का आनंद ले रहा था। बाल कटाने के बाद मेरे उठने पर मेरा परिचय जानने की उत्सुकता में वह मेरे साथ आ गया और अपना परिचय देते हुए बताया कि मैं वर्धमान कॉलेज में हिन्दी विभाग में नियुक्त हुआ हूँ और बरेली का निवासी राम स्वरूप आर्य हूँ। यहाँ भाटान मौहल्ले में एक मकान में नया-नया किरायेदार हूँ। नाम के आगे 'आर्य' शब्द लगा हुआ जानकर मुझे अच्छा भी लगा और उत्सुकता पूर्ण संतोष भी हुआ। मैं स्वयं जो एक कट्टर आर्य समाजी परिवार से जुड़ा व्यक्ति हूँ और उन दिनों संचालित आर्य कुमार सभा से सक्रियता से जुड़ा हुआ था। बात आई-गई हो गई, वे बाल कटाने बैठ गये और मैं अपने ताऊजी के घर की ओर चल दिया, यह सोचता हुआ कि चलो एक नये आर्य व्यक्ति से परिचय हुआ, किन्तु यह भावना भी जगी कि यह छोटा-सा सीधा-सा व्यक्ति वर्धमान डिग्री कॉलेज जैसे बड़े कॉलेज का प्रोफेसर है और मैं तो केवल एक गाँव के छोटे-से इण्टर कॉलेज का ही शिक्षक हूँ, मेरा इनका क्या साथ। फिर भी इस सीधे-सादे और बातचीत में भोले-भाले किन्तु विद्वान प्रोफेसर के प्रति मेरे मन में एक श्रद्धा की भावना अवश्य जागृत हो गई। धीरे-धीरे संयमित भाषा में अपनी बात कहने वाला यह व्यक्ति भीतर से निश्चय ही अपने में एक विद्वता पूर्ण साहित्यकार

छिपाये है। यही सोचते हुए मैं अपने घर चला गया और भोजन करके भाई-बहनों में खो गया। इसी बीच हुई चर्चा में घर वालों से ज्ञात हुआ कि नीचे के कमरों में कोई नया किरायेदार आकर रहता है।

रविवार की छुट्टी बिताकर मैं प्रात:की बस से अपने विद्यालय चला गया। महीनों बाद एक दिन फिर किसी रविवार को जब मैं बिजनौर पहुँचने पर घर में प्रवेश कर रहा था तो उन्हीं डॉ. राम स्वरूप आर्य से घर से निकलते हुए भेंट हो गई। उन्हें देखकर मैं अनायास बोल उठा- ''आर्य जी, आप।'' उन्होंने भी उसी लहजे में मुझसे प्रश्न कर दिया- ''अरुण जी, आप।''

फिर तो वे बाहर जाने के बजाय मेरे साथ भीतर आ गये-खूब बातें हुईं और फिर होती ही रहीं। अनेक साहित्यिक-आयोजनों, कवि गोष्ठियों और कवि-सम्मेलनों तथा साहित्यिक-संस्थाओं का गठन हुआ। बिजनौर फिर से काव्य-रस में सराबोर होने लगा। साहित्य के उसी महारथी के संरक्षण में, सभी भारतीय भाषाओं के सम्मिलित मंच 'साहित्य-संगम' की स्थापना हुई और पाक्षिक गोष्ठियों का नियमित आयोजन होने लगा। बिजनौर में इन सभी साहित्यिक गतिविधियों का आयोजन डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के सरंक्षण और दिशा निर्देशन में ही हुआ।

वर्धमान कॉलेज में प्रसिद्ध गीतकार श्री गोपालदास 'नीरज' का अभिनन्दन समारोह डॉ. आर्य जी के सफल संयोजन में 3 मार्च, 1968 ई० को किया गया था जो बिजनौर जनपद भर के लिए एक मील का पत्थर सिद्ध हुआ। इस सफल आयोजन के सम्पन्न होने में डॉ. आर्य जी को पता नहीं कैसे ऐसा लगा कि इसमें मेरा बड़ा सहयोग रहा है। अत: तभी से मेरे प्रति उनका व्यवहार एक मित्रता की श्रेणी से उठकर बड़े भाई की श्रेणी में परिवर्तित हो गया। आयु के कारण तो वे पहले से ही मुझे बड़ा मानते रहे थे किन्तु एक बड़े कॉलेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष होने के नाते, मैं उन्हें सदैव सम्मान देते हुए अपना बुजुर्ग मानता रहा। झगड़े के नाम पर हास-परिहास के मूल में जब कभी झगड़ते तो केवल इसी बात पर कि ''आप बड़े हैं'',नहीं- ''आप बड़े हैं।''

अपनी नई पुस्तक 'चिंतन-अनुचिंतन' की प्रति भेंट करने जब वे मेरे निवास पर पधारे तो घंटों मेरे संकोची और आलसी स्वभाव और अकर्मण्यता पूर्ण मनोवृत्ति पर मुझे सावधान करते रहे, वे मेरी कमजोरियों से भली-भाँति परिचित थे और जब मिलते, तब एक ही रट दुहराते रहते कि ''पत्र-पत्रिकाएँ ही सम्पादित करते रहोगे या कभी अपनी कोई पुस्तक भी प्रकाशित कराओगे।'' मैं भी बस हँस कर टाल देता- ''डॉ० साहब! मेरी कोई रचना इस योग्य है ही नहीं

कि जो छपवाई जा सके।'' वे तुरन्त कहते '' आप अपने सभी पुर्जे-पन्ने मेरे हवाले करो मैं अपने आप उन्हें छाँटकर छपवा दूँगा। आपको कुछ नहीं करना पड़ेगा।''

ऐसा अनेक बार हुआ-एक बार तो गजब हो गया। वे अपने सुपुत्र डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य के साथ मेरे नए आवास गीतानगरी में अपने किसी कार्य से पधारे थे, प्रात:काल तब तक मैं अपने साधनाकक्ष में ध्यान में बैठ चुका था। पत्नी ने द्वार पर उन्हें भीतर आकर बैठने और थोड़ी देर प्रतीक्षा करने का निवेदन किया। वे दोनों यह कहकर कि-''हम फिर आ जाएंगे''-कहकर चले गये। मुझे प्रात: थोड़ा अधिक समय लगता है। मेरे उठने पर पत्नी ने मुझे बताया कि डॉ. आर्य जी आये थे और रोकने का निवेदन करने पर भी पुन:आ जाने के लिए कहकर चले गये। मैंने तुरन्त उन्हें फोन किया तो एक-दो सेकण्ड में ही वे मेरे पास उपस्थित हो गये। मैंने पूछा तो बड़ी सरलता और संकोच के साथ बोले- ''यहीं आपके पड़ोस में मन्दिर में बैठे हुए थे। तब से वहीं बैठ कर आपके उठने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'' यह सुनकर मुझे बड़ी शर्मिन्दगी महसूस हुई कि ये कैसा महान मानव है कि मेरी पत्नी को परेशानी न हो, यह सोचते हुए मेरे आवास पर नहीं बैठकर, बराबर में स्थित शिव मंदिर में बैठकर मेरे उठने की प्रतीक्षा करता रहा। मेरा सिर शर्म से उनके चरणों में झुक गया। धन्य हैं डॉ० आर्य जी आप.......। उनके इस प्रकार अचानक दिवंगत हो जाने से बिजनौर की साहित्यिक गतिविधियों को तो विराम-सा ही लग गया। 'साहित्य संगम' संस्था की गोष्ठियों की अपार क्षति हुई है, 'संगम' का प्रत्येक सदस्य दुखी मन से यही पश्चाताप करता सुना गया कि ''हम कितने कृतघ्न हैं कि डॉ० आर्य जी की साहित्यिक सेवाओं की चर्चा तक भी आज तक हम मिल बैठकर नहीं कर सके । कोई श्रद्धांजलि सभा का आयोजन तक हम नहीं कर पाये।''

उनके सुपुत्र डॉ० चन्द्रप्रकाश आर्य, जो वर्तमान में वर्धमान कॉलेज में हिन्दी विभागाध्यक्ष हैं, उन्होंने अपने स्वर्गीय पिता डॉ० राम स्वरूप आर्य जी की स्मृति में 'स्मृति-ग्रंथ' प्रकाशित करने का जो निर्णय लिया है, यह सादगी और सरलता की प्रतिमूर्ति उस महात्मा के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। मेरी ओर से इस प्रयास के लिए बधाई और अपने उस आत्मसंतोषी मित्र माननीय महामानव की दिवंगत आत्मा की स्मृतियों को विनम्र श्रद्धांजलि।

जे-4, गीता नगरी, बिजनौर

32. सिर झुकाए हिमालय

अशोक निर्दोष

एम.ए,(इतिहास, शिक्षा शा.), बी.एस-सी.,बी.एड्,एल.एल.बी.

रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय ,बरेली की हिन्दी पाठ्यक्रम समिति तथा हिन्दी शोध समिति के संयोजक, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली के मुख्य अनुसंधाता, प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ-विभाग खोज, नागरी-प्रचारणी सभा, काशी के निरीक्षक और आकाशवाणी केन्द्र नजीबाबाद की परामर्श समिति के सदस्य, हिन्दी साहित्याकाश के मूर्धन्य नक्षत्र डॉ. राम स्वरूप आर्य जी, विराट हिमालय रूपी व्यक्तित्व का ऐसा मानवीकरण थे, जो सादगी व विनम्रता के चरम रूप में सदैव हाथ जोड़ कर शीश झुकाऐ अग्रजों को नमन करते थे, एवम् अनुजों का प्रणाम स्वीकार करते थे।

उनका आभिजात्य, संस्कार प्रवण, उदात्त सदाशयता, समष्टि प्रतिबद्ध, उनके व्यक्तित्व की निजताएँ, उनके कथ्य में अनुप्राणित हो सदा रूपायित होती रहीं। अनन्त सृष्टि के कण-कण में शाश्वत आनन्द सहेज कर अपने सृजन भुवन को अनुरंजित करना इस मौन तपस्वी, लोकाभिमुख मनीषी, अति उदात्त चिन्तन के प्रणेता का स्वाभाविक गुण था। मानवीय सम्वेदनाओं को समझने की गहन दृष्टि के कारण उनकी प्रखर लेखनी से गूढ़ साहित्य की सरलकृत अजस्र धारा अविरल गति से प्रवाहित होने के फलस्वरूप ही उनकी 25 पुस्तकें प्रकाशित हुई, नौ ग्रन्थो का कुशल सम्पादन और 200 से अधिक लेख, समीक्षा व कविताओं का प्रकाशन सहज सम्भव हो पाया।

17 शोध छात्रों को अपने प्रभावी निर्देशन में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ने पी-एच.डी की उपाधि प्राप्त करायी। लोकेषणा, वित्तेषणा, आत्मप्रदर्शन, राजनीति और धार्मिक आडम्बरों से दूर डॉ. आर्य जी के पास बैठे व्यक्ति के जीवन संग्राम के तप को शीतलता के सुखद छीटों का आभास दिला देना, सार्थकता का बोध होना, उनकी सादगी, दूसरों की साहित्यिक समस्याओं के निराकरण में उनकी अपनत्व भरी सक्रिय भागीदारी उन्हें सचमुच निष्काम कर्मयोगी का दर्जा दिलाती है। उनका साहित्य के लिए समर्पित जीवन, युगानुकूल रचनाएँ तथा मौलिक उदभावनाएँ स्तुत्य हैं। डॉ. आर्य जी की शब्दों की सामर्थ्य, अर्थों की अभिव्यक्ति, कथ्य की कसावट, वाक्यों का विन्यास और भावों का विस्तार अप्रतिम है। उनके साहित्य में सर्वत्र पुरातन जीवन की अभिनव स्थापना का सफल प्रयास है।

सच कहूँ तो मुझे लगता है कि उनकी रचनाओं में कथ्य और शिल्प का ऐसा

कलात्मक, बिम्बात्मक और ध्वन्यात्मक प्रयोग मिलता है, जो उन्हें समकालीन रचनाओं में पृथक व वैशिष्टयपूर्ण स्थान का सम्मान सुनिश्चित कराता है। उनके लेखन में अनुभूति की आभा और अभिव्यक्ति का लावण्य यत्र-तत्र बिखरा दिखाई देता है। उनके कृतित्व में एक अभूतपूर्व सन्तुलन, लय और गति परिलक्षित होती है।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी अपनी लेखनी को हाथों की उंगलियों से नहीं बल्कि मस्तिष्क के स्नायुतन्त्र से पकड़ कर समय के पृष्ठों पर लिखते थे। उनका गहन अध्ययन, अभिव्यक्ति क्षमता और भाषा पर सम्पूर्ण अधिकार स्वत: स्पष्ट हो जाता था। विषय के एक ही पक्ष को लेकर वे उसे नए-नए, भिन्न-भिन्न रूपों में दर्शाते हुए अपने शब्दों की लड़ियों को अनेक रंगों में चमकाने में सिद्धहस्त थे।

नगर में आयोजित विभिन्न पत्रकारिता एवम् साहित्यिक आयोजनों के प्रतिष्ठात्मक मंचों को जीवन्तता एवम गौरव प्रदान करने वाले अनिवार्य सशक्त हस्ताक्षर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को मेरा शत-शत नमन एवम् विन्रम श्रद्धांजलि।

220, आर्य नगर, नई बस्ती, बिजनौर

***

33. शेष रह गयीं केवल स्मृतियाँ

डॉ. साधना

एम.ए, (हिन्दी), पी-एच.डी.

चिन्तनशील मनीषी, गहन विचारक, हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के सादगीपूर्ण व्यक्तिव एवं जीवन से भला कौन परिचित नहीं है।

निश्छलता, सत्यवादिता, स्पष्टवादिता, कर्त्तव्यपरायणता, परोपकारी वृत्ति और भी न जाने कितने विशेषणों के धारक डॉ. आर्य जी की सम्पूर्ण जीवन यात्रा साहित्य साधना को समर्पित रही। अप्रैल सन् 1933 ई० में लाला बाँके लाल एवं श्रीमती देवकी देवी के आंगन में एक किलकारी गूंजी, जो जीवन पर्यन्त माता-पिता का नाम रोशन करती रही और अपने साहित्य के माध्यम से सदा जीवन्त रहेगी।

'सादा जीवन उच्च विचार' श्रद्धेय डॉ. आर्य जी के जीवन का मूल मंत्र था। मुझे आज भी वह दिन भली-भाँति याद है जब सन् 1984 में मैं वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में बी.ए.द्वितीय वर्ष की छात्रा थी। मैं महाविद्यालय में जब अपना अनुक्रमांक लेने गयी तो ज्ञात हुआ कि मेरा अनुक्रमांक विश्वविद्यालय से आया नहीं था। प्रश्न पत्र प्रारम्भ होने वाला था। उस समय श्रद्धेय डॉ. आर्य जी

कार्यवाहक प्राचार्य के रूप में कार्यरत् थे। जब मैं उन से मिली तो उन्होंने अत्यन्त शान्त स्वर में आत्मीयता पूर्ण शब्दों में मुझे आश्वासन दिया '' बेटा महाविद्यालय की ओर से कोई त्रुटि नहीं है। मैं नहीं जानता कि किस कारण से तुम्हारा अनुक्रमांक नहीं आया है लेकिन, तुम निराश मत होओ। मैं तुम्हें परीक्षा में बैठनें की अनुमति देता हूँ।'' समस्त औपचारिकताएँ पूर्ण करने में आधा घण्टा बीत चुका था। मैं बेहद घबरा रही थी। डॉ. आर्य जी ने मुझे ढाढ़स बँधाया और मैं आधा घण्टा बाद परीक्षा में बैठ पायी।

जिला बिजनौर मेरी जन्मभूमि है। साथ ही श्रद्धेय डॉ. आर्य जी एवं हमारा आवास निकट होने के कारण मैं उनके नाम से परिचित तो थी, किन्तु व्यक्तिव की विराटता और सरलता का अनुभव मुझे पहली बार हुआ था। उनका व्यक्तित्व मूलतः 'सब कहँ हित होई' का पर्याय ही था।

इसी प्रकार सन् 1989 में मैंने जब उन से शोध कार्य करने की इच्छा व्यक्त की जब उन्होंने सहर्ष स्वीकृति दे दी और शोध-उपाधि प्राप्त करने तक के सफर में मुझे पूर्ण सहयोग दिया एवं मार्गदर्शन किया। उनका बहु आयामी व्यक्तित्व सदा सर्वदा उनकी उपस्थिति दर्ज कराता रहेगा। अपने विराट, अद्भुत उत्प्रेरक व्यक्तित्व एवं उदार चिन्तन दृष्टि के कारण वह हमारे बीच हमेशा उपस्थित रहेंगे। गुरुवर की कमी की, उनकी रिक्तता की पूर्ति किसी से नहीं हो सकती। अतीत के भँवर में जाने, न जाने कितनी ही स्मृतियाँ, कितने ही लोगों के हदय को व्याकुल करती रहेंगी किन्तु उनके बताये रास्ते पर चलकर ही हम उन्हें सच्ची श्रद्धांजलि दे सकते हैं।

अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गुलाब सिंह हिन्दू कॉलेज ,चांदपुर, बिजनौर

***

34. स्मृतियों के कुहासे में डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. सुरेश चन्द्र गुप्त

एम.ए, पी-एच.डी, डी. लिट

आज मैं अनायास ही स्मृतियों के कुहासों में डूब रहा हूँ । क्या लिखूँ ? और कहाँ से आरम्भ करूँ ? तभी लगभग चालीस वर्ष पुराना वह दृश्य मेरी आँखों के सामने कौंध गया, जब मैंने डॉ. आर्य जी को सबसे पहले राज बुक डिपो, बरेली की दुकान पर देखा था, जहाँ साहित्यकारों का जमावड़ा हुआ करता था। बरेली कॉलेज के सेवा निवृत्त हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. कुंदनलाल जैन तथा प्रसिद्ध कवि होरीलाल शर्मा 'नीरव' प्रायः बारह बजे वहाँ विराजमान हो जाते थे और आस-

पास के नगरों से बस द्वारा आने वाले शिक्षक एवं साहित्यकार भी वहाँ अवश्य आते थे। मैं भी यदा-कदा वहाँ जाता था। साहित्यिक गतिविधियों और समसामयिक विभिन्न विषयों पर आपस में चर्चा होती थी और राज बुक डिपो के स्वामी श्री ताराचंद्र अग्रवाल बड़े अनुराग और सम्मान से सबको चाय पिलाते थे।

अगली घटना संभवत: 1992-93 ई0 की है। जाड़ों के दिन थे। दस बज गये थे लेकिन धूप अभी नहीं निकली थी। मैं बरेली कॉलेज के हिन्दी विभाग के कक्ष में अकेला बैठा था। अचानक भगवान सूर्य आकाश में उदित हुए। धूप भी कॉलेज के प्रांगण में फैल गयी थी। तभी देखा कि डॉ. राम स्वरूप आर्य जी हिन्दी विभाग की ओर आ रहें हैं। मै विभागीय कक्ष से बाहर निकल आया और डॉ. आर्य जी के बराबर में, कक्ष के बाहर धूप में खड़ा हो गया। हम दोनों वही खड़े-खड़े बातें कर रहे थे कि हिन्दी के दो छात्र राजीव सक्सेना और उपाध्याय वहाँ आ गये। मैंने उन्हें डॉ. आर्य जी का परिचय दिया। दोनों छात्रों ने चरण स्पर्श किए। राजीव ने कहा कि सर! एक फोटो ले लें? फोटो लिया गया। ...

कई वर्ष बीत गये। डॉ. आर्य जी से कोई संपर्क या वार्तालाप नहीं हुआ। मैं पिछले दस वर्ष से बरेली नगर से 'साहित्यायन' त्रैमासिक पत्रिका प्रकाशित कर रहा हूँ। लगभग एक वर्ष पूर्व उक्त पत्रिका के एक अंक में मैंने बरेली कॉलेज के प्राचार्यों के कार्यकालों का विस्तार से विश्लेषण किया था। उसे पढ़कर डॉ. आर्य जी ने मुझे फोन किया और कहा कि इतना सूक्ष्म और गहन विश्लेषण, वो भी इतनी ईमानदारी से बहुत कम लेखक कर पाते हैं, जैसा आपने किया है। संभवत: उनका संकेत डॉ. आर.पी.सिंह की ओर था। उन्होंने यह भी कहा कि वे भी बरेली के हैं और बरेली कॉलेज की देन हैं। इसके पश्चात् वे 'साहित्यायन' में प्रकाशनार्थ कोई न कोई रचना भेजते रहे। एक बार उन्होंने अपने सद्य: प्रकाशित आलेखों का संग्रह 'चिन्तन-अनुचिन्तन' मुझे भेजा। इस संग्रह की समीक्षा जब 'साहित्यायन' में प्रकाशित हुई तब वे बहुत प्रसन्न हुए। 'साहित्यायन' के विषय में अपना अभिमत तो वे प्राय: भेजते रहते थे।...

गत वर्ष जब मेरे अभिनंदन ग्रंथ की चर्चा चली तो मैंने डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से निवेदन किया कि वे भी उक्त अभिनंदन ग्रंथ के लिए कुछ लिख दें। वे बोले कि इन दिनों तो मैं बीमार हूँ, तो मैंने उन्हें समझाया कि 'शरीरं व्याधि मंदिरम्।' बीमारी तो कोई ना कोई हमारे शरीर को लगी ही रहती है किन्तु हमें मन को बीमार नहीं होने देने चाहिए। फिर मैं डॉ. आर्य जी को अपनी अनेक बीमारियों के विषय में बताया तो जैसे उनमें नई शक्ति आ गयी थी। वे बोले कि

आपके सामने तो मैं बिल्कुल बीमार नहीं हूँ और कहा कि आपके अभिनंदन ग्रंथ के लिए मैं स्वयं तो लिखूँगा ही और बेटे चन्द्र प्रकाश से भी लेख लिखाऊँगा। कुछ ही दिनों में उनका आलेख 'संस्मरणों की नई बयार: स्मृति के वातायन' और डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य का आलेख भी आ गया। लेकिन दु:खद तथ्य यह है कि मेरा अभिनंदन ग्रंथ जब तक प्रकाशित हो पाता, उससे पूर्व ही 03 अक्टूबर 2016 ई0 को उनका अकस्मात् स्वर्गवास हो गया। अब तो डॉ. आर्य जी की केवल स्मृतियाँ ही शेष रह गयी हैं और उनकी स्मृति में स्मृति ग्रंथ का प्रकाशन ही उनको सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

पूर्व वरिष्ट रीडर, हिन्दी विभाग, बरेली कॉलेज, बरेली।

***

35 .सत्प्रेरणाओं को देने वाले शिक्षविद् साहित्यकार: डॉ. राम स्वरूप आर्य

साहित्य भारती डॉ. महाश्वेता चतुर्वेदी

एम.ए (हिन्दी,सस्कृत,अंग्रेजी), संगीत प्रभाकर, साहित्याचार्य,

डिप्लोमा (पत्रकारिता एवं योग), एल.एल.बी, पी- एच.डी, डी.लिट्.

कहाँ से आरम्भ करूँ,समझ में नहीं आता क्योंकि सुधा का वर्णन सुधा की मधुरता से ही आरम्भ होता है, वह पूर्णत: अमृतमय करने की सामर्थ्य रखती है। मैं बरेली कॉलेज के हिन्दी विभाग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. ज्योति स्वरूप जी के निर्देशन में 'छायावाद के मौलिक आधार' विषय पर पी-एच.डी, उपाधि हेतु शोधकार्य कर रही थी। डॉ. ज्योति स्वरूप जी के पास जब कभी जाती, वे मेरा शोधकार्य देखकर मुस्कराते हुए कहते- "भई शोधार्थी हो तो ऐसा, सारा शोध कार्य स्वयं ही करता है। मैं देख भर लेता हूँ और प्रसन्न होता हूँ कि वैदिक साहित्य से चयनित मैटर तुम शोध के लिए प्रस्तुत करती हो।" मै श्रद्धेय गुरु जी के आशीषों को सदैव पाती रही।

1989 ई0 में एक दिन गुरुदेव डॉ. ज्योति स्वरूप जी अचानक डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के साथ मेरे आवास पर विराजे तो मैं प्रसन्नता से आपूरित हो गई। मेरे पतिदेव डॉ. यू.के. चतुर्वेदी, वनस्पति विज्ञान विभाग में प्रोफेसर थे, अत: हम परिसर में ही निवास करते थे। चायपान के बाद मैंने विनम्रता से पूछा,"गुरुदेव , मैं जानना चाहती हूँ कि पाठ्यक्रम में किस प्रकार की पुस्तकें स्वीकृत होती हैं? वे कौन से विषय हैं?" डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ने प्रत्युतर देते हुए कहा-"हाँ, बताता हूँ। पाठ्यक्रम में अधिकांशत: उन विषयों की रचनाएँ होनी चाहिए, जो

विद्यार्थियों को संस्कारित बना सकें। जिस लेखन का कुछ अर्थ होता है, वही है लेखन। केवल पृष्ठों को भरना ही लेखन नहीं होता। '' डॉ. ज्योति स्वरूप जी ने उक्त कथन का समर्थन करते हुए कहा -'' महाश्वेता, तुम्हारा लेखन तो सार्थक है। चार पंक्तियों तो सुनाओ।'' मैंने तत्काल उन्हें एक छोटी रचना सुनाई--

अमृत रखते डर लगता है इस जहरीली बस्ती में
मीठापन अजगर लगता है इस जहरीली बस्ती में
अंधकार से बात उजालों की कराना अपराध जहाँ
रक्षक ही बर्बर लगता है इस जहरीली बस्ती में।

उक्त रचना सुनकर दोनों ही गुरुओं ने मुझे अपने सद्विचारों से प्रेरित किया। डॉ. राम स्वरूप आर्य जी और डॉ. ज्योति स्वरूप जी के जाने के पश्चात् मैंने कुछ पंक्तियाँ लिखीं--

'' आप क्या हैं ये पहिले मनन कीजिए
अन्य सब हैं बुरे,मत श्रवण कीजिए
लेखिनी को चलाना है, लेखन नहीं
अर्थ जिसका हो, ऐसा सृजन कीजिए
जो सुवासित करे सारे संसार को
ऐसी सामग्रियों से हवन कीजिए
सिंधु से भी बड़ा है सुधा का चषक
'श्वेता' निर्भय बन आचमन कीजिए।''

अनेक कार्यक्रमों में भी समय-समय पर डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से मेरी भेंट होती रही। मंच से उनकी ओजस्वी तथा सारभूत वाणी मार्गदर्शन की सामर्थ्य रखती थी। आप एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली की हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोध-समिति के संयोजक तथा विद्या परिषद और कार्यकारिणी परिषद के भी सदस्य रहे। उनकी संभाषण शैली में गांभीर्य, स्वभाव में सरलता तथा वाणी में वाक्पटुता अभिव्यंजित होती थी। आपकी वेशभूषा में भारतीयता थी। डॉ. आर्य जी जैसे मनीषियों एवं सदस्यों के लिए संस्कृत के महाकवि भर्तृहरि का श्लोक सटीक है, जिसका भावार्थ है- '' ऐसे वैदुष्यसंपन्न सुहृदयों में न गर्व होता है और व दंभ, न ही कभी किसी की निंदा करते हैं। यदि कहीं किसी की कमी देखते भी हैं तो उसे प्रकारान्तर से समझाते हैं, निंदा एवं उसका अपमान नहीं करते। दोषदर्शन से स्वयं को दूर रखने वाले ही सहृदय एवं सुजन कहलाते हैं।''

मैंने अनेक मंचों से डॉ. आर्य जी के प्रेरक भाषण सुने हैं जो मानसिक उन्नयन

की प्रेरणओं से संपन्न होते थे। केवल नश्वर शरीर से नष्ट होने वाले मनीषी अपने सुयश से सदैव जीवित रहते हैं। उनकी प्रेरणाएँ धरोहर के रूप में सदैव संचित रहती हैं।

सत्पुरुषों का सरल जीवन चलती फिरती पुस्तक है , जो अपने सद्व्यवहार से जनमानस को बहुत कुछ सिखा देती है। सुविधा भोगी लोग जीवन को सरलता से काट तो लेते हैं किन्तु स्वयं के जीवन को उदाहरण नहीं बना पाते हैं। संघर्षों में तपकर ही जीवन में निखार आता है। डॉ. आर्य जी ऐसे ही विद्वान थे।

युगनायक तुलसी ने अपनी पंक्तियों के माध्यम से मानव मात्र को सम्बोधित करते हुए लिखा है कि जब हम संसार से विदा होते हों तो लोग हमारा स्मरण कर रोयें और अनुकरणीय जीवन से प्रेरणा लें-

तुलसी जब जग में भये, जग हँसमुख तुम रोये।
ऐसी करनी कर चलो, तुम हँसो जग रोये।।

आज हमारे बीच भले ही डॉ. रामस्वरूप आर्य जी नहीं हैं किन्तु अपने यश: शरीर से वे जीवित हैं। उनका कृतित्व जीवित है तथा निरन्तर इसी प्रकार प्राणवान बना रहेगा। अंत: में मैं स्वरचित निम्न पंक्तियाँ उन्हें समर्पित करती हूँ-

वक्त के सीने पे तू यों नाम लिख।
याद तुमको 'श्वेता' ये दुनिया करे।।

पूर्व एसोशिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग आर.पी. कॉलेज, मीरगंज, बरेली

***

36. हिन्दी साहित्य का महत्वपूर्ण नाम : डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. योगेन्द्र प्रसाद

जनपद बिजनौर के साहित्येतिहास में विभिन्न मूर्धन्य साहित्यकारों की श्रंखला में श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का नाम अग्रिम पंक्ति में आता है। वह अध्ययन शील एवं मितभाषी लेकिन प्रखर व्यक्तित्व के साहित्यकार थे। उनका साहित्य, हिन्दी साहित्य को चिरकाल तक समृद्धि प्रदान करता रहेगा। डॉ. आर्य जी का जीवन, सादा जीवन एवं उच्च विचार के आदर्शों पर आधारित था। उन्होंने दिखावे अथवा आडंबर को कभी अपने पास तक नहीं फटकने दिया। उच्चकोटि के विद्वान होते हुए भी उनकी यह आंकाक्षा कभी नहीं रही कि कोई उन्हें कितना सम्मान दे रहा है। वे सभी को समान दृष्टि से देखते थे।

1 अप्रैल 1933 ई0 को बरेली जनपद में जन्मे डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की शिक्षा वहीं पर हुई। उन्होंने बरेली कॉलेज, बरेली से हिन्दी तथा संस्कृत में एम.ए.

करने के पश्चात् 1967 ई0 में आगरा विश्वविद्यालय से हिन्दी में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉ. आर्य जी ने आरम्भ में बरेली कॉलेज, बरेली में अध्यापन कार्य किया। इसके पश्चात् बिजनौर में वर्धमान कॉलेज की स्थापना होने पर वे 1960 ई0 में बिजनौर आ गये। वर्धमान कॉलेज में वे कॉलेज की स्थापना के प्रथम दिन 18 जुलाई, 1960 ई0 से ही हिन्दी-संस्कृत विभाग में प्राध्यापक के रूप में कार्य करने लगे। 1961 ई0 में जब हिन्दी और संस्कृत के अलग-अलग विभाग बने तथा हिन्दी में एम.ए. की कक्षाएँ आरम्भ हुईं, तब वे हिन्दी विभागाध्यक्ष के पद पर नियुक्त हुए। इस पद पर रहते हुए वे 30 जून, 1993 ई0 को सेवानिवृत्त हुए। उन्होंने रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली में हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोध समिति के संयोजक, विद्या परिषद तथा कार्यकारिणी परिषद के सदस्य और आकाशवाणी नजीबाबाद की परामर्श समिति के सदस्य के रूप में भी कार्य किया। सेवानिवृत्ति के पश्चात् डॉ. आर्य जी ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की वृहत् शोध योजना के अंतर्गत मुख्य अनुंसधाता के रूप में कार्य संपन्न किया।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ने अपने लगभग चार दशक के अध्यापन-काल में विभिन्न महत्वपूर्ण सेवा पदों पर कार्य करते हुऐ माँ भारती की प्रशंसनीय सेवा की। इसके परिणामस्वरूप आपकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुईं। इनमें प्रमुख हैं- भाषा आलोक, साहित्यिक निंबध, सूरदास:एक विश्लेषण, भ्रमरगीत सार सटीक, बिहारी-सतसई-सार सटीक, रामचन्द्रिका सटीक, गाँठ, मैला आँचल, ध्रुवस्वामिनी, यशोधरा, कुरुक्षेत्र तथा कालजयी-सभी आलोचनात्मक अध्ययन। 'विचार-बिंदु' में अतुकांत कविताएँ संगृहीत हैं। प्रयोजन मूलक हिन्दी तथा हिन्दी भाषा का विकास एवं साहित्य का इतिहास डॉ. आर्य जी की समीक्षात्मक कृतियाँ हैं। 'परंपरा और आधुनिकता' तथा 'चिंतन -अनुचिंतन' उनके बहुचर्चित निबंध-संग्रह हैं। 'परंपरा और आधुनिकता' को 1997 ई0 में उ0प्र0 हिन्दी संस्थान, लखनऊ द्वारा निबंध-विधा के अंतर्गत पुरस्कृत किया गया। उनकी ये कृतियाँ साहित्यिक अध्येताओं के लिए महत्वपूर्ण सिद्ध हुई हैं। इन प्रकाशित ग्रंथों के अतिरिक्त भी उनके दो सौ से अधिक निबंध, आलेख, समीक्षाएँ, कविताएँ आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। आकाशवाणी नजीबाबाद से डॉ. आर्य जी की अनेक वार्ताएँ तथा परिचर्चाएँ प्रसारित हुईं। उनका यह साहित्यिक कृतित्व हिन्दी साहित्याकाश में स्वर्णक्षरों में अंकित रहेगा।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी को उनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए विभिन्न साहित्यिक संगठनों एवं संस्थानों द्वारा सम्मानित किया गया। इनमें मुख्य रूप से

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा 1997 ई0 में साहित्य महोपाध्याय की उपाधि है, जो इसमे पूर्व पश्चिमी उत्तर प्रदेश में स्व. पं0 पद्म सिंह शर्मा को मिली थी। उन्हें युवा साहित्यकार संघ, धामपुर द्वारा 'सरस्वती श्री', आखिल भारतीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद द्वारा 'साहित्य श्री' तथा विक्रमशिला विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार) द्वारा 'विद्यासागर' की उपाधियों से सम्मानित किया गया। जिलाधिकारी, बिजनौर, रोटरी क्लब, बिजनौर, आर.एस.एम.कॉलेज धामपुर तथा आर.बी.डी. महिला कॉलेज, बिजनौर द्वारा भी उनका साहित्यिक सेवाओं के लिए अभिनंदन तथा सम्मान किया गया। जनपद बिजनौर की प्रतिष्ठित संस्था 'धरोहर स्मृति न्यास' की ओर से 2015 ई0 में डॉ. आर्य जी को जी.एम सेठी स्मृति समग्र सेवा सम्मान द्वारा, एक भव्य समारोह में सम्मानित किया गया। 2016 ई० में हिन्दी दिवस के अवसर पर साहित्य -मंडल, श्रीनाथद्वारा (राजस्थान) द्वारा 'हिन्दी भाषा भूषण' सम्मान से उनको सम्मानित किया गया। 3 जून, 2017 ई० को संस्कार भारती, जनपद बिजनौर द्वारा उन्हें मरपोपरांत सम्मान प्रदान किया गया।

वस्तुत: डॉ. राम स्वरूप आर्य जी को उनके साहित्यिक कृतित्व, सद्व्यवहार तथा सादगी पूर्ण जीवन के लिए सदैव स्मरण किया जाएगा। उनका एक और महत्वपूर्ण कार्य हिन्दी साहित्य जगत में कभी भुलाया नहीं जा सकता। यह कार्य है- नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के प्राचीन हस्तलिखित खोज विभाग के अवैतनिक मानद निरीक्षक के रूप में कई वर्षो के अनवरत परिश्रम के उपरान्त लगभग 300 हस्तलिखित ग्रंथों की पांडुलिपियाँ ,विभाग को उपलब्ध कराना तथा उनके विवरण तैयार करके देना। हिन्दी साहित्य में यह एक स्थायी महत्व का कार्य माना जाता है, जिसका साभार उल्लेख नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की वार्षिक रिर्पोटों में भी किया गया है।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी आज भले ही हमारे बीच नहीं हैं किन्तु उनका कर्मठ व्यक्तित्व तथा कृतित्व सदैव उनकी पावन स्मृति को हमारे हृदय में सजीव बनाए रखेगा। हिन्दी साहित्य में जब भी जनपद बिजनौर की चर्चा होगी, तब डॉ. आर्य जी को अवश्य ही स्मरण किया जाएगा। हिन्दी साहित्य में बिजनौर का इतिहास उनके महत्पूर्ण योगदान के बिना अधूरा रहेगा। डॉ. आर्य जी जनपद बिजनौर के हिन्दी साहित्य का एक महत्वपूर्ण नाम है, इसको नकारा नहीं जा सकता। उनको मेरा शत शत नमन।

चंदक (बिजनौर)

37. बिन्दु का सिन्धु हो जाना

डॉ. राजहंस गुप्ता

एम.ए. (अंग्रेजी), पी-एच.डी.

1988-90 ई0 के लिए कॉलेज की 'वर्धमान' पत्रिका के प्रकाशन को स्व. डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ने महाकवि जयंशकर प्रसाद जी की जन्मशती का पर्व बनाते हुए मुझे आदेश दिया था कि आपको प्रसाद जी से सम्बंधित कुछ सामग्री देनी है। मैं सोचता रहा कि क्या लिखा जाये? उन्हीं से अनुरोध किया कि कुछ सुझाव दें। निष्कर्षत: कामायनी महाकाव्य के किसी भी अंश का अंग्रेजी में भावानुवाद करके देने का उत्तरदायित्व मुझे सौंपा गया। समस्त छायावादी कवियों में जयशंकर प्रसाद जी मुझे सदा प्रिय रहे हैं और 'कामायनी' के 'आशा' सर्ग ने मुझे सदैव सम्मोहित-सा किया है। अत: उसी के आरम्भ की कुछ पंक्तियों का अंग्रेजी में अनुवाद करके अतीव आनंद का अनुभव किया। इस आनन्द का श्रेय मैं स्व0 डॉ. आर्य जी को देता हूँ।

अंतर्मुखी व्यक्ति अपने भीतर जो सुंदर-सी दुनिया बनाये रखते हैं, उसकी झलक पाना उनके लिए बहुत कठिन हो जाता है, जो स्वयं भी, आदर भाव के साथ, एक दूरी बना कर चलने के अभ्यस्त हो चुके हों। स्व. डॉ. आर्य जी की विद्रता, साहित्य प्रेम, और लेखन के बारे में तो हम सभी जानते थे, लेकिन उनके भीतर के कवि और कलाकार की झलक मुझे डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य जी के साथ 'स्मृति ग्रंथ' के संदर्भ में बातचीत के मध्य ही प्राप्त हुई।

स्मृति सहज, स्वत: सक्रिय रहने वाली प्राकृतिक व्यवस्था है, जबकि स्मरण सचेतन प्रयास की अपेक्षा रखता है। आज के कुछ पलों में मैं अमूर्त स्मृति को सायास घनीभूत करते हुए बिम्बों में बांधने बैठा हूँ तो स्व. डॉ. आर्य जी की काव्य रचनाएँ, उनकी शान्त, सस्मित छवि की कुछ परतें खोलती प्रतीत हो रही हैं। चित्र सजीव हो गया है और शब्द मौन बन गये हैं।

''जीवन क्या है?''- 'गीतों का मुहूर्त' में इस प्रश्न के उत्तर में डॉ. आर्य जी अनेक बिम्बों में से एक जीवन की अस्थिरता को 'दीवार के पुराने पलस्तर सा ' देखते हैं और बताते हैं-

उँगली के लगते ही/ जो झट छुट जाता है।।

प्रकृति का नियम है-'' जो पत्ती हरी-भरी है। वह देर-सवेर सूख जायेगी'' परिवर्तन, 'नित्य नूतनता का आनंद', अपना मूल्य वसूल करता ही है-

बीज गल जाता है/ उससे वृक्ष का विकास होता है....

बीज न गलता तो/वृक्ष का जन्म कैसे होता

पत्ता न झरता तो/ शाखा कहाँ से फूटती।

जीवन चुनौती भी है, संघर्ष भी, दुःख भी है, और आनंद भी। दिन भर का थका-हारा पथिक रैन बसेरा भी ढूँढता ही है-

स्वेच्छा से मैं शयन कर रहा/यह होने दो। (समाधि गीत)

जो लोग हमारी स्मृति में रहते हैं, वे मानों अमरत्व को प्राप्त कर लेते हैं। शब्द, कविता, सम्प्रेषण के, सम्पर्क के माध्यम बन जाते हैं। यह भी तो एक तरीका है जिससे-

बिन्द सिन्धु का रूप/धारण करते हैं।

अध्यक्ष,अंग्रेजी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

***

38. मेरे श्रद्धा सुमन

के.एल. वार्ष्णेय

जब मैं बरेली कॉलेज, बरेली में वर्ष 1956-57 ई0 में पढ़ता था, तब वहाँ डॉ. राम स्वरूप आर्य जी मेरे हिन्दी के प्राध्यापक थे। अपनी कक्षाओं में वे बड़ी तल्लीनता से पढ़ाते थे और प्रत्येक विषय को गहराई से समझाते थे। अपने विद्यार्थियों को वे कठिन से कठिन विषय को भी बड़ी सरलता से समझा देते थे। उनका घर मेरे घर से कुछ ही दूरी पर था, इसलिए उनसे प्रायः भेंट होती रहती थी। तीन-चार वर्ष पश्चात् वह बरेली कॉलेज से वर्धमान कॉलेज,बिजनौर चले गये। बिजनौर चले जाने के उपरान्त भी डॉ. आर्य जी से प्रायः मिलना होता रहता था।

अपने दीर्घकालीन संपर्क के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि डॉ. आर्य जी का समस्त जीवन पठन-पाठन और आत्मोत्सर्ग का जीवन रहा। उनकी सादगी और सज्जनता देखकर लोगों को प्राचीन काल की भारतीय जीवन की दिनचर्या का सहज ही स्मरण हो आता था। उनके सादा जीवन और उच्च विचार के आदर्शों को देखकर आश्चर्य मिश्रित आनन्द होता था। खानपान में वे स्वयं अल्पाहारी थे, यद्यपि दूसरों के प्रति वे इस विषय में बहुत उदार थे।

गेहुँआ रंग, मँझोला कद, सामान्य कद काठी, हल्के रंग की कमीज और पैंट पहने, दूर तक कुछ खोजती, कुछ ढूँढती आँखें अनायास ही व्यक्ति को आकर्षित कर लेती थीं। मंद-स्वर वाली उनकी गंभीर वाणी के मध्य कभी-कभी अट्टहास के स्वर भी गूँज उठते थे।

डॉं. आर्य जी ने जीवन भर अपनी ईमानदारी, सत्यवादिता, सादगी, शालीनता,

सेवा भावना और मिलनशील व्यवहार के आधार पर लोगों के मन में स्नेह, सद्भाव तथा कर्तव्यपरायणता के अंकुर उगाये थे। उनके द्वारा किये गये कार्य अनुकरणीय एवं अभिनदंनीय होते थे। डॉ. आर्य जी के चरित्र में सद्भाव बोलता था। उनकी वाणी के प्रत्येक शब्द से मधुरता और शालीनता की धारा ही प्रवाहित होती थी। उनका कहना था कि सादगी तथा सज्जनता व्यक्ति को कमजोर नही करतीं बल्कि एक ऐसी अकल्पनीय शक्ति पदान करती है जिससे व्यक्ति कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी न तो हतोत्साहित होता है, और न ही पराजय को स्वीकार करता है।

डॉ. आर्य जी ने हिन्दी साहित्य जगत् में अनेक ग्रंथों का प्रणयन और पत्र-पत्रिकाओं का संपादन कर अविस्मरणीय योगदान प्रदान किया है, जिससे उनकी कीर्ति की पताका सदैव फहराती रहेगी। मेरी उनके प्रति हार्दिक श्रद्धांजलि।

35, रामपुर बाग, बरेली।

***

39. डॉ. राम स्वरूप आर्य : अनुकरणीय व्यक्तित्व

डॉ. मोनिका वार्ष्णेय

एम.ए. (संस्कृत),पी-एच.डी.

जब मुझे डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के स्वर्गवास का अकस्मात् समाचार मिला, तब सहसा विश्वास ही नहीं हुआ कि एक असाधारण एवं अनुकरणीय व्यक्तित्व हमारे बीच से चला गया। संप्रति डॉ. आर्य जी ऐसी यात्रा पर चले गये हैं, जिसमें वह अब अपने पुराने रूप में इस लौकिक संसार में कभी नही लौटेंगे। अब वे केवल हमारी स्मृतियों में ही अनवरत् रूप से जीवंत रहेंगे।

डॉ. आर्य जी की विद्वता, शालीनता और विनम्रता में अपनेपन का सहज ही अनुभव होता था। उनका मुख-मंडल उनके अंतर्मन में निहित संतोष और आनंद का परिचय देता था। वैसी सरलता, निश्छलता और सात्विकता मैंने अपने जीवन में बहुत कम लोगों के चेहरे पर देखी है।

डॉ. आर्य जी ने अपने ज्ञान, विवेक, सामाजिक अनुभवों तथा कठिन परिश्रम एंव लगन से पच्चीस पुस्तकों का प्रणयन किया और दो सौ से अधिक आलेख एवं समीक्षएँ लिखीं तथा अनेक ग्रंथों एवं पत्र-पत्रिकाओं का संपादन भी किया था। उनके प्रकाशित साहित्य से साहित्यिक अध्येताओं और शोधार्थियों को पर्याप्त लाभ मिला। उनके अकस्मात् निधन से हिन्दी साहित्य जगत् को जो क्षति हुई है, उसकी भरपाई होना निकट भविष्य में संभव नहीं है। हिन्दी साहित्य जगत् में

उनका कृतित्व सदा स्वर्णाक्षरों में विद्यमान रहेगा।

संस्कृत में एम.ए. करने के पश्चात् जब मैंने जैन साहित्य पर शोध-कार्य करना आरम्भ किया, तब उनके द्वारा प्रदान की गयी पुस्तकों तथा बहुमूल्य सुझावों से शोध-कार्य सम्पन्न करने में मुझे पर्याप्त मार्गदर्शन तथा सहायता प्राप्त हुई, जिसके लिए मैं उनके प्रति सदा कृतज्ञ रहूँगी। मेरे शोध-प्रबंध के प्रकाशन के अवसर पर उन्हें अत्यधिक प्रसन्नत हुई थी।

आज उनकी स्मृति में स्मृति ग्रंथ के प्रकाशन के अवसर पर संप्रति मैं अपनी ओर से एक छोटा-सा दीपक उनके चरणों में श्रद्धापूर्वक समर्पित करती हूँ। उनको मेरा शत शत नमन।

लखनऊ (उ0प्र0)

***

40. गुरु तुल्य श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य

हरिशंकर सक्सेना
वरिष्ठ साहित्यकार एवं शिक्षविद्

मेरे लिए गुरुतुल्य परम श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का स्वर्गवास हिन्दी-साहित्य जगत् की अपूरणीय क्षति हैं। डॉ. आर्य जी का नश्वर देह को त्याग कर , इस लौकिक जगत् से विदा होना मेरे लिए एक गुरु के वरदहस्त से वंचित हो जाने के समान है। डॉ. आर्य जी के प्रति मेरे मन में अपार श्रद्धा इसलिए भी है कि उनके लेखन और आचरण में कहीं कोई अन्तर नहीं था। वह केवल मूर्धन्य विद्वान ही नहीं थे अपितु एक संवेदनशील और सरल हृदय के व्यक्ति भी थे।

डॉ. आर्य जी से सर्वप्रथम मेरा परिचय सन् 1970 में प्रसिद्ध समीक्षक और एन.एम.एस.एन.दास कॉलेज, बदायूँ के हिन्दी विभाग के प्राध्यापक आदरणीय प्रोफेसर मधुरेश जी के माध्यम से हुआ था। इसके पश्चात् मूलतः बरेली के निवासी तथा पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली के हिन्दी विभाग के प्राध्यापक अप्रतिम कोशकार डॉ. श्याम बहादुर वर्मा के माध्यम से मेरी निकटता बढ़ती रही। डॉ. वर्मा जी ग्रीष्मावकाश में दिल्ली से बरेली आते थे और यहाँ रहकर अधिकांश समय अपने मित्रों के साथ साहित्यिक चर्चा में तल्लीन रहते थे। उनके द्वारा स्थापित साहित्यिक संस्था 'अनुशीलन' की गोष्ठियों में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से प्रायः मेरी भेंट होती रहती थी। यद्यपि मैं कभी उनकी कक्षा का छात्र नहीं रहा लेकिन फिर भी उन्होंने सदैव मुझे गुरु के समान निश्छल प्यार दिया और सदा मेरा पथ प्रशस्त किया।

मेरे लिए प्रसन्नता का विषय है कि डॉ. आर्य जी की प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर उनकी स्मृति में एक स्मृति-ग्रंथ के प्रकाशन का आयोजन हो रहा है। यह निर्णय अत्यन्त सुखद और शुभ ही नहीं है अपितु उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि भी है।

145, कर्मचारी नगर , बरेली।

***

41. मेरे गुरु के भी गुरु -डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. दुर्गेश चन्द्र शर्मा
एम. ए. (हिन्दी), पी-एच.डी

श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का नाम मैंने सर्वप्रथम वर्ष 1974 ई0 में अपने गुरुवर से सुना था। डॉ. आर्य जी मेरे पूज्य गुरुवर डॉ. शम्भु शरण शुक्ल जी तत्कालीन अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, उपाधि स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पीलीभीत के भी गुरु थे। डॉ. शुक्ल जी बी.ए. में बरेली कॉलेज में डॉ. आर्य जी के छात्र रहे थे। उन्होंने अपना शोध-कार्य डॉ. आर्य जी के कुशल निर्देशन में ही पूर्ण किया था। वर्ष 1976 ई0 में मैंने डॉ. आर्य जी द्वारा रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली के प्रथम स्थापना दिवस - 15 फरवरी, 1976 पर लिखा लेख हिन्दी दैनिक 'अमर उजाला' में पढ़ा था।

मुझे डॉ. आर्य जी के सर्वप्रथम साक्षात् दर्शन का सौभाग्य वर्ष 1977 ई0 में रुहेलखण्ड - विश्वविद्यालय, बरेली के प्रांगण में प्राप्त हुआ था। उस समय वह विश्वविद्यालय में 'अनुचित साधन' प्रयोग निस्तारण समिति (यू.एफ.एम. कमेटी) की बैठक में भाग लेने हेतु आये हुये थे। मैं उस समय विश्वविद्यालय के परीक्षा विभाग में सेवारत था। अपना परिचय देने के उपरान्त मैंने उन्हें बताया कि मैं आपके शिष्य डॉ. शम्भु शरण शुक्ल जी का भी शिष्य हूँ, तो उनमें आत्मीयता का भाव झलक उठा था। वार्तालाप के मध्य मैंने उन्हें यह भी बताया कि आपने वर्ष 1954 ई0 में मेरे फूफा जी पं0 ईश्वरी प्रसाद जी को भी बरेली कॉलेज, बरेली में पढ़ाया है। इस पर उन्हें मुझ से और भी लगाव हुआ तथा मैं उनका आत्मीय जन बन गया। बहुत कम लोग यह जानते होंगे, कि डॉ. आर्य जी वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में अध्यापन से पूर्व सन् 1950-60 के दशक में बरेली कॉलेज, बरेली के हिन्दी विभाग में भी अध्यापन कार्य कर चुके थे। नि: संदेह डॉ. आर्य जी हिन्दी की एक बहुत बड़ी हस्ती के साथ-साथ आदर्श प्रेरणा-स्रोत भी थे।

वर्ष 1977 ई0 से 2016 ई0 तक निरन्तर डॉ. आर्य जी से मेरा पत्र-व्यवहार

बना रहा तथा दूरभाष पर सम्पर्क होता रहा। जब भी वह विश्वविद्यालय आते थे तो मुझसे अवश्य मिला करते थे। सन् 1979 में मैं विश्वविद्यालय का विशेष प्रतिनिधि बनाकर वर्धमान कॉलेज, बिजनौर परीक्षा केन्द्र पर परीक्षायें सम्पन्न कराने हेतु भेजा गया था, तब मैं डॉ. आर्य जी के घर पर ही रुका था। तब उनसे विभिन्न साहित्यिक विषयों पर विस्तार से चर्चा हुई थी। मैंने उनके घर पर हिन्दी साहित्य की पुस्तकों का एक वृहद संकलन देखा था। वर्धमान कॉलेज, बिजनौर से सेवानिवृत्ति के पश्चात भी वह पत्राचार, दूरभाष द्वारा निरन्तर सम्पर्क में बने रहते थे। एम.ए. हिन्दी की मौखिक परीक्षा लेने उन्हें अनेक महाविद्यालयों में जाना होता था। 2010 ई0 के पश्चात अस्वस्थ रहने के कारण वह आस-पास के महाविद्यालयों में ही परीक्षा लेने जाने के इच्छुक रहते थे। मैं उनकी इच्छा का पूर्ण सम्मान रखता था।

विगत माह फरवरी 2017 ई0 में अचानक एक दिन प्रिय डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य जी का फोन आया। तब उन्होंने बताया कि पिताजी का 03 अक्टूबर, 2016 को स्वर्गवास हो गया है और उनकी स्मृति में 'स्मृति ग्रंथ' प्रकाशित करने की योजना है। तद्नुरूप मैंने डॉ. आर्य जी से जुड़े कुछ संस्मरण लिपिबद्ध किये हैं।

पूर्व प्रशासनिक अधिकारी, रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

***

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी : एक विलक्षण व्यक्तित्व

आचार्य देवेन्द्र देव

किसी के ऊँचे कद से मर्तबा ऊँचा नहीं होता।
जो जितने छोटे होते, उतने ही गहरे भी होते हैं।

उक्त काव्योक्ति यदि किसी पर शत-प्रतिशत चरितार्थ होती है, तो वह होती है बिजनौर के विद्वद्वर डॉ. राम स्वरूप आर्य जी पर । उनके बाह्य व्यक्तित्व को देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि उनके छोटे से तन के अन्दर एक विशाल हृदय और एक विराट मन होगा।

मैं नेपाल के सीमावर्ती जनपद पीलीभीत के नगर पूरनपुर का मूल निवासी हूँ किन्तु जब कभी अपने नवगीतकार मित्र हरिशंकर सक्सेना जी से मिलने उनके पास बरेली आया करता था तो वह अन्य विद्वान साहित्यकारों के साथ-साथ डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की भी चर्चा बड़ी भाव-श्रद्धा के साथ किया करते थे। कुछ इस प्रकार से कि हर बार इच्छा होती थी कि अभी बिजनौर जाकर उनसे मिल ही आऊँ किन्तु समय और अवसर अनुकूल न रहने के कारण रह जाता था। प्रत्येक प्रतिकूलता डॉक्टर आर्य साहब से भेंट करने की अभिलाषा को अनवरत प्रगाढ़

करती रहती थी।

2011 ई० में अखिल विश्व गायत्री परिवार के संस्थापक युगर्षि पं. श्रीराम आचार्य जी के जन्मशती समारोह के अवसर पर, गायत्री परिजन होने के नाते, जब उन पर महाकाव्य रचने का अवसर मिला तो उस कृति के सम्बन्ध में विद्वान सारस्वत मनीषियों के विचार जानने, उससे अभिमत लेने के प्रसंग में मेरा ध्यान डॉ. आर्य जी की ओर गया और एक पत्र मैंने उन्हें भेज दिया। नातिविलम्बेन, उनकी शुभकामनाएँ जिस सहजता के साथ मुझे प्राप्त हुईं, उसने मेरे मन में उनके प्रति भाव-श्रद्धा और गहरी कर दी, उनसे मिलने की ललक प्रबल कर दी।

अन्ततोगत्वा 'गायत्रेय' महाकाव्य छपा। शान्तिकुंज के देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार के विशाल सभागार में अन्तरराष्ट्रीय योग महोत्सव के अवसर पर, गायत्री मिशन के वैश्विक प्रमुख डॉ. प्रणव पाण्ड्या द्वारा जब उसके लोकार्पण का अवसर आया तो मैंने दादाश्री डॉ. आर्य जी को भी पत्र लिखकर, उनसे कार्यक्रम में पहुँचने का आग्रह किया। कदाचित् अपनी अस्वस्थता के कारण वह वहाँ पहुँच नहीं सके। मैंने डाक से 'गायत्रेय' की प्रति नहीं भेजी क्योंकि यह कार्य मैं स्वयं, उनसे भेंट करके, करना चाहता था।

मार्च 2014 ई० में किसी पारिवारिक यात्रा में मेरा बिजनौर प्रवास हुआ तो 'गायत्रेय' महाकाव्य की प्रति लेकर मैं दादाश्री डॉ. आर्य जी से मिलने, उनके निवास पर पहुँचा। कुछ भटक जाने पर फोन किया तो वह अस्वस्थ होते हुए भी आकर मुझे अपने घर ले गये। उनकी सामान्य से भी हल्की कद-काठी देखकर मैं असमंजस में पड़ गया कि क्या यह वही मनीषी हैं जिससे मिलने के लिए मैं इतने समय से लालायित था।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से जब वार्तालाप आरम्भ हुआ तो असमंजस के बादल धीरे-धीरे छँटने लगे। उनके संवादों में जितनी सादगी थी, भावों में उतनी ही अधिक विद्वत्ता थी, उससे कहीं अधिक आत्मीयता, प्रगाढ़ आत्मीयता। साहित्य के साथ-साथ संस्कृत और संस्कृति के प्रति मेरा समर्पणानुराग कदाचित् उन्हें प्रभावित कर गया। लगभग डेढ़ घंटे की, दो बार की चाय के साथ, बहुतेरे साहित्यकारों के संस्मरण और बरेली के डॉ. भगवान शरण भारद्वाज आचार्य कृष्ण कान्त शुक्ल, निरंकार देव 'सेवक', राम जी शरण सक्सेना आदि जिनमें से कुछ से तो मेरा भी साक्षात्कार नहीं हुआ था, की मधुर स्मृतियाँ छलकती रहीं। चूँकि उन दिनों मैं बरेली की बहुआयामी परिचायिकाओं से परिचित नहीं था। केवल बहता रहा उनकी प्रणत भाव-धारा के संग। जब चलते समय मैंने उनके चरण

स्पर्श किये तो आत्मीयतावश वह भाव-विह्वल हो गये थे। उनके कण्ठावरोध से मुझे ऐसा ही आभासित हुआ था।

राष्ट्रभाषा के सघन प्रचार-प्रसार के साथ -साथ बिहारी , जयशंकर प्रसाद, सूरदास, तुलसीदास, आचार्य केशवदास, रामधारी सिंह दिनकर, प्रेमचन्द , मैथिलीशरण गुप्त, पं० पद्मसिंह शर्मा, दुष्यंत कुमार जैसे अलग-अलग धाराओं के साहित्य-साधकों की कृतियों का अनुशीलन करके जिसने अपनी समीक्षाएँ, व्यवस्थाएँ दी हों, विविध विषयों पर जिनके निबन्धों ने सुधी समाज से समादर पाया हो, जिनके ज्ञान-सिन्धु में अवगाहन करके गुणज्ञों ने, शोधार्थियों ने अपनी गुत्थियाँ सुलझायी हों, अनुसन्धान किये हों, उसके अन्तस्थ महत्तत्व के बारे में भला कौन, कितना वर्णन कर सकता है?

आज, माता शारदा की असीम अनुकम्पा, गुरुजनों के आशीषों से और डॉ. राम स्वरूप आर्य जी जैसे मनीषी अग्रजों की शुभ कामनाओं से हिन्दी साहित्य को बारह महाकाव्य देकर भी मुझे लगता है कि श्रीवर का सान्निध्य मुझे और सुलभ रहता तो मैं भाषा तथा साहित्य की कुछ और भी सेवा कर सकता था।

मैं तो केवल यही कह सकता हूँ कि उनसे अल्पकालिक भेंट मेरे लिए अमरनाथ दर्शन के समान, वह अल्पकालिक सान्निध्य मेरा चरम परम सौभाग्य और वे आत्मीयतापूर्ण वचन मेरे जीवन की अमूल्य निधि से रंचमात्र भी न्यून नहीं हैं। उनकी स्मृतियों को मेरे कोटि-कोटि वन्दन और उन्हें मेरे शंखधा नमन।

44-उमंग, भाग-2, महानगर टाउनशिप, बरेली

***

43. साधना पथ के पथिक

डॉ. राम निवास चतुर्वेदी
एम.ए.(हिन्दी), पी-एच.डी.

बिजनौर में सन् 1960 ई0 में वर्धमान कॉलेज की स्थापना हुई थी। इसी कॉलेज के प्रथम सत्र में मैंने बी.ए. (प्रथम वर्ष) में प्रवेश लिया। तभी डॉ. राम स्वरूप आर्य जी हिन्दी-संस्कृत विभाग के अध्यक्ष रूप में नियुक्त हुए थे उस समय तक हिन्दी-संस्कृत के संयुक्त विभाग होते थे और कॉलेज में संस्कृत के कोई अन्य प्राध्यापक नहीं थे।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी हमें हिन्दी-संस्कृत पढ़ाया करते थे। उनके अध्यापन की विशेषता थी- 'सरल भाषा शैली में विषय की विवेचना करना।' सभी छात्र-छात्राएँ मौन धारण कर विषय को आत्मसात करते। 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के

एक-एक शब्द की व्याख्या सहज एवं रोचक शैली में करते हुए वे स्वयं भी भाव-विभोर हो जाते थे। मुझे भली-भाँति स्मरण है, जब वे 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के चतुर्थ अंक को पढ़ाते थे, उस समय ऐसा लगता था कि वे स्वयं ही 'शकुन्तला' को विदा कर रहे हैं। उस समय वे भाव-विह्वल हो जाते थे।

गुरु जी का सम्बन्ध सामान्य परिवार से था। परिवार के संस्कार उन पर प्रभावी थे। अत: उनका खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा, तथा आचार-विचारों में स्वाभाविकता एवं सरलता थी। कॉलेज आते समय वे सामान्य वेशभूषा ही पहनते थे। भाषा में विनम्रता, सहजता, स्नेह तथा आत्मीयता का भाव समाहित रहता। 'सादा जीवन उच्च विचार' की कहावत उनके जीवन में पूर्णत: चरितार्थ होती थी। मैं बी.ए. (द्वितीय वर्ष) इस कॉलेज से परिस्थितिवश नहीं कर सका किन्तु डॉ. आर्य जी के प्रति सम्मान आज तक मेरे हृदय में बना हुआ है। जब कभी मैं बिजनौर जाता था, उनसे मिले बिना नहीं आता था। मेरे पी-एच.डी. करते समय औपचारिक निर्देशक तो अन्य थे, किन्तु मैं शोधकार्य में उन्हीं से मार्गदर्शन प्राप्त करता था। वे ही मेरे अनौपचारिक निर्देशक रहे। उनसे कई वर्ष तक पत्र व्यवहार भी होता रहा।

सहारनपुर में रहते हुए उन्हीं के मार्गदर्शन में 'हिन्दी विकास संस्थान' की स्थापना की गई। वे संस्थान के आजीवन संरक्षक थे। उन्हीं के आशीर्वाद से संस्थान निरन्तर विकास की सीढ़ियाँ चढ़ता रहा। वे संस्थान के 'वार्षिकोत्सव एवं पुरस्कार वितरण समारोह' को सम्बोधित करते थे। कन्या इण्टर कॉलेज,, धामपुर में आयोजित सम्मेलन में विद्यालय की तत्कालीन प्रधानाचार्या श्रीमती शान्ति सिन्हा गुरु जी के सम्बोधन से इतनी अधिक प्रभावित हुईं कि उन्होंने उनको व्यक्तिगत रूप से सम्मानित किया।

प्रसिद्ध साहित्यकार स्व. पद्म सिंह शर्मा के 'स्मृति -ग्रन्थ' के प्रकाशन के सन्दर्भ में गुरु जी ने हरिद्वार में एक विचार गोष्ठी का आयोजन किया था, जिसमें मुझे भी आमन्त्रित किया गया था। उस समय अन्य विद्वानों के साथ ही गुरु जी का सम्बोधन भी सुनने को मिला। उनका लेखन शोधपूर्ण होता था। वे यथाशक्ति व्यावहारिक ज्ञान से लाभान्वित होना चाहते थे। इसी संदर्भ में कोटद्वार के निकट स्थित 'कण्व-आश्रम' की ऐतिहासिकता को जानने के लिए वे वहाँ गए थे। उस समय उनके साथ जाने का अवसर मुझे भी प्राप्त हुआ था। वहाँ उन्होंने 'दुष्यन्त-शकुन्तला' के गान्धर्व विवाह की ऐतिहासिकता को विस्तार से बताया था। मुझे अभी तक वे सभी प्रसंग स्मरण हैं। गुरु जी को अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित

किया गया। एक बार उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा पुरस्कृत होकर बिजनौर लौट रहे थे। तब अकस्मात् उनसे भेंट हो गई। तब उन्होंने मुझे विस्तार से अनेक प्रसंग बताये। गुरु जी ने बिजनौर रहते हुए अनेक साहित्यिक कार्यक्रमों का आयोजन किया। उनका सत्परमार्श लोगों का मार्गदर्शन करता रहा। उनकी अनेक कृतियों और पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ। डॉ. आर्य जी की अनेक वार्ताओं का प्रसारण नजीबाबाद रेडियो से हुआ।

गुरु जी अध्ययनशील व्यक्ति थे। मैं जितनी बार उनके निवास पर गया, तब उनको पढ़ते-लिखते ही देखा। उन्होंने 25 पुस्तकों का प्रकाशन कराया। अनेक ग्रन्थों तथा पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया। 17 शोधार्थियों ने उनके निर्देशन में शोध उपाधि प्राप्त की।

ऐसे चिन्तनशील, कर्मशील एवं लोक कल्याणकारक डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का बार-बार स्मरण होना स्वाभाविक ही है। उनके लेखन से सदैव प्रेरण मिलती रहेगी।

हिन्दी विकास संस्थान, नया माधव नगर, सहारनपुर(उ.प्र.)

***

44. श्रद्धेय गुरुवर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी

डॉ. गणेशमणि त्रिपाठी

एम.ए. (हिन्दी), पी- एच.डी.

गुरुर्ब्रह्मा गुरु र्विष्णु, गुरुदेव महेश्वरः।
गुरु साक्षात्परब्रह्मः तस्मै श्री गुरुवे नमः।।

प्रातः स्मरणीय पितृ तुल्य गुरुदेव डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का जब भी मैं स्मरण करता हूँ, तब मुझे अपने एम.ए. के शिक्षणकाल की याद आ जाती है। उनमें मुझे ऋषि, गुरु और एक पिता का रूप दिखाई देता है। शिक्षणकाल में उनका अपनत्व, मुझ, बिजनौर से बाहरी छात्र के लिये पिता तुल्य था। इसी अपनत्व से मैं निःसंकोच उनके निवास पर चला जाता था। शायद उन्हें मैं भी अच्छा लगता था। वे मुझे चाय-नाश्ता भी करा दिया करते थे। अपने समय के सशक्त विद्वान गुरुवर डॉ. आर्य जी "विद्याददाति विनयं" के आधार पर अध्यापन-कार्य करते थे। उनका विनम्र स्वभाव आज भी प्रेरणा देता है। सभी छात्र-छात्राओं को शान्त वातावरण में पढ़ाना, गुरु और शिष्यों के बीच की शुष्कता को पढ़ाते समय समाप्त कर देना, साहित्यकारों के जीवन की प्रासंगिक कथाओं को सुनाना तथा शब्दों की उत्पत्ति-विकास और ह्रास, अर्थ संकोच एवं अर्थ विस्तार बताना,

वर्तनी की शुद्धता अपनाना मस्तिष्क में कूट-कूट कर भर जाते थे। प्राचीन आचार्यों का अपने शिष्यों के प्रति जो वात्सल्य होता था, वह श्रद्धेय गुरुवर डॉ. आर्य जी के व्यक्तित्व में था।

जब वे बिजनौर से बाहर जाते थे, तो दो-एक बार मुझे रात्रि में उनके निवास पर सोने का अवसर भी मिला था। यह उनका मेरे प्रति प्रेम और विश्वास ही था। जब मैंने एम.ए. हिन्दी उत्तीर्ण किया तो उन्हीं की कृपा से मुझे एक सत्र वर्धमान कॉलेज , बिजनौर में बी.ए. तथा एम.ए. के छात्रों को पढ़ाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मैंने जब अपने आगे के अध्ययन के सम्बन्ध में गुरुदेव से पूछा तो उन्होंने मुझे डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल जी के बारे में बताते हुए कहा-वह तुम्हारे ही यहाँ के थे, हिन्दी के प्रथम डी.लिट्. थे। उनकी मृत्यु (1944 ई0) के बाद आज तक उन पर कोई शोधकार्य नहीं हो सका है। तुम उन पर शोध कार्य करो। मैं तब तक डॉ. बड़थ्वाल जी के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानता था। गुरुदेव ने ही मेरी जिज्ञासा बढ़ाई और मार्गदर्शन किया। शोधकार्य की रूप-रेखा बनवाई। उनके विविध साहित्य को एकत्रकर अध्ययन करने को कहा। उनकी कृपा से मैंने 'डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल और उनका साहित्य' विषय पर शोध कार्य पूर्ण किया। उनकी कृपा से ही मुझे पं० बनारसी दास चतुर्वेदी जी का कोटद्वार में दो वर्ष तक लेखन सहायक होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। एम.ए. में वर्धमान कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'वर्धमान' का छात्र सम्पादक बनने का सुअवसर भी मिला था।

एम.ए. द्वितीय वर्ष की मौखिक परीक्षा के समय गुरुवर ने छात्र-छात्राओं से पूछा था कि क्या और कैसी तैयारी की है? परीक्षक महोदय को तुम क्या बताओगे ? जब मेरी बारी आई तो मैंने अपनी अल्पज्ञता से कह दिया-गुरु जी, मैं कहूँगा कि आप सूर, तुलसी, कबीर और बिहारी अथवा रत्नाकर से कुछ भी पूछ लीजिये। गुरुदेव ने कहा, नहीं , ऐसा मत कहना, यह तो चैलेंज होता है। ज्ञान कभी पूरा नहीं होता। श्रद्धेय गुरुवर को कभी क्रोध नहीं आता था। क्षमाशीलता उनका गुण था। किसी कारण, किसी बात पर अगर कभी क्रोध आता भी था तो उनकी आँखों से ही सामने वाला डर जाता था।

पूजनीय गुरुमाता जी एक बार बीमार पड़ीं तो मैंने अपने बड़े जीजा जी वैद्यराज उमाकान्त उप्रेती जी के बारे में बताया, गुरुजी तब माता जी को लेकर कोटद्वार आये थे। मुझे भी अपार खुशी हुई थी। तब किसी विद्वान गुरु का घर पर आना अहोभाग्य जाना जाता था। आज परिस्थितियाँ बदल गई हैं। अध्यापक और शिष्यों के स्तर में गिरावट आ गई है। गुरुदेव इस गरिमा को समझते थे। गुरुजी के

चरण मेरे घर में आये। मेरे माता-पिता (दोनों) खुश हुए। जीजा जी की दवाइयों से माता जी को स्वास्थ्य लाभ हुआ। भाई डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य और रवि प्रकाश आर्य व बहिन संतोष तब छोटे-छोटे थे।

इधर राजकीय सेवा में आने पर विद्वत्वर गुरुदेव से आकाशवाणी नजीबाबाद में भेंट दो-एक बार हुई थी। भाई चन्द्र प्रकाश आर्य जी के विवाहोत्सव पर गुरुवर ने भोज पर अपने अनेक शिष्यों को बुलाया था, मैं भी गया था, वे बड़े खुश हुए थे। जब मैं इण्टर परीक्षा की उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन करने बिजनौर जाता था, तब गुरुदेव से मिलने दो-एक बार उनके निवास पर गया था। फिर उसके बाद पारिवारिक जीवन की व्यस्तता में इतना रमा कि जैसा स्वाभाविक होता है कि बिरला-बिरला शिष्य ही गुरु के चरणों में जा पाता है, वही दशा मेरी हुई। आज मैं बड़ा दुखी होता हूँ कि उस ज्ञान गंगा के समीप बार-बार क्यों नहीं जा सका।

मैंने अपने अध्यापक जीवन में गुरु जी के आदर्शों को ही अपनाया। उनकी बताई हुई व्याख्यायें हमें आज भी याद हैं। वे भाषा विज्ञान के परम ज्ञाता थे। उन्हें साहित्य की सभी विधाओं का गहन ज्ञान था। रामचरितमानस, संस्कृत और पाली साहित्य के वे विशिष्ट विद्वान थे। विनम्र, मृदुभाषी, मितभाषी श्रद्धेय गुरु जी के साथ-साथ मैं अपने अन्य गुरुजनों डॉ. चन्द्रपाल शर्मा 'मधु' और श्रीमती उषा जैन जी को भी प्रणाम करता हूँ।

डॉ. चन्द्रप्रकाश आर्य, रविप्रकाश आर्य जैसे सुयोग्य सुपुत्रों को धन्यवाद देता हूँ कि आज के युग में वे धन्य हैं, जो गुरुदेव पर स्मृति ग्रंथ प्रकाशित कराकर उनकी कीर्ति रक्षा के लिये उनका साहित्यिक श्राद्ध कर रहे हैं।

कोटद्वार (गढ़वाल)

***

45. गुरुवर डॉ. राम स्वरूप आर्य : उभरती स्मृतियाँ

श्रीमती दीपा शर्मा

एम.ए. (हिन्दी)

आज जब यह समाचार मिला कि हमारे आदरणीय सर डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का स्वर्गवास विगत 03 अक्टूबर 2016 ई0 को हो गया है, तो दुःख का अनुभव होने के साथ-साथ अनेक स्मृतियाँ भी मनःपटल पर सहसा उभर आईं। उनकी स्मृति में एक स्मृति ग्रंथ , उनकी प्रथम पुण्यतिथि को प्रकाशित हो रहा है और उसमें कुछ लिखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो रहा है। ऐसा अवसर बहुत ही कम पूर्व छात्र-छात्राओं को मिलता है। लगभग पच्चीस वर्ष पश्चात् छात्र जीवन

की स्मृतियाँ पुनः मनः पटल पर उभरना, उन सुखद क्षणों को पुनः जीने का एक अलग ही अनुभव है। यद्यपि इन वर्षों में मैंने गृहस्थ जीवन के दायित्वों का निर्वाह किया है। लेखनी तो कब से हाथों में ली ही नहीं है किन्तु आज कागज कलम से नाता पुनः जुड़ गया है।

हमारे अध्ययन काल में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष थे। हमने 1991-92 ई० में हिन्दी विषय में एम.ए. वहीं से किया था। 24-25 वर्ष पश्चात् आज जब कुछ लिखना चाहा तो अभ्यास की कमी के कारण समझ में नहीं आया कि क्या लिखूँ लेकिन अपने आदरणीय सर डॉ. आर्य जी के लिए कुछ शब्द लिखने का मोह मैं त्याग नहीं पा रही हूँ।

डॉ. आर्य जी बहुत ही सीधे-सरल प्रकृति के व्यक्ति थे। एम. ए. में अध्ययन करते हुए हमने उनसे बहुत कुछ सीखा। उस समय प्रथम बार लघु शोध करने का कार्य हम छात्र-छात्राओं को सौपा गया था। मैंने डॉ. आर्य जी के निर्देशन में 'साकेत के नारी पात्र' विषय पर लघु शोध-प्रबंध तैयार किया था और उनसे शोध की बहुत सी बारीकियाँ भी सीखी थीं। उसी का परिणाम था कि मेरे अंक कक्षा में सबसे अधिक आये थे। मेरी इच्छा हिन्दी में पी-एच.डी. करने की थी लेकिन कुछ परिस्थितियाँ ऐसी बनीं कि मैं पी-एच.डी. नहीं कर सकी।

डॉ. आर्य जी से मेरी अन्तिम भेंट 2000 ई० में हुई थी, जब वे एम.जी.एम. कॉलेज , संभल में मौखिक परीक्षा में बाह्य परीक्षक के रूप में आये थे। जब उन्हें पता चला कि मेरे पति इसी कॉलेज में कार्यरत हैं तो वे उनसे मिले, मुझ से मिलने घर भी आये और स्नेहवश एक रात हमारे घर रुके भी थे। तब बहुत सी बातें हुई थीं। मुझे याद है, उन्होंने जाते हुए हमें ढेर सारे आशीर्वाद दिए थे। आज जब उनके स्वर्गवास का समाचार मुझे मिला तो अतीत की वे सब घटनाएँ मेरी आँखों के सामने घूम गयीं।

डॉ. आर्य जी बहुमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्यकार थे। उन्होंने हिन्दी में बहुत सी पुस्तकों की रचना की , जो साहित्य के अध्येताओं के लिए उपयोगी सिद्ध हुई हैं। हिन्दी भाषा एवं साहित्य का इतिहास तथा हिन्दी भाषा का विकास, पुस्तकें तो हमारे अध्ययन के समय भी हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुईं थीं। ध्रुवस्वामिनी, यशोधरा, मैला आँचल आदि पुस्तकों की उन्होंने समीक्षा की। भ्रमरगीत सार, बिहारी सतसई, रामंचद्रिका आदि पर उन्होंने टीकाएँ भी लिखी हैं, जो साहित्यिक अध्येताओं के लिए बहुउपयोगी पुस्तकें हैं। डॉ. आर्य जी के 200 से अधिक लेख, समीक्षाएँ, कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं। उनकी अनेक

वार्ताएँ आकाशवाणी नजीबाबाद से प्रसारित हुईं। वे आकाशवाणी नजीबाबाद की परामर्श समिति के सदस्य रहे। उनके निर्देशन में सत्रह शोध छात्रों ने आगरा तथा रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉ. आर्य जी रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली की हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोध समिति के संयोजक और विद्या-परिषद तथा कार्यकारिणीं परिषद के सदस्य रहे। हमारा सौभाग्य है कि हमने उन्हें निकट से देखा, जाना और समझा तथा उनसे जीवन में बहुत कुछ सीखा भी। उनका सबसे उत्तम गुण, उनकी सादगी और सरलता थी। डॉ. आर्य जी के हृदय में अपनी मातृभाषा हिन्दी के प्रति अगाध प्रेम था। उन्होंने अपनी रचनाओं से हिन्दी साहित्य के भंडार को समृद्ध किया। वे निर्विवाद रूप से एक सजग प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। उनकी साहित्य-साधना सतत विकासोन्मखी रही। अपने छात्र-छात्राओं का भविष्य सँवारने के प्रति भी वे सदैव सचेत रहते थे। उन्हें अपने गुरु के रूप में पाकर हम सभी छात्र-छात्राएँ कृतार्थ हुए। उनकी प्रथम पुण्यतिथि के अवसर पर मेरी ओर से ये स्मृति और श्रद्धा के कुछ पुष्प समर्पित हैं। ईश्वर डॉ. आर्य जी की आत्मा को शांति प्रदान करें। मेरा उनको शत शत नमन।

रामलीला मैदान , संभल, उ.प्र.

***

46. डॉ. रामस्वरूप आर्य : विनम्र श्रद्धांजलि

डॉ. अनिल शर्मा 'अनिल'

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से मेरा संपर्क आमने-सामने का नहीं रहा लेकिन लेखन-प्रकाशन के माध्यम से मैं उनसे अवश्य जुड़ा रहा। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किसी लेख या समाचार पर स्वयं संज्ञान लेकर साहित्य-जगत् में उसकी चर्चा करना डॉ. आर्य जी की प्रवृत्ति रही। धामपुर के मूल निवासी यशस्वी पत्रकार संपादकाचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा जी तथा उनके साहित्य के प्रति डॉ. आर्य जी के मन में विशेष सम्मान था। प्रख्यात् पत्रकार तथा 'विशाल भारत' और मधुकर जैसे प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं के संपादक डॉ. बनारसीदास चतुर्वेदी जी से आपका निकट का सम्बन्ध रहा। पं. चतुर्वेदी जी ने पं. रुद्रदत्त शर्मा जी की कुछ पुस्तकों का प्रकाशन कराया था। उन्होंने पं. शर्मा जी की कतिपय अप्रकाशित दुर्लभ सामग्री डॉ. आर्य जी को प्रदान की थीं।

मैं अपने इस लेख में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से सम्बन्धित दो संस्मरण प्रस्तुत कर रहा हूँ। पहला संस्मरण पत्रकारिता दिवस 30 मई, 1994 ई0 से संबद्ध है। हिन्दी पत्रकारिता दिवस पर दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' में मेरा एक लेख

प्रकाशित हुआ था– 'संपादकाचार्य का स्मृति स्थल: पं. रुद्रदत्त शर्मा पुस्तकालय।' श्रमजीवी पत्रकार युनियन पंजीकृत, बिजनौर का समारोह जैन धर्मशाला, बिजनौर के सामने स्थित वर्धमान उत्सव मंडप में आयोजित था। श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी समारोह के मंच पर अध्यक्ष के रूप में शोभायमान थे। कार्यक्रम के अन्त में उनका अध्यक्षीय भाषण आरम्भ हुआ। औपचारिक संबोधन के पश्चात उन्होंने दैनिक 'बिजनौर टाइम' में प्रकाशित मेरे लेख का संदर्भ देते हुए अपना अध्यक्षीय भाषण पूरा किया। दर्शक दीर्घा में बैठे हुए ,डॉ. आर्य जी के मुख से अपने लेख की चर्चा सुनकर, मुझे जो आनन्द की अनुभूति हुई, वह शब्दों के माध्यम से वाणी द्वारा अभिव्यक्त नहीं की जा सकती।

डॉ. आर्य जी से सम्बन्धित दूसरा संस्मरण 2006 ई0 का है। धामपुर के साहित्यिक मित्रों (संपादकचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा स्मृति समिति) की योजना बनी कि पं. रुद्रदत्त शर्मा जी के साहित्य का प्रकाशन पुन: कराया जाए। इस सम्बन्ध में जब समाचारपत्रों में समाचार प्रकाशित हुआ तो श्रद्धेय डॉ. आर्य जी ने इस समाचार पर भी स्वयं संज्ञान लिया। उन्होंने मुझे 26 नवम्बर, 2006 ई0 को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने अपने सुझाव देते हुए, सामग्री को प्राप्त करने का स्रोत भी बताया था। मैंने उन्हें पत्रोतर दिया। डॉ. आर्य जी के पास से पुन: 2 दिसम्बर, 2006 ई0 का लिखा हुआ पत्र मिला, जिसमें उन्होंने अपने पास की सामग्री 'दीमक के कारण नष्ट होने' की जानकारी देते हुए मुझसे बिजनौर आकर मिलने की बात लिखी थी। मैं परिस्थितिवश उनके पास बिजनौर जाकर नहीं मिल सका और यह योजना परवान नहीं चढ़ सकी। जनपद बिजनौर के अनेक साहित्यिक आयोजनों में मुझे उनके अध्यक्षीय भाषणों को सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सहज सरल व्यवहार के धनी संत स्वभाव वाले साहित्यकार डॉ. आर्य जी को हमारी विनम्र श्रद्धांजलि।

गुजरातियान, धामपुर, बिजनौर

***

47. साहित्यिक मार्गदर्शक : डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ० दिग्विजय चौधरी

कार्यक्रमों तथा कवि गोष्ठियों में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को अक्सर मंचासीन देख कर मैं श्रद्धाभाव से ओत प्रोत हो जाता था। उनकी उपस्थिति सादगी, विनम्रता, विद्वता जैसे सद्‌गुणों से आच्छादित उस वटवृक्ष की तरह प्रतीत होती थी, जो फलदार भी हो और छायादार भी। मन में मिलने की जिज्ञासा होती थी

मगर प्रणाम से आगे परिचय बढ़ न पाया।

परिचय का सुयोग्य अवसर बनी एक काव्यगोष्ठी। एक बार मुझे उनकी अक्ष्यक्षता में एक काव्यगोष्ठी में अपनी रचनाएँ सुनाने का सुअवसर मिला। अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में डॉ. राम स्वरूप आर्य जी ने मेरे द्वारा सुनाई गई कविता की खुले दिल से सराहना की। यह मेरे लिए किसी बड़े पुरस्कार से कम न था और यह सुखद पल मेरी स्मृति में सदा के लिए अंकित हो गया। गोष्ठी के बाद में परिचय हुआ तो मैंने उनसे अपने 'भारती क्लीनिक', सिविल लाइन्स प्रथम पर आने का आग्रह किया जो उन्होंने सहज भाव से स्वीकार कर लिया। दो-तीन दिन बाद वे मेरी 'भारती क्लीनिक' पर आये और फिर यह सिलसिला चल पड़ा।

इस प्रकार डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का सान्निध्य और आशीर्वाद मुझे मिलने लगा। मेरी रचनाओं में उनके सुझाव मुझे और उत्साहित करने लगे, परिणामस्वरूप मेरी कई रचनाओं का जन्म हुआ। बढ़ती आत्मीयता के साथ उनका स्नेह मुझे प्राप्त होता रहा और उनके कितने ही संस्मरण उनकी जुबानी सुनने को मुझे मिले। कभी वो मुझे अपने बिजनौर आगमन की घटना बताते तो कभी दो कारों की चर्चा करते ('साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में प्रकाशित डॉ. आर्य जी का एक लेख)। साहित्यिक चर्चाएँ होतीं, मुझे कोई समस्या होती तो मैं उनसे परामर्श करता और वे मार्गदर्शन देते थे।

डॉ. आर्य जी के स्वभाव के अनुरूप उनके घर का वातावरण भी साहित्यिक था। घर के सभी सदस्यों की सहृदयता, साहित्यिक अभिरुचि के साथ व्यवहार की सादगी के चलते भाई चन्द्रप्रकाश जी, रविप्रकाश व बहिन सन्तोष से मेरा आत्मिक रिश्ता बन गया।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के अंतिम दिनों में जब मैं उनके आवास पर मिलने गया तो वे कुछ खा-पी नहीं पा रहे थे। उन्होंने मेरे लिए भाई रवि को चाय के लिए इशारा किया। मैंने चाय के लिए मना किया तो डॉ. आर्य जी ने कहा कि नहीं मैं भी चाय पियूंगा। मैंने कहा कि अगर आप चाय पियोगे तो मैं भी चाय पियूंगा। चाय आयी और मैं चाय पीने लगा। मैंने ध्यान दिया कि डॉ. आर्य जी मुझे चाय पिलाने के लिए चाय पीने का उपक्रम भर कर रहे थे। मेरा मन सदैव गुरु जी का ऋणी रहेगा। यह मेरा सौभाग्य रहा कि मुझे उनका स्नेह, आशीर्वाद और सान्निध्य प्राप्त हुआ।

मैं ईश्वर से उनकी आत्मा की शान्ति के लिए प्रार्थना करता हूँ। डॉ. राम

स्वरूप आर्य जी का नाम उनके कृतित्व के कारण साहित्यिक जगत में स्वर्णिम अक्षरों में सदा अंकित रहेगा। उनकी स्मृति में प्रकाशित हो रहे इस स्मृति ग्रंथ के माध्यम से आने वाले पीढ़ी को भी इस साहित्य मनीषी को जानने तथा समझने का सुअवसर मिलेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। उनके बताये हुऐ मार्ग पर चलने के संकल्प के साथ मैं उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

जाटान , बिजनौर

***

48. डॉ. राम स्वरूप आर्य: अर्धशताब्दी पूर्व की अविस्मरणीय स्मृतियाँ

श्री अशोक जैन 'हुक्का बिजनौरी'
प्रख्यात् कवि एवं पत्रकार

मनुष्य जब किसी क्षेत्र में आगे बढ़ना चाहता है तो उसको सर्वप्रथम गुरु अथवा पथ प्रदर्शक की आवश्यकता होती है। इसके उपरांत उसे सहयोग देने वाले व प्रोत्साहित करने वालों का नम्बर आता है। विडम्बना यह है कि मुझे गुरु के रूप में कोई नहीं मिला। इसके लिए इतना ही कहा जा सकता है कि ''नहीं किसी की उंगली पकड़ी, नहीं किसी का लिया सहारा, जितनी दूर चला हूँ, अब तक अपने पैरों से आया हूँ।'' जब मैंने काव्य के क्षेत्र में घुटलियों चलना सीखा तो उत्साहवर्द्धन व प्रोत्साहित करने वाले जितने व्यक्ति मिले, उनमें अग्रगण्य व प्रमुख नाम है, प्रसिद्ध विद्वान, साहित्यकार, समालोचक स्व. डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का।

बात उन दिनों की है, जब मैं नगीना (बिजनौर)में रहता था तथा कक्षा 12 वीं का छात्र था। उस समय मैं गीत, मुक्तक आदि अशोक जैन 'रश्मि' के नाम से लिखा करता था, जो 'नवभारत टाइम्स' व 'वीर अर्जुन' में प्रकाशित होते थे। तब तक मैंने किसी कवि सम्मेलन के मंच से कविता पाठ नहीं किया था। संभवत: यह 1961-62 ई० की बात है कि अचानक मेरे पास डाक से एक पत्र आया जिसमें मुझे बिजनौर के वर्धमान कॉलेज में हिन्दी परिषद् द्वारा आयोजित कवि सम्मेलन में आमंत्रित किया गया था। चूँकि मेरा किसी मंच पर काव्य पाठ हेतु जाने का यह प्रथम अवसर था, मन में कुछ घबराहट भी हुई, लेकिन फिर भी हिम्मत करके मैंने अपनी स्वीकृति भेज दी। निश्चित तिथि पर जब मैं वहाँ पहुँचा तो एक सज्जन ने मेरा स्वागत किया। कॉलेज में गेस्टरूम बना था, वहीं अन्य कवि भी बैठे हुए थे। कवि सम्मेलन दिन में था। शुरू होने पर मैंने भी गीत पढ़ा। उस वक्त मैंने अपना गीत ''ओ निर्मम तुम आये न, दीपक जलता जाता है'' पढ़ा।

कवि सम्मेलन समाप्त होने पर सब कवियों को लिफाफा दिया गया। मुझे भी लिफाफा दिया गया। मैंने देखा तो उसमें 11 रुपये रखे हुये थे। उन्हें देखकर मुझे जो प्रसन्नता हुई, उसका मैं वर्णन नहीं कर सकता। उस समय नगीना से बिजनौर रोडवेज बस का एक ओर का किराया मात्र 69 पैसे था। इस प्रकार मुझे 9.62 पैसे बचे थे। बाद में जब परिचय हुआ तो पता चला कि वह छोटे से कद के व्यक्ति जिन्होंने मुझे आमंत्रित किया था तथा लिफाफा दिया था, कॉलेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. राम स्वरूप आर्य जी थे। उनके सरल व्यक्तित्व की छाप मेरे हृदय पर ऐसी पड़ी कि उनके देहावसान तक मैं उनका अनन्य भक्त बना रहा।

इसके उपरांत आर.एस.एम. कॉलेज धामपुर, से बी.ए. करने के बाद जब मैंने वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में एम.ए. हिन्दी में दाखिला लिया तो मैं उनके खास शिष्यों में रहा। उस समय मैंने अपनी विधा बदल ली थी और हास्य कविताएँ लिखने लगा था तथा 'हुक्का बिजनौरी' के नाम से कवि सम्मेलनों में जाने लगा था। एम.ए.के बाद इसी कॉलेज से बी.एड. करने के उपरांत मैं रोहतक (हरियाणा) के जैन विद्यालय में अध्यापक हो गया, लेकिन जब भी घर आता, आर्य जी के चरण स्पर्श करने उनके पास अवश्य जाता था। सन् 1971 में वहाँ की नौकरी छोड़कर मैं बिजनौर आ गया तो अक्सर ही उनके पास आकर बैठ जाता था।

वर्ष 2007 ई० में जब मेरी हास्य-व्यंग्य कविताओं का संकलन 'हुक्का की गुड़गुड़' प्रकाशित हो रहा था तो मैने डॉ. आर्य जी से उसके लिए आशीर्वाद मांगा। उस समय उन्होंने 'अनुशंसा' के रूप में जो लिखा, उसका कुछ अंश प्रस्ततु है। उन्होंने लिखा था- "आज से लगभग 40-45 वर्ष पूव एक किशोर अकस्मात् मुझसे मिला था और, अपना नाम बताया था अशोक जैन 'रश्मि'। उपनाम से ही मुझे लगा कि ये सज्जन सम्भवत: कवि हैं। उन दिनों ये गीतकार थे, किन्तु शीघ्र ही इन्होंने अपनी दिशा बदल दी और ये हास्य रस के कवि के रूप में हुक्का बिजनौरी हो गये। भारत के विभिन्न प्रदेशों में कवि-सम्मेलनों के मंच से इन्होंने अपनी कविताओं से श्रोताओं को रस-विभोर किया है। इनकी रचनाएँ देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही हैं। 'हुक्का की गुड़गुड़' हास्य-व्यंग्य की इनकी प्रथम पुस्तक है। इनकी कविताओं में न तो चुटकुलेबाजी है न फूहड़पन और न चुभन। कविता के क्षेत्र में हुक्का जी और उच्च शिखर पर पहुँचें, मेरी यही शुभकामनाएँ हैं।"

मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि उनका आशीर्वाद पूर्णत: फलीभूत हो रहा है। मेरी ओर से उनको शत्-शत् नमन।

बी-14, नई बस्ती बिजनौर (उ.प्र.)

49. डॉ. राम स्वरूप आर्य : विचारपूर्ण वक्तव्यों के विवेचक

डॉ. नितिन सेठी
एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

महान विचारक प्लेटो ने लिखा है, ''जब हम कुछ सोचते हैं तो अपनी आत्मा से सम्वाद करते हैं।'' आत्मसंवाद की यही अन्तर्प्रक्रिया हमें कुछ ऐसे जीवन सूत्र पकड़ा जाती है जिनके माध्यम से हम मानवता के चिंतन की ओर अनुप्रेरित और अग्रसर होते हैं। इस प्रक्रिया में हम मनुष्यबोध का भाव प्रदर्शित करते हैं और अपने सजग मानव होने का परिचय भी प्रमाणित करते हैं। मानव को आजीवन अनगिनत अनुभव प्राप्त होते हैं और वह उन पर विचार भी करता है। ऋग्वेद का वचन है, ''कद व ऋतं कद व नृतं क्व, प्रजा'' अर्थात् क्या उचित है, क्या अनुचित है, यह निरंतर विचार/विचारपूर्ण बात ही समाज में समादृत की जाती है और ऐसे ऋतमना व्यक्तित्व भी उतना ही आदर और सम्मान समाज में पाते हैं। स्मृतिशेष डॉ. रामस्वरूप आर्य जी भी एक ऐसे ही समादृत साहित्यकार और समालोचक रहे हैं जिन्होंने 'परंपरा और आधुनिकता' तथा 'चितंन-अनुचिंतन' के पटल पर बहुत ही वैचारिक और विशिष्ट चित्र साहित्य जगत् को प्रदान किये हैं।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का कृतित्व बहुआयामी रहा है,हिंदी भाषा व संरचना पर रचित आपकी पुस्तकें भाषा को सही ढंग से सीखने-सिखाने का सुंदर माध्यम हैं। कृष्ण भक्त कवि सूरदास के काव्य का गहन विश्लेषण सूर साहित्य की दिशा में नये द्वार खोलता है। 'भ्रमरगीत सार' भी सूर के पदों को भक्ति व ज्ञान के परदे से देखने का सुंदर साधन है। बिहारी सतसई सार व बिहारी सतसई सुधा जैसे ग्रंथ गीतिकालीन कवि बिहारी की गागर में सागर भरने जैसी उक्ति का विशद् विवेचन प्रस्तुत करते हैं। इसी क्रम में गांठ, मैला आंचल, ध्रुवस्वामिनी, यशोधरा, कुरुक्षेत्र, कालजयी जैसी कृतियों पर आपकी उज्जाग्रत कलम न्यायपूर्वक जहाँ सम्पूर्ण समीक्षा की कोटियों को पूर्ण करती है, वहीं पाठकों के सामने अनेक नये तथ्य भी लेकर आती है। सजग दृष्टि का संधान और गवेषणापूर्ण भाषा का प्रयोग कर आप एक साहित्य ऋषि के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं और सृजन के कर्मक्षेत्र को अपने शब्दसुमनों से महकाते आये हैं।

विचारों की रंगभूमि में आपकी मेधावान कलम ने 'विचार बिंदु','परम्परा और आधुनिकता','चिंतन-अनुचिंतन जैसी गवेषणात्मक कृतियाँ आपने पाठकों को प्रदान की हैं जिनमें एक ओर तो विभिन्न साहित्य मनीषियों की आख्यायें हैं, वहीं

दूसरी ओर सांस्कृतिक-सामाजिक-आध्यात्मिक जीवन के अनसुलझे प्रश्नों को भी उठाया गया है। ये कृतियाँ विचारों की ऐसी सरितायें हैं जिनकी एक-एक धारा में अनंत विचार-सिंधु छिपे हुए हैं।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की विचारपूर्ण कृति 'परम्परा और आधुनिकता' में वे अपने प्रथम आलेख में लिखते हैं- **''परम्पराओं का अपना महत्व है किन्तु आधुनिकता को भी नकारा नहीं जा सकता। आधुनिकता को अपना कर ही हम संसार के साथ-साथ आगे कदम बढ़ा सकते हैं।''** सर्वधर्म समभाव का उद्घोव करते हुए मुस्लिम साहित्यकारों ने भी भारतीय संस्कृति के शाश्वत तत्वों का गुणगान किया हैं। लेखक ने प्रचुर उदाहरणों द्वारा मुस्लिम कवियों के रामकाव्य का उल्लेख किया है। 'भारतेंदु हरिश्चन्द्र की अप्रकाशित पत्रिकाएँ' लेख में वे भारतेंदु की गौरवपूर्ण साहित्य साधना व दृष्ठि का उल्लेख करते हैं। इसी क्रम में हरिश्चन्द्र चन्द्रिका का भी वर्णन है। लेखक की खोजी प्रवृत्ति हिंदी पत्र-पत्रिकाओं के आदर्श वाक्य जैसे आलेख में प्रतिभासित हुई है। अत्यंत सुंदर आदर्श वाक्यों का संकलन इसमें किया गया है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सौ वर्ष पूर्ण होने पर एक रिपोर्ट भी है जिसमें लेखक ने सभा की अव्यवस्था पर क्षोभ व्यक्त किया है। रसिक शिरोमणि स्वामी हरिदास पर लिखते समय तो मानो डॉ. आर्य जी की कलम ही रससिक्त हो उठी है, **''दिव्य संगीत के सुमेरु स्वामी हरिदास जी के इष्ट श्री श्यामा-श्याम संगीत-संगी हैं। वे राग के समुद्र में सागे-पागे रहते हैं।''**

डॉ. आर्य जी जहाँ अपने विचारों की मणियों से पाठक के अन्तर्मन में प्रदीप्ति उत्पन्न करते हैं, वहीं सफल व्यक्तिचित्र बनाने की कला भी रखते हैं। संपादकाचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा, हिन्दी साहित्य के प्रथम डी.लिट्. डॉ. पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, सुकुमार कवि सुमित्रानंदन पंत, ओज कवि रामधारी सिंह दिनकर जैसे साहित्यमना सर्जकों पर आपके विस्तृत आलेख शोधदिशा के नवीन संकेत दर्शाते हैं। पं. राधेश्याम कथावचक को लेखक राम एजेंट घोषित करता है जो गली-गली रामनाम के मोतियों की माला का प्रचार-प्रसार करते दिखाई देते हैं। डॉ. आर्य जी ने विभिन्न रामकथाओं का गहन मनन-चिंतन-अनुशीलन किया था। पं. पद्मसिंह शर्मा को लेखक सहृदय समीक्षक दर्शाता है। ज्ञातव्य है कि डॉ. रामस्वरूप आर्य जी पं. पद्मसिंह शर्मा जी के साहित्य के प्रति विशिष्ट आदर भाव रखते हैं। अपने एक लेख 'नायक नंगला की तीर्थयात्रा ' में वे पंडित शर्मा जी के जन्मस्थान को साहित्यकारों का तीर्थ स्थान बतलाते हैं। डॉ. आर्य ने पं. शर्मा जी के कृतित्व पर कुछ विशिष्ट पुस्तकों एवं विशेषांकों का सम्पादन भी किया है जिनकी विद्वानों

द्वारा भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है। पं. बनारसीदास चतुर्वेदी प्रख्यात साहित्यकार-सम्पादक-पत्र लेखक व संग्रहकर्ता रहे हैं। डॉ. आर्य जी उनकी सदाशयता व सहायता की भावना को रेखांकित करते हुए लिखते है, ''पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी ने अपना सम्पूर्ण जीवन दूसरों की सेवा, कीर्ति रक्षा एवं प्रोत्साहन में ही व्यतीत कर दिया।'' पं. श्रीराम शर्मा, अमृतलाल नागर, चण्डीप्रसाद 'हृदयेश' के व्यक्तित्व-कृतित्व का आकलन महत्वपूर्ण सूचनायें देता है। जहाँ पं. श्रीराम शर्मा को पत्रकार रूप में लेखक याद करता है, वहीं अमृतलाल नागर को भारतीय संस्कृति का कुशल चितेरा उल्लेखित करता है। नागर जी का समन्वयवादी रूप विशिष्ठ रूप से उकेरा गया है। चण्डीप्रसाद हृदयेश को उपन्यासकार व कहानीकार के साथ-साथ लेखक सफल कवि भी सिद्ध करता है। ज्ञातव्य है कि चंडीप्रसाद जी ने ब्रजभाषा में भी पद रचना की है।

साहित्यकारों के कृतित्व के बारे में तो बहुत कुछ लिखा जाता रहा है परंतु व्यक्तित्व के विभिन्न पहलू बहुधा कम ही सामने आ पाते हैं। डॉ. आर्य की दृष्ठि इस ओर भी गई है। आपने विभिन्न साहित्यजीवटों के जीवन के विविध प्रसंग रेखांकित किये हैं। जयशंकर प्रसाद के महत् व्यक्तित्व के पक्षों को उजागर करता आलेख प्रसाद जी की विनयशीलता, व्यवहार बुद्धि, मुस्कराहट, स्वाभिमान, सरल स्वभाव, काशी के प्रति अनन्य अनुराग जैसे महान् गुणों को पाठकों के समक्ष लाता है। सच ही है, व्यक्तित्व ऐसे ही गुणों के समन्वय का ही नाम है। पं. भोलानाथ शर्मा को डॉ. आर्य ऋषिकल्प गुरुजन ठहराते हैं। संस्मरणात्मक शैली में लिखा गया प्रस्तुत आलेख पंडित भोलानाथ जी की अध्यापन प्रतिभा, उनकी विद्वत्ता और विद्यादान की सात्विक भावना को मानवीयता की पराकष्ठा के आलोक में देखता है। 'सर्वे भवंतु सुखिन:' पंडित भोलानाथ शर्मा जी के जीवन का मूलमंत्र था।

सहृदयी गुरुजन अपने आत्मीय शिष्यों को सदैव याद रखते हैं और उनकी कुशल क्षेम की चिंता करते हैं। 'स्मृतिशेष विजयवीर त्यागी' आलेख प्रखर मेधा के धनी विजयवीर जी की जीवनचर्या, उनकी आत्मीयता, समर्पण भाव व साहित्यिक कौशल दर्शाता है। माँ वाणी के वरद् पुत्र विजयवीर त्यागी मात्र 50 वर्ष की अल्पावस्था में ही स्मृतिशेष हो गये थे। यहाँ डॉ. आर्य की आत्मीयता व स्नेह झलकता है जो नितांत प्रशंसनीय है। यहाँ भारत के परमभगवद्भक्त पात्र महात्मा विदुर की विदुर कुटी का लेखा-जोखा ज्ञानवर्द्धक है। इस बात का दु:ख होता है कि इतना महत्वपूर्ण ऐतिहासिक-आध्यामिक स्थान पूर्णतया उपेक्षा का शिकार है।

वास्तव में 'परम्पर और आधुनिकता','चिंतन-अनुचिंतन', जैसी कृतियाँ डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को एक मौलिक चिंतक, विचारवान व सहृदयी संस्मरणकार, परम्पराओं का सम्मान करने वाला, आधुनिकता का अन्वेषी साहित्यकार सिद्ध करती हैं। आपकी प्रत्येक कृति में शब्दों को ऋद्धिमय रूप में अवस्थित कर विचारों का भावस्नान किया गया है। विचारों से परिपूर्ण चिंतन जब कागज पर आकार लेता है तब आप अपनी कारयित्री प्रतिभा से उसे पाठक के मर्मस्थल तक पहुँचा देते हैं जो नितांत समादरणीय है। आपके यशस्वी जीवन की स्मृतियों को संसार तक पहुँचाने का जो शुभसंकल्प आपके पुत्र डॉ. चंद्रप्रकाश आर्य जी द्वारा लिया गया है, उसे मैं डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि कहूँगा। अक्षर ब्रह्म के सच्चे उपासक को अक्षरों के अक्षत् द्वारा ही सच्चा अक्षय तिलक लगाया जा सकता है। ऐसे ऋषिचिन्तना मनस्वी व साहित्य तपस्वी डॉ. रामस्वरूप आर्य की पावन स्मृतियों को संजोते अक्षर आयोजन पर डॉ. आर्य जी को कोटि-कोटि-कोटि नमन।

सी-231, शाहदाना कॉलोनी, मॉडल टाउन, बरेली

***

50. सरल हृदय व्यक्तित्व : डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ० गजेंद्र बटोही

वरिष्ठ साहित्यकार एवं पत्रकार

बात तब की है जब मैं जनपद बिजनौर के नहटौर कस्बे स्थित विद्युत उपकेन्द्र पर रहते छायावाद के स्तंभ महाकवि 'जयशंकर प्रसाद के कथा-साहित्य का शास्त्रीय अध्ययन' विषय पर शोध-कार्य कर रहा था। विश्वविद्यालय शोध समिति ने मेरा शोध विषय स्वीकृत तो कर दिया था किन्तु कतिपय संशोधन करने हेतु लिख दिया। संशोधन करने के उपरान्त समिति के संयोजक से उस पर स्वीकृति भी अपेक्षित कर दी गई थी।

इसी सिलसिले में जब मैं अपने शोध-निर्देशक से मिला तो उन्होंने बताया कि शोध समिति के संयोजक डॉ. रामस्वरूप आर्य जी हैं, तुम उनसे मिल लो, जैसा वे निर्देशित करेंगे, वैसे ही शोध की नयी रूप-रेखा बना लेना और मेरे हस्ताक्षर कराके उनसे संस्तुति करा लेना।

मैंने आदरणीय डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का पता पूछा और उनके निवास पर पहुँचा। सितम्बर 1986 ई० की बात है, मैं डॉ. आर्य जी के निवास पर पहुँचा, गेट खोलने के बाद अन्दर बरामदे में लगी घंटी बजायी।

खिड़की से किसी ने झाँका। आवाज आई कौन हैं ?

सर मैं... अग्रवाल साहब ने भेजा है आपके पास। "अच्छा आता हूँ।" अन्दर से आवाज आयी।

दरवाजा खुला...मेरे सामने एक दरमियाने कद-काठी, उच्च भाल, सफेद चौड़े मुँह का पायजामा और ऊपर कमीज पहने हुए व्यक्तित्व खड़े थे।

कुछ पल उन्हें देखते हुए "गुरु जी, प्रणाम" कह कर उनके पाँव छुए।

"अरे अरे बस बस इसकी आवश्यकता नहीं।" वे बोले।

जी मेरा नाम.... है और डॉ.... के निर्देशन में शोध कर रहा हूँ।

अच्छा, बहुत अच्छा, बहुत अच्छा कहते हुए धीमी-सी आवाज, में बरामदे में रखी कुर्सियों की ओर संकेत कर कहा , बैठो बैठो ।

बराबर में रखी दूसरी कुर्सी पर स्वयं भी बैठ गये।

"हाँ, अब बताओ कैसे आना हुआ, क्या काम है ?" गुरु जी मैंने पी-एच.डी के लिए आवेदन किया था, विश्वविद्यालय से प्राप्त पत्र दिखाते हुए कहा, ये स्वीकृति पत्र मिला है, इसमें लिखा है कि "रूपरेखा को संशोधित कर संयोजक की संस्तुति लें।"

पत्र हाथ मे लिया, पढ़ा और पूछा-"पूर्व स्वीकृत अपनी पुरानी रूपरेखा लाये हो।"

"जी, लाया हूँ" कहते हुए रूपरेखा उनके हाथ में दी। बड़े इत्मीनान से पूरी रूप-रेखा को पढ़ा, और बीच-बीच में कहते रहे, "बहुत अच्छी रूपरेखा बनाई है। इसमें संशोधन करने की तो कोई आवश्यकता नहीं थी, पर जब विश्वविद्यालय ने पत्र में लिख दिया है तो कुछ परिवर्तन-परिवर्धन तो करना ही पड़ेगा। आपके शोध निर्देशक जी ने क्या बताया।"

"जी, उन्होंने कहा है जैसा गुरु जी (आप) बता देंगे, वैसी ही बना लाना, फिर उनसे संस्तुति कर विश्वविद्यालय भेज देंगे।"

"अच्छा, ऐसा करो, रूपरेखा के इन दो अध्यायों (नाम बताते हुए) को दो-दो भागों में बाँट दो, तुम्हें जितना काम इन पूर्व में बने अध्यायों के उप-शीर्षकों में करना पड़ेगा, उतना ही काम इनके अलग अध्याय करने पर भी करना पड़ेगा, विषयबद्ध छोटे अध्याय हो जाएँगे और अच्छे रहेंगे। शोध समीक्षकों तथा बाद में पाठकों को भी पढ़ने व समझने में भी सुविधा होगी।

अध्यायों को अलग-अलग कर बस ये तीन-चार पृष्ठ ही टाइप करवाना, शोध उद्देश्य में परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है, अपनी सुविधा अनुसार जब

एक अथवा दो सप्ताह में बिजनौर आना हो, ले आना, मैं उसी पर स्वीकृति प्रदान कर दूँगा, तुम्हे विश्वविद्यालय जाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। चिन्ता न करो , सब हो जाएगा।'

इतना सब कुछ समझाने के उपरान्त बोले, ''अरे बातों बातों में, मैं तुम्हें पानी को पूछना ही भूल गया, अच्छा बैठो, मैं अभी आता हूँ'' कह कर अन्दर चले गये, खुद पानी लेकर आ गये। पानी देते हुए बोले, ''चाय लोगे।''

''नही गुरु जी! मुझे अपनी ड्यूटी पर भी जाना है'' और पाँव छूकर चला आया। ये मेरी उनसे पहली मुलाकात थी, किन्तु मुझे उनसे मिलकर यह नहीं लगा कि यह मेरी उनसे पहली भेंट है। मुझे लगा कि मैं उनसे अनेक बार मिल चुका हूँ, अनेक बार बातें कर चुका हूँ, वे पल आज भी मेरी स्मृतिपटल पर अमिट हैं।

इस प्रथम भेंट से मुझे प्रतीत हुआ कि डॉ. आर्य जी सहज, सरल एवं अत्यन्त सहयोगी, मार्गदर्शक एवं विद्यार्थियों अथवा शोधार्थियों पर अपनत्व रखने वाले व्यक्तित्व हैं।

दूसरी भेंट एक सप्ताह बाद हुई, जब मैं अपनी शोध रूपरेखा को संशोधित कर उनकी संस्तुति के लिए, लेकर गया। गेट खोला, बरामदे में जाकर जैसे ही घंटी बजायी, संभवत: उन्होंने खिड़की से मुझे देखकर पहचान लिया था, आया भैया! कह कर दरवाजा खोला और बोले, कर लाये ठीक, टाइप भी करा लाये! लाओ! और मेरे हाथ से रूपरेखा के पेपर लेकर, बैठो कहते हुए खुद भी बैठ गये।

रूपरेखा के पृष्ठों को पलटते हुए कहा, बहुत अच्छी रूपरेखा बना कर लाये हो। कलम लेकर ''संशोधित रूपरेखा की संस्तुति की जाती है।'' लिखकर अपने हस्ताक्षर करते हुए बोले, ''लो इसे डाक से भेज दो, विश्वविद्यालय जाने की भी जरूरत नहीं है और अपना काम मन लगा कर निरन्तर करते रहो। यदि कभी कोई परेशानी हो तो बताना। खूब मन लगाकर अधिक पुस्तकों का अध्ययन करो, जितना अधिक पढ़ोगे, उतना ही और अच्छा काम कर पाओगे। तुम्हारा विषय बहुत जटिल तो है, परन्तु बहुत अच्छा और महत्त्वपूर्ण भी है। इस तरह का शोध-कार्य अभी तक नहीं हुआ है, क्योंकि एक ओर भारतीय काव्यशास्त्र, जिसका अधिकांश साहित्य/पुस्तकें संस्कृत में हैं, और दूसरी ओर जयशंकर प्रसाद जी का क्लिष्ट कथा-साहिय है। तुम्हारी लगन देखकर मुझे लगता है तुम सुगमता से अपना शोध-कार्य समय से पूर्ण कर लोगे। मेरी शुभकामनाएँ हैं।'' ये मेरी उनसे दूसरी भेंट थी।

सितम्बर, सन् 1991 ई० में बिजनौर मुख्यालय पर आने के उपरान्त उनसे

मिलने के अनेक अवसर आये। उनसे भेंट के बाद प्रतीत होता था कि किसी अपने अति निकट संबंधी से मिलकर लौटा हूँ। उनकी सादगी, उनके बात करने का सलीका, समझाने का ढंग और बिना किसी भूमिका के सीधे काम की बात और प्रोत्साहित करने का भाव उनके चारित्रिक गुणों में थे। यदि कभी भी उनसे रास्ते में या किसी अन्य स्थान या कार्यक्रम भेंट हो जाती तो वे अवश्य पूछते, भैया काम कैसा चल रहा है, कितना हो गया है, कब तक पूरा हो रहा है, कोई दिक्कत तो नहीं है, बताना अच्छा.... और सब ठीक चल रहा है, साथ ही यह भी पूछना नहीं भूलते थे कि तुम्हारी नौकरी ठीक चल रही है, अध्ययन के लिए पर्याप्त समय निकाल लेते हो।

एक बार हिन्दी दिवस पर कवि मित्र के यहाँ साहित्यिक आयोजन में आदरणीय डॉ.आर्य जी ने शब्दों की उत्त्पति पर अपने विचार व्यक्त किये। पेड़-पौधे एवं उनकी पत्तियों पर बोलने लगे और स्पष्ट किया कि पेड़ , पत्ते को पत्ता नाम अथवा किसी वस्तु को नाम किस सिद्धांत एवं किस प्रकार मिला है। वे शब्द-व्याकरण के ज्ञाता विद्वान थे। भाषा विज्ञान पर केन्द्रित उन्होंने अनेक पुस्तकों की रचना की है, जो भाषा विज्ञान एवं हिन्दी की उच्चतर शिक्षा के अध्येताओं के लिए अत्यन्त महत्त्व रखती हैं।

जब भी आपसे मिलना होता, आप जिन-जिन अनेक वरिष्ठ एवं स्वनामधन्य विद्वान मनीषियों के संपर्क में रहे अथवा जिनके साहित्य का गहन अध्ययन कर चुके थे, उनके बारे में, उनकी सादगी के बारे में, उनके साहित्य के बारे में, उनसे संबंधित अपने संस्मरण सुनाते थे। बाबू गुलाबराय, सेठ कन्हैयालाल पोद्दार, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, रामधारी सिंह दिनकर , अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध , सोहनलाल द्विवेदी, जनपद बिजनौर के यशस्वी संपादकों पं० रुद्रदत्त शर्मा तथा पं. पद्म सिंह शर्मा जैसे अनेक वरिष्ठ साहित्यकारों एवं अनेक संपादकों आदि के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विषय में उन्हें विस्तृत जानकारी थी।

आप सीधे सरल एवं कोमल मना व्यक्तित्व थे। साधारण पहनावा, कोई बनावट नहीं, घर में कोई शोर-शराबा नहीं, बिल्कुल शांत। मानो किसी ऋषि के आश्रम में आ गये हों। जहाँ केवल साधना, साधना, बस साधना और भक्ति होती है। डॉ. आर्य जी अपने पत्राचार के लिए पते में नाम के साथ 'हिन्दी शोध संस्थान' लिखते थे, वास्तव में आपका निवास एवं वहाँ का वातावरण उसी के अनुरूप था, आपके घर भेंट करने के लिए पहुँचने पर सबसे पहले बैठक में ले जाकर बिठाना , पानी स्वयं लेकर आना तथा बच्चों को चाय बनाने का आदेश

देकर स्वयं साथ बैठते थे, उनसे जितनी बार भी मिलना होता कभी यह अनुभव ही नहीं होता था कि आप कॉलेज में विभागाध्यक्ष हैं, अनेक सम्मानों से सम्मानित व्यक्तित्व हैं, बड़े विद्वान मनीषी हैं, बड़े रचनाकार हैं। प्रतीत होता था कि अपने ही बीच के अपने ही जैसे हैं जबकि आप असाधारण विद्ववता के धनी व्यक्तित्व, प्रातिभ रचनाकार थे। जिस प्रकार पेड़ फलों के लद जाने पर नीचे की ओर झुक जाता है, उसी प्रकार का आपका स्वभाव/व्यक्तित्व था। आप अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के साधक रहे। कम बोलना, अच्छा बोलना आपकी प्रवृत्ति रही। आपके मुख मण्डल पर सदैव एक शालीन शांति एवं निश्चिंतता दिखाई देती थी। मुझे नहीं पता कि आप कभी क्रोधित होते थे। वास्तव में आप सादा जीवन उच्च विचार के पक्षधर रहे।

डॉ. आर्य जी कभी अपने बारे में कोई विशेष चर्चा नहीं करते थे। यदि कहीं आपके परिचय आदि की आवश्यकता पड़ी तो आप सहज में छोटे से पृष्ठ पर छोटा परिचय लिख कर दे देते थे। कभी प्राप्त सम्मानों का जिक्र नहीं करते थे। 2015 ई० में 'धरोहर स्मृति न्यास,' बिजनौर द्वारा प्रदान किया जाने वाला 'जी.एस. सेठी लाइफ टाइम एचीवमेंट सम्मान' के लिए न्यास ने जब उनके नाम की घोषणा की तो वरिष्ठ बाल साहित्यकार एवं बालरोग विशेषज्ञ डॉ. अजय जनमेजय के साथ मैं उनको इसकी सूचना एवं अग्रिम बधाई देने, उनके निवास पर पहुँचा। सूचना पाकर वे अत्यंन्त प्रसन्न हुए। उससे ज्यादा खुशी उन्हें इस बात की थी कि हम लोग उन्हें इसकी सूचना देने के लिए गए। उनका कथन मुझे आज भी स्मरण है- "आप जैसे विद्वान रचनाकारों का मेरे घर आकर मुझे यह सूचना देना ही मेरे लिए बहुत बड़ा सम्मान है।" ये शब्द उनकी विद्ववत्ता एवं शालीनता को रेखांकित करते हैं।

ऐसे विशाल नारिकेल सदृश व्यक्तित्व के धनी श्रद्धेय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की प्रथम पुण्यतिथि पर उनका भावपूर्ण स्मरण करते हुए उन्हें शत शत नमन एवं श्रद्धांजलि।

वृन्दाविहार, चीनपुर फेज-1, काठगोदाम बायपास, ऊँचापुल, हल्द्वानी

***

51 .ऐसा व्यक्तित्व दूसरा कहाँ ?

डॉ. अनिल चौधरी

परम आदरणीय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी सरल, सौम्य, उदार, विद्वान मनीषी थे। उन जैसा कोई दूसरा व्यक्ति मेरे अपने व्यक्तिगत जीवन में सामने नहीं आया।

मैंने आर्य जी को पिछले तीन दशक में जितना जानना चाहा, मैंने उतना ही अपने आप को उलझता हुआ महसूस किया। क्योंकि कभी वे त्याग की मूर्ति के रूप में, कभी दार्शनिक के रूप में, कभी साहित्यकार के रूप में दिखाई पड़ते थे और इन सबसे बढ़कर उनके भीतर इंसानियत कूटकूट कर भरी थी। जिस कारण उनके अनेकों रूप मुझे देखने को मिले।

वास्तव में ऐसा व्यक्तित्व धरा पर ईश्वर कठिनाई से ही भेजता है लेकिन हमारा सौभाग्य रहा है कि हमें ऐसे संन्यासी रूपी वट वृक्ष की छाया हमेशा मिलती रही है।

यह सर्व विदित है कि डॉ. आर्य जी ने साहित्य जगत को विरासत में बहुत कुछ दिया, बिना किसी लालचवश लेकिन जिस सम्मान एवं आदर के वे अधिकारी थे वो सम्मान मेरी दृष्टि से उन्हें नहीं मिला। वे राष्ट्रीय स्तर के साहित्यकार थे, चिंतक थे। उनके पास एक सोच, एक सादगी एक दार्शनिकता थी जिसके रहते उन्हें किसी राष्ट्रीय सम्मान/पुरस्कार से सम्मानित किया जाना चाहिए था लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसके लिए मुझे ही नहीं साहित्य जगत के सभी मनीषियों को खेद रहेगा। डॉ. आर्य जी द्वारा लिखित अनेक ग्रंथ विश्वविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रम की गरिमा बढ़ा रहे हैं। उनके पवित्र मार्गदर्शन में अनेकों छात्रों ने अपने शोधकार्य पूर्ण किये हैं। मुझे यहाँ सुखद अनुभव अवश्य होता है कि बिजनौर की पावन धरती ने उनके मान सम्मान को अवश्य समझा और अनेकों सम्मान/पुरस्कारों से सम्मानित कर स्वयं को गौरवानन्वित किया। हमें यह भी गर्व है कि डॉ. आर्य जी जैसे किरदार ने हमारे जनपद बिजनौर के प्रतिष्ठित महाविद्यालय में अपनी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज कराकर जनपद का गौरव बढ़ाया। उनकी एक बड़ी विशेषता यह भी थी कि समय के प्रति उनकी प्रतिबद्धता देखने को मिलती थी। हमेशा समय के मूल्य को समझकर वे दूसरों के लिए मिसाल बने।

डॉ. आर्य जी जब कभी व्याख्यान देते तो एक-एक शब्द का ऐसा चित्रण खींचते जैसे हम सजीव दृश्य देख रहे हों। एक-एक शब्द को अनेकों किस्सों से जोडते और एक छोर से दूसरे छोर पर पहुँच जाते लेकिन फिर उसी शीर्षक पर आकर उसी बात को आगे बढ़ाते। यही उनकी विद्ववत्ता का सटीक प्रमाण है।

उनकी इस अलौकिक क्षमता और शक्ति को हमेशा साहित्य जगत ने सराहा है। ऐसे प्रबुद्ध व्यक्तित्व पर मैं अदना सा साहित्यकार और क्या लिख सकता हूँ। उनके व्यक्तित्व पर टिप्पणी करना सूरज को दीपक दिखाने जैसा चरितार्थ होगा।

उनकी सहृदयता, विद्वता एवं गुणों के अपरिमित कोष की स्मृतियों को शत शत नमन करता हूँ। उनकी स्मृतियाँ हमारे मन मस्तिष्क में हमेशा हमेशा आदर के साथ अंकित रहेंगी।

जाटान, निकट रम्मू का चौराहा,बिजनौर

***

52. सौम्य बौद्धिकता की प्रतिमूर्तिः डॉ. रामस्वरूप आर्य

डॉ. एन.सिंह, डी.लिट्.,
पूर्व सदस्य, उ.प्र. माध्यमिक शिक्षा सेवा चयन बोर्ड, इलाहाबाद

मैंने जब भी डॉ. रामस्वरूप आर्य को देखा, उन्हें साहित्य पर गम्भीर चर्चा करते हुए ही देखा। मेरा सम्पर्क उनसे सन् 1977 ई० से सन् 1980 ई० तक निरन्तर रहा है। मैं मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ से 'आचार्य पद्मसिंह शर्माः व्यक्तित्व और कृतित्व' विषय पर शोध क़ी प्रतिमूर्ति, वरिष्ठ आलोचक, सरस गीतकार एवं कहानीकार डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा अरुण के निर्देशन में शोध कर रहा था। शोध सामग्री संकलन के संदर्भ में सबसे पहले मुझे पलटन बाजार, देहरादून के 'साहित्य सदन' से 'आचार्य पद्म सिंह शर्मा : व्यक्ति और साहित्य' (स्मृति ग्रंथ) प्राप्त हुआ, जिसके सम्पादक मण्डल के एक सदस्य डॉ. रामस्वरूप आर्य भी थे। इस ग्रंथ से डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की सम्पादन कला, उनके गुरु गम्भीर ज्ञान का मुझे आभास हुआ और मैं अपने शोध के सन्दर्भ में निरन्तर उनके सम्पर्क में रहने लगा। इस सिलसिले में मैं कई बार उनके निवास स्थान नई बस्ती, बिजनौर भी गया। उनसे पत्राचार निरन्तर चलता रहा। उनके दो दर्जन से अधिक पत्र मेरे पास अभी भी सुरक्षित हैं। जिनमें से एक पत्र मैने अपने शोधप्रबंध के परिशिष्ठ में भी दिया था, जिसे मैं यहाँ यथावत् उद्धृत कर रहा हूँ-

नई बस्ती, बिजनौर

1.2.78

प्रियवर, सस्नेह नमस्कार।

आपके 31.12.1977 के पत्र का उत्तर मैंने दिया था किन्तु 16.01.1978 के पत्र से ज्ञात हुआ कि वह आपको प्राप्त नहीं हुआ। समाधान इस प्रकार है-

1. सैयद सज्जाद हैदर साहब कस्बा नहटौर बिजनौर के निवासी तथा पं. पद्म

सिंह शर्मा के मित्रों में थे। इनकी सुपुत्री कुरतुल ऐन हैदर प्रसिद्ध उपन्यास लेखिका तथा पत्रकार (इलस्ट्रेटिड़ वीकली से सम्बद्ध) हैं। इन्हें 'आग का दरिया' उपन्यास पर साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। गत वर्ष 'धर्मयुग' में इनका लेख यू०पी० की रामकहानी प्रकाशित होकर चर्चित हुआ था।

2. 'हिन्दी, उर्दू हिन्दुस्तानी' मूलतः संभाषण ही है। आचार्य जी ने यह भाषण 1932 ई० में हिन्दुस्तानी एकेडमी में दिया था। इसके बाद एक मास के अन्दर ही आचार्य जी स्वर्ग सिधार गए।

3. सामायिक लेखकों के लिए 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग' (डॉ. उदयभानु सिंह) से विशेष सहायता मिलेगी।

4. आचार्य जी की भाषा वैज्ञानिक उपलब्धियों का आकलन 'हिन्दी उर्दू हिन्दुस्तानी' पुस्तक से हो सकेगा। कुछ सामग्री पत्रों में भी मिल सकती है।

5. 'गद्य गौरव' आचार्य जी द्वारा सम्पादित पुस्तक थी, छात्रोपयोगी लेखों का संकलन। मुझे उसका मुखपृष्ठ और और दो चार अन्य पृष्ठ ही उपलब्ध हो सके, पुस्तक नहीं मिल सकी।

रामस्वरूप आर्य

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के इस पत्र से यह स्वमेव प्रमाणित हो जाता है कि वे शोध छात्रों की कितनी निस्वार्थ सहायता करते थे। उनकी ज्ञानवर्धक जानकारियों से मुझे अपना शोध प्रबंध लिखने में बड़ी सहायता मिली। मुझे लगता है कि उनकी इस सहायता के बिना मेरा शोध कार्य पूरा न हो पाता।

शोध के समय एक बार चमत्कार पूर्ण घटना घटी। आचार्य जी हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अठारहवें अधिवेशन की अध्यक्षता करने, मुजफ्फरपुर (बिहार) गए थे। उनका यह अध्यक्षीय भाषण उनकी पुस्तक 'पद्‌म पराग' (भाग-1) में छपा था। एक दिन जब मैं रात को यह सोचते सोचते सो गया कि हरिद्वार से मुजफ्फरपुर की इस यात्रा का कार्यक्रम क्या रहा होगा। लेकिन प्रातःकाल नींद की विभ्रांति में मुझे आचार्य पद्‌मसिंह शर्मा ने स्वयं बताया कि तुम नायक नंगला (आचार्य जी का गाँव) जाना! वहाँ मेरे कक्ष के द्वार के पास एक आला है, जिसका एक किवाड़ टूटा हुआ है। उसमें आपको एक डायरी मिलेगी। उसमें आपको यह पूरा कार्यक्रम मिल जाएगा। अगले दिन प्रातः ग्यारह बजे मैं नहा धोकर सहारनपुर सूचना कार्यालय पहुँचा। वहाँ पर लगभग सारे समाचार पत्र और सरकारी पत्रिकाएँ मिल जाती थीं। उस दिन वहाँ पर मुझे उत्तर प्रदेश का पत्रकारिता विशेषांक मिला, जिसमें डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का एक लेख छपा

था। जिसमें उन्होंने लिखा था कि यह डायरी मुझे आचार्य पद्मसिंह शर्मा के घर के एक आले से मिली है, जिसका एक किवाड़ टूटा हुआ था और उस डायरी से डॉ. रामस्वरूप आर्य ने आचार्य पद्मसिंह शर्मा के हरिद्वार से मुजफ्फरपुर प्रवास का एक सप्ताह का कार्यक्रम तिथिवार दर्ज किया था। उनके इस लेख से मेरी शंका का समाधान तो हुआ ही, साथ ही पराभौतिक मानसिक शक्ति का आभास भी हुआ।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ने अपने जीवन में न जाने कितने शोधछात्रों को शोध कराया, कितनों को जीवन में स्थापित होगे में सहायता की। उनके शिष्यों की लम्बी सूची है, जो हरक्षेत्र में कार्यरत हैं। इसके साथ ही डॉ. साहब अच्छे सम्पादक, शोधकर्ता के साथ बहुत ही उत्कृष्ट आलोचक भी थे। इसका प्रमाण है उनकी कृति 'परम्परा और आधुनिकता'। वे लीक पर चलने वाले आलोचक नहीं थे, बल्कि समकालीन दुनिया के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने वाले विद्वान थे। तभी तो उन्होंने लिखा है कि **''परम्पराओं का अपना महत्व है किन्तु आधुनिकता को भी नकारा नहीं जा सकता। आधुनिकता को अपना कर हम संसार के साथ-साथ आगे कदम बढ़ा सकते है।''** उनकी इस पुस्तक में जहाँ उनके समय के कुछ संघर्षशील लेखकों के संस्मरण हैं, वहीं ख्यातिलब्ध साहित्यकारों तथा आचार्य पद्मसिंह शर्मा, पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, अमृतलाल नागर, श्रीराम शर्मा, प्रेमचंद, काका हाथरसी, दुष्यंत कुमार जैसे विद्वान लेखकों पर भी संस्मरणात्मक लेख हैं।

डॉ. रामस्वरूप आर्य आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी यश : काया उनके चाहने वालों के हृदय में आज भी विद्यमान है। उनका लेखन उन्हें लम्बे समय तक जिन्दा रखेगा। डॉ. साहब को मैं अपनी विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

110, विनोद विहार, मल्हीपुर रोड, सहारनपुर

***

53. श्रद्धांजलि के पुष्प

श्रीमती रजनी सिंह
वरिष्ठ साहित्यकार, शिक्षाविद् एवं समाज सेविका

डॉ. राम स्वरूप आर्य हिन्दी साहित्य के पुरोधा थे। वे विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। डॉ. आर्य जी एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली की हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोध उपाधि समिति के संयोजक तथा विद्या-परिषद् और कार्यकारिणी-परिषद् के सदस्य रहे। डॉ. आर्य के लेखन से जब मैं परिचित हुई तो हतप्रभ रह गई। दो दर्जन से अधिक प्रकाशित पुस्तकें तथा अनेक संपादित ग्रंथ और पत्रिकाएँ उनकी कलम के साक्षी हैं। कहा जाता है कि ''साहित्यकार इस संसार से भौतिक रूप से चला जाता है लेकिन वास्तविकता में वह सदैव अपनी रचनाओं के कारण जीवित रहता है।'' यह साक्ष्य डॉ. आर्य जी को अमर करता है। डॉ. रामस्वरूप आर्य जी इस प्रकार मेरे हृदय के कोने में अपना स्थान बनाए हुए हैं। उन्होंने मेरी पुस्तक 'हिन्दी साहित्य का काव्यात्मक इतिहास' की समीक्षा से मुझे अनुगृहीत किया था। उन्होंने लिखा था- ''हिन्दी साहित्य का इतिहास काव्य में लिखना श्रमसाध्य और नूतन प्रयास है। यह शोधार्थियों और हिंदी प्रेमियों के लिए बहुमूल्य निधि बनेगा। आपने यह कार्य प्रथम बार 'गागर में सागर' लिखा है।''

वास्तव में डॉ. आर्य जी के लेखन भंडार का अथाह संसार भी विद्यार्थियों और साहित्य जिज्ञासुओं के लिए अमूल्य निधि है। हिंदी भाषा को समृद्ध करने में उनका योगदान युगों-युगों तक मननीय और संचनीय रहेगा। उनका हिंदी और संस्कृत दोनों पर समान अधिकार था। अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों से अलंकृत डॉ. आर्य जी हिंदी साहित्य जगत के नभ में टिमटिमाते सितारे की तरह आजीवन चमकते रहेंगे। उनके चिंतन की यर्थाथता का परिचय उनके निबंध-संग्रह में प्रत्यक्ष नजर आता है। मूर्धन्य साहित्यकारों, संगीतज्ञों और कवियों को उनके साहित्य के प्रति समर्पण को अनमोल भाषा-परिचय से संजोकर पाठकों को रूबरू कराना, प्रशंसनीय कार्य है। हिंदी-भाषा के अनेक अनछुए पहलुओं को उन्होंने अपने अध्यनीय अनुभवों से खुबसूरत पुस्तकीय रूप दिया था। वह रूढ़िवादिता के पुजारी न होकर समय के साथ सोच को परिवर्तनशील बनाकर चलने की सार्थक पहल के समर्थक रहे। अपनी पुस्तक 'परम्परा और आधुनिकता' में उन्होंने बहुत सहज और सरल भाषा में इसका अनुमोदन किया है। प्रतिभा के धनी, प्रतिभाओं का सम्मान करना इनका विशेष गुण था। उनका चिंतन पुरातन

और नवीन का संगम था। एक मूर्धन्य और प्रबुद्ध शिक्षाविद् और साहित्य समीक्षक के शतप्रतिशत गुणों से ओतप्रोत डॉ. रामस्वरूप आर्य जी सदैव विद्यार्थियों, शिक्षार्थियों और जिज्ञासुओं के मन-मंदिर में विराजमान रहेंगे। जाँति-पाँति के संकुचित विचारों से दूर अपने लेखों में मुस्लिम साहित्यकारों, हिन्दी प्रेमियों की प्रशंसा करने में भी उतनी ही ईमानदारी रखते रहे, जितनी हिंदू भाईयों के साथ। भारतेंदु हरिश्चंद्र के पत्रकारिता में अविस्मरणीय प्रयासों की उन्होंने भूरि-भूरि प्रशंसा की। हिंदी का प्रथम समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' 30 मई1826 ई० में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था जिसके सम्पादक श्री युगल किशोर सुकुल थे। स्त्री उपयोगी प्रथम पत्रिका 'बालाबोधिनी' 1 जनवरी 1874 ई० को काशी से प्रकाशित हुई थी जिसके सम्पादक श्री भारतेंदु हरिश्चंद्र थे। नागरी प्रचारिणों सभा की स्थापना श्री श्यामसुंदर दास, पं. राम नारायण मिश्र और शिवकुमार सिंह जी के संयुक्त प्रयासों से काशी में हुई थी। ऐसी अनेक विस्मृत जानकारियों को डॉ. आर्य जी अपने निबंधों के माध्यम से परिचित कराते रहे। उनके सुयोग्य और समर्पित सुपुत्र डॉ. चंद्र प्रकाश आर्य जी इसी परंपरा का निर्वाह करते हुए अपने पूज्य पिताश्री की पुण्य स्मृति में यह 'स्मृति ग्रंथ' निकाल रहे हैं। वह स्वस्थ रहें और साहित्य की सेवा में निरंतर अपना बहुमूल्य परिश्रम लगाते रहें। उन्होंने इसी परंपरा का निर्वहन कर मुझे भी पूज्य डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के लिए कुछ हृदयोद्गार प्रेषित करने का सुअवसर प्रदान किया, मैं हृदय के अंतस से उनका आभार प्रकट करती हूँ। पुन:संवेदनात्मक कामनाओं के साथ।

रजनी विला, डिबाई(बुलंदशहर)

***

54. विनम्रता की प्रतिमूर्ति : डॉ. राम स्वरूप आर्य

श्री दिनेश चन्द्र अग्रवाल 'नवीन'
वरिष्ठ पत्रकार

उत्तर प्रदेश युवा साहित्यकार संघ, धामपुर (बिजनौर) हिन्दी सेवी साहित्यकारों तथा समाज सेवी पत्रकारों का सम्मान करता रहा है। 1981 ई० में मैं उक्त संस्था का सरंक्षक , श्री हरिकान्त शर्मा अध्यक्ष तथा श्री अजय राजपूत सचिव थे। संघ ने अपनी एक बैठक में 18 नवम्बर, 1981 ई० को संपादकाचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा स्मृति समारोह जनपदीय स्तर पर आयोजित करने का निर्णय किया। समारोह में हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकारों तथा पत्रकारों को सम्मानित करने का भी सर्वसम्मति से निर्णय लिया गया। इसी क्रम में बिजनौर से डॉ. राम स्वरूप आर्य जी को

चयनित किया गया। उनके सम्मान के संदर्भ में जब हमने डॉ. आर्य जी से संपर्क किया तो बहुत ही विनम्रता से उन्होंने कहा-"मैं इस योग्य कहाँ... ।" मैंने तथा श्री हरिकांत शर्मा जी ने उनसे कहा कि "आपको धामपुर आना ही है। यह साहित्यिक समारोह आपकी उपस्थिति से गरिमापूर्ण बनेगा।" तो वे कह उठे,- "चलो, जैसी आप लोगों की इच्छा।"

नियत तिथि पर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी धामपुर पधारे। साहित्यकार संघ के पं. रुद्रदत्त शर्मा स्मृति समारोह में सम्मिलित हुए। हमारी संस्था उनकी गरिमामयी उपस्थिति से स्वयं गौरवान्वित हुई तथा उनको 'सरस्वती श्री' की उपाधि से विभूषित किया गया। उनकी विनम्रता और सादगी से पूर्ण व्यवहार तथा आचरण की अमिट छाप मुझ पर पड़ी, जिसको मैं कभी विस्मृत नहीं कर सकता। डॉ. आर्य जी ने अपने सारगर्भित भाषण में पं. रुद्रदत्त शर्मा जी के लिए ये पंक्तियाँ कही थीं -

"जब तक जिये लिखे खबरनामें।
चल दिये हाथ में कलम थामे।"

डॉ. आर्य जी ने कहा था,- **"साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में पं. रुद्रदत्त शर्मा जी की देन महान है। वह हिन्दी पत्रकारिता के दधीचि थे, पत्रकारिता उनका मिशन थी। उन्होंने उस समय के अखिल भारतीय स्तर के समाचार पत्रों का संपादन किया, जिनमें 'इंद्रप्रस्थ' भी हैं, जिसे दिल्ली का पहला समाचार पत्र कहा जाता है । पं. रुद्रदत्त शर्मा को इस पत्र का प्रत्येक अंक डिप्टी कलैक्टर साहब को सुनाने जाना पड़ता था। वे समसामयिक घटनाओं को भी पौराणिक रूप में प्रस्तुत करते थे जबकि खड़ी बोली गद्य उस समय अपने आरम्भिक रूप में था।"**

अंत में विनम्रता तथा सादगी की प्रतिमूर्ति डॉ. आर्य जी की स्मृति को मेरा शत शत नमन।

धामपुर, बिजनौर

***

55. मेरे आदर्श और प्रेरणा स्रोत:श्रद्धेय डॉ. राम स्वरूप आर्य

पं. चन्द्रशेखर शर्मा
एम.ए., बी.एड.

योग्य और संस्कारवान शिक्षक ही विद्यार्थियों के स्वर्णिम भविष्य का निर्माण करते हैं। वर्धमान कॉलेज, बिजनौर का शुभारंभ जुलाई 1960 ई० में हुआ था। मैंने 1961 ई० में इस कॉलेज में बी.ए.(प्रथम वर्ष) मे प्रवेश लिया था। उन दिनों कॉलेज के प्रथम प्राचार्य श्रद्धेय डॉ. श्रीराम त्यागी जी थे। मैं अपनी शुल्क-मुक्ति के संदर्भ में उनसे मिलने प्राचार्य-कार्यालय में गया। उस समय उनके पास डॉ. राम स्वरूप आर्य जी बैठे थे और कला-संकाय के विषयों के छात्र-छात्राओं की विभिन्न समस्याओं का समाधान कर रहे थे। उसी समय मुझे डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के सर्वप्रथम दर्शन हुए थे। उन्होंने बड़े स्नेहपूर्वक मेरी बात सुनी और सहानुभूतिपूर्वक मेरी शुल्क मुक्ति की समस्या का समाधान भी कर दिया। तब से मैं आदरणीय डॉ. आर्य जी के संपर्क में आया और निरंतर आता ही गया।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की उदारता और छात्र-छात्राओं के प्रति स्नेह की अमिट छाप मेरे हृदय-पटल पर जो पड़ी, उसे आज 75 वर्ष की आयु होने पर भी मैं भुला नहीं पाया हूँ। अपने विद्यार्थियों के प्रति उनके हृदय में सदा स्नेहिल वात्सल्प की भावना विद्यमान रहती थी। मैं डॉ. आर्य जी का सदा कृपापात्र और आज्ञाकारी शिष्य रहा। विद्यार्थी-जीवन में प्रगति और उन्नति के अनेकानेक अवसर मुझे उनसे प्राप्त होते रहे। उनके मार्गदर्शन में मैं कॉलेज-पत्रिका का छात्र संपादक, हिन्दी साहित्य परिषद का सचिव , हिन्दी सुलेख प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार, हिन्दी कविता प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान, महाविद्यालय के पुस्तकालय में अस्थायी कैटोलोगर, हिन्दी वादविवाद प्रतियोगिता में सान्त्वना पुरस्कार तथा हिन्दी एकांकी प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान प्राप्त कर डॉ. आर्य जी का स्नेह भाजन बना रहा।

समाजिक तथा शैक्षिक कार्यक्रमों में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की उपस्थिति सदा प्रेरणादायक होती थी। उन्होंने एक बार चन्द्रमणि देवनागरी इंटर कॉलेज, हल्दौर बिजनौर में आयोजित अखिल भारतीय हिन्दी कवि सम्मेलन की अध्यक्षता की थी और अपने अध्यक्षीय भाषण में अपनी विद्वता की अमिट छाप श्रोताओं पर छोड़ी थी, जो हमारे स्मृति-पटल पर सदा के लिए अंकित हो गयी।

डॉ. आर्य जी मृदुभाषी, विद्वान एवं सौम्य शालीन व्यक्तितत्व के धनी थे। उनके विचार और चिंतन अद्वितीय एवं परहित की भावना से ओतप्रोत था। उनके अवसान के पश्चात् अब तो उनकी स्मृतियाँ ही शेष रह गयी हैं।

अंत में उनको श्रद्धापूर्वक नमन...नमन...नमन।

एस.डी.पुरम, बिजनौर।

56. देहलीज के दीपक : डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. निजामुद्दीन

एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी,

बिजनौर में वर्धमान कॉलेज की स्थापना 18 जुलाई, 1960 ई० को हुई थी। इसके साथ ही वर्धमान कॉलेज में हिन्दी-संस्कृत विभाग के अध्यक्ष के रूप में (क्योंकि उस समय तक हिन्दी-संस्कृत के संयुक्त विभाग हुआ करते थे।)सौम्य स्वभाव के लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान डॉ. राम स्वरूप आर्य जी की नियुक्ति अमल में लाई गई। उन्होंने अपने कौशल और गहन अनुभव से इस विभाग को स्नातकोत्तर रूप में प्रसिद्धि दिलाई। वह बहुज्ञ थे, उच्चकोटि के रचनाकार थे, जिसका प्रमाण उनके द्वारा रचित साहित्य है, विविध विषयों में प्रणीत ग्रंथ हैं। शोधप्रविधि, निबंध, आलोचना, संपादन, रेडियो वार्ताएं हैं। भगवान महावीर के 2500 वें परिनिर्वाण महोत्सव के अवसर पर उन्होंने 'वर्धमान' कॉलेज पत्रिका का महावीर विशेषांक निकाला। 'रामचरितमानस' की रचना के 400 वर्ष पूर्ण होने पर उन्होंने एक कुशल संपादक के रूप में 'तुलसी-मानस संदर्भ' ग्रंथ का संपादन-प्रकाशन किया, जिसमें उच्च कोटि के विद्वानों, मनीषियों, आलोचकों के निंबध तथा आलेख संकलित हैं। इसी प्रकार का ग्रंथ है-'सूर-साहित्य-सदंर्भ'। डॉ. आर्य जी ने हिन्दी भाषा और साहित्य पर लगभग दो दर्जन ग्रंथों की सर्जना की। उत्तर प्रदेश सरकार ने उनके विद्वत्तापूर्ण सृजित ग्रंथ-'परंपरा और आधुनिकता' को पुरस्कृत किया है। यह उनके साहित्यिक अवदान की मान्यता का प्रतीक है।

बिजनौर में 1960 ई० में ही मेरी डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से भेंट हुई थी, कई बार उनसे मिलना हुआ और हर बार उन्हें स्मितवदन देखा। वह बड़े शीलवान, मिलनसार, मृदुभाषी, विनम्र,भारतीय मूल्यों को जीने वाले, राष्ट्रभाषा के प्रचारक और पक्षधर, सुलझे हुए समीक्षक थे। उनकी समीक्षात्मक पुस्तकें सभी के लिए परम उपयोगी सिद्ध हुई हैं। उनके शिष्यों में बड़े-बड़े विद्वान हैं। आज डॉ. राम स्वरूप आर्य के सुयोग्य पुत्र डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य उन्हीं के हिंदी विभाग के अध्यक्ष हैं। डॉ. रामस्वरूप आर्य जितने बड़े विद्धान थे, उतने ही बड़े इंसान भी थे। वह इंसान की कद्र करना जानते थे। उनकी विद्वत्ता और विनम्रता के क्या कहने! सोने पर सुहागा!! सच, रसीले फलों से लदा वृक्ष स्वतः झुक जाता है। उनकी सहज प्रकृति में गंगा-यमुना उर्मियां सभी को उर्मिल थीं। मेरे बिजनौर से श्रीनगर, कश्मीर आने में उनका सत्परामर्श भी शामिल था। इस्लामिया कॉलेज,

श्रीनगर ज्वाइन करने के बाद मैं उनके घर भी गया था। यहाँ आने के बाद लखनऊ से निकलने वाली पत्रिका 'रसवंती' में मेरे निबंध/आलेख छपते थे और साथ ही डॉ. रामस्वरूप आर्य की रचनाएँ भी उसमें प्रकाशित होती थीं। मुझे याद हैं जब मैंने कश्मीरी कहावतों और उनमें अन्तर्निहित प्रसंगों/पृष्ठभूमियों पर एक निबंध रसवंती में लिखा तो उन्होंने यह कहते हुए दाद दी कि आपकी शोध परक दृष्टि अति सारवान है। यदाकदा उनसे फोन पर बातें भी हो जाती थीं।

पुष्कल साहित्य के प्रज्ञाशील रचनाकार डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की अब स्मृति शेष है। उनके व्यक्तित्व में अन्तर्भावित औदार्य और औदात्य, सहृदयता और सदाशयता को भला कौन विस्मृत कर सकता है। मैं तो उन्हें देहलीज पर रखे अकंप दीपक मानकर नमन् करता हूँ।

पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी, विभाग, इस्लामिया कॉलेज, श्रीनगर (कश्मीर)

***

57. एक अद्भुत व्यक्तित्व : डॉ. राम स्वरूप आर्य

वैद्य रमेशचन्द्र शास्त्री

एम.ए. संस्कृत, साहित्याचार्य

अस्मिन् परिवर्तनि संसारे मृतः को वान जायते।
रूः जातः येन जातेन यति वंशः समुज्जातिम्।

इस परिवर्तन शील संसार में कौन उत्पन्न नहीं होता और कौन नहीं मरता, केवल उसी का जन्म श्रेष्ठ है जिसके उत्पन्न होने से जाति, वंश, कुल और समाज के साथ देश उन्नति को प्राप्त होता हो। डॉ. रामस्वरूप आर्य जी ऐसे ही विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। उनसे न केवल बिजनौर अपितु समस्त रुहेलखण्ड के विद्वान, हिन्दी भाषा विज्ञ परिचित थे। उन्होंने बिजनौर को अपना निवास स्थान बनाकर समस्त जनपद को गौरवान्वित किया।

उनका व्यक्तित्व ऐसे सरस्वती उपासकों का व्यक्तित्व था, जिनमें कभी अंह भाव नहीं आया। सरलता, सादगी, सार्वभौमिक प्रेम उनके हृदय में सदा निवास करता था। वे सदैव कृत्रिमता से दूर रहे। उन्हें देखकर उनकी विद्वता का कोई अनुमान भी नहीं कर सकता था। सादा जीवन तथा उच्च विचार सदैव उनके जीवन का अभिन्न अंग रहे।

एक बार मैं पर्याप्त विचार करने के पश्चात् उनके पास गया। मेरे मन में शंका थी कि प्रलय के उपरान्त पृथ्वी कैसे बनी ? कैसे बाहर आयी ? पौराणिक गाथाओं के अनुसार भगवान विष्णु ने वराह (सुअर) का अवतार लिया और अपने मुख के

अग्रभाग से जल में निमग्न भूमि को बाहर निकाल लाये। इस गाथा पर मुझे विश्वास नहीं था। मैंने संस्कृत शब्द कोश में वराह शब्द देखा तो वहाँ इसके लिए वाराह शब्द था। अब वारा+आह संधि विच्छेद किया तो वारा शब्द का अर्थ नहीं विदित हो रहा था। इसके लिए मैं श्री डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के निवास पर गया और मैंने उनके सामने अपनी शंका रखी। उन्होंने हिन्दी शब्द कोश निकाला और कहा कि वारा शब्द का अर्थ जल है। उन्होंने अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा कि जल के आहरण कर्त्ता को वाराह कहते हैं। वह सूर्य भी है और वायु भी। इससे अर्थ स्पष्ट हो गया-सूर्य निकला, गर्म हवा चली, जल सूख गया और पृथ्वी निकल आई।

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी में हठधर्मिता कदापि नहीं थी। इसी प्रकार एक बार परिक्षा शब्द पर उनके साथ विचार-विनिमय हुआ। मैंने कहा कि परिक्षा शब्द में छोटी इकार है और डॉ. आर्य जी कहते थे कि बड़ी ईकार है। उन्होंने शब्द कोश निकाला और कहा कि दोनों ही रूप ठीक हैं। जहाँ पर,पर उपसर्ग है वहाँ पर+इक्षा= परिक्षा शब्द बनेगा और जहाँ परि उपसर्ग है, वहाँ सवर्ण आधार होगा तथा परीक्षा शब्द बनेगा। इस प्रकार बिना किसी हठधर्मिता के डॉ० आर्य जी ने मुझे आश्वस्त कर दिया। डॉ. आर्य साहब को मिथ्या प्रशंसा अच्छी नहीं लगती थी। यदि किसी पुस्तक की समीक्षा उन्हें करनी पड़ी और वह एक प्रकार से प्रशंसनीय नहीं है तो वे ऐसी भाषा का प्रयोग करते थे, जहाँ पुस्तक की कमियों के साथ उसका कुछ गुण भी पता चल जाये अर्थात् मध्यम मार्ग अपनाकर अपने धर्म का निर्वाह कर देते थे।

श्री डॉ. रामस्वरूप आर्य जी में अभिमान का अल्पांश भी नहीं था। यदि किसी ने उनके लेखों में किसी शब्द की आलोचना की और उसे अशुद्ध घोषित किया तो वे बुरा नहीं मानते थे अपितु आलोचक के कथन की सत्यता पर स्वयं भी विचार करते थे और उस पर अन्यों से भी परामर्श लेते थे। ऐसी घटना मेरे साथ भी अनेक बार हुई जबकि वे ऐसे शब्द की शुद्धता पर प्रमाण स्वरूप पाणिनी के सूत्र भी लिखकर ले गये।

उनके निर्देशन में अनेक विद्यार्थियों ने शोधकार्य कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की किन्तु किसी से भी उन्होंने पारिश्रमिक के रूप में कुछ नहीं लिया जबकि आज के निर्देशक तो अपने शोधकर्त्ताओं से पर्याप्त राशि की इच्छा ही नहीं करते अपितु कुछ तो स्पष्ट माँग भी करते हैं। सादगी तो डॉ. आर्य जी के व्यक्तित्व का आधार थी। श्वेत शर्ट और क्रीम रंग की पैंट ही उन्हें अधिक प्रिय थी। बहुरंगी

कपड़ों में मैंने उन्हें कभी नहीं देखा। वे सत्य के पुजारी थे। असत्य कथन, असत्य व्यवहार तथा मन, वचन और कर्म में भिन्नता के वे कभी समर्थक नहीं रहे।

आज वे हमारे मध्य नहीं हैं किन्तु वे मर कर भी अमर हो गये हैं। वे ऐसे महापुरुष थे जिनको जरा मरण का भय नहीं था।

गुप्ता जी की चक्की, बी–14, नई बस्ती, बिजनौर

58. डॉ. राम स्वरूप आर्य: अप्रतिम समीक्षक

डॉ. महेश सांख्यधर
एम.ए., पी-एच.डी.

1981 ई० की 'कादम्बिनी' के अप्रैल अंक में, मेरी प्रथम पुरस्कार प्राप्त कविता समस्यापूर्ति स्तंभ के अन्तर्गत छपी थी। 30 या 31 मार्च को मुझे डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का पोस्टकार्ड मिला। उस समय वह बिजनौर के वर्धमान कॉलेज में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष थे और नई बस्ती में रहते थे। यह मेरा डॉ. आर्य जी से प्रथम पत्र–परिचय था। इसके बाद साहित्यिक कार्यक्रमों मे उनसे भेंट होने लगी। 'साहित्य संगम' की काव्य गोष्ठियों में कविवर जयनारायण अरुण मुझे बुला लिये करते थे। वहाँ कवियों और विद्वानों का जमावड़ा होता रहता था।

दैनिक बिजनौर टाइम्स के संपादक श्री बाबूसिंह चौहान प्रतिष्ठित एवं निर्भीक पत्रकार थे। वह डॉ. आर्य जी का बहुत सम्मान करते थे। अतः वहाँ प्रायः डॉ. आर्य जी से भेंट हो जाती थी। एक दिन वह मुझे अपने आवास पर ले गये। वहाँ वार्तालाप के मध्य पता चला कि वह बरेली के मूल निवासी हैं तथा बरेली कॉलेज, बरेली में अध्यापन–कार्य कर चुके हैं। इसके बाद डॉ. आर्य जी के यहाँ आना–जाना होता रहता था। उनकी समीक्षाएँ प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। वह हिन्दी के दो–चार अग्रगण्य समीक्षकों में से एक थे।

जब कभी डॉ. आर्य जी से चर्चा होती थी, तब वह शब्दों की व्याख्या बताया करते थे। एक बार 'हाथी' शब्द के विषय में उन्होंने मुझे बताया कि अपनी सूँड से हाथ का काम लेने के कारण उसे हाथी या हस्ती कहा गया है। डॉ. आर्य जी बहुत सहज और सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। वह प्रायः शहर में घूमते हुए मिल जाते थे। उन्होंने सैकड़ों पुस्तकों की भूमिकाएँ लिखी हैं तथा शोधपूर्ण समीक्षाओं की रचना की है। उनके लिखे पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं।

बिजनौर छोड़े मुझे पूरे सात वर्ष हो गये हैं। बिजनौर जब भी जाता था, डॉ. आर्य जी से मिलकर आता था। मित्रों से उनका समाचार जान लेता था। डॉ.

अरविन्द शर्मा (संपादक 'कनकप्रभा') से उनके विषय में चर्चा अवश्य होती थी। डॉ. आर्य जी, डॉ. गिरिराज शरण अग्रवाल के गुरु थे। उनके निर्देशन में ही डॉ. अग्रवाल ने पी-एच.डी. उपाधि-प्राप्त की थी।

बहुत विनम्रता एवं क्षमायाचना सहित अनचाहे कहना चाहता हूँ कि डॉ. आर्य साहब जब भी मिलते थे तो यह अवश्य कहते थे कि "आपके कारण बिजनौर का नाम बहुत दूर-दूर तक है।" मैं जानता हूँ कि ऐसा कुछ नहीं है। यह उनका मेरे प्रति अपनत्व तथा स्नेह ही था। मुझे लगभग डेढ़ माह पूर्व पता चला कि डॉ. राम स्वरूप आर्य जी इस संसार से चले गये हैं। वह लोगों के हृदयों और हिन्दी साहित्य में सदा अमर रहेंगे। उन्हें मेरी विनम्र श्रद्धांजलि।

सिद्ध बरौलिया, बिल्सी, बदायूँ , उ.प्र.

***

59. कीर्तिशेष डॉ. रामस्वरूप आर्य

रमेश माहेश्वरी राजंहस

हिन्दी साहित्य की पहचान कहे जाने वाले स्व. डॉ. रामस्वरूप आर्य जी के विषय में कुछ कहा जाना मुझ जैसे अल्पज्ञ के लिए अंसभव नहीं तो कठिन अवश्य है।

डॉ. आर्य जी जैसा प्रकाण्ड विद्वान अन्यत्र देखने/सुनने को नहीं मिलता और उल्लेखनीय बात यह है कि असीमित विद्वता होने के बाद भी वह जीवन पर्यन्त सहजता और सरलता के लिए पहचाने जाते रहे हैं। उनके विषय में जितना भी कहा जाये, वह सर्वथा अपर्याप्त ही रहेगा।

वाणिज्य का विद्यार्थी होने के पश्चात् भी, मुझे हिन्दी साहित्य से लगाव रहा है। मेरी साहित्यिक सृजन में रुचि को श्री आर्य जी द्वारा सदैव प्रोत्साहित किया जाता रहा। डॉ. आर्य जी सभी साहित्यकारों से बेहद लगाव रखते थे। कभी भी कोई भी साहित्यकार उनके संपर्क में आने पर सदा के लिए उनका अनुरागी तथा अनुगामी हो जाता था। श्री आर्य जी के व्यक्तित्व तथा साहचर्य में चुम्बकीय शक्ति परिलक्षित होती थी।

लघु कथाओं पर मेरी पुस्तक 'मोती से आँसू' पर उनका आशीर्वचन मिलने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ था। समय-समय पर विभिन्न साहित्यिक गोष्ठियों में भी उन्हें सुनने और समझने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ है। डॉ. आर्य जी की स्मृति में स्मृति ग्रंथ प्रकाशित करने का प्रयास प्रशंसनीय एवं स्तुत्य है। अन्त में साहित्य के पुरोधा, दिव्य आत्मा स्व. श्री रामस्वरूप आर्य जी की स्मृतियों को बारम्बार नमन।

827, गंगानगर, बिजनौर

60. यशस्वी विद्वान डॉ. राम स्वरूप आर्य

पं. नित्यांनद मैठाणी

यह जानकर अत्यन्त दुःख हुआ कि डॉ. रामस्वरूप आर्य जी नहीं रहे। उनकी सादगी ही उनका जीवन-दर्शन था। उनको देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि वे दर्जनों पुस्तकों के लेखक होंगे और एक स्नातकोत्तर विभाग के अध्यक्ष रहे होंगे। साहित्य के शोधकर्ता होंगे। मैं कह सकता हूँ कि वे जितने मृदुभाषी थे, उतने ही मानव-जीवन की गूढ़ परिस्थितियों के विश्लेषक भी थे। ज्ञान की विविध अभिव्यक्तियों के वाहक भी थे।

यों तो बिजनौर जिले के कई महापुरुषों के दर्शन मुझे अपने कार्यकाल में आकाशवाणी नजीबाबाद के केंद्र निदेशक के रुप में हुए पर उनमें डॉ. राम स्वरूप आर्य जी अन्यतम स्थान रखते हैं। उन्होंने कई साहित्यकारों के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किए हैं, इनमें से दो के उदाहरण प्रस्तुत करना चाहता हूँ। पहला 'परंपरा और आधुनिकता' ग्रंथ में ऐसे रहस्यों का उद्घाटन किया गया है, जो साहित्य के विद्यार्थी के लिए संग्रहणीय हैं। दूसरा उनके ग्रंथ 'चिंतन-अनुचिंतन' के लेख 'बहुमुखी प्रतिभा के धनी दुष्यंत कुमार' के संबंध में कहना चाहूँगा। दुष्यंत कुमार मेरे साथ इलाहाबाद विश्वविद्यालय में सन् 1952-53 में मेरे सहपाठी रहे थे। डॉ. आर्य जी का उक्त लेख मुझे छू गया था। उन्होंने अपने इस लेख में लिखा था- ''कवि (दुष्यंत कुमार) अपने समय की विंसगतियों से क्षुब्ध है। वह इनमें आमूल परिवर्तन के लिए कटिबद्ध है।'' डॉ. आर्य जी की इस मीमांसा पर मुझे बड़ा संतोष हुआ था।

एक और बात जो सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, मैंने उनके व्यक्तित्व में देखी थी-वह था उनका पारखी होना। वह यह जानते थे कि किससे क्या पाया जा सकता है। यहाँ पर मैं उनके एक पत्र दिनांक 18.6.2015 ई० का एक अंश उद्धृत करना चाहता हूँ- ''विगत पचास वर्षो में आकाशवाणी में बहुत अंतर आ गया है। इस संबंध में आप अपने अनुभव लिपिबद्ध करके यदि प्रकाशित कराते हैं तो उससे नये लोगों को बहुत कुछ नवीन जानकारी प्राप्त होगी।''

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी के साथ व्यतीत किए हुए बहुमूल्य क्षण अब स्मृतियों में ही शेष रह गये हैं । वे मेरे बहुत अच्छे मित्र थे। उनकी भविष्य में पूर्ति तो नहीं हो सकती किन्तु अंतर्मन की कसमसाहट के कुछ शब्द मैंने यहाँ लिखे हैं। और भी कई बातें मेरे मन में उमड़ रही हैं, पर वे फिर कभी। इस समय मैं उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

पूर्व केन्द्र निदेशक , आकाशवाणी नजीबाबाद, उ.प्र.

61. बैकुंठवासी डॉ. राम स्वरूप आर्य

स्वामी बिजनौरी

उस महान आत्मा डॉ. राम स्वरूप आर्य के विषय में लिखना मेरे लिए दुस्साहस ही है। मैं इस योग्य नहीं हूँ कि मनीषी डॉ. राम स्वरूप आर्य के सम्बन्ध में कलम चला सकूँ। उस महान साहित्य पुरोधा के बारे में कुछ भी लिखना मेरी धृष्टता ही होगी।

उस महान सीधे-सादे व्यक्ति को देखकर ऐसा नहीं लगता था कि वह ज्ञान का अथाह सागर था। उन महान भाषा- योगी डॉ. राम स्वरूप आर्य से मिलने के अवसर कम ही मिले लेकिन उनकी मुस्कराहर, उनके स्नेहिल स्पर्श से मन को शांति अवश्य प्राप्त होती थी।

डॉ. राम स्वरूप आर्य जी से उनके आवास पर हुई अन्तिम भेंट मेरे मन:पटल पर अभी तक सजीव है, जो मेरी स्मृतियों से कभी विलुप्त नहीं हो सकती। उनका फोन मिलने पर मैं उनके आवास पर गया। उन्होंने अपना सद्य: प्रकाशित निबंध-संग्रह 'चिंतन-अनुचिंतन' मुझे सप्रेम भेंट किया और उसे पूरा पढ़ने का अनुरोध किया। यह मेरा सौभाग्य ही था कि अभी तक ऐसा साहित्य पढ़ने का अवसर मुझे पहले कभी नहीं मिला था। पुस्तक के पहले ही लेख 'शब्दार्थ चिंतन' ने मुझे डॉ. आर्य जी की शैली का प्रंशसक बना दिया। पूरी पुस्तक को कई बार आद्यन्त पढ़ा। सारे आलेख एक से एक बढ़कर हैं।

परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है कि डॉ. राम स्वरूप आर्य जी का यश निरन्तर बढ़ता रहे और उनकी आत्मा को शांति प्राप्त हो।

साहित्य विहार, बिजनौर, उ.प्र.

***

62. श्रद्धा-सुमन

बलवीर सिंह वीर

एम.ए. अंग्रेजी, राजनीति शास्त्र, समाज शास्त्र

परम पूज्य हिन्दी साहित्य के महान मनीषी परमादरणीय डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का स्वर्गवास मेरी व्यक्तिगत क्षति है। मैं भी इस समय 87 वर्ष की आयु में रोगग्रस्त शय्या पर हूँ। अस्तु, जब जन्म लेते हैं तो मरते भी सभी हैं किन्तु कुछ महान आत्माएँ ऐसी होती हैं जो मर कर भी अमर हो जाती हैं। ऐसी महान आत्माओं में से ही हमारे परम पूज्य स्व. श्रीयुत् डॉ. राम स्वरूप आर्य जी थे। हिन्दी साहित्य को समर्पित, महान अध्येता, सादा जीवन-उच्च विचार के इस

देवता का स्मरण कर कौन धन्य नहीं होगा। मैंने सन् 2000 ई० में अपना प्रथम काव्य-संग्रह 'संवेदना के स्वर' उन्हें आवास पर जाकर भेंट किया था। कुछ दिनों पश्चात् ही मुझे आशीर्वाद के रूप में अपने काव्य-संग्रह की समीक्षा-प्रशंसा के रूप में उनका कृपा पत्र प्राप्त हुआ, जिसका उल्लेख मैंने अपनी गद्य-पुस्तक 'चिंतन के क्षण' में सहर्ष-साभार किया हैं। पूज्य डॉ. आर्य साहब की पुण्य स्मृति में, स्मृति ग्रंथ के प्रकाशन का समाचार जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। संवेदना के इन क्षणों में मैं उनको श्रद्धा-सुमन समर्पित करता हूँ।

ए/6, आदर्श नगर, नजीबाबाद (बिजनौर)

***

63. प्रभावोत्पादक व्यक्तिव के धनी : डॉ. राम स्वरूप आर्य

डॉ. अलका साहू
एम.ए., पी-एच.डी.

वर्ष 1979 ई० में मैंने वर्धमान कॉलेज, बिजनौर, में बी.ए. की कक्षा में प्रवेश लिया था। उस मध्य डॉ. आर्य जी हिन्दी विभाग के अध्यक्ष पद पर शोभायमान थे। वे सौम्यता एवं सादगी के प्रतीक थे तथा अत्यन्त शान्त स्वभाव के प्राध्यापक थे। उनके व्यक्तित्व में गजब का आकर्षण था। मेरे पास हिन्दी एक विषय के रूप में नहीं थी फिर भी मैं उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी। डॉ. राम स्वरूप आर्य जी अनेक उपाधियों से विभूषित थे। 25 से भी अधिक प्रकाशित पुस्तकें, लगभग 10 सम्पादित ग्रन्थ एवं पत्रिकाएँ, कई समितियों एवं परिषदों के सदस्य तथा संयोजक डा. आर्य जी का व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावोत्पादक था।

मुझे डॉ० आर्य जी के दो निबन्ध संग्रह 'परम्परा और आधुनिकता' (1997 ई०) एवं 'चिन्तन-अनुचिन्तन' (2015 ई०) पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उ०प्र० हिन्दी संस्थान लखनऊ द्वारा पुरस्कृत 'परम्परा एवं आधुनिकता' अत्यन्त रोचक 21 शोधपरक निबन्धों का संग्रह है जिसमें उन्होंने प्राचीन एवं आधुनिक हिन्दी साहित्यकारों जैसे भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, स्वामी हरिदास, पं० रुद्रदत्त शर्मा, डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, सुमित्रा नन्दन पंत, रामधारी सिंह दिनकर, पं० बनारसी दास चतुर्वेदी, अमृतलाल नागर, जयशंकर प्रसाद, विजयवीर त्यागी आदि की विशेषताओं को अपनी लेखनी से उजागर किया है। अपने प्रिय छात्र विजयवीर त्यागी के विषय में डॉ. आर्य जी का कथन है- "अपने 38 वर्ष के अध्यापकीय जीवन में अनेक छात्र मेरे सम्पर्क में आये पर विजयवीर त्यागी जैसे प्रतिभाशाली, सभाचतुर और मधुरभाषी युवक मेरे देखने में नहीं आया। अब तो

उसकी स्मृति ही शेष है-

बहुत फूल गुजरे चमन में नजर से
किसी में रंगो-बू ऐसा न पाया।''

इसके अतिरिक्त इस संग्रह के 'मुसलमान कवियों द्वारा श्रीराम स्तवन', 'हिन्दी पत्रपत्रिकाओं के आदर्श-वाक्य', 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सौ वर्ष' एवं 'विस्मृत प्राय: विदुर कुटी' निंबध विशेष रुप से पठनीय हैं।

निबंध संग्रह 'चिन्तन-अनुचिन्तन' (2015 ई०) डॉ० आर्य जी की हिन्दी साहित्य विषयक उनके गहन अवलोकन एवं चिन्तन की अभिव्यक्तियों का संग्रह है। इसमें संकलित 32 निबन्धों में भी 'परम्परा एवं आधुनिकता' का पुट एवं निरन्तरता है। जहाँ एक ओर वे संग्रह में संत कबीरदास, मलिक मौहम्मद जायसी, तुलसीदास, रहीम, प्रेमचन्द जैसे पुराने कवियों एवं साहित्यकारों की रचनाओं को सटीक रूप से प्रस्तुत करके हैं, वहीं दूसरी ओर सामयिक कवियों एवं रचनाकारों जैसे काका हाथरसी एवं दुष्यन्त कुमार को भी 'निकट से' प्रस्तुत करते हैं। पण्डित पद्म सिंह शर्मा के ग्राम नायक नगला की 22 मार्च सन् 1974 की अपनी यात्रा को वे एक तीर्थयात्रा के रूप में मानते हैं।

'चिन्तन-अनुचिन्तन' में उन्होंने जीवन के विविध विषयों एवं पहलुओं को चित्रित किया है। गंगा माता, हिन्दी भाषा, देवनागरी प्रयोग,15 अप्रैल 1933 को 'प्रयाग महिला विद्यापीठ' में आयोजित प्रथम अखिल भारतवर्षीय महिला कवि सम्मेलन, साहित्यिक संशोधन, गांवों की दशा, धर्म और राजनीति, मृत्यु से हम क्यों डरें एवं अन्तिम इच्छा आदि निबन्ध मानव-जीवन के सत्य एवं जीवन क़ी यथार्थता के प्रति उनकी संवेदनशीलता को दर्शाते हैं।

ये दोनों ही पुस्तकें साहित्य तथा समीक्षा का उत्कृष्ठ पहलू प्रस्तुत करती हैं। डॉ. आर्य जी के द्वारा लिखित अन्य रचनाओं को पढ़ने की मेरी इच्छा एवं जिज्ञासा प्रबल होती जा रही है। निश्चय ही, वर्तमान हिन्दी साहित्य के लिए डॉ० आर्य जी का अविस्मरणीय योगदान है। वे आज भी अपनी रचनाओं में जीवित हैं।

अध्यक्षा, समाजशास्त्र विभाग
वर्धमान कॉलेज, बिजनौर, उ०प्र०

***

64. डॉ० रामस्वरूप आर्य : सरल हृदय एवं अध्ययनशील व्यक्तित्व

डॉ० शंकर लाल शर्मा
एम.ए., पी-एच.डी.

साहित्य मनीषी, शिक्षक के रूप में अपने शिष्यों में प्रिय, साथियों में अजातशत्रु, शिक्षक संघ के झमेलों से दूर, साधारण में असाधारण, मनीषा के साक्षात् प्रतिनिधि, अपने मूल निवास बरेली और बिजनौर का समन्वय, जनपद मुख्यालय पर रहते हुए सभी उपनगरों, गाँवों तक एक स्थायी पहचान रखने वाले, जनपद स्तर पर प्रथम स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग के रीडर एवं अध्यक्ष डॉ० रामस्वरूप आर्य को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है।

सन् 1975 से पहले रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली का अस्तित्व नहीं था। उत्तर प्रदेश के सबसे पुराने सम्बद्धता प्रदाता विश्वविद्यालय आगरा से ही इस क्षेत्र के महाविद्यालय सम्बद्ध थे। उन दिनों डॉ० कुन्दनलाल जैन (बरेली), डॉ० जगदीश नारायण अग्रवाल (पीलीभीत), प्रो. महेन्द्र प्रताप (मुरादबाद) के अतिरिक्त डॉ० रामस्वरूप आर्य ही एक परिचित व्यक्तित्व थे। मैंने जब सन् 1978 में सेवा प्रारंभ की तो इस क्षेत्र के ये ही नाम महत्वपूर्ण थे जिनसे हिन्दी विभाग जाना जाता था। आगरा विश्वविद्यालय के तत्कालीन कुलपति डॉ० बालकृष्ण राव के कार्यकाल में हिन्दी विभाग के अन्तर्गत सामान्य हिन्दी को अनिवार्य विषय के रूप में सामान्य अंग्रेजी के साथ जुड़वाने में डॉ० आर्य के योगदान को हिन्दी-विभाग कभी भुला नहीं सकता। इससे एक ओर शिक्षकों के पदों की संख्या बढ़ी दूसरी ओर अंग्रेजी से भयभीत रहने वाले विद्यार्थियों को राहत मिली। डॉ० आर्य जी ने सन् 1975 में आगरा से पृथक होकर रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली बनने पर नये पाठ्यक्रम के निर्धारण, पाठ्य-पुसतकों के संपादन, विधाओं के संकलन-प्रकाशनादि की व्यवस्था में अपने सहयोगियों के साथ मिलकर बड़ी मेहनत की। यद्यपि कुछ प्रकाशकों ने डॉ० आर्य जी को धोखा दिया। उनके श्रम का मानेदय उन्हें नहीं मिला। बरेली से जुड़े डॉ० रामस्वरूप आर्य अपने मित्रों और परिचितों से ही छले गये परन्तु ऐसे लोगों से उन्होंने कभी अपने संबंध खराब नहीं किये।

सन् 1980 में प्रेमचंद जन्म शताब्दी समारोह का बिजनौर में आयोजन हुआ था। स्व. बाबू सिंह चौहान द्वारा इसका आयोजन किया गया था। पुस्तक प्रदर्शनी भी लगी थी। तत्कालीन सोवियत संघ के राजदूत भी उस कार्यक्रम में पधारे थे। डॉ० आर्य से पहली भेंट वहीं हुई। यह परिचय सामान्य से पता नहीं कब विशेष हो गया। यदि डॉ० आर्य धामपुर आते तो मुझसे मिले बिना नहीं जाते, यदि मैं

बिजनौर गया तो या तो विभाग में या उनके आवास, नई बस्ती पर अवश्य ही मिलकर आता। उन्होंने आजीवन मुझ पर अपना स्नेह बनाये रखा। वर्धमान कालेज, बिजनौर जिले का सबसे बड़ा महाविद्यालय है। यहाँ कला, वाणिज्य और विज्ञान संकाय की पढ़ाई होती है। प्रवेश के लिए विद्यार्थियों की प्रथम वरीयता इस महाविद्यालय को दी जाती है। बड़ी संस्था, बड़ी छात्र संख्या और शिक्षक संघ की बड़ी इकाई। प्राचार्य के विरुद्ध शिक्षक संघ और शिक्षणेत्तर संगठन का संयुक्त आंदोलन। आंदोलन लंबा खिंचने लगा। स्थानीय इकाई के सदस्यों की सांकेतिक हड़ताल और परिसर में धरना। मध्यस्थता के लिए विश्वविद्यालय के संगठन ने सर्वसम्मति से मुझे अधिकृत किया। मुरादाबाद से डॉ० बी.डी. कंसल रूटा के तत्कालीन अध्यक्ष ने समझौते के लिए मुझे भेजा। मैं इकाई नेतृत्व के भी निकट था। मेरा उनसे अनुरोध था कि आंदोलन का लम्बा खिंचना हताशा को जन्म देता है। कोई सम्मानजनक मार्ग सुझाया जाये। स्थानीय नेतृत्व ने निर्विवाद रूप से डॉ० आर्य जी का नाम सुझाया। वह आंदोलन डॉ० आर्य जी के प्रयासों से सम्मानजनक समझौते के साथ समाप्त हुआ।

सूर पंचशती समारोह पर 'सूर साहित्य संदर्भ ग्रंथ' प्रकाशित करने की योजना उनके ही संरक्षण में बनी। सूर पंचशती समारोह समिति बिजनौर का गठन, उसकी प्रकाशन-योजना, उसके लिए आलेखों का संकलन, संपादन, प्रकाशन और सहयोग राशि एकत्रित करने के उद्देश्य से संदर्भ ग्रंथ समिति का गठन किया गया, जिमसें रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय बरेली के तत्कालीन कुलपति डॉ० आनंद स्वरूप रतूड़ी के अतिरिक्त डॉ० हरवंश लाल शर्मा, डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, श्री प्रभुदयाल मित्तल, डॉ० सत्येन्द्र, डॉ० जनार्दन शुक्ल, श्री रामनारायण अग्रवाल, श्री सतीशचन्द्र गुप्त, श्री गंगाशरण दीक्षित और श्री शांतिस्वरूप अग्रवाल थे। विशिष्ट सदस्य और सदस्य के रूप में भी श्रेष्ठ प्रतिष्ठित व्यक्तित्व जुड़े थे। इस ग्रंथ के संपादन के लिए डॉ० रामस्वरूप आर्य को सर्वसम्मति से दायित्व सौंपा गया। इस ग्रंथ में डॉ० विश्वनाथ मिश्र, डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी से लेकर डॉ० भगीरथ मिश्र, डॉ० हरवंशलाल शर्मा, डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया, डॉ० सत्येन्द्र प्रभृति हिन्दी विद्वानों के अतिरिक्त डॉ० बी. लक्ष्मैया शेट्टी और डॉ० एस.एन. गणेशन जैसे दक्षिणवर्त्ती सूर मर्मज्ञों के शोधपत्रों सहित कुल संख्या है-इकहत्तर। 679 पृष्ठों तथा परिशिष्ट-तीन के नौ पृष्ठ अर्थात् कुल 688 पृष्ठों के विशाल 'सूर साहित्य-संदर्भ' ग्रंथ ने हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा की।

डॉ० रामस्वरूप आर्य अपने सामाजिक दायित्वों के निर्वाह के प्रति सदैव

सजग रहे। उन्होंने बिजनौर को अपनी उपस्थिति से सदैव गौरवान्वित किया। उनके निधन से हुई क्षति को बिजनौर, रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली, हिन्दी साहित्य जगत् कभी भरपायी नहीं कर सकता।

पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आर.एस.एम. कालेज, धामपुर, बिजनौर

***

65. डॉ० रामस्वरूप आर्य : स्मरणीय व्यक्तित्व

राजपाल सिंह,
वरिष्ठ पत्रकार

हिन्दी-साहित्य-जगत् के मूर्धन्य विद्वान, प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार एवं कुशल समीक्षक डॉ० रामस्वरूप आर्य जी हिन्दी भाषा एवं साहित्य के ऐसे ज्ञान-सागर थे, जिनके समीप पहुंचकर कोई भी व्यक्ति अपनी कठिन से कठिन साहित्य संबंधी समस्या का निदान पा जाता था। वे व्यक्ति की जिज्ञासा का इतनी सहजता से विवेचन करते थे कि आगत व्यक्ति की जिज्ञासा का स्वत: ही समाधान हो जाता था।

वस्तुत: डॉ० रामस्वरूप आर्य जी अपने जीवन-काल में स्वयं एक जीवित साहित्य कोष थे। उन्होंने अपनी हिन्दी साहित्य की साधना से हिन्दी प्रेमियों को अमिट प्रेरणा प्रदान की है, जो सदा उनके स्मृति-पटल पर अंकित रहेगी। हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में हिन्दी पत्रकारिता दिवस (30 मई) के अवसर पर पत्रकारों को वे हमेशा ऐसी सीख देते थे, जो पत्रकारों के लिए सदा उपयोगी सिद्ध होती थी। मुझे डॉ० आर्य साहब अपने लघु भ्राता के समान स्नेह प्रदान करते थे। उनका स्नेह मुझे जीवन पर्यंत कठिन परिस्थितियों में भी सदा संबल प्रदान करता रहेगा। उनकी प्रथम पुण्यतिथि पर मेरा उनको शत्-शत् नमन।

साकेत कालोनी, सिविल लाइन द्वितीय, बिजनौर

***

66. क्या भूलूँ क्या याद करूँ

डॉ० चन्द्रप्रकाश आर्य

बहुत पढ़ा है, सुना है और जाना भी है कि एक दिन इस नश्वर शरीर को पंचतत्व में विलीन होना है। अमृत का घूँट पीकर इस भौतिक संसार में कोई नहीं आया है। जो इस लोक में आया है, वह एक न एक दिन यहाँ से जाएगा अवश्य। ये खुली हुई आँखें अंततः बंद होनी ही हैं परन्तु सब कुछ जानते हुए भी मैं बराबर स्वयं को धोखा दे रहा था कि मेरे पिता जी अभी इस लोक से विदा नहीं होंगे, हम लोगों से अलग नहीं होंगे। इसलिए जब मैंने उनकी इस लोक से विदाई देखी तो मुझे असहनीय आघात लगा, बस सन्न देखता रह गया। पूज्य पिताजी का देह-दीप बुझ चुका था और स्नेह-ज्योति चतुर्दिक दिशाओं में व्याप्त होकर आँखों से ओझल हो गयी। मृत्यु ने अवसान की लोरियाँ सुनाकर उन्हें चिरनिद्रा में सुला दिया। साकार रूप निराकार में परिवर्तित हो गया। तब से दिन पर दिन बीत गए, मास पर मास चले गए और आज पूरे दस मास हो रहे हैं।

कैसे लिखूँ? क्या लिखूँ? क्या भूलूँ? क्या याद करूँ? बार-बार सोचा कि कुछ लिखूँ लेकिन लिख न सका। भीतर का दर्द जैसे मेरी अनुभूतियों की सीमाओं को लाँघ गया है, मुखर शब्द मौन में विसर्जित हो गये हैं। मेरे जीवन की सम्पूर्ण परिधि जिनके वात्सल्य, स्नेह, आशीषों, करुणा, अपरिमित दया और असीमित दान से घिरी हुई है, उनके विषय में मैं क्या लिख सकता हूँ? मेरे हृदय की कभी न समाप्त होने वाली कसक तथा निःशब्द सिसकियाँ और आँखों के सूखे आँसू ही अब मेरा संबल हैं। यही हैं मेरे जीवन के मिलन-बिन्दु, विच्छेद और मिलन के अर्घ्य। असंख्य स्मृतियाँ मेरे अंतर्मन को कुरेदती हैं और मुझे असहाय छोड़कर चली जाती हैं।

अपने जीवन की घनीभूत स्मृतियों पर छाई हुई विस्मृति की धूल की पर्तों को हटाकर सुदूर अतीत में---लगभग आधी शती से पूर्व---झाँकने का प्रयास करता हूँ, तो शैशव की एक घटना धूमिल स्मृति में कौंध उठती है। राम के चौराहे से प्राथमिक विद्यालय, भाटान जाने वाले रास्ते पर एक मकान की छत पर बैठे हुए, एक प्राध्यापक अपने शैशवावस्था के पुत्र को 'सचित्र बाल-रामायण' की ये पंक्तियाँ याद करा रहे हैं-

''नृप दशरथ की गोदी राम। कौशल्या के भरत ललाम।।
गोद सुमित्रा लक्ष्मण नाम। शत्रुघ्न कैकेयी अभिराम।। ''

पंक्तियाँ याद करने वाला पुत्र मैं स्वयं हूँ और याद कराने वाले प्राध्यापक मेरे

पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य हैं जो उस समय वर्धमान कॉलेज में हिन्दी-संस्कृत विभाग के अध्यक्ष थे। उस समय हिन्दी-संस्कृत के संयुक्त विभाग होते थे। पिताजी संस्कृत के छात्रों को 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' पढ़ाते हुए कितने भाव विभोर हो जाते थे, इसका उल्लेख डॉ. राम निवास चतुर्वेदी ने अपने इसी ग्रंथ में प्रकाशित लेख में किया है, जो उस समय वर्धमान कालेज में बी.ए. प्रथम वर्ष के छात्र थे। इससे पूर्व बिजनौर आगमन पर हम लोग सर्वप्रथम शंभा बाजार में पं. शोभाराम जी के मकान में रहे थे, जिसकी मुझे अब कोई स्मृति नहीं है। पण्डित जी से सम्पर्क बराबर बना रहा। वे संस्कृत के विद्वान और सरल हृदय व्यक्ति थे। मेरी आरंभिक शिक्षा प्राथमिक विद्यालय, भाटान में इसी मकान में रहते हुए हुई थी। घर से विद्यालय जाते समय, मेरी माता जी श्रीमती हरप्यारी देवी मुझे छत से देखती रहती थीं।

इसके बाद हम मौहल्ला भाटान में श्री लखपतराय आर्य जी के मकान में आ गये, साथ में श्री शिव बिहारी लाल भटनागर साहब (वरिष्ठ प्राध्यापक, बी.एड, विभाग, वर्धमान कालेज) का परिवार नीचे के हिस्से में ही साथ रहता था। इस समय तक मैं राजकीय इंटर कालेज में प्रवेश ले चुका था। 1965 ई० का भारत-पाक युद्ध आरंभ हो चुका था और पिता जी अपने शोध-कार्य में संलग्न थे। जायसी की भाषा पर कार्य करते हुए उन्होंने बहुत परिश्रम किया था। संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, क्रिया विशेषण, समास, कारक आदि से संबद्ध अनेक स्लिपें बनाई थीं। कोयले की अँगीठी के पास बैठकर, वे देर रात तक कार्य करते रहते थे। 1967 ई० में उन्हें आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त हुई। इस अवसर पर 07 दिसंबर, 1967 ई० को जिला साहित्यकार संघ और पत्रकार संघ द्वारा पिताजी का अभिनंदन किया गया, जिसमें श्री बाबू सिंह चौहान, श्री फतहचन्द्र शर्मा 'आराधक', श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', श्री ईश्वरदयालु आर्य, श्री डंठल, श्री शत्रुघ्न वर्मा, श्री विश्वामित्र शर्मा आदि सम्मिलित हुए थे। 'सूर: एक विश्लेषण' तथा 'भ्रमरगीत सार' कृतियाँ इसी समय लिखी गयीं।

पूज्य पिताजी अपने शिष्यों के प्रति बहुत उदार थे। घर पर उनके अनेक शिष्य आते रहते थे। इनमें श्री विजयवीर त्यागी, श्रीमती चन्द्रावती, श्रीमती उषा जैन, श्री सीताराम शर्मा, श्री विकारूल हसन आदि को मैंने तभी देखा था। प्रसिद्ध कवि और गीतकार श्री विजयवीर त्यागी बिजनौर से विदा लेकर मुंबई जाते समय पिताजी से आशीर्वाद लेने आये थे। तब पिताजी ने उनकी डायरी में एक पंक्ति लिाी थी, जो उन्हें आजीवन स्मरण रही- **''विजय वीर की सदा है होती''**

श्री विजयवीर त्यागी जी से पिताजी का सम्पर्क जीवन भर बना रहा। उनके निधन पर जब दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' ने स्मृति परिशिष्ट प्रकाशित किया तो पिताजी ने उनकी स्मृति में 'किसी में रंगों–बू ऐसा न पाया' शीर्षक लेख लिखा था।

पिताजी कई वर्ष तक जिला साहित्यकार संघ के प्रधान तथा धामपुर के डॉ० श्यामबहादुर वर्मा मंत्री रहे। साहित्यकार संघ की अनेक गोष्ठियाँ भाटान वाले मकान में हुई थीं। श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' के 'धरती का कर्ज' संग्रह की कविताएँ, श्री त्रिलोकीशरण डंठल की 'एक थीं श्रीमती सिंघानिया', डॉ० चन्द्रपाल शर्मा 'मधु' के सुमधुर गीत (मीत पुरानी सुधियों के अंबर पर तिरते आए, जैसे कोई विजन सरिता में पंकज बहता जाए), श्री हरीश खुराना 'प्रेमी' की 'बलिदान की बेला', श्री अशोक जैन 'रश्मि' (अब श्री हुक्का बिजनौरी) की 'हलवाई की बेटी' आदि कविताएँ मैंने इन्हीं गोष्ठियों में सुनी थीं। पिताजी की आरंभिक कविताएँ इन्हीं दिनों लिखी गयी थीं। उनमें नूतन और पुरातन का सुखद समन्वय था। ब्रजभाषा कवियों के असंख्य कवित्त एवं सवैये, आधुनिक कवियों में प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी, दिनकर जी, नीरज जी तथा उर्दू शायरों की अनेक पंक्तियाँ बरबस उनके होठां पर आ जाती थीं।

उनके पास साहित्यकारों के विविध प्रसंगों का अक्षय भंडार था। कक्षा में अध्यापन करते समय अथवा कालेज के हिन्दी विभाग में बैठे हुए वे प्राध्यापकों को साहित्यकारों से संबंधित अनेक प्रेरक प्रसंग एवं घटनाएँ सुनाते रहते थे।

उन दिनों आर.एस.एम. कॉलेज, धामपुर (बिजनौर) के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष श्री सेवक वात्स्यायन द्वारा महाकवि जयशंकर प्रसाद जी के 'आँसू' काव्य की परंपरा में लिखित 'अर्थी' काव्य की व्यापक चर्चा थी। 'अर्थी' काव्य के द्वितीय पृष्ठ पर पिता जी द्वारा दो पंक्तियाँ लिखी हुई हैं–

अर्थ भरी 'अर्थी' पढ़ी पाया अति आनन्द।
एक बार मन में जगे, फिर 'आँसू' के छंद।।

इसके बाद हम नई बस्ती स्थित अपने आवास में आ गए थे। बराबर में श्री भटनागर साहब का परिवार भी रहता था। यहाँ आकर पिताजी ने अपनी पुस्तकों तथा पत्रिकाओं के संग्रह को व्यवस्थित किया। 'कल्याण' के विशेषांक, 'सरस्वती', 'प्रभा', 'मर्यादा', 'चाँद', 'माधुरी', 'सुधा', 'साहित्य–संदेश', 'समालोचक' आदि पत्रिकाओं की फाइलें तैयार कीं। कालान्तर में 'समीक्षा', 'प्रकर', 'परिषद–पत्रिका', 'सरिता', 'वीणा', 'कल्पना' की फाइलें, अनेक साहित्यकारों के पत्र, पालिभाषा की पुस्तकें, अमृतलाल नागर के उपन्यास तथा ब्रज की विरही गोपिकाओं

की विभिन्न मन:स्थितियों के चित्रों सहित 'उद्धवशतक' की कापी दीमकों की भेंट चढ़ गए। यहीं पिताजी के निर्देशन में शोध-कार्य करने वाले शोधार्थी आते रहते थे। बाहरी लोग हमारे घर भी रुक जाते थे। बाहर से आने वाले शोधार्थियों में श्री रामाभिलाष त्रिपाठी (अलवर, राजस्थान), श्री गिरिराज शरण अग्रवाल (संभल), श्री शंभुशरण शुक्ल (पीलीभीत), श्री मुरारीलाल शर्मा (बरेली) आदि थे। इन दिनों पं. बनारसीदास चतुर्वेदी की प्रेरणा से पं. पद्मसिंह शर्मा की जन्म शताब्दी मनाई गई थी, जिसका समारोह हरिद्वार में हुआ था। पिताजी इस समारोह के स्वागत मंत्री थे। चतुर्वेदी जी के लगभग सौ पत्र अब भी सुरक्षित हैं, जिनमें अनेक साहित्यिक प्रसंग हैं। पं. पद्म सिंह शर्मा स्मृति ग्रन्थ के संपादक के रूप में पिताजी ने पर्याप्त श्रम किया था। शर्मा जी के पैतृक गाँव नायक नगला (चांदपुर) की यात्रा के समय जो दुर्लभ सामग्री पिताजी को प्राप्त हुई थी, वह उन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद को दान कर दी थी।

इसी बीच प्रसिद्ध पत्रकार श्री बाबू सिंह चौहान ने पिताजी के अतिथि संपादन में दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' का पं. पद्मसिंह शर्मा विशेषांक प्रकाशित किया था, जो सुदूर क्षेत्रों तक पहुँचा था। मुझे आज भी स्मरण है कि जब इस अंक की एक भी प्रति नहीं बची, तब श्री चौहान साहब ने यह विज्ञप्ति निकाली थी कि जिनके पास यह अंक है, वे पैसे लेकर यह अंक कार्यालय में दे जाएँ। तब कुछ लोग यह अंक दे गये थे। पिताजी के अतिथि संपादन में 'बिजनौर टाइम्स' का बहुचर्चित पं. रुद्रदत्त शर्मा विशेषांक भी प्रकाशित हुआ था। इन दिनों युवाओं में श्री चन्द्रमणि रघुवंशी द्वारा संपादित 'नई उमर की नई फसल' पत्र (प्रथम अंक 14 दिसम्बर 1969 ई० तथा अंतिम अंक 19 मई 1975 ई० को प्रकाशित) की बड़ी धूम थी। प्रत्येक अंक के मुखपृष्ठ पर छपने वाला इसका आदर्श वाक्य पिताजी ने लिखा था, जिसकी दो पंक्तियों में से एक पंक्ति ही अब मुझे याद रह गयी है-"नई उमर की नई फसल नवल प्रेम अनुरागे।" मुझे उक्त पत्र की एक भी प्रति न तो संपादक श्री चंद्रमणि रघुवंशी तथा उप संपादक श्री हुक्का बिजनौरी से मिल सकी, और न ही मेरे पास है, जिससे मैं इस आदर्श वाक्य की दूसरी पंक्ति लिख पाता।

1974 ई० में 'रामचरितमानस' के रचना-काल की चार सौ वीं जयंती तथा इसके पश्चात् महाकवि सूर की पांच सौ वीं जयंती के उपलक्ष्य में पिताजी के संपादन में क्रमशः 'तुलसी मानस संदर्भ' और 'सूर साहित्य संदर्भ' ग्रंथों का प्रकाशन हुआ, जो पर्याप्त लोकप्रिय हुए। उन्होंने उक्त ग्रंथों की सीमित प्रतियाँ लेने के अतिरिक्त प्रकाशक से कुछ भी नहीं लिया था। वस्तुतः उन्होंने इन ग्रंथों

का संपादन धनलिप्सा अथवा यशलिप्सा हेतु नहीं किया था अपितु यह तो उनका उन कालजयी कवियों के प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन था, जिनका भारतीय समाज सदा ऋणी रहेगा। एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली की स्थापना के समय पिताजी ने हिन्दी भाषा को अनिवार्य विषय के रूप में सामान्य अंग्रेजी के साथ स्वीकृत कराने में अथक परिश्रम किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने नवीन पाठ्यक्रम के संदर्भ में पाठ्य पुस्तकों के संपादन, संकलन एवं प्रकाशन में भी यथाशक्ति योगदान दिया था किन्तु उन्हें अपने श्रम का उचित प्रतिदान प्राप्त नहीं हो सका। इन प्रसंगों और घटनाओं का उल्लेख साहित्य-सेवी डॉ. शंकर लाल शर्मा ने अपने इसी ग्रंथ में प्रकाशित लेख में किया है।

मेरे पूज्य पिता जी अध्ययन, शिष्टाचार और उदारता के संगम थे। विपरीत व्यक्ति के लिए भी उन्होंने अपने हृदय को कभी मलिन नहीं होने दिया। हिन्दी सेवा की नि:स्वार्थ भावना उनके हृदय में सदा विद्यमान रही। उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों की खोज के अन्तर्गत अवैतनिक निरीक्षक के रूप में 300 पांडुलिपियों के विवरण तैयार कराए, जिसका साभार उल्लेख नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की वार्षिक रिपोर्टों में भी किया गया है। पिता जी के साथ मैंने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, डॉ० रामकुमार वर्मा, श्री उपेन्द्र नाथ 'अश्क', डॉ० जगदीश गुप्त, पं. सीताराम चतुर्वेदी आदि साहित्यकारों के दर्शन किये थे। पिता जी से मिलने अनेक विद्वान घर भी आये जिनमें डॉ० अम्बाप्रसाद 'सुमन', डॉ० लक्ष्मी नारायण दूबे, श्री क्षेमचंद्र 'सुमन', डॉ० भोलाशंकर व्यास, डॉ० विजयपाल सिंह, डॉ० विजय शंकर मल्ल, पं. गयाप्रसाद शुक्ल, डॉ० हरिदत्त शास्त्री, डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया, डॉ० श्याम बहादुर वर्मा, डॉ० रमेशचन्द्र मिश्र, श्री फतहचन्द्र शर्मा 'आराधक', डॉ० श्यामप्रकाश, डॉ० कैलाशचन्द्र अग्रवाल, श्री कुलदीप नारायण 'झड़प' की स्मृति मुझे आज भी है।

इसके बाद के दशकों में पूज्य पिताजी ने सौ से अधिक पुस्तकों की समीक्षाएँ लिखीं, जिनमें डॉ० रामकुमार वर्मा, महादेवी वर्मा, डॉ० हरिवंश राय बच्चन, डॉ० अंबाप्रसाद 'सुमन', डॉ० भोलानाथ तिवारी, डॉ० विजयपाल सिंह, पं. सुधाकर पाण्डेय, डॉ० शांति जोशी, डॉ० कुँअर बेचैन, श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', डॉ० कौशलेन्द्र पाण्डेय, डॉ० रामेन्द्र पाण्डेय, श्री बाबूसिंह चौहान, पत्रकार नारायण दत्त, डॉ० गणपतिचन्द्र गुप्त, डॉ० वेदप्रताप वैदिक, डॉ० अजय जनमेजय, श्री वी.पी. गुप्ता, डॉ० सुरेशचंद्र गुप्त आदि की पुस्तकों की समीक्षाएँ मेरी स्मृति में हैं।

पिताजी ने पचास से अधिक पुस्तकों की भूमिकाएँ भी लिखीं, जिनमें श्री हितेश कुमार शर्मा की अनेक पुस्तकें, अपने शोध छात्रों डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी, डॉ० उषा जैन, डॉ० मुरारी लाल शर्मा, डॉ० ओमदत्त आर्य के शोध प्रबंध, श्रीमती सुमन चौधरी, पं. राजेन्द्र कुमार शर्मा, डॉ० ज्ञानेशदत्त हरित, डॉ० सविता मिश्रा, डॉ० बुद्धिप्रकाश शर्मा, डॉ० दिग्विजय चौधरी आदि की पुस्तकें सम्मिलित हैं।

प्रसिद्ध पत्रकार 'चिंगारी' संपादक डॉ० सूर्यमणि रघुवंशी ने जब वर्धमान कालेज से छात्र रूप में विदाई ली, तब उन्होंने पिताजी से जीवन की सफलता का मूलमंत्र माँगा। पिताजी ने स्नेह सिंचित होकर उनके सिर पर हाथ रखकर मंत्र दिया था, "**सदैव निष्कपट भाव से प्रशंसा करो, वह प्रसन्न होगा तो तुम्हें भी प्रसन्नता का आशीर्वाद मिलेगा।**" इस घटना का उल्लेख दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' के संपादक वरिष्ठतम पत्रकार श्री चन्द्रमणि रघुवंशी ने इसी ग्रंथ में प्रकाशित अपने लेख में किया है। पिताजी हम तीनों बहिन-भाइयों को सदा सतत् अध्ययन और कठिन परिश्रम के लिए प्रोत्साहित करते रहे। उनके आशीर्वाद के फलस्वरूप ही हमने उच्च शिक्षा प्राप्त की। पिताजी की चित्रकला में भी गहन अभिरुचि थी। उनके बनाये हुए अनेक चित्र अब भी सुरक्षित हैं।

मेरे पूज्य पिताजी ने अनेक प्रशासनिक पदों पर कुशलतापूर्वक कार्य किया। वर्धमान कॉलेज में 1980 ई० में विषम परिस्थितियों में उन्होंने स्थानापन्न प्राचार्य के रूप में कार्य किया। कालेज में वे विभिन्न कार्यक्रमों के संयोजक रहते थे। पिताजी रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली में हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शोध समिति के संयोजक तथा विद्या परिषद एवं कार्यकारिणी-परिषद के सदस्य रहे। वे आकाशवाणी नजीबाबाद की परामर्शदात्री समिति के भी सदस्य रहे। आकाशवाणी से उनकी अनेक वार्ताएँ तथा परिचर्चाएँ प्रसारित हुईं। उन्हें जनपद बिजनौर की अनेक साहित्यिक, सामाजिक और शैक्षिक संस्थाओं द्वारा समय-समय पर सम्मानित किया गया। संस्थाओं द्वारा आयोजित विभिन्न साहित्यकारों की जयंतियों, पुण्य तिथियों तथा पत्रकार दिवस के कार्यक्रमों में वे अध्यक्ष तथा मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किये जाते रहे। इन संस्थाओं का उल्लेख पिताजी के जीवन-वृत्त के अंतर्गत किया गया है।

पिताजी को हिन्दी दिवस, 1994 ई० को हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद द्वारा प्रख्यात साहित्यकार श्री रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' के सभापतित्व में 'साहित्य महोपाध्याय' उपाधि से विभूषित किया गया। सम्मान मिलने पर पिताजी ने कहा था कि यह उनका ही नहीं अपितु बिजनौर की धरती और उसके साहित्यकारों का

भी सम्मान है। तब बिजनौर में 'परंपरा' संस्था (अध्यक्ष डॉ० अजय जनमेजय) के संयोजन में विभिन्न साहित्यिक, सामाजिक तथा शैक्षिक संस्थाओं द्वारा दिनांक 4 अक्टूबर, 1994 ई० को पिताजी का अभिनंदन किया गया था। इसमें बोलते हुए प्रसिद्ध पत्रकार श्री बाबूसिंह चौहान ने कहा था, ''डॉ० आर्य जी को सम्मानित करने का अर्थ है, अपने को गौरवान्वित करना'', डॉ० उषा जैन ने कहा था, 'डॉ० आर्य जी सचल पुस्तकालय हैं। कोई सहज विश्वास भी नहीं करेगा कि विनम्रता एवं सौम्यता की मूर्ति डॉ० आर्य जी स्वयं में ही विश्व साहित्य के कोष हैं।'' डॉ० रमेशचन्द्र जैन ने कहा था, ''डॉ० आर्य जी साहित्य के प्राचीन धरातल को आधुनिक धरातल से जोड़ने की एक सशक्त कड़ी हैं।''

इसी बीच पिताजी ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली से वृहत् शोध-योजना के अंतर्गत 'हिंदी के निर्गुण संत-काव्य एवं जैन संत-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन' विषय पर अत्यन्त परिश्रम से शोध-कार्य किया। उनकी जैन धर्म के सिद्धांतों और आदर्शों के प्रति गहरी निष्ठा और आस्था थी, जिसके संस्कार उन्हें छात्र-जीवन से ही मिले थे। वे प्रसिद्ध विद्वान डॉ० कुंदन लाल जैन, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बरेली कालेज, बरेली के शिष्य रहे थे। उन्हीं के निर्देशन में उन्होंने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। डॉ० जैन साहब बिजनौर आने पर हमारे आवास पर ही ठहरते थे। उक्त शोध-कार्य के मध्य पिताजी ने अनेक पुस्तकें संगृहीत की थीं। शोध-कार्य सम्पन्न होने पर उन्होंने हिन्दी-संस्कृत के अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ वर्धमान कॉलेज पुस्तकालय को भेंट स्वरूप दान कर दिए। इनमें चार वेद (दयानंद संस्थान, दिल्ली), उपनिषद, पुराण, स्मृतियाँ (मनसुख राय मोर ट्रस्ट, कलकत्ता), सम्पूर्ण महाभारत (जिल्द सहित, गीता प्रेस, गोरखपुर), अनेक हिन्दी पुस्तकें तथा 'वर्धमान' कॉलेज पत्रिका के प्रथम अंक से लेकर सेवानिवृत्ति तक के अंक तीन जिल्दों में थे। इस समय उनकी 'विचार-बिन्दु' पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसका उन्होंने कोई मूल्य नहीं रखा था।

वृहत् शोध-योजना का कार्य समाप्त होने पर पिताजी अपने लेखन-कार्य में व्यस्त हो गये। अनेक लेख और कतिपय बाल कथाएँ भी पिताजी ने लिखीं। यह लेखन सर्वप्रथम पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ। इनमें 'इस्पात भाषा भारती' (दिल्ली), 'उत्तर प्रदेश' (लखनऊ), 'गौड़संस टाइम्स' (गाजियाबाद), 'पराग' (दिल्ली), 'हिन्दुस्तानी' (इलाहाबाद), 'अमर उजाला' (बरेली), 'नवभारत टाइम्स' (दिल्ली), 'बिजनौर टाइम्स' (बिजनौर) प्रमुख हैं। बाद में ये लेख पिताजी के दो निबंध-संग्रहों-'परंपरा और आधुनिकता' (1997 ई०) तथा 'चिंतन-

अनुचिंतन' (2015 ई०) में प्रकाशित हुए। 'परंपरा और आधुनिकता' को उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा निबंध विधा के अंतर्गत पुरस्कृत किया गया। 'चिंतन-अनुचिंतन' की अनेक समीक्षाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुईं। 2010 ई० के पश्चात पिताजी अस्वस्थ रहने लगे। उनके गले में एक गाँठ थी। चिकित्सकों को दिखाया तो उन्होंने कहा कि इस गाँठ से कोई हानि नहीं है। समय बीतता गया, गले की गाँठ वैसी ही बनी रही। 2015 ई० में उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ के निदेशक महोदय ने पिताजी को महाकाव्य विधा से संबद्ध संस्थान को प्रस्तुत कृतियों के निर्णायक का दायित्व सौंपा, जिसका उन्होंने बड़े परिश्रम से निर्वाह किया। 2016 ई० में होली तक पिताजी सामान्य थे। उनका भोजन सात्विक था और वेशभूषा सामान्य थी। उन्हें किसी प्रकार का शौक अथवा व्यसन नहीं था। होली के कुछ समय पश्चात् वे कुछ दुर्बलता का अनुभव करने लगे। गले में गाँठ हेतु पिताजी थायराइड की ऐलोपैथी और होम्योपैथी दवाएँ बहुत पहले से ही ले रहे थे।

इन दिनों पिताजी ने 'डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त अभिनंदन ग्रंथ' हेतु उनकी पुस्तक 'स्मृति के वातायन' की समीक्षा लिखी, जो उनकी अंतिम समीक्षा है। 'मानस-चंदन' (सीतापुर) के लिए 'तुलसी काव्य में लोकमंगल' शीर्षक लेख प्रकाशनार्थ भेजा, जो उनका अन्तिम लेख है। इस प्रकार वे अन्त तक सारस्वत यज्ञ में अपनी समिधा अर्पित करते रहे। धीरे-धीरे पिताजी के सिर में दर्द रहने लगा, जो क्रमशः असहनीय होता गया। सिरदर्द निवारक दवाइयाँ लेने से, गले की औषधियों के सेवन में शिथिलता आ गयी। कुछ समय पश्चात् गले की गाँठ में किंचित लालिमा आई। हमने तुरंत ई.एन.टी. सर्जनों को दिखाया, उन्होंने इसे सामान्य विकार बताकर दवाइयाँ दे दीं, किन्तु कोई विशेष लाभ होता दिखाई नहीं दिया। तब नगर के अन्य परिचित चिकित्सकों डॉ० अजय जनमेजय, डॉ० अशोक चौधरी, डॉ० दिग्विजय चौधरी के परामर्श से मेरठ से उपचार चला। अंत में श्री अस्पताल, बिजनौर में एम.आई.आर. की जाँच से पता चला कि पिता जी को गले का कैंसर है। इस बीच उन्होंने मुझसे श्री वियोगी हरि की पुस्तक 'यों भी देखिए' तथा पं. कामताप्रसाद गुरु की पुस्तक 'हिन्दी शब्दानुशासन' पढ़ने की इच्छा व्यक्त की। वियोगी हरि की पुस्तक उन्होंने हाथ में ले ली थी किन्तु उसे पढ़ नहीं पाए। इन दिनों उनके पुराने आत्मीय मित्र श्री शिवबिहारी लाल भटनागर एवं उनके पुत्र श्री सुनील भटनागर, डॉ० एन.एल. शर्मा (बरेली), डॉ० ए.के. मित्तल (नजीबाबाद) के साथ, डॉ० ओमदत्त आर्य, वैद्य रमेशचन्द्र शास्त्री, डॉ० अजय जनमेजय, श्री

शकील बिजनौरी, डॉ बुद्धिप्रकाश शर्मा घर पर पिताजी को देखने आए। नित्य प्रातः काल उठकर 'रामचरितमानस' का पाठ करना उनका नियम था और यह महाकाव्य उन्हें कंठस्थ था। गीता प्रेस, गोरखपुर द्वारा 'रामचरितमानस' में प्रकाशित श्रीराम सहित चारो भाईयों, माता सीता तथा हनुमान जी का सामुहिक चित्र उन्हें बहुत प्रिय था और इस चित्र का कैलेंडर मृत्युप्रर्यंत सदा उनके कमरे में टंगा रहा। बिजनौर, मेरठ, बनारस और दिल्ली के चिकित्सकों का उपचार चलता रहा, किन्तु कोई अनुकूल परिणाम नहीं निकला।

21 सितम्बर, 2016 को श्री हितेश कुमार शर्मा श्रीनाथद्वारा, राजस्थान से लाया हुआ 'हिन्दी भाषा भूषण' सम्मान पिताजी को प्रदान करने घर पर आये। साथ में श्री अशोक मधुप, डॉ० अजय जनमेजय, श्री वी.पी. गुप्ता, पं. राजेन्द्र कुमार शर्मा, डॉ० अनिल चौधरी आदि थे। पिता जी अस्वस्थ होते हुए भी बिस्तर से उठकर बैठक में आए और चाय-नाश्ते के बीच सबके साथ बैठकर धीमी आवाज में बातचीत करते रहे। डॉ० अजय जनमेजय ने सामूहिक चित्र खींचा और वीडियो फिल्म बनाई। इस अवसर पर पिताजी का मन कुछ समय के लिए लग गया किन्तु कैंसर की जाँचों ने उन्हें बेहाल कर दिया। 24-25 सितंबर को वे स्थानीय बीना प्रकाश अस्पताल में आई.सी.यू. में रहे। अस्पताल में श्री हितेश कुमार शर्मा, श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, डॉ० दिग्विजय चौधरी, पं. राजेन्द्र कुमार शर्मा, डॉ० विदुषी भारद्वाज तथा डॉ० सुभाषचन्द्र शर्मा पिताजी को देखने आये। 26 सितम्बर, 2016 ई० को दिल्ली के राजीव गांधी कैंसर इंस्टीट्यूट के आपातकालीन कक्ष में पिताजी को ले जाया गया, लेकिन रात्रि में चिकित्सकों ने बता दिया कि अब रोग लाइलाज है। सर गंगाराम अस्पताल से संपर्क किया गया किन्तु कोई निष्कर्ष नहीं निकला। अंत में उन्हें गुरु तेगबहादुर कैंसर अस्पताल के विशिष्ट प्राइवेट वार्ड में भर्ती किया गया, जहाँ चिकित्सकों ने ढाढ़स बँधाते हुए कहा कि ये आठ-दस दिन में इस लायक हो जाएँगे कि आप इन्हें घर ले जा सकें। यहाँ हमें पिताजी के स्वास्थ्य में कोई सुधार होता दिखाई नहीं दे रहा था। वे स्वयं भी घर चलने के लिए कहते थे। बिस्तर पर लेटे-लेटे वे श्रीराम का नाम ही लेते रहते थे। अचानक 2 अक्टूबर, 2016 ई० की देर रात्रि को उनकी तबीयत बिगड़ने लगी। चिकित्सक त्वरित उपचार में लग गये। इंजैक्शनों से तात्कालिक परेशानी दूर हुई। कुछ समय पश्चात् क्रमशः उनकी सांसे कुछ लंबी होने लगीं। अब सारा उपचार निरर्थक प्रतीत हो रहा था। धीरे-धीरे पिताजी की साँसों में ठहराव-सा आने लगा। 03 अक्टूबर, 2016 ई० को प्रातः काल लगभग छह बजने वाले होंगे। मैं और छोटी

बहिन संतोष पिताजी के पलंग के दायें-बायें खड़े थे। दोनों ने पिताजी को आवाज दी लेकिन कोई उत्तर नहीं मिला। अंत में पिताजी को दो हिचकियाँ आईं, प्राण मुख से निकले और उनका सिर दाईं ओर को हो गया। सब कुछ समाप्त हो चुका था, पिताजी चिरनिद्रा में लीन हो गये थे। हम दोनों भाई-बहिन जड़वत् हो गये, आँसू पहले ही रोते-रोते सूख चुके थे। जीवन में पहली बार हमने किसी प्राणी के जीवन का अंत होते देखा था।

पिताजी के स्वास्थ्य-लाभ की लालसा लिए हम दिल्ली आए थे लेकिन अब हमारे सामने उनका पार्थिव शरीर था। आगत के आगे हाथ पसारने के लिए हम बेबस थे। तुरंत हमने अपने परिवार, संबंधियों, श्री हितेश कुमार शर्मा, श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, श्री सुनील भटनागर, डॉ० विदुषी भारद्वाज को यह दु:खद समाचार दिया। घर पर छोटा भाई रवि अकेला था। सर्वप्रथम श्री सुनील भटनागर उसके पास पहुँचे और ढाढ़स बँधाया। दोपहर दो बजे हम पिताजी का पार्थिव शरीर लेकर बिजनौर पहुँचे। घर पर नगर के अनेक साहित्यकार, पत्रकार और शैक्षिक संस्थाओं के लोग एकत्र थे। बचपन में जिनके कंधों पर चढ़कर जग के अनगिनत मेले देखे थे, आज उन्हीं को अपने कंधों पर लेकर उनकी अंतिम यात्रा की तैयारी थी। इस लौकिक जगत का यही सनातन विधान है। सायंकाल लगभग पाँच बजे पिताजी का पार्थिव शरीर बैराज घाट पर गंगा-तट पर पहुँचा। मुखाग्नि देने से पूर्व मैंने अंतिम बार पिता जी के मुख की ओर देखा, जिस पर अब भी अपूर्व शांति छायी हुई थी। काँपते हाथों से मैंने मुखाग्नि दी और पिताजी का पार्थिव शरीर धीरे- धीरे पंचतत्व में मिलने लगा। श्रीराम के उपासक 'राम' की काया अंतत: उनमें ही विलीन हो गयी। इस नश्वर संसार की निरन्तर भाग-दौड़ और कामनाओं से भरे अशांत मानव-जीवन का क्या यही शांत अंत है? असार संसार का क्या यही सत्य है? डॉ० बुद्धिप्रकाश शर्मा, श्री आशुतोष त्यागी, श्री खेम सिंह, श्री संजीव कुमार हमारे साथ घर तक आये। अगले दिन यह समाचार समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ और विभिन्न शैक्षिक तथा साहित्यिक संस्थाओं द्वारा पिताजी के निधन पर शोक-प्रस्ताव पारित किये गये।

मेरे पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य निश्छल, सरल और प्रेमल सहृदय मानव थे। परिणत होकर भी प्रणत, विद्वान होते हुए भी विनीत, पुष्पों की भाँति नि:स्वार्थ भाव से सर्वदा समर्पित रहने वाले। जीवन की मरु भूमि को आशाओं के हरित कणों से सिक्त करने वाले पिताजी अब हमारे बीच नहीं हैं। जब-तक वे रहे, कराल काल की कठोरता के विषय में सोचने की आवश्यकता ही

अनुभव नहीं हुई। परिवार की कठिनाइयों और प्रतिकूल पतिस्थितियों में वे सदा सबसे आगे रहते थे। अपने आदर्शों के प्रति वे अडिग व कटिबद्ध रहे। अब तो केवल उनकी स्मृतियाँ ही शेष रह गयी हैं। दोपहर को खाना खाकर सो जाता हूँ। पिताजी की स्मृतियाँ पीछा नहीं छोड़तीं, ध्यान उन्हीं पिछली बातों में लीन है। अचानक स्वप्न में देखता हूँ कि भगवान ब्रह्मा, विष्णु, महेश--- तीनों देवता मेरे सामने खड़े हैं और पिताजी आँखें बंद कर भगवान विष्णु के चरणों में लेटे हैं। मैं भगवान से आँखें खुलवाकर उनसे बात करने की इच्छा व्यक्त करता हूँ। तभी आवाज आती है कि ''तुम इनकी आँखें खुलवाकर क्या बात करना चाहते हो, इससे इन्हें कष्ट होगा।'' आवाज ऐसी कि मेरा सारा शरीर सिहर उठता है और मैं चौंककर उठ जाता हूँ। फिर वही सूना एकांत मेरे सामने है। अपनी सूनी आँखों से बहुत दूर शून्य आकाश में मुझे पूज्य पिताजी की प्रतिच्छाया दिखाई देती है। उनके श्री चरणों में कोटि-कोटि अश्रुपूर्ण नमन करते हुए मेरी लेखनी भी अब विराम चाहती है।

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर

67. स्मृति-चित्र

डॉ० सन्तोष कुमारी

मेरे पूज्य पिता जी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी ने सदा अपने परिवार को सच्चाई और ईमानदारी का पाठ पढ़ाया। वह अपने कर्तव्य पालन के प्रति सदैव समर्पित रहे और ईमानदारी के साथ कार्य का निर्वाह किया। उन्होंने मुझे एवं परिवार को कर्तव्यपरायणता की सीख दी। उनके द्वारा दी गई सीख को मैंने आत्मसात् किया। वे मेरे हमेशा प्रेरणास्रोत रहे। उन्होंने मुझे सीख दी कि सदैव बड़ों का सम्मान करो। उनकी बात आज भी मुझे प्रेरणा देती है। वे कहते थे कि सम्मान देने से खुद का कद ऊँचा हो जाता है।

वे ऐसे जिन्दादिल इंसान थे जिन्हें क्रोध, मोह, लोभ और अहंकार कभी छू नहीं पाया। उनकी लेखन-कार्य में रुचि थी। इतना लेखन कार्य करते हुए उन्होंने अपने परिवार के प्रति कर्तव्य को भली-भांति निभाया।

मुझे आश्चर्य होता है मेरे पूजनीय पिताजी ने इतना ज्ञान कब और कैसे प्राप्त किया, वे हिन्दी साहित्य के इतिहास और भाषा के असीम भंडार थे। कभी-कभी लगता है, ईश्वर ने उन्हें इसी कार्य के लिए संसार में भेजा था। स्मृति उनकी बहुत अच्छी थी। एक बार पढ़ लेने पर वह उसे कभी नहीं भूलते थे। अध्ययन ही उनका शौक था, पुस्तकें ही उनका धन थीं।

मेरे पिताजी मेरे मार्गदर्शक, मेरे शिक्षक थे। भले ही वे अब इस संसार में नहीं रहे, लेकिन उनके द्वारा प्रदान किए गये ज्ञान, परिश्रम और धैर्य का संबल अब भी मेरे पास है और रहेगा। जब उनका निबंध संग्रह 'चिंतन-अनुचंतिन' प्रकाशित हुआ, तब उन्होंने उसे अपने गुरुजनों को ही समर्पित किया। अपने गुरुजनों के प्रति उनके हृदय में विशेष श्रद्धा थी। जब भी बरेली जाते, अपने गुरुजनों डॉ० गुणानंद जुयाल, डॉ० कुंदनलाल जैन तथा डॉ० जय नारायण शिंघल आदि से मिलकर अवश्य आते थे। वे कहते थे मैं आज अपने माता-पिता और गुरुजनों की कृपा से ही अपने जीवन में आगे बढ़ा हूँ। वे पिता के रूप में बहुत भावुक इंसान थे और हमारी छोटी से छोटी आवश्यकताओं का भी सदा ध्यान रखते थे। वे इतने आत्मसंयमी व्यक्ति थे कि जितना उनके पास है, उससे ही संतुष्ट रहते थे। अधिक पाने की चाह उन्हें कभी नहीं रही। उनके लिए उनकी पुस्तकें ही उनकी संपदा थीं।

आज उनके स्वर्गवास को एक वर्ष पूर्ण हो रहा है। पिताजी हमारे साथ एक वर्ष से नहीं हैं किन्तु अब भी यह सच न जाने क्यों हमें प्रतीत नहीं होता। भले ही वह सशरीर हमारे साथ नहीं हैं किन्तु उनको न भुला सकने वाली यादें आज भी हमारे अर्न्तमन पर छायी हुई हैं-

अच्छे लोग सदा बने रहते हैं संसार में,
लोगों की स्मृतियों में
जीवित रहते हैं सदा।
वे सपनों में आकर अनगिनत
खुशियाँ दे जाते हैं।
जब भी जीवन में आती हैं कठिनाईयाँ
उनकी स्मृतियाँ हमें
संघर्ष करने की प्रेरणा देती हैं।

मैं स्वयं को अत्यन्त भाग्यशाली मानती हूँ कि मुझे उन जैसे पिता की बेटी बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनकी प्रेरणा मुझे आगे बढ़ने के लिए सदा प्रोत्साहित करती रहेगी-

हर पल हर क्षण आप याद आओगे
मेरी स्मृति में बसोगे आप।
शायद मैंने जिन्दगी में कभी/नहीं सोचा था।
इतनी जल्दी आप हमारी जिन्दगी से
बहुत दूर चले जाओगे।

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर

68. यादों की परछाइयाँ

रवि प्रकाश आर्य

3 अक्टूबर 2016 ई० की सुबह ऐसी काली रात्रि बनकर आयी कि हम लोग हतप्रभ रह गए। ऐसा घना अँधेरा, जिसमें पिताश्री डॉ. रामस्वरूप आर्य जी इस भौतिक संसार को छोड़कर सदा के लिए चले गये।

पिताश्री का पार्थिव शरीर हमारे समक्ष था। उनके चेहरे पर सदा विराजमान रहने वाली शांति अब भी विद्यमान थी। ऐसा लगता था कि वे अभी उठेंगे और फिर हमसे बात करेंगे परन्तु ऐसा न होना था, न हुआ। अंततः वह घड़ी भी आ गई, जब पंडित जी द्वारा अन्तिम क्रियाएँ प्रारंभ करवायी गईं और अपराह्न में उनके मित्रों, प्रशंसकों और परिजनों के साथ उनकी अंतिम यात्रा प्रारंभ हुई।

सदा न सूरज चाँद चमकते
सदा न खिलते किसलय फूल।
पंख पसार आत्मा उड़ जाती
रह जाती केवल तन धूल।

पिताश्री के पार्थिव शरीर को अग्निदेव को समर्पित करने के बाद गंगा बैराज से सायंकाल 8 बजे हम अपने निवास पर लौट आए। संबंधियों और मित्रों को विदा करते-करते रात्रि के ग्यारह बज गए। अगले दिन रह गये परिजन और पिताश्री के पार्थिव देहस्थल पर रखा गया दीपक। दीपक देख-देखकर मन ईश्वर से एक प्रश्न करता, हे ईश्वर, आपने हम पर यह आकस्मिक वज्रपात क्यों किया? प्रश्न करते-करते पिताश्री के प्रशंसक, मित्र व अन्य लोग, जिनके पास तत्काल समाचार न पहुँच पाया था, संवेदना व्यक्त करने आने लगे। शाम हुई, मन फिर शोक में डूब गया। तभी वरिष्ठ साहित्यकार और बाल रोग विशेषज्ञ डा० अजय जनमेजय हमारे निवास पर आये और पिताश्री की 21 सितंबर, 2016 ई० की अंतिम वीडियो दिखाने लगे। हमें समझाया, भूल जाओ कि डॉ० साहब की पार्थिव देह को हम अग्नि में समर्पित कर आये हैं। अब याद करो डॉ० साहब का सृजनकाल, ये सोचो कि वे अपने अध्ययन कक्ष में हैं। किसी रचना का सृजन कर रहे हैं, अभी आएँगे और हमसे बात करेंगे। हमने ऐसा ही किया और विधि-विधान के अन्य कार्यों को सम्पन्न किया

पिताश्री की यादों के सहारे दस माह का समय कैसे बीत गया, पता ही नहीं चला। जिस प्रकार साहित्यकारों के लक्षण बचपन से ही प्रकट होने लगते हैं, उसी प्रकार पिताश्री की साहित्यिक प्रतिभा भी अल्पायु में ही प्रकट होने लगी थी।

पिताजी जब हाईस्कूल उत्तीर्ण करके कक्षा ग्यारह में आए तभी उन्होंने अपनी प्रथम काव्य रचना का सृजन किया जो उस समय की कॉलेज पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। दादा श्री बाँकेलाल जी साहूकार थे और बहुमूल्य वस्तुओं, आभूषण आदि को गिरवी रखकर पैसा उधार देने का कार्य करत थे। उन्होंने पिताश्री को व्यवसाय की ओर उन्मुख करने के स्थान पर उनकी साहित्यिक प्रतिभा को सदा प्रोत्साहन दिया। इसके परिणामस्वरूप पिताश्री ने ऐसे समय में आगरा विश्वविद्यालय से एम.ए. में प्रथम श्रेणी प्राप्त की, जब कम ही लोग प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो पाते थे। प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने के परिणामस्वरूप उन्हें आजीविका निर्वाह हेतु भटकना नहीं पड़ा। अल्प समय बाद ही बरेली कालेज, बरेली में वे प्राध्यापक हो गये। अपने गुरुवर डॉ० कुंदनलाल जैन के परामर्श पर वे वर्धमान कालेज, बिजनौर आ गये और कालेज के पहले वर्ष में हिन्दी-संस्कृत विभागाध्यक्ष के रूप में कार्य किया। सन् 1961 ई० में हिन्दी में स्नातकोत्तर कक्षाएँ आरंभ होने पर वे हिन्दी विभागाध्यक्ष के रूप में कार्य करने लगे।

पिताश्री के निर्देशन में 17 शोधार्थियों ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। साहित्यांचल कोटद्वार, साहित्यिक संस्था सबरंग, धरोहर स्मृति न्यास, नगर कल्याण समिति, रोटरी क्लब, बिजनौर सैंट्रल, अखिल भारतीय साहित्य कला मंच, मुरादाबाद, आर.एस.एम. कालेज धामपुर, वरिष्ठ नागरिक वैलफेयर सोसाइटी बिजनौर, रोटरी अन्तर्राष्ट्रीय मंडल 3100, दूर संचार विभाग बिजनौर, वरिष्ठ नागरिक मंच, कानपुर, युवा साहित्यकार परिषद, धामपुर जैसी अनेक साहित्यिक तथा सामाजिक संस्थाओं द्वारा पिताश्री को समय-समय पर सम्मानित किया गया। पिताश्री आकाशवाणी नजीबाबाद की परामर्श समिति के सदस्य एवं काशी नागरी प्रचारिणी सभा के प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ खोज विभाग में अवैतनिक निरीक्षक भी रहे। पिताश्री को विक्रमशिला हिन्दी विद्यापीठ, भागलपुर द्वारा 'विद्यासागर', युवा साहित्यकार परिषद धामपुर द्वारा 'सरस्वती श्री', सन् 1994 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा साहित्य महोपाध्याय की उपाधि से अलंकृत किया गया। 'साहित्य महोपाध्याय' की उपाधि पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पं. पद्म सिंह शर्मा के बाद पिता श्री को ही प्राप्त होने का गौरव प्राप्त है। सन् 1997 में पिता श्री को उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह 'परंपरा और आधुनिकता' के लिए लखनऊ में उ.प्र. हिन्दी संस्थान के तत्वावधान में आयोजित कार्यक्रम में तत्कालीन विधानसभा अध्यक्ष श्री केशरीनाथ त्रिपाठी द्वारा पुरस्कृत किया गया। इतने सम्मान, इतने पुरस्कार प्राप्त होने पर भी पिताश्री में अहंकार का भाव कभी नहीं आया। जब भी

कोई उनसे मिलने आता तब वे बड़ी सरलता से उससे मिलते, सामने वाले को अहसास ही नहीं होता कि वह ऐसे विराट व्यक्तित्व से मिल रहा है, जो न जाने कितनी साहित्यिक गोष्ठियों और कार्यक्रमों का अध्यक्ष रहा है। ऐसे विराट व्यक्तित्व वाले पिताश्री के व्यक्तित्व को, उनकी सरलता, उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार की यादों को शब्दों में बाँधना, अक्षरों में मोतियों में पिरोना, कम से कम मेरे लिए तो संभव नहीं है।

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर

पत्र-खण्ड

पत्र-साहित्य आधुनिक गद्य की नवीन विधा है। उसमें पद्य तथा गद्य की सभी विधाओं की तुलना में पत्र-लेखक का व्यक्तित्व अधिक सहज तथा स्पष्ट रूप से अंकित रहता है। वैयक्तिक रुचियों तथा सामाजिक सम्बंधों की भी इनमें झलक रहती है। विषयगत विविधता और रोचक शैली पत्रों को स्थायी महत्व प्रदान करती है। पत्रों के महत्व को प्रतिपादित करते हुए आचार्य किशोरीदास वाजपेयी जी ने लिखा है-

अति दुरूह विस्तृत जीवन जो
ग्रंथों में है नहीं समाता,
वही किसी के एक पत्र में
ज्यों का त्यों पूरा बंध जाता।

पत्र-साहित्य के अंतर्गत प्रथम कृति स्वामी श्रद्धानंद (महात्मा मुंशीराम) द्वारा संपादित 'ऋषि दयानंद का पत्र व्यवहार भाग-1' है, जिसका प्रकाशन 1910 ई. में गुरुकुल कांगड़ी यंत्रालय, हरिद्वार से हुआ। इसके पश्चात् इस परंपरा में अनेक कृतियाँ प्रकाशित हुईं, जिनमें से कतिपय कृतियों का उल्लेख पूज्य पिताजी डा. रामस्वरूप आर्य जी ने (प्रो.) सेवक वात्सयायन को लिखे अपने पत्र में किया है। उनका पत्र-व्यवहार विस्तृत था, जिसके अंतर्गत कुछ चुने हुए पत्र यहाँ प्रस्तुत किए गए हैं। उनको अनेक व्यक्तियों ने पत्र लिखे तथा उन्होंने भी अन्य व्यक्तियों को पत्र लिखे। इस ग्रंथ में उनके द्वारा लिखित पत्रों की संख्या इसलिए कम है, क्योंकि वे स्वयं प्रेषित पत्रों की प्रतिलिपियाँ अपने पास कम ही रखते थे। जो प्रतिलिपियाँ मिली हैं, उसमें से अधिकांश पेंसिल से लिखी हुई हैं, जो समय के अंतराल के कारण अस्पष्ट हो गयी हैं। उनको प्राप्त अनेक साहित्यकारों के अनगिनत पत्र दीमकों की भेंट चढ़ गये। इनमें प्रमुख हैं-पं. श्री नारायण चतुर्वेदी (लखनऊ), पं. श्री राम शर्मा (कलकत्ता, जब वे 'विशाल भारत' के संपादक थे), डा. माताप्रसाद गुप्त (आगरा), डा. हरिहरप्रसाद गुप्त (इलाहाबाद), डा. राम विलास शर्मा (आगरा), डा. गोपाल राय (पटना), प्रो. मधुरेश (बदायूँ), श्री बदरी विशाल पित्ती (हैदराबाद), डा. श्यामबहादुर वर्मा (दिल्ली) आदि। पं. श्री नारायण चतुर्वेदी का एकमात्र पत्र इसलिए सुरक्षित रह गया, क्योंकि यह त्रैमासिक पत्रिका 'हिन्दुस्तानी' में छपा था। पं. श्रीराम शर्मा के छह पत्रों की प्रतिलिपियाँ सुश्री नीना कौल को भेजी गयी थीं, जो उस समय कश्मीर विश्वविद्यालय से हिन्दी विभाग के अन्तर्गत पंडित जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर शोध कार्य कर

रही थीं। डा. राम विलास शर्मा के पत्रों का उल्लेख, इसी ग्रंथ में प्रकाशित डा. पाण्डेय रामेन्द्र ने अपने लेख में किया है।

डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की भाषाविज्ञान तथा साहित्य के इतिहास में विशेष अभिरुचि थी। उनका शोधकार्य भी जायसी की भाषा पर था। उन्होंने अपने अनेक पत्रों में हिन्दी भाषा के विभिन्न शब्दों के व्याकरणिक स्वरूप तथा साहित्यिक ऐतिहासिक तथ्यों पर विचार किया है। इस दृष्टि से डॉ० हरिवंशराय बच्चन, आचार्य किशोरीदास वाजपेयी, डॉ० अंबाप्रसाद 'सुमन', बाबू वृंदावनदास, डॉ० किशोरी लाल गुप्त, श्री बी.एल. गौड़, डॉ० शंभुशरण शुक्ल, डॉ० श्यामबहादुर वर्मा, डॉ० पंकज भारद्वाज, डॉ० भवानीलाल भारतीय, श्री धनंजय सिंह, श्री राजन चौधरी, डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त बरसैयां, श्री फुरकान अहमद सिद्दीकी तथा हिन्दी प्रचारक पत्रिका, वाराणसी को लिखे पत्र उल्लेखनीय हैं।

संपादक

(अ) डा. रामस्वरूप आर्य को अन्य साहित्यकारों/ विद्वानों द्वारा लिखे गये पत्र

अनुक्रमणिका

28. श्री बाबू सिंह चौहान का पत्र
29. डॉ० कुँअर बेचैन का पत्र
30. डा. एन.एल. शर्मा के पत्र
31. श्री चन्द्रमणि रघुवंशी का पत्र
32. श्री बी.एल. गौड़ का पत्र
33. डा. पंकज भारद्वाज का पत्र
34. डा. जमनालाल बायती का पत्र
35. डा. पाण्डेय रामेन्द्र का पत्र
36. डा. राजेन्द्र रंजन चतुर्वेदी का पत्र
37. डा. राजमणि शर्मा का पत्र
38. डा. शिवनारायण का पत्र
39. डा. रमानाथ त्रिपाठी के पत्र
40. पं. मदनमोहन लाल शर्मा का पत्र
41. श्री शिवानंद के पत्र
42. डा. विष्णुदत्त राकेश का पत्र
43. श्री किशन सरोज के पत्र
44. डा. भवानीलाल भारतीय का पत्र
45. श्री धनंजय सिंह का पत्र
46. डा. राम सनेही लाल शर्मा 'यायावर' का पत्र
47. श्रीमती चन्द्रावती का पत्र
48. डा. श्यामबहादुर वर्मा का पत्र
49. डा. श्री रंजन सूरिदेव का पत्र
50. श्री भैरव प्रसाद गुप्त का पत्र
51. डा. निजामुद्दीन का पत्र
52. श्री नारायण दत्त का पत्र
53. डा. हरिश्चन्द्र का पत्र
54. डा. कैलाशचन्द्र भाटिया का पत्र
55. डा. शंभुशरण शुक्ल के पत्र
56. श्री ए.बी. ब्रह्मा राव का पत्र
57. आचार्य विनय मोहन शर्मा का पत्र
58. डा. लक्ष्मीनारायण दुबे का पत्र

59. (प्रो.) सेवक वात्स्यायन का पत्र
60. डा. रामप्रकाश गोयल का पत्र
61. श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' का पत्र
62. श्री राजन चौधरी के पत्र
63. डा. रामप्रसाद मिश्र का पत्र
64. श्री भक्तदर्शन का पत्र
65. पं. उदय शंकर दुबे का पत्र
66. श्री रामेश्वर नाथ का पत्र
67. श्री पन्नालाल गुप्त 'मानस' का पत्र
68. डा. रामसुमिरन लाल का पत्र
69. श्री शारदा प्रसाद का पत्र
70. डा. गंगाप्रसाद गुप्त बरसैयां का पत्र
71. डा. मुरारी लाल शर्मा का पत्र
72. डा. राजेश्वर गंगवार का पत्र
73. श्री फुरकान अहमद सिद्दीकी का पत्र
74. डा. गिरिराज शरण अग्रवाल का पत्र

डॉ. हरिवंश राय बच्चन जी द्वारा डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को अपने हस्तलेख में प्रेषित एक अप्रकाशित कविता (पृष्ठ 190 पर)

मैंने चिड़िया से कहा, मैं तुम पर एक
कविता लिखना चाहता हूँ।
[illegible]
'नहीं।'
[illegible]
'नहीं।'
[illegible]
'नहीं।'
[illegible]
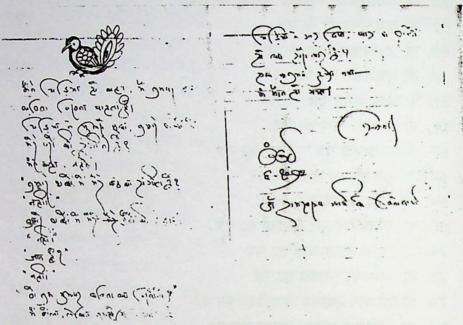
बिजनौर आगमन पर हास्य कवि श्री काक हाथरसी जी द्वारा डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को अपने हस्तलेख में प्रदत्त कविता

अचानक ही दिनांक 23 फरवरी को बिजनौर आना हुआ
भगवान की दुआ।
घूमने गये तो दिखाई दिया इंदिरा सरोवर
न तो वहां सरोवर था, न इंदिरा। खुदा हुआ
एक बहुत बड़ा गड्ढा। बाद में मालूम हुआ करके रिकार्ड [?]
इसमें 2 लाख लगाये खर्च। यह है कमाल सरकारी [?] लोगों का
अब यह और करना चाहिए कि इसमें मछलियां
जो खरब गई हैं उनको जीवन दान देने के लिये
कोई केन्द्रीय मंत्री आमंत्रित करें और उसका
खर्च दिखाकर पुनः पारित करें।
क्या लिखूं और
धन्य बिजनौर

काका हाथरसी
25/2/75 [?]

1. बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न साहित्यकार डा. हरिवंश राय बच्चन के पत्र

डा. रामस्वरूप आर्य ने बच्चन जी की दो पुस्तकों-'पंत के सौ पत्र बच्चन के नाम' (सं. बच्चन) तथा 'बच्चन निकट से' (सं. अजित कुमार एवं ओमकारनाथ श्रीवास्तव) की समीक्षा की थी। इसके अतिरिक्त डा. आर्य जी ने बच्चन जी की आत्मकथा के प्रथम दो खंडों-'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' तथा 'नीड़ का निर्माण फिर' पर विस्तृत टिप्पणियां लिखी थीं।

प्रस्तुत पत्र व्यवहार इसी संदर्भ में है।

13 वि.क्रि.नं.दि. ।।
3.10.70

सम्मान्य बंधु। कृपा पत्र के लिए ध.

'क्या भूलूँ......आपको पंसद आई। मेरा श्रम सफल हुआ।

'जो प्रबंध नहि बुध आदरहिं.....

आपकी गणना बुधों में न होगी तो किसकी होगी ?

भाषा और मुद्रण संबंधी जिन भूलों की ओर संकेत किया है, उनके लिए आभारी हूँ। अगले संस्करण में उनका निराकरण करने का प्रयत्न करूंगा।

आपने कितने ध्यान से पढ़ा है और कितने श्रम से भूलों का ब्यौरा भेजा है।

आत्म-चित्रण का दूसरा खंड 'नीड़ का निर्माण फिर' नवम्बर में प्रकाशित होगा।

देखें तो अपनी प्रतिक्रिया दें।

अपने मंगल कल्याण के लिए शु.का. स्वीकार करें।

सादर
बच्चन

***

4.11.70

सम्मान्य बंधु

पत्र के लिए ध.

विलंब से उत्तर के लिए क्षमा याचना। विदेश प्रवास में था।

आप अपने स्वाध्याय में अपटूडेट रहते हैं। उसके लिए मेरा अभिनंदन।

जोशी की पुस्तक मैंने देखी है। भावातिशयता, पक्षधरता और कहीं-कहीं छिछलेपन से भरी।

'भावुक' की किताब मैंने नहीं देखी। बहुत उत्सुक भी नहीं। मेरी रुचि जीवन देखने में है अधिक।

'पंत के सौ पत्र' पर आपकी सम्मति का मेरे लिए मूल्य होगा।

निष्पक्ष लिखें।

का. मैने देखी थी--उखाड़-पछाड़ की सरबसी करतूतों की ओर अब कोई देखता भी नहीं-आकर्षित करने की कोई नई तरकीब लोगों को सोचनी चाहिए। शु.का.

सादर

बच्चन

***

13 वि.क्रि.नदि. 11

3.4.71

सम्मान्य बंधु,

पत्र के लिए ध.

'पंत के सौ पत्र' पर आपकी समीक्षा के कटिंग के लिए आभारी हूँ।

'पंत के दो सौ पत्र' शीघ्र आ रहे हैं। सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली-7, मूल्य 10/-

'नीड़ का निर्माण फिर' बहुत जगह पहुँची भी नहीं और मुझसे दूसरे संस्करण की प्रेस कॉपी मांगी गई है। लोग बड़े स्नेह से मेरी आत्मकथा अपना रहे हैं। आभारी हूँ।

राजा (आरेछेश वीर सिंह जूदेव) को मेरी कविता पंसद आई, अच्छी बात है पर मैं तो चाहता हूँ कि प्रजा को पसंद आए। शु.का.

सादर

बच्चन

***

द्वारा अमिताभ बच्चन

20, प्रेसीडेंसी सोसाइटी नार्थ साउथ रोड-7

जूही पार्ले स्कीम, बुंबई-56 एफ.एस.

सम्मान्य बंधु

06.11.71

आपका कृपा पत्र विलंब से पुन: प्रेषित हो बंबई में मिला। धन्यवाद। बहुत-बहुत आभारी हूँ कि आपने 'नीड़ का निर्माण फिर' इतने ध्यान से पढ़ा। 'कृतियाँ', 'मधुशाला' और 'नि.नि.' दोनों को लेकर कहा गया है।

'चरण छुए' ही होना था। मेरी भूल। 'स्वकेंद्रित' भी चलेगा।

'आशंका', जब तक निश्चिन्तता हो। 'संभावना' तब, जब विवाद न उठे।

फिर भी अगला संस्करण कराते समय मैं इन सुझावों पर फिर विचार करूँगा।

याद आता है कि ऐसी ही कृपा आपने 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' पर भी की थी।

आपके मंगल कल्याण के लिए मेरी शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

सादर

बच्चन

***

डा. रामस्वरूप आर्य ने बच्चन जी से आग्रह किया था कि वे अपनी एक ऐसी कविता स्वहस्तलेख में उन्हें भेजने की कृपा करें, जो कहीं प्रकाशित न हो। इसी के उत्तर में दिनांक 6.10.72 को बच्चन जी ने अपनी एक अप्रकाशित कविता डा. आर्य को प्रेषित की थी–

मैंने चिड़िया से कहा, मैं तुम पर एक
कविता लिखना चाहता हूं।
चिड़िया ने मुझसे पूछा, तुम्हारे शब्दों में
मेरे परों की रंगीनी है?
मैंने कहा, नहीं।
''तुम्हारे शब्दों में मेरे कंठ का संगीत है?''
''नहीं''
''तुम्हारे शब्दों में मेरे डैनो की उड़ान है?''
''नहीं''
''जान है?''
''नहीं?''
''तो तुम मुझ पर कविता क्या लिखोगे?''
मैं बोला, लेकिन तुमसे मुझे प्यार है।
चिड़िया ने उत्तर दिया, प्यार का शब्दों
से क्या सरोकार है?
एक अनुभव हुआ नया–
मैं मौन हो गया।

बच्चन

6.1072

डा. रामस्वरूप आर्य के विनोदार्थ

बंबई

***

27.4.73

सम्मान्य बंधु

पत्र मिला। ध.

सद्भावना के लिए आभारी हूँ। मेरा नव संग्रह 'जागा सवेरा' आपने देखा? इस प्रश्नोत्तर के बहाने निकल गया था। शुभकामनाएँ

बच्चन

***

हरिवंश राय बच्चन

सोपीन, बी-8, गुलमोहर पार्क, नई दिल्ली-49

6.6.83

प्रिय भाई,

पत्र के लिए धन्यवाद। सद्भावनाओं के लिए आभारी हूँ।

आपकी सुझाई बातों पर पहले से ध्यान रखा जा रहा है।

'ग्रंथावली' देखकर आपको संतोष होगा। शुभकामनाएँ

भवदीय

बच्चन

***

2. वीर रसावतार महाकवि पं. श्यामनारायण पाण्डेय के पत्र

श्रीः

द्रुमग्राम, मऊ, आजमगढ़

22.1.79

आदरणीय डा. साहब,

नमस्कार।

आपका पत्र मिला। आप निश्चिंत रहें। मैंने प्रह्लाद दास को 'वशिष्ठ' के लिए लिखा है, अभी उत्तर नहीं मिला। उत्तर प्राप्त होते ही सूचित करूँगा। 'आरती' की एक प्रति मेरे पास है। जब आपको नहीं मिलेगी तो भेज दूँगा। जिस लगन के साथ शोध हो रहा है, उससे हृदय प्रसन्न है। 'आरती' में मेरी हर विषय की स्फुट रचनाएँ हैं।

आप मेरे निवास स्थान पर आकर मुझे कृतकृत्य करना चाहते हैं, यह मेरे पुण्य

का परिणाम ही होगा। आपके स्वागत के लिए मैं तैयार मिलूँगा। जब आवें तो एक पत्र लिखकर सूचित कर दें, जिससे उस दिन उपस्थित रहूँ। जो शोधकर्ता 'वशिष्ठ' ले गया, उसका पता खोजने पर भी नहीं मिल रहा है। उसने लौटाने के लिए कहा था परंतु आज तक नहीं लौटाया, यही दु:ख है।

चि. चन्द्र प्रकाश को मेरा शत-शत आशी: कहें। सदा प्रसन्न रहें।

आपका

श्याम नारायण पाण्डेय

***

श्री:

डुमराँव, मऊ, आजमगढ़

11.2.79

माननीय डा. साहब,

चि. चन्द्रप्रकाश के पत्र के साथ ही आपका पत्र भी मिला। चि. चन्द्र प्रकाश द्वारा लिखित 'हल्दीघाटी में राष्ट्रीय भावना' और 'राष्ट्रनायक शिवाजी' दोनों लेख मनोयोग से पढ़ गया। दोनों लेख लेखक की अध्ययनशीलता की ओर संकेत करते हैं। लेख खोजपूर्ण हैं। 'शिवाजी' महाकाव्य पाठकों को शिवाजी के जीवन की गहराई को समझने के लिए परम सहायक सिद्ध होगा। हिन्दू शासक हर धर्म के प्रति निष्ठावान, सच्चरित्र तथा सभी वर्गों के संरक्षक होते हैं यह 'शिवाजी' महाकाव्य से सिद्ध होता है। इसे आपने उजागर किया है।

महाराणा प्रताप सिंह का नाम ही शौर्य और पराक्रम का द्योतक है। स्वराष्ट्र के लिए, स्वधर्म के लिए तथा जनहित के लिए प्राण होम देने वाले राणा का लेख में अच्छा चित्र खींचा गया है। उनका राष्ट्रीय स्वर लेख में गूँज रहा है। मैं चन्द्रप्रकाश को अपनी बधाई भेज रहा हूँ। भाषा को और प्रांजल बनाने तथा राणा प्रताप और शिवाजी के चरित्र को अधिक उज्ज्वल बनाने की आवश्यकता का अनुभव करता हूँ। चरित्रं की उज्ज्वलता शोध की सफलता होगी।

मेरा चित्र तैयार हो रहा है। हस्ताक्षरित चित्र तथा स्वहस्तलिखित कविता भी समय से भेज दूँगा। आधुनिक कवि, 11 प्राप्त कर लें। आपको बहुत कुछ मिल जायेगा। ध्यान से उसकी भूमिका पढ़ लें। प्रसन्न रहें।

श्याम नारायण पाण्डेय

***

श्रीः

श्री श्याम नारायण पाण्डेय

द्रुमग्राम, मऊनाथ भंजन, आजमगढ़ (उ.प्र.)

7.6.79

माननीय डा. साहब,

आपका पत्र चिरकाल बाद मिला। चि. चन्द्र प्रकाश आर्य शोध प्रबंध लेखन में व्यस्त होंगे। उनकी सफलता के लिए प्रभु से प्रार्थना कर रहा हूँ। बंगला भाषा के उपन्यास का नाम नहीं याद आ रहा है। यह बहुत दिनों की बात है, जब लिखने का कार्यक्रम बना रहा था और उनमें श्रद्धा उत्पन्न कर रहा था। नायक के प्रति जब तक श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती, तब तक मेरे लिए लिखना कठिन हो जाता है। इसलिए शिवाजी की जानकारी के लिए छोटी-बड़ी पुस्तकें पढ़ रहा था, लेख, कहानी, उपन्यास आदि। उन्हीं पुस्तकों में कहीं शिवाजी-जेबुन्निसा के प्रेम की बात पढ़ी थी, जिसने मेरे हृदय को आघात पहुँचाया। इसलिए मैंने 'शिवाजी' में भाई-बहिन का रूप दे दिया। आशा है आप अन्यथा न मानेंगे। हर जगह शिवाजी के निष्कलंक चरित्र का वर्णन ही है। आशा है आप सकुशल होंगे।

आपका

श्याम नारायण पाण्डेय

***

श्रीः

डुमराँव, मऊ, आजमगढ़

21.1.80

माननीय डा. साहब,

आपका पत्र मिला। हार्दिक प्रसन्नता हुई कि चि. चन्द्र प्रकाश आर्य ने अपना शोध प्रबंध पूर्ण कर लिया और निर्देशक द्वारा स्वीकृत भी हो गया। इसकी सूचना भी मिली कि ग्रंथ तैयार हो जाने पर एक प्रति आप भिजवायेंगे। अवश्य भेजें।

मेरी दाईं आँख का आपरेशन काशी में 25 जनवरी को होगा। मारवाड़ी सेवा संघ, अस्सी पर रुकना पड़ेगा। देखें कब तक प्रभु घर लौटाते हैं। 8-9 फरवरी को लड़की की विदाई भी करवानी है। इन्हीं झंझटों में दिन बीत रहे हैं। आशा है आप सपरिवार सानंद होंगे। प्रभु आपको प्रसन्न चित्त रखें।

आपका

श्याम नारायण पाण्डेय

3. प्रख्यात कथाकार और क्रांतिकारी यशपाल का पत्र

14.9.64

विप्लव कार्यालय, लखनऊ

प्रिय रामस्वरूप जी

आपका 11.9.64 का पत्र मिला, धन्यवाद। लगभग दो सप्ताह पूर्व 'बारह घंटे' की समीक्षा मिलने की सूचना देने तथा उसके प्रति आभार प्रकट करने के लिए आपके पते पर एक अंतर्देशीय पत्र लिखा था। विस्मय है, वह पत्र आप तक नहीं पहुँचा। अतः पुनः लिख रहा हूँ। मंगलकामना सहित।

आपका

यशपाल

***

4. प्रसिद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर के पत्र

818, खंडेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-6

10.6.83

प्रिय भाई

आपका पत्र पाकर खुशी हुई। सायं 8 बजे का ऐसा समय है, जब मैं प्रायः रेडियो के आसपास नहीं होता। सुविधा हो तो वार्ता की एक प्रति मुझे भिजवा दें। न हो तो चिंता न करें।

आप सानंद होंगे। शुभकामनाओं सहित

स्नेही

विष्णु प्रभाकर

***

818, खंडेवालान, अजमेरी गेट, दिल्ली-6

26.7.83

प्रिय भाई

आपका 20 जुलाई का पत्र व समीक्षा की प्रतिलिपि प्राप्त हुई। बहुत-बहुत आभार आपका। समीक्षा पर मेरी क्या प्रतिक्रिया हो सकती है। हाँ, समीक्षा मेरे लिए कुछ न कुछ प्रेरणादायक ही होती है।

आशा है सब प्रकार से ठीक होंगे।

स्नेही

विष्णु प्रभाकर

5.बहुमुखी प्रतिभासंपन्न तथा प्रख्यात् साहित्यकार डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी के पत्र

ए-33, रवींद्रपुरी, वाराणसी
10.3.75

प्रिय आर्य जी,

आपका 3 मार्च का कृपा पत्र मिला, अनुगृहीत हूँ। यह जानकार बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप 'सूर साहित्य संदर्भ' निकालने की योजना बना रहे हैं। सूर साहित्य से जो अंश आप लेना चाहते हैं, वह जरा पुराना पड़ गया है। आपको अगर वही पसंद है तो मैं उसे थोड़ा सुधार कर नये सिरे से लिखना चाहूँगा। आप लेख की टंकित प्रति भेज दें। मैं उसमें आवश्यक परिवर्तन कर दूंगा। शेष सब कुशल हैं। आशा है स्वस्थ एवं सानंद हैं।

आपका
हजारी प्रसाद द्विवेदी

***

ए-33 रवीन्द्रपुरी, वाराणसी
4.12.75

प्रिय आर्य जी,

मैं बाहर चला गया था। लगभग तीन सप्ताह बाद लौटा हूँ। आपका पत्र यहीं पड़ा हुआ था। आप मेरा लेख 'सूरकालीन साधना और समाज' ज्यों का त्यों ले लें। हमारे आसरे रहने से खामख्वाह देर होगी। इतना अवश्य लिख दें कि वह सूर साहित्य से लिया गया है।

शेष कुशल हैं। आशा है स्वस्थ हैं।

आपका
हजारी प्रसाद द्विवेदी

***

6 .महान उपन्यासकार और कवि नागार्जुन का पत्र

1.12.80

प्रिय बंधु,

आपका पत्र मिला था। मैं अस्वस्थ था। पटना से आया हूँ, चार दिन हुए। भाई ज्ञानेश हरित का भी पत्र मिला था। उन्हें अलग से पत्र लिखूँगा। कमजोर हूँ। अब ठीक हो जाऊंगा। अभी कई महीने इधर ही रहेंगे। बीच में

बिजनौर आ जाऊंगा।

आशा है, आप स्वस्थ-प्रसन्न हैं।

आपका
नागार्जुन
द्वारा श्री प्रभात मित्तल
प्रेम भवन, रेलवे रोड, हापुड़-245101

***

7. आधुनिक युग के पाणिनि और हिन्दी के महान व्याकरणाचार्य आचार्य किशोरीदास वाजपेयी के पत्र

कनखल
23.2.63

प्रियवर,

कार्ड मिला। मैं ने यही लिखा है कि 'पेम' कहीं बोला नहीं जाता। जायसी की वाणी भी बदली गई हो तो आश्चर्य नहीं। फारसी लिपि में 'पदमावत' आदि का चलन था। वह पृथक विचार की चीज है। 'मानस' में 'प्रेम' और 'पेम' विचारणीय है। 'प्रिय' को 'पिय', 'पिया' बोलते हैं, पर 'प्रेम' को 'पेम' नहीं।

कि.

***

हिमालय बुक एजेंसी, कनखल (उ.प्र.)
28.2.63

प्रियवर,

कार्ड 26 का मिला। एकाध व्यक्ति प्रेम से बच्चे को 'पेम' जैसा बोलने लगे, तो वह साहित्य के लिए कैसा रहेगा, सोचने की बात है। प्रदेश विशेष में व्यापकता हो, तब बात है। 'जायस' प्रतापगढ़ जिले में है। प्रतापगढ़, फतेहपुर, इलाहाबाद आदि में 'पेमचन्द' जैसे नाम मिले हैं क्या? वहाँ जा कर लोगों से पूछना चाहिए कि तुम्हारे पुरखों में कोई 'पेमचन्द' हुआ है? संभव है, जायसी ने 'पेम' ही लिखा हो। जैसे 'भूषण' ने 'स्मर' को 'समर' कर दिया। पर 'पेम' तथा 'समर' (स्टैंडर्ड) साहित्यिक शब्द न हों।

कुछ लोग 'कालेज' को 'कॉलेज' लिखते हैं। तब वे 'लालटेन' को 'लैनटर्न' भी लिखते होंगे।

कि.

***

8. यशस्वी साहित्यकार और साप्ताहिक 'धर्मयुग' के संपादक डा. धर्मवीर भारती का पत्र

पो.आ. बाक्स नं. 213 धर्मयुग

टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बंबई-1 सचित्र हिन्दी साप्ताहिक

प्रियवर,

चित्र सहित एक पृष्ठ की सामग्री जैसी श्यामसुंदर दास की शताब्दी पर गयी थी, बस उतना ही पं. पद्मसिंह शर्मा के लिए संभव हो पायेगा। इससे अधिक वर्तमान स्थिति में स्थानाभाव के कारण संभव न होगा।

भवदीय

2.8.75 धर्मवीर भारती

9. प्रख्यात् पत्रकार, पत्र विधा के पुरस्कर्ता तथा 'विशाल भारत' के यशस्वी संपादक डा. बनारसी दास चतुर्वेदी के पत्र

ज्ञानपुर, जि. बनारस

25.7.1973

प्रियवर,

कवि सम्मेलनों पर मैंने 'विशाल भारत' में काफी लिखा था। तभी से वे दंगल बन चुके थे और उनसे असंस्कृति का ही प्रचार होता था। पहले तो मैं उनके बन्द कर देने के पक्ष में था, पर पीछे मुझे अपना यह विचार अव्यवहारिक प्रतीत हुआ।

कवि सम्मेलन कितने ही भले बुरे कवियों की जीविका का साधन बन गए हैं। हिन्दी जनता में कविता सुनने की रुचि है और इस प्रकार अनेक कवियों को कुछ आर्थिक सुविधा मिल जाती है।

अपनी जबलपुर यात्रा में मैंने श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान के दर्शन किए थे। उन्होंने कहा था, "मैं कवि सम्मेलनों में जाना पसंद नहीं करती। पर क्या करूं, आर्थिक कठिनाइयों के कारण मुझे जाना पड़ता है।"

एक प्रतिष्ठित कवि ने, जो कालेज में अध्यापक हैं, मुझे बतलाया था कि साल भर में दो ढाई हजार रुपए उन्हें कवि सम्मेलनों से मिल जाते हैं, जिनसे कुछ काम चलता है।

स्वर्गीय शील चतुर्वेदी मंचीय कवि थे। उनके दर्शन के बाद मेरा यह विश्वास हो गया कि कवि सम्मेलन तो जीविका के साधन बन चुके हैं, वे बन्द

नहीं होने चाहिए, पर उनका सुधार होना चाहिए।

कवीन्द्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर हिन्दी के केवल एक ही सम्मेलन में पधारे थे-भरतपुर में-और उन्हें हिन्दी कवि सम्मेलन में बैठने का अवसर भी मिला था। उसका अच्छा प्रभाव उन पर नहीं पड़ा। जब उनसे कविता सुनाने के लिए कहा गया तो उन्होंने यह वेदमन्त्र पढ़ा।

ओ३म विश्वानि देव सवितरर्दुरितानि परा सुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव।।

(यजुर्वेद, 30.3 के इस मंत्र का स्व. दयानंद सरस्वती ने यह अर्थ किया है- सकल जगत के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्ध स्वरूप, सब गुणों के दाता परमेश्वर आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कर दीजिए। जो कल्याणकारक गुण-कर्म-स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हमें प्राप्त कराइए।)

भाई चन्द्रगुप्त जी कहते हैं कि इसमें कवि सम्मेलनों पर करारा व्यंग्य था। पुराने मासिक पत्रों के सर्वोत्तम लेख छपने ही चाहिए। मेरा यह विचार पुराना है। मैं राजपाल एंड संस को लिखना भी चाहता हूँ। आप भी इस बारे में लिखें।

विनीत-बनारसीदास

***

कोटद्वार, जिला गढ़वाल

प्रियवर,
14.12.1976

जीवित लेखकों पर शोधग्रन्थ तैय्यार करने की जो परम्परा हिन्दी जगत् में चल पड़ी है, वह अब बन्द नहीं होने की। मेरे जैसे दकियानूसी आदमी भले ही उसका विरोध करें।

मेरा ख्याल है...किसी भी लेखक का उचित मूल्यांकन उसके स्वर्गवास के 20-25 वर्ष बाद ही हो सकता है। श्री...हिन्दी के आन्दोलनों पर शोध करें तो कैसा? मेरा घासलेट-विरोधी आन्दोलन उन आन्दोलनों में शामिल हो सकता है। "हिन्दी में अश्लील साहित्य या छिछला साहित्य" कैसा विषय रहेगा? ... ...

मैं डा. रामविलास शर्मा जी से विवाद नहीं करूँगा, यद्यपि उन्होंने मेरे प्रति कुछ अन्याय किया है। 85वीं वय में वादविवाद करना अहमकपन होगा। उन्होंने बहुत काम किया है, उसकी मैं प्रशंसा ही करूँगा। निराला-भक्ति के आवेश में जो गलती उनसे बन पड़ी वह क्षन्तव्य है।

-बनारसीदास

***

कोटद्वार, गढ़वाल
20.3.1977

प्रियवर,

चुनाव का उपद्रव अब शान्त होने जा रहा है और अब हम लोगों को-साहित्य तथा सांस्कृतिक कार्यकर्ताओं को-अपने मिशन की पूर्ति के लिए दुगुने उत्साह से काम प्रारंभ कर देना चाहिए।

हर्ष तथा सन्तोष की बात है कि 'नवभारत टाइम्स' प्रति पक्ष इन विषयों पर लेख छापने को उद्यत हो गया है। उसका प्रचार भी काफी है।
भारत में कम से कम 25 करोड़ व्यक्ति हिन्दी-भाषाभाषी हैं और वे क्या सोचते हैं, क्या लिखते हैं, यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। दुर्भाग्य की बात यही है कि श्रद्धेय टंडन जी तथा बन्धुवर शिवपूजन सहाय की तरह के अखिल भारतीय दृष्टिकोण रखने वाले व्यक्ति हमारे बीच में बहुत कम विद्यमान हैं।

हिन्दी लेखकों, कवियों तथा पत्रकारों की निजी समस्याएँ हैं और कम से कम इतना तो हम कर ही सकते हैं कि महीने में दो बार उन पर विचार तो कर लें।

पाक्षिक पत्र-व्यवहार का प्रस्ताव मैंने बीस-पचीस वर्ष पहले हिन्दी जनता के सम्मुख रक्खा था, पर वह कार्यरूप में परिणत नहीं हो सका। यह कार्य एक-दो व्यक्तियों का है भी नहीं। और यह तभी सम्पन्न हो सकता है जब भिन्न-भिन्न जनपदों के व्यक्ति इसमें भरपूर सहयोग दें। यथासम्भव मैं अपने नोटों को सचित्र छपवाना चाहता हूँ। यद्यपि मैं अनुभव करता हूँ कि ऐसे शुभ आयोजन का प्रारंभ किसी 85 वर्ष के व्यक्ति को न करना चाहिए, तथापि इसे शुरू करने की हिमाकत कर रहा हूं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि कोई न कोई नवयुवक साहित्यसेवी इस मिशन को आगे चलकर अपना लेगा।

विनीत-बनारसीदास

***

फीरोजाबाद
(1978 के अन्त अथवा 1979 के प्रारंभ में)

प्रिय भाई रामस्वरूप जी आर्य,

बन्धुवर श्री विष्णुकांत मिश्र जी मुझ पर शोधग्रन्थ तय्यार करने वाले हैं, तदर्थ आवश्यक सामग्री लेने पधारे हैं। कम से कम दो-तीन व्यक्ति और भी ऐसा

करना चाहते थे पर मैंने उन्हें अनुमति नहीं दी। सुना है विलायत में जीवित व्यक्तियों पर शोधकार्य नहीं होता और वहीं की यह प्रथा मुझे भी पसंद है, पर भारत में इस व्यापार को स्वीकृति मिल गई है।

मैं तो अत्यन्त विज्ञापित व्यक्ति हूँ। स्व. सदाशिव गोविंद वझे (स्वेंन्ट्स ऑव इंडिया सोसायटी, पूना) ने सन् 1925 में ही, जब हम दोनों पूर्वी अफ्रीका की यात्रा कर रहे थे, मुझे 'ओवर एड्वर्टाइज्ड' (Over Advertised) की उपाधि प्रदान की थी और इन पिछले 53-54 वर्षों में मेरे नाम का और भी विज्ञापन हो गया है। पाठक भले ही उससे भ्रम में पड़ जायें, पर मैं स्वयं अपने बारे में कोई भ्रमात्मक धारणा नहीं रखता।

मेरा यह निश्चित मत है कि जो थोड़ी बहुत सेवा मेरे द्वारा बन पड़ी है, वह उस अनन्त अवकाश के मुकाबले, जो मुझे मिलता रहा है और अब भी मिल रहा है-बहुत कम है। किसी बुद्धिमान का कथन है, "That man alone is rich, who owns his time" यानी वही धनवान है जो अपने वक्त का मालिक है। इस दृष्टि से मैं निस्सन्देह अत्यन्त सौभाग्यशाली व्यक्तियों में से हूं। 3 अगस्त 1920 से ही मैं अपने वक्त का मालिक रहा हूँ। यदि मैं पिछले 58 वर्षों का सदुपयोग कर सकता तो कुछ उल्लेखनीय सेवा मुझसे बन पड़ती, पर अपने अनाचारमय जीवनक्रम के कारण मैंने अपने समय, शक्ति तथा साधनों का दुरुपयोग ही अधिक किया।

जितने महापुरुषों का कृपापात्र बनने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ, उतने महानुभावों के चरणों के निकट पहुँचने का मौका बहुत कम को मिला होगा। कवीन्द्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महात्मा गांधी, दीनबन्धु ऐन्डूज, माननीय श्रीनिवास शास्त्री, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, अमर शहीद गणेशशंकर विद्यार्थी इत्यादि का कृपाभाव मुझ पर रहा और हिन्दी जगत् के महान लेखकों तथा कवियों का भी मुझ पर अनुग्रह रहा। महाराज वीर सिंह जू देव ओरछेश ने मुझे भरपूर सहायता दी और उनके तथा बुन्देलखंड के ऋण से मैं जीवनपर्यंत उऋण नहीं हो सकता और भाई सीताराम जी सेकसरिया तथा भाई भागीरथ कानोडिया जी से मुझे सहायता मिलती रही है। कुछ स्थानीय व्यक्ति भी-जैसे बालकृष्ण गुप्ता-मेरे सहायक रहे हैं। अपनी 87वीं वर्ष के प्रारंभ में मैं उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रगट करता हूँ। बिना किसी अत्युक्तिमय धारणा के मैं अपने कार्य के बारे में कुछ लिख रहा हूँ। मार्च 1912 से मैं निरन्तर लिखता रहा हूं और पिछले 66-67 वर्षों में मैंने न जाने कितने पृष्ठ काले किए होंगे।

अपने कार्य को मैं कई भागों में बांट सकता हूँ। 22 वर्षों का सर्वोत्तम समय 1914 से 1936 तक प्रवासी भारतीयों की सेवा में व्यय हुआ। तत्पश्चात् 35 वर्ष शहीदों के श्राद्ध तथा क्रांतिकारियों की सेवा में। साहित्यसेवियों की कीर्तिरक्षा तथा हिन्दी संस्थाओं की स्थापना के कार्य इसी बीच में चलते रहे।

जो भी व्यक्ति मेरे कार्य का उचित मूल्यांकन करना चाहे, उसे शान्तिनिकेतन के हिन्दी भवन, प्रयाग के हिन्दी साहित्य सम्मेलन में सत्यनारायण कुटीर तथा कुंडेश्वर (टीकमगढ़) में गांधी भवन की यात्रा करनी पड़ेगी। मेरे लिए यह परम दुर्भाग्य की बात हुई कि दिल्ली का हिन्दी भवन, जिसमें मेरे 1.1 वर्ष का अवकाश लग गया था, अब विद्यमान नहीं है।

आचार्य पं. पद्मसिंह शर्मा का विशेष आग्रह था कि मैं प्रवासी भाइयों के कार्य को छोड़कर परलोक-प्रवासी साहित्यसेवियों की कीर्तिरक्षा करूं। उन्होंने लिखा था, ''इस कूचे में भी मुर्दे मुहताज हैं कफन के। आप कफन देते हार जाएंगे फिर भी कितने ही मुर्दे बिना कफन के रह जाएंगे।''

मैं उनकी आज्ञा का पालन कर सका, यह दम्भ मैं नहीं कर सकता। फिर भी थोड़ी सी सेवा उस दिशा में बन पड़ी।

कीर्तिरक्षा के पुण्य कार्य में मैं छोटे-बड़े का भेद नहीं रखता। महात्मा गांधी से लगाकर छोटे से छोटे रचनात्मक कार्यकर्ता की कीर्तिरक्षा का मैं पक्षपाती हूँ। मेरे रेखाचित्र तथा संस्मरण इस बात के सबूत हैं। साहित्यिक क्षेत्र में मैं कई वर्षों तक कुछ जीवित रहूंगा, ऐसी आशा मैंने कभी नहीं रक्खी। फिर भी इतनी उम्मीद तो रखता ही हूँ कि मेरे द्वारा लिखित कुछ जीवनचरित्र तथा कुछ रेखाचित्र कुछ वर्षों तक जीवित रहेंगे। 'मधुकर', 'विन्ध्यवाणी' तथा 'विशाल भारत' द्वारा कुछ लेखकों तथा कवियों की जो सेवा बन पड़ी, उसे मैं अपने जीवन की सबसे बड़ी कमाई मानता हूँ।

आचार्य पद्मसिंह जी शर्मा, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, महाकवि दिनकर जी, बहन सत्यवती मलिक, स्व. कमला चौधरी, भाई श्रीराम शर्मा तथा अज्ञेय जी ने 'विशाल भारत' पर जो कृपा की, उसे मैं कदापि नहीं भूल सकता। भाई श्यामसुन्दर खत्री शरू से मेरे सहायक रहे और 'विशाल भारत' की सफलता में 75 फीसदी श्रेय श्री ब्रजमोहन वर्मा को ही था। शान्तिनिकेतन में हिन्दी भवन की स्थापना का श्रेय भाई सीताराम जी सेकसरिया तथा भगीरथ जी कानोडिया को ही मिलना चाहिए। हिन्दी भवन तथा उसके कार्यों के लिए मारवाड़ी भाइयों ने एक लाख से ऊपर खर्च कर दिया।

साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता तथा जातीय विद्वेष इन तीनों के खिलाफ 'विशाल भारत' ने निरन्तर जन-आन्दोलन किया था। मैं यह भी कभी नहीं भूल सकता कि गुरुवर पं. सुन्दरलाल जी ने ही मुझे 'विशाल भारत' में भेजा था। सत्यनारायण कुटीर स्व. टंडन जी की कृपा से निर्मित हो सका और गांधी भवन महाराज ओरछा की उदारता से। नई दिल्ली के हिन्दी भवन के लिए गत वर्ष तक बहन सत्यवती मलिक ने कार्य किया। मैं racial feelings (जातीय विद्वेष) के खिलाफ रहा हूँ। दीनबन्धु ऐन्ड्रूज का सम्पूर्ण जीवन इसी मिशन में बीता था और वे मेरे लिए पितृतुल्य पूज्य थे। मेरी पुस्तकें 'हमारे आराध्य' और 'सेतुबन्ध' ये दोनों मेरी मनोवृत्ति की सूचक हैं।

मेरे कामों में कौन कुछ चिरस्थायी होगा, इस प्रश्न का उत्तर देना मेरे लिए कठिन है। शायद जनपदीय काम को यह गौरव मिले। उसकी पृष्ठभूमि में आचार्य श्री वासुदेवशरण अग्रवाल के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'पृथ्वीपुत्र' को कभी भुलाया नहीं जा सकता। उस आन्दोलन को आगे बढ़ाया श्री जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी, वृन्दावनदास और कुलदीप नारायण राय 'झड़प' ने।
यह आंदोलन सदा प्रगति करता रहेगा और कभी न कभी अवधी, भोजपुरी तथा बुन्देलखंडी इत्यादि को अपना उचित स्थान प्राप्त होगा।

मैं कोई प्रतिभाशाली लेखक नहीं हूँ और मूलतः पत्रकार ही हूँ, जिसका समय क्षणिक घटनाओं में ही बीतता रहता है। मैं यह बात खेदपूर्वक स्वीकार करता हूँ कि मेरे द्वारा अपनी मानसिक सन्तान की उपेक्षा ही हुई है-अपनी किताबों को छपाने तथा उनके पुनर्मुद्रण के लिए बहुत कम प्रयत्न किया है। छुटभइयों को प्रोत्साहन मेरा एक मिशन ही रहा है और उनकी कीर्ति में मैं अपनी कीर्ति भी मानता रहा हूँ।

राष्ट्रीय अभिलेखागार में मेरा संग्रह भी मुझे कुछ दिन जीवित रखेगा। शेष संग्रह की रक्षा के लिए मैं चिन्तित हूँ। कम से कम मेरी 8-9 पांडुलिपियाँ अप्रकाशित पड़ी हैं। पर पत्रलेखन के व्यसन में वक्त ही नहीं निकाल पाया कि उनके प्रकाशन का कुछ प्रबंध कर सकूं।
I must have written at least a lakh of letters and quite a large number of them were in English.
लेकिन पत्रलेखन-कला के आचार्य तो पं. पद्मसिंह शर्मा ही थे। हाँ, अच्छे पत्र लिखा लेने (लिखने नहीं) का श्रेय मुझे मिलना चाहिए। पत्रलेखन की विधा को मैंने कुछ आगे जरूर बढ़ाया।

मेरी एक आकांक्षा है-वह यह कि कभी न कभी ऐसा संग्रहालय कायम हो, जहाँ आजकल के लेखकों तथा कवियों के हृदय का स्पन्दन सुना जा सके, जो उनके पत्रसंग्रह से ही सम्भव है।

ढाई-तीन वर्षों के पाठ्यक्रम के पत्रकार महाविद्यालय की स्थापना पर भी मैं जोर देता रहा हूँ पर वह अभी तक कायम नहीं हो सका। मेरे द्वारा संचालित आन्दोलन-जैसे घासलेटी साहित्य विरोधी आन्दोलन-अपना अलग स्थान रखते हैं।

I have already spoken a lot of nonsense about myself and about my work.

हिन्दी तिथि पौष सुदी 2 मेरा जन्मदिन है और अभी 87वीं वर्ष का प्रारंभ मैं इस खत से कर रहा हूँ।

विनीत-बनारसीदास चतुर्वेदी

***

फीरोजाबाद

15.11.1980

प्रिय भाई आर्य जी,

प्रणाम। पिछला पत्र मिला होगा। बिजनौर जनपद के साहित्यसेवियों की कीर्तिरक्षा के लिए भरपूर प्रयत्न होना ही चाहिए। आप जानते ही हैं कि मैं स्वर्गीय रुद्रदत्त जी तथा स्वर्गीय पद्मसिंह जी इन दोनों का कृपापात्र था। आचार्य पद्मसिंह जी पर 'विशाल भारत' का विशेषांक भी मैंने निकाला था और 'सैनिक' का विशेषांक भाई हरिशंकर जी ने तथा मैंने निकाला था। उनके पत्र भी छापे थे।

एक अत्यन्त आवश्यक कार्य है आचार्य पद्मसिंह जी विषयक शोधग्रन्थ का प्रकाशन। उसे स्व. हरिशंकर जी की पौत्री श्रीमती मधु ने प्रस्तुत किया है और डा. रामविलास शर्मा प्रभृति ने उसकी बड़ी प्रशंसा की है। क्या आपके परिचित कोई प्रकाशक उसे छाप सकेंगे? पूरा न सही, 300 पृष्ठ ही सही।

जो जीवन भर दूसरों की कीर्तिरक्षा ही करते रहे उनकी कीर्तिरक्षा होनी ही चाहिए।

सम्पादकाचार्य रुद्रदत्त जी के लिखे 36 पृष्ठ मेरे पास थे। वे शायद नशनल आर्काइव्ज में हैं। उनकी लिखी अर्जी भी। रुद्रदत्त जी का एकाध ग्रन्थ शायद हरिशंकर जी (शर्मा) के संग्रह में हो। आप श्री विद्याशंकर शर्मा एम.ए. (शंकर सदन, 193 जयपुर हाउस कालोनी, आगरा) से पत्र-व्यवहार करें। मधु उनकी पुत्री है।

बनारसीदास

***

10. ऋषिकल्प मनीषी साहित्यकार और जनपदीय आन्दोलन के अन्यतम सूत्रधार डा. वासुदेव शरण अग्रवाल के पत्र

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
22.8.62

प्रिय श्री रामस्वरूप जी,

9.8.62 का पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि आपने मेरे जायसी संस्करण की भूमिका पढ़ ली है। उसके पढ़ने के बाद भी आपको यह सन्देह कैसे रह गया कि जायसी के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के लिए कौन-सा मूल पाठ लेना चाहिए। नागरी प्रचारिणी सभा के संस्करण में यह नहीं बताया गया है कि वह किन प्रतियों के आधार पर तैयार किया गया। जायसी की आज एक से एक अच्छी कई प्रतियाँ उपलब्ध हैं। अतएव मनमाने ढंग से उसका पाठ नहीं चलाया जा सकता। गुप्त जी के संस्करण का पाठ भाषा विज्ञान की दृष्टि से कहीं अधिक उत्कृष्ट और प्रामाणिक है। मैंने वही पाठ बहुत सोच-विचार कर स्वीकार किया था और उसके बाद भी जो कई बढ़िया प्रतियाँ मुझे मिलीं, उनका उपयोग पाठ निर्धारण में किया है। उसके बाद भी दो अन्य प्रतियाँ मेरे देखने में आई हैं। एक रामपुर पुस्तकालय में और दूसरी भारत-कला भवन, काशी में। इन दोनों के महत्वपूर्ण पाठभेद मैंने अपनी संजीवनी टीका के दूसरे संस्कारण में परिशिष्ट रूप में दे दिए हैं। यह नया संस्कारण साहित्य सदन, चिरगांव, झांसी से पिछले महीने ही निकला है। एक बात स्मरण रखनी चाहिए-जायसी के सौ वर्ष बाद ही उनके अर्थ दुरूह हो गए थे। तब से पाठ बदलने शुरू हुए। आगे चलकर यह नियम हो गया कि जितने कठिन पाठ स्थल थे, सबके पाठ बदल दिये गए। यही बदले हुए पाठों वाला संस्करण सभा का संस्करण है जो मूल पाठ से दूर जा रहा है।

शुभेच्छु
वासुदेव शरण

***

काशी वि.वि.
10.11.63

प्रिय श्री रामस्वरूप जी,

30-10 का पत्र मिला। जायसी की अवधी भाषा पर आपके शोध कार्य की बात जानकर हर्ष हुआ। आपका पूछा हुआ पता यह है-

श्री राम शर्मा, घासी बाजार, हैदराबाद (दक्खिन)

कीर्तिलता की संजीवनी व्याख्या साहित्य-सदन, चिरगांव से प्रकाशित हुई है। अमरेश द्वारा सम्पादित मसलानामा छप गया है। मेरी दृष्टि में वह प्रामाणिक ही है। चित्रावत, चित्ररेखा में नाममात्र का अंतर है। अतएव मैंने दोनों के एक होने का अनुमान किया है । होलीनामा कोई अलग पुस्तक ही हो तो भी यह बहुत सम्भव है कि जायसी ने स्वयं अपनी ही कृति को पदमावत में भी स्थान दे दिया हो। यह एक सम्भाव्य अनुमान है।

शुभेच्छु
वासुदेव शरण

***

काशी हि.वि.वि.
7.5.64

प्रिय श्री रामस्वरूप जी,

आपका 12.11.63 का स्नेहपूर्ण पत्र मिला। आपकी हार्दिक प्रीति जानकर प्रसन्नता हुई। मातृभाषा हिन्दी की जो कुछ भी स्वल्प सेवा मुझसे हुई है, उसके लिए हिन्दी जगत् निरन्तर मेरा अभिनन्दन कर रहा है। इसका अनुभव मुझे उन पत्रों के रूप में प्राप्त होता है, जो प्रेमी पाठक मुझे लिखते रहते हैं। इसके अतिरिक्त मुझे और किसी औपचारिक अभिनन्दन की आकांक्षा नहीं है और न कभी जीवन में मैं अपने को उसके लिए तैयार कर सकूँगा। हिन्दी से जो मैंने पाया है वह कुबेर का भण्डार है और मैं उससे आत्मतृप्त हूं। श्री आनन्द कुमार स्वामी के समान मेरी अभिलाषा उस अकिंचनत्व स्थिति में जाने की है, जहाँ सब इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। मेरे लिए साहित्य सेवा अध्यात्म का द्वार उन्मुक्त करती है। अथर्ववेद के शब्दों में यह मेरा आदर्श है-अकामौ धीरो अमृत: स्वयम्भू रसेन तृप्तो न तुतश्चनोन: ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

***

11. हिन्दी पाठालोचन के दधीचि तथा क.मु. हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ के निदेशक डॉ० माता प्रसाद गुप्त का पत्र

माता प्रसाद गुप्त
एम.ए., एल.एल.बी., डी.लिट्.
क.मु. हिन्दी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ

आगरा विश्वविद्यालय, आगरा

निदेशक 13.2.1967 ई.

प्रिय श्री रामस्वरूप आर्य,

नमस्कार।

आपके द्वारा प्रेषित चार हस्तलिखित ग्रंथ-

1. न्याय-पद्धति---पत्र 4
2. सुंदरी तंत्र जानकी जनक संवाद---पत्र 14
3. रामायण भूषण (बालकांड) संस्कृत---पत्र 68
4. प्रपन्नामृत राम चरित्र---पत्र 149

विद्यापीठ के संग्रहालय के लिए सधन्यवाद प्राप्त हुए। इसी प्रकार साहित्य-सेवा और सर्जना में संलग्न रहें। आशा है सपरिवार स्वस्थ एवं सानंद होंगे।

माता प्रसाद गुप्त

***

12. प्रसिद्ध साहित्यकार, क.मु. हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ, आगरा के निदेशक तथा 'साहित्य अमृत' के संपादक डा. विद्या निवास मिश्र का पत्र

क०मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ

आगरा विश्वविद्यालय, आगरा

दिनांक 23-4-82

प्रिय आर्य जी,

आपका पत्र मिला, श्री पं. बनारसी दास जी के सुझाव से पं. पद्म सिंह की ग्रन्थावली छापी जाये, कृपया अपने अध्ययन के आधार पर आप सूचित करें कि कौन-कौन से ग्रन्थ छपे हैं, उनकी कौन-कौन सी रचनाएँ अभी तक नहीं छपीं और आप इस कार्य में कितनी सहायता कर सकेंगे, भारतीय साहित्य के लेख के सम्बंध में श्री संयुक्त सम्पादक जी आपको भली प्रकार से सूचित करेंगे।

विद्यानिवास मिश्र

निदेशक

डा. रामस्वरूप आर्य, वर्धमान कालेज, बिजनौर

13 .नई कविता के प्रवर्तक, इलाहाबाद विश्व. के पूर्व अध्यक्ष तथा 'हिन्दुस्तानी' के संपादक डा. जगदीश गुप्त का पत्र

डॉ० जगदीश गुप्त
एम.ए., डी.फिल.
प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद दिनांक 23.9.88

श्रीयुत आर्य जी,

आपका पत्र और कार्ड दोनों मिले। मुझे प्रसन्नता है कि आपने तत्परता से सामग्री भेज दी। हिन्दी उर्दू हिन्दुस्तानी का प्रकाशन जब भी होगा मैं उसकी भूमिका में आपका संदर्भ दे दूँगा। किन्तु जहाँ तक रामचन्द्रिका की पाण्डुलिपि का संदर्भ है उसके बारे में दो पृष्ठों की छायानुकृति मात्र से कुछ लिखना संभव नहीं है। अच्छा हो कि आप स्वयं उस प्रति के विषय में एक लेख बनाकर 'हिन्दुस्तानी' में प्रकाशनार्थ भेज दें। मैं उसे अवश्य छाप दूँगा। पाण्डुलिपि के जो फोटोग्राफ आप भेजेंगे उन्हें भी आवश्यकतानुसार छापा जा सकता है। आपका संग्रह देखने की उत्सुकता बढ़ गयी है। कभी सुयोग होगा तो अवश्य देखूँगा।

सद्भाव सहित,
जगदीश गुप्त
81-ए/1, नागवासुकि, प्रयाग-6

सेवा में,
डॉ. रामस्वरूप आर्य, बिजनौर

***

14. प्रसिद्ध साहित्यकार डा. रघुवीर शरण 'मित्र' का पत्र

डा. रघुवीर शरण 'मित्र', डी०लिट्०
204-ए, 'कला भवन' पुलिस स्ट्रीट,
सदर, मेरठ-250001 दिनांक 6.8.1987

परम आत्मीय,

नमस्कार।

आशा है आप स्वस्थ और सानन्द हैं।

यह तो आप जानते ही हैं कि साहित्य के क्षेत्र में राजनीति के क्षेत्र से कहीं अधिक दलदल है। फिर मेरे तो अपने ही जयचन्द और मीरजाफर हैं। कुचलने के षड्यंत्र गति रोकते रहते हैं। मैं अकेला कलम का मजदूर घर बाहर के कुचक्रों में जी रहा हूँ। कभी-कभी तो जीवन अखरने लगता है, पलायन करने लगता हूँ कि आज के युग में उचित मांग से भी कान्ति खो जाती है। फिर भी समर्थ विद्वानों से, सहृदय मित्रों से मन की बात कहना ठीक लगता है।

यदि बिना किसी कष्ट के प्रेम प्रदान करेंगे तो आभार मानूँगा। आप चाहकर और यत्न करके भी कुछ नहीं कर पाये तो भी सुख मानूँगा कि मुझे जो कहना था, कह दिया। अच्छा या बुरा जो भी होगा, वह सब समय का विधान और भाग्य का खेल समझ कर संतोष करूँगा। प्रेम बना रहे,

आपका

डा. रामस्वरूप आर्य, नई बस्ती, बिजनौर — डा. रघुवीर शरण 'मित्र'

***

15. प्रसिद्ध साहित्यकार पं. सीताराम चतुर्वेदी का पत्र

।।श्री: ।।

वेदपाठी भवन, मुजफ्फरनगर-251002

7.3.88

प्रिय श्री आर्य जी,

सस्नेह हरिस्मरण।

आपका 5.3.88 का पत्र मिला। साधुवाद।

जो दोहा 'तुलसी अपने राम को' लिखा है, वह गोस्वमी तुलसीदास का नहीं है। मैंने मैथिलीशरण गुप्त जी से भी कहे दिया था कि यह दोहा तुलसी का नहीं है। उन्होंने विनोद में कहा था कि उस पर 'तुलसी' नाम की मुहर देखकर उन्हीं का मानकर लिख दिया गया था, क्योंकि यह उन्हीं का लग रहा था। 'ठुमुकि चलत रामचन्द्र' वाला पद 'श्रीरंग' का है और उसमें 'ठुमुकि' के बदले 'झुमुकि' शब्द है। मैंने आकाशवाणी को भी लिखा था और उन्होंने पाँच महीने खोजबीन करके सूचित किया कि हाँ, यह तुलसी का नहीं है। आशा है आप प्रसन्न होंगे

सस्नेह

सीताराम चतुर्वेदी

***

16. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के वंशज श्री गिरीशचन्द्र चौधरी के पत्र

भारतेन्दु भवन, चौखंभा, काशी

17.9.82

प्रिय डॉ० आर्य जी,

सप्रेम वंदे।

आपका 13.9 का कृपा पत्र आज प्राप्त कर अत्यन्त हर्ष हुआ। आपकी

भारतेन्दु में इतनी श्रद्धा देखकर मैं अनुगृहीत हूँ। उनकी गवाही की पूरी प्रति हम लोगों ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में स्थित भारत कला भवन में 'भारतेन्दु कक्ष' की स्थापना हेतु दे दी है। यह वहीं से उपलब्ध हो सकती है। आप कभी काशी पधारें तो दर्शन करा दूँगा। मेरे पूर्वजों पर आप प्रेम रखते हैं, एतदर्थ बहुत संतोष है। शुभकामनाओं सहित–

भवदीय
गिरीशचन्द्र चौधरी

***

भारतेन्दु भवन, काशी
7.5.92

प्रिय डॉ० आर्य जी,
सप्रेम वन्दे।

आपका 20.3 का पत्र पाकर हर्षित हुआ। पत्रोत्तर विलंब हेतु क्षमा प्रार्थी हूँ। सांसारिक विघ्न बाधाओं के कारण साहित्यिक रसास्वादन के अमृत से वंचित रहा। मल्लिका का उपन्यास अभी प्रकाशित नहीं हुआ है। व्यावसायिक लूट खसोट से बचाकर रख रहा हूँ, अत: उसकी दुर्दशा व धनादोहन से भी रक्षा हो, इस कारण शीघ्रता से कोई निर्णय नहीं ले रहा हूँ। आपकी इन जिज्ञासाओं से बहुत संतोष एवं लाभ भी हुआ। राय कृष्णदास की पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। वस्तुत: मल्लिका चन्द्र ही नाम है ना कि मल्लिक चन्द्र क्योंकि मल्लिक चन्द्र का कोई अर्थ नहीं है।

हरिश्चन्द्र चंद्रिका की फाईल हम लोगों ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भारत कला भवन को प्रदान कर दी है। इसके अलावा यह नागरी प्रचारिणी सभा में भी उपलब्ध है। आप इन दोनों जगहों से मुखपृष्ठ की छवि पा सकते हैं।

आपके सत्कार्य हेतु अनेक बधाई। योग्य सेवा नि:संकोच लिखें। पत्रोत्तर के विलंब की पुन: पुन: क्षमा प्रार्थना सहित।

भवदीय
गिरीशचन्द्र चौधरी

***

17. महाकवि जयशंकर प्रसाद के सुपुत्र श्री रत्नशंकर प्रसाद का पत्र

प्रिय श्री आर्य जी,

पूज्य पिताजी के सहपाठी स्व. ईश जी (चौ. लक्ष्मी नारायण 'ईश') के द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर ग्रंथावली में उल्लेख है। स्व. राय कृष्णदास जी के अनुसार तालिका में क्रम है सही कौन माना जाये, इसके विषय में विचार करना होगा।

पत्र, फोटोग्राफों एवम् कटिंग के लिए धन्यवाद।

आपका

6.3.90 रत्नशंकर प्रसाद

***

18.हिन्दी के भीष्मपितामह, आकाशवाणी के पूर्व उप निदेशक, मध्य भारत के पूर्व शिक्षा निदेशक तथा 'सरस्वती' के पूर्व संपादक पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी का पत्र

एस.एन. चतुर्वेदी — आदित्य-शैल, 53, खुर्शेद बाग

एम.ए. (लंदन), पूर्व उपनिदेशक (आकाशवाणी) — लखनऊ-4

पूर्व शिक्षा निदेशक (मध्य भारत) — दिनांक-17.10.71

प्रिय आर्य जी,

आपके दो पत्र मिले। इधर मेरी भांजी के पति की मृत्यु हो गयी। पति रोडवेज में स्टेशन अधीक्षक था, अवस्था केवल 40 वर्ष की थी। इससे बहुत व्यस्त और उद्विग्न रहा। अतएव तुरंत उत्तर नहीं दे सका। इसके बाद ही आपका दूसरा पत्र मिला।

'डिप्टी की डायरी' समाप्त होने पर मैं लेखक से पूछकर उन पर परिचायक टिप्पणी लिखूँगा, किन्तु यह नहीं कह सकता कि वे इसके लिए राजी होंगे, क्योकि डायरी में बहुतों की 'मरम्मत' का भाव है। उनका नाम प्रकाशित होने से बहुत से संबंधित व्यक्ति पहचाने जा सकेंगे। मुझे यह अभीष्ट नहीं है और न शायद उनको है। मेरा उद्देश्य तो सरकारी तंत्र की कार्यप्रणाली का भीतर से एक विहंगम परिदर्शन कराना था। 30 के बाद इसे समाप्त कर दूँगा और तब भारत दर्शन के नाम से एक राजनीतिक कार्यकर्ता के इसी प्रकार के अनुभवों की लेखमाला प्रकाशित करूँगा। कभी-कभी ऐसे नाजुक कारण आ जाते हैं कि नाम का संगोपन आवश्यक हो जाता है।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपके एक छात्र 'सरस्वती' के योगदान पर शोध का विचार कर रहे हैं। मुझसे जो सहायता हो सकेगी, करूँगा। इंडियन प्रेस

से संबंधित प्रायः सभी पुराने लोग समाप्त हो गये हैं। केवल पं. लल्लीप्रसाद पांडेय जीवित हैं। वे भी 85 वर्ष के हैं, शिथिल हो गये हैं और स्मृति भी बहुत अच्छी नहीं रही। ठाकुर श्रीनाथ सिंह और ज्योति प्रसाद मिश्र निर्मल प्रयाग ही में हैं। दोनों ही बहुत कुछ सहायता कर सकते हैं। मैं प्रेस को लिखकर 'सरस्वती' की फाइलें देखने की सुविधा दिलवा दूँगा-यद्यपि वे उन्हें प्रेस से बाहर ले जाने की अनुमति नहीं देंगे। वैसे भी 'सरस्वती' की बहुत-सी फाइलें अनेक पुस्तकालयों में उपलब्ध हैं।

मैंने कुछ पुस्तकें आपके लिए छाँट ली हैं, उन्हें समय मिलते ही भेजूँगा। श्री विनोद शर्मा अभिनंदन ग्रंथ मैंने इसलिए निकाला था कि मेरी जानकारी में उन दिनों कई लोग अपने प्रयत्नों से और कभी-कभी स्वयं या मित्रों से रुपया जमाकर अथवा अपने परिवार वालों से रुपया लगवाकर, उन्हें निकालते थे। यह क्रम आज भी चल रहा है, कुछ उच्च पदस्थ लोगों की खुशामद में उनके चाटुकार निकालते थे। मैं केवल दो अभिनंदन ग्रंथों को जानता हूँ। जो विशुद्ध सात्विक थे, जिनका सम्बंधित व्यक्ति से दूर का भी सम्बंध नहीं था। द्विवेदी जी का, जो हिन्दी का पहला अभिनंदन ग्रंथ था और दूसरा राजर्षि टंडन का और भी एक-दो ऐसे हों, किन्तु मुझे उनका व्यक्तिगत ज्ञान नहीं है। सम्पूर्णानंद को 2 या 3 अभिनंदन ग्रंथ समर्पित हुए। एक-दो सप्ताह में भगवती प्रसाद वाजपेयी को तीसरा अभिनंदन ग्रंथ समर्पित हो रहा है, कहने की आवश्यकता नहीं कि यह उन्हीं के प्रयत्नों का फल है। इसलिए मैंने नियम बना लिया है कि मैं किसी अभिनंदन ग्रंथ में लेख नहीं लिखता-टंडन जी के ग्रंथ में भी लेख नहीं लिखा। सोहनलाल द्विवेदी मेरे विशेष मित्र हैं, मैंने उनका संपादन उनके आग्रह से कर दिया, पर उसमें भी कोई लेख नहीं लिखा। केवल भूमिका लिख दी थी किन्तु उसमें भी नाम नहीं दिया। हिन्दी में स्मृति ग्रंथ कम निकले हैं किन्तु जो सर्वप्रथम निकला, वह गौरीशंकर हीराचन्द ओझा का था और जयचन्द्र विद्यालंकार ने उसका संपादन किया था। वह संसार की किसी भी भाषा का गौरव हो सकता है।

मैंने श्री विनोद शर्मा अभिनंदन ग्रंथ, अभिनंदन ग्रंथों का खोखलापन प्रदर्शित करने के लिए लिखा था। मैं हास्य और व्यंग्य, इसी उपनाम से लिखता हूँ। मेरी व्यंग्य कविताओं का संग्रह 'छेड़छाड़' भी इसी नाम से छपा है। 'राजभवन की सिगरेटदानी' गद्य व्यंग्यात्मक लेखों का संग्रह है। इसे दिल्ली के राधाकृष्ण प्रकाशन ने निकाला है। श्री विनोद अभिनंदन ग्रंथ की सीमित प्रतियाँ अपने व्यय से छपायी थीं। मेरे पास भी कुछ ही प्रतियाँ बच रही हैं, मैं एक प्रति अलग

रजिस्ट्री से भेज रहा हूँ।

दूसरे पत्र के सम्बंध में क्या कहूँ? मैंने कभी किसी सम्मान की इच्छा नहीं की। सन् 1937 में सरकार ने मुझे राय साहब और 1939 या 40 में रायबहादुर बना दिया था। उनकी प्रशस्तियाँ मेरे पास रखी हैं। कहीं कागजों में पड़ी हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने मुझे नामालूम क्यों साहित्यवाचस्पति की उपाधि दी जिसका मैं सम्मान करता हूँ। उसकी प्रशस्ति की एक प्रति रजिस्ट्री में रख दी है। मैं तो छोटा आदमी हूँ। 80 रुपये पर जमना मिशन स्कूल में अध्यापकी आरंभ की थी। मेरे पूज्य पिता सिविल सर्जन के हेड क्लर्क थे। उन्हें साहित्य से प्रेम था। उन्होंने 'राघवेन्द्र' का सेवा काल में कई वर्ष संपादन किया था और कई पुस्तकें लिखी थीं। उनमें एक वारेन हेस्टिंग्स का जीवन चरित्र भी था। वह काफी बड़ी पुस्तक है। सरकार ने उसे अंग्रेज-विरोधी समझा और 18 वर्ष की सेवा एक घंटे में समाप्त कर दी। तब उन्होंने लेखन कार्य करके जीवन चलाया। चार आना पृष्ठ पर लाला रामनारायण, इलाहाबाद के लिए पुस्तकें लिखीं। तब मैं 10वीं कक्षा में था। उन्होंने हिन्दी का पहला आधुनिक कोश 'शब्दार्थ पारिजात' तैयार किया, जिसके 15-16 संस्करण हुए। पर उस पर रायल्टी नहीं थी। उन्होंने संस्कृत-हिन्दी कोश लिखा, जो आज भी प्रचलित है। उन्होंने हिन्दी का प्रथम और अद्यापि एकमात्र जीवन चरित्र कोश लिखा, वाल्मीकि रामायण का अनुवाद किया, जिसके कई संस्करण हुए और आज भी वह बिकता है। उन्होंने हिन्दी में पूरे महाभारत का अनुवाद किया। मैं तो आरंभ से ही जीवन-संघर्ष में जुट गया। लखनऊ के कान्यकुब्ज हाईस्कूल का हेडमास्टर होकर यहां आया। इसे एक वर्ष में इंटर कालेज किया और उसके वर्तमान भवन की डिजाइन बनायी और नींव रखी। फिर सरकारी छात्रवृत्ति पाकर इंग्लैंड चला गया। वहाँ लंदन के ट्रेनिंग कालेज से डिप्लोमा किया। सर पियरे निक्सन प्रिंसिपल थे। वहां डिप्लोमा कॉलेज से ही मिलता है और उसी में एसेसमेंट होता है। उसकी एक प्रति भेज रहा हूँ। इलाहाबाद वि.वि. से मैंने बी.ए. और इतिहास में एम.ए. किया था। तब विश्वविद्यालय ही एल.टी. की परीक्षा लेता था। वह भी वहीं से की थी। तब तक एम.ए. इतिहास में केवल दो व्यक्तियों को फर्स्ट डिवीजन मिला था, डा. ताराचंद को और डा. वेणीप्रसाद को। 17 उत्तीर्ण एम.ए. में 4 द्वितीय श्रेणी में आए थे। मैं भी उनमें था। दो साल यूरोप में रहा, वहाँ लीग आफ नेशन की ऐज्यूकेशन एक्सपर्ट कमेटी का दो वर्ष सदस्य रहा। मीटिंग जिनेवा में होती थी। 1927 में वर्ल्ड फेडरेशन ऑफ ऐज्यूकेशन एसोशियेसन में भारत का प्रतिनिधि होकर सम्मिलित हुआ। यह

सम्मेलन टोरंटो, कनाडा में हुआ था। उसी यात्रा में चीन, जापान, मलाया आदि की यात्रा की। यूरोप में रूस और तुर्की, फ्रांस, नार्वे आदि तक की यात्रा की। लौटकर पहले सहायक इंस्पैक्टर हुआ चार साल, फिर डिवीजनल इंस्पैक्टर ऑफ स्कूल्स रहा-फैजाबाद, गोरखपुर, आगरा में। फिर उ.प्र. के ऐज्यूकेशन एक्सपैन्शन विभाग को आरगेनिक करने का काम मिला और प्रथम ऐज्यूकेशन एक्सपैन्शन आफिसर चार वर्ष रहा। कई बार स्पेशल ड्यूटी पर रहा। नरेन्द्रदेव शिक्षा सुधार समिति का मैं और डा. इबादुर्रहमान खाँ मंत्री बनाये गये। डा. जाकिर हुसैन भी उसके सदस्य थे। मैंने शिक्षा पर अंग्रेजी में दो पुस्तकें लिखीं-हिस्ट्री ऑफ रूरल ऐज्यूकेशन इन यू.पी. और एन ऐज्यूकेशनल सर्वे ऑफ डिस्ट्रिक्स-दोनों आउट ऑफ प्रिंट हैं, किन्तु संयोग से प्रकाशक द्वारा द्वितीय पुस्तक पर आई हुई कुछ सम्मतियों की एक प्रति मेरे पास है। उसे भेज रहा हूँ, देखकर लौटा दें। साहित्य सम्मेलन में साहित्य वाचस्पति देते समय जो प्रशस्ति दी गयी थी, उसकी एक प्रति भेज रहा हूँ। 1947 में जब सरदार पटेल के पास इन्फार्मेशन डिपार्टमेंट आया, तब रेडियो में बुखारी के समय की उर्दू के स्थान में हिन्दी करने के लिए उन्होंने टंडन जी से एक व्यक्ति माँगा। उन्होंने मुझसे जाने का अनुरोध किया। यद्यपि मैं रेडियों में नहीं जाना चाहता था किन्तु उनके आदेश और हिन्दी की सेवा का अवसर मिलने के कारण चला गया। वहाँ दो वर्ष रहा। प्रायः सब अधिकारी बुखारी युग के थे। हिन्दीकरण में जो कठिनाईयाँ हुईं, उन्हें मैं ही जानता हूँ तथा वहाँ जो कष्ट और विरोध हुआ, वह भी मुझे ही मालूम है। वहाँ से मैं सेवानिवृत्त हो गया। बाद में इच्छा न होने पर भी अपने एक मित्र की सहायता के लिए मुझे मध्य भारत के शिक्षा संचालक पद पर जाना पड़ा। मैंने वह पद केवल एक साल के लिए स्वीकार किया था। पर उन लोगों ने मुझे चार वर्ष रखा। लौटने पर संपूर्णानंद जी के आग्रह से 6 वर्ष उ.प्र. में ओ.एस.डी. हिन्दी रहा और सारे प्रदेश के कार्यालयों में हिन्दी कार्य का निरीक्षण करता रहा। सारे जिलों का निरीक्षण किया, दो-दो बार भी। सारे विभागों और सचिवालय की भी सैकड़ों रिपोर्ट लिखीं। मध्य भारत से लौटने पर इंडियन प्रेस के स्वामी के आग्रह पर, जब उन्हें मालूम हुआ कि मैं मध्य भारत से लौट रहा हूँ तो वे स्वयं ग्वालियर गये। मैंने 5 वर्ष के लिए 'सरस्वती' का संपादन, जुलाई 1955 से ले लिया। ओ.एस.डी. का काम मैंने ऑनरली स्वीकार किया था। मेरा वेतन एक रुपये मासिक था, क्योंकि बिना वेतन मुझ पर गर्वमेंट कन्डक्ट रूलस नहीं लग सकते थे किन्तु मैंने वह एक रु.भी कभी नहीं वसूल किया। घर पर टेलीफोन तक नहीं लिया, क्योंकि मेरा

पहले से निजी टेलीफोन था। मैं 'सरस्वती' पांच वर्ष बाद छोड़ना चाहता था, किन्तु ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती गयीं कि इस जुलाई से मेरे संपादन का 17वाँ वर्ष प्रारंभ हो गया, मैं उसे नहीं छोड़ पा रहा। पुराने स्वामियों के मर जाने से नये लड़कों का प्रबंध है। वे बंगाली हैं। बंगालियों की नयी पीढ़ी को हिन्दी से लगाव नहीं है। उन्होंने 50 वर्ष पुराना 'बाल सखा' बंद कर दिया। उनके पिता जी का मित्र होने के कारण वे मेरा इतना लिहाज करते हैं कि मेरे रहते वे उसे बंद करने का साहस नहीं करेंगे, किन्तु मुझे भय है कि मेरे छोड़ते ही हिन्दी की ही नहीं (गुजराती की एक मासिक पत्रिका को छोड़कर), भारतीय भाषाओं की यह सबसे पुरानी पत्रिका बंद हो जायेगी। इसी कारण स्वास्थ्य खराब होते हुए भी, कोई सहायक न होते हुए और अन्य पारिवारिक परेशानियों के बावजूद मैं उसका संपादन किये जा रहा हूँ। मैं कई पुस्तकें लिखना चाहता हूँ पर लिख नहीं पाता। बालकृष्ण राव के कहने से दिसम्बर में 'आधुनिक हिन्दा का आदिकाल' पर एक भाषणमाला देना स्वीकार कर लिया है। भाषण 100 पृष्ठों के लगभग होगा। आधे से कुछ अधिक लिख लिया है। यदि स्वास्थ्य ठीक रहा तो अगले मास के मध्य तक समाप्त कर लूँगा।

अपने बारे में मैंने अपना इतना 'बखान' शायद जीवन में पहली बार किया है। उसे भरसक संक्षिप्त ही रखा है। इतने लंबे पत्र के लिए क्षमा चाहता हूँ।

आपका

श्रीनारायण चतुर्वेदी

***

19. प्रख्यात साहित्यकार और दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व प्रोफेसर डा. रामदरश मिश्र का पत्र

डा. रामदरश मिश्र
आर-38, वाणी विहार, उत्तम नगर
नई दिल्ली-110059

दिनांक रहित

आदरणीय भाई आर्य जी,

आपका शुभकामना पत्र मिला। धन्यवाद। डायरी के पृष्ठों के सम्बंध में आपकी प्रतिक्रिया ने मुझे बहुत सुख दिया। इन दिनों डायरी ही मेरी अभिव्यक्ति का माध्यम बनी हुई है। अब तक की सामग्री छपने को चली गयी है। दो-तीन महीने में पुस्तक 'आते जाते दिन' आ जायेगी। दरअसल 'आत्मकथा' सन् 2000 तक के समय को समेटती है और डायरी की यात्रा 2003 से शुरू हुई है।

बिजनौर में आपसे भेंट हुई थी, अच्छा लगा था। सविता ने आपके बारे में काफी कुछ प्रशंसात्मक बताया था। सकुशल होंगे।

नववर्ष की शुभकामनाओं के साथ

आपका

रामदरश मिश्र

***

20. प्रसिद्ध सहित्यकार एवं पूर्व उपायुक्त, बिक्रीकर डा. कौशलेन्द्र पाण्डेय के पत्र

130, मारुतिपुरम्, लखनऊ

15.2.09

परम श्रद्वेय डा. साहब!

प्रणाम

आशा है आप स्वस्थ-सानंद हैं। 31.1.09 दिनांकित आपका पत्र पाकर साथ ही आपके आशीर्वाद से मन प्रसन्न हुआ। लघुकथा को मैं कहानी की मात्र एक भंगिमा मानकर लिखता हूँ। अलग से इसे कभी भी एक विधा की संज्ञा नहीं दी। लघुकथाओं के दो बड़े संग्रह 'एक नया आसफुद्दौला' और 'गगनचुंबी' 1992 तथा अप्रैल 1996 में प्रकाशित हो चुके हैं। मैं इनको ही नहीं, बाद की अन्य कृतियाँ तथा 2007-2009 में प्रकाशित अन्य कृतियों की प्रतियाँ शीघ्र ही हस्तगत कराऊँगा। संभव हुआ तो आपकी चौखट का स्पर्श करके। 2009 में मेरा एक 180 पृष्ठीय उपन्यास 'श्यामली' भी प्रकाशित हुआ है। आशीर्वाद देने की कृपा करें।

स्नेहाधीन

कौशलेन्द्र पाण्डेय

***

लखनऊ, 2 नवम्बर, 2013

आदरणीय अग्रज,

प्रणाम

दीपोत्सव 2013 आपके स्वस्थ, समृद्धि तथा परिजनों समेत सभी स्वजनों के लिए उत्तमातिउत्तम फलदायी हो, मेरी कामना है।

आपके पत्र मिलते रहे हैं। इस्पात भाषा भारती तथा अन्य कतिपय सामयिक पत्रिकाओं में आपको पढ़ता रहा हूँ। आपके मनीषीत्व से मैं ऊर्जा ग्रहण करता हूँ। ईश्वर आपको 100 वर्षीय अतिरिक्त आयु प्रदान करे। पुनः मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

स्नेहाधीन

कौशलेन्द्र पाण्डेय

21. विश्वविख्यात चित्रकार डा. आनंद कुमार स्वामी के प्रख्यात शिष्य तथा भारतीय चित्रकला के मर्मज्ञ श्री मुकंदीलाल बैरिस्टर का पत्र

भवतु सब्बम् नवलम् बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय,
मित्ता, अकणा, मुदिता उपेक्षा (बुद्ध)

मुकन्दीलाल बैरिस्टर
भारती भवन, कोटद्वार (गढ़वाल) 25 मई 79

प्रिय डा. रामस्वरूप आर्य, नमस्ते!

खेद है कि आपके 11 ता. के पत्र का उत्तर अब तक नहीं दे सका। श्रीमती रजनी मिश्रा जी को आप लिख दें कि वे Mr. Ascher की Paintings in Panjab Himalaya (1973) के दो वौल्यूम, जो उन्हें किसी भी लाइब्रेरी में मिल सकती हैं (दोनों की कीमत 600 रु. है) पढ़ें। text वौल्यूम 9 में कांगड़ा और गढ़वाल की चित्रकला अलग-अलग Discuss की गई है और वौल्यूम 2 में कांगड़ा और गढ़वाल के चित्रों के फोटोग्राफ दिये गये हैं और डा. आनंद कुमार स्वामी के Rajpoot Painting (1916) के 2 वौल्यूम वह भी देखें तथा मेरी पुस्तक (Garhwal Painting) (1969) को भी देखें। इसका द्वितीय संस्करण अब छपने जा रहा है। उसमें मैंने कुछ इजाफा किया है। पहला संस्करण सब बिक चुका है। लाइब्रेरीज में मिल सकता है। डॉ. राजकुमार आगरा यूनिवर्सिटी से भी मिलें। उन्होंने भी 1968 में इसी विषय पर थीसिस लिखी है।

खेद है जब आप यहाँ आये थे, मैं आपको मिल न सका। 'गढ़वाल की हिन्दी पत्रकारिता' लेख की कोई प्रति हो तो भेजने की कृपा कीजिएगा। 'तरुण कुमाऊँ' मुझे समय और सहायता न मिलने से जल्दी छोड़ना पड़ा। मैंने उसके सब अंकों का एक वौल्यून बनाया था। मेरी लाइब्रेरी से कोई ले गया। मुझे अब देखने को भी नहीं मिलता है। क्या उसके सब अंक मुझे देखने को मिल सकते हैं?

पूज्य बनारसीदास जी बड़े अर्से से आग्रह करते आये हैं कि मैं अपने संस्मरण लिखूँ। मैं अपनी आत्मकथा लिखने के विरुद्ध हूँ। उनकी आज्ञा पालन करने के लिए मैंने यह उचित समझा है कि मैं उन महापुरुषों के विषय में कुछ लिख कर छोड़ जाऊँ जिनसे मैं मिला हूँ। अब तक केवल 35 महान व्यक्तियों के बाबत लिख पाया हूँ। मेरी लिस्ट में 100 के लगभग स्मरणीय आदर्श व्यक्ति होंगे।

मेरा स्वास्थ्य आयु (94 वर्ष) के कारण अब ऐसा नहीं कि मैं घर से बाहर जा सकूँ। ताहम, ईश्वर ने मुझे प्रेरणा व मानसिकता शक्ति दी है कि मैं 3 और पुस्तकें लिखने का प्रयास कर रहा हूँ। मैं अपनी नई पुस्तक 'कलागुरु आनंद कुमार स्वामी' आपको भेंट कर रहा हूँ।

भवदीय
मुकन्दीलाल

22. उत्तर प्रदेश के पूर्व राज्यपाल, कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष तथा साहित्यकार आचार्य विष्णुकांत शास्त्री का पत्र

विष्णुकांत शास्त्री — सत्यमेव जयते — राजभवन

राज्यपाल, उत्तर प्रदेश — लखनऊ-227132

जनवरी 19, 2001

प्रिय आर्य जी,

सस्नेह नमस्कार।

आपके द्वारा प्रेषित पुस्तकें 'परपंरा और आधुनिकता' तथा 'विचार-बिंदु' प्राप्त हुईं। इसके लिए धन्यवाद। दोनों पुस्तकों में समाहित आपके भावों और विचारों से मैं प्रभावित हुआ। इसी प्रकार साहित्य सेवा में तल्लीन रहें।

प्रभु कृपा से सानंद रहें, सर्जनारत रहें।

प्रति, — शुभेच्छु

डॉ. रामस्वरूप आर्य, बिजनौर — विष्णुकांत शास्त्री

***

23. प्रसिद्ध भाषाविज्ञानी डा. अंबाप्रसाद 'सुमन' के पत्र

डा. अम्बाप्रसाद 'सुमन', डी.लिट्.

8/7, हरिनगर, अलीगढ़-202001 — दिनांक 11.10.1969 ई०

प्रिय भाई आर्य जी,

सप्रेम नसस्कार!

आपके पत्र की प्राप्ति से परम प्रसन्नता हुई।

पदाजि शब्द संस्कृत का है और 'पैदल सिपाही' के अर्थ में है। संस्कृत के 'पद्मचन्द्र कोश' में और ज्ञानमंडल, काशी से प्रकाशित, 'वृहत् हिन्दी कोश' में इसी उक्त अर्थ में पदाजि शब्द मिलता है।

फा० **पाजी**=दुष्ट, बदमाश, कमीना (जैसा कि आपने भी लिखा है)।

इसमें कोई संदेह नहीं कि पदाति भी संस्कृत शब्द है, जो 'पैदल सिपाही' के अर्थ में ही है। अब प्रश्न यह है कि 'पदमावत' का पाजी शब्द सं० पदाजि से विकसित है अथवा सं० पदाति से। संस्कृत की 'त्' ध्वनि प्राकृत, अपभ्रंश के माध्यम से हिन्दी की बोलियों में 'ज्' होकर नहीं आयी। अपितु ट, ड, ढ, ड़, ढ़ होकर आयी है। सं० पतन>पडन>पड़ना। कर्तरी>कटारी। सं० गर्त>गड्ढ>गढ़ा। संस्कृत की द्य, र्य और य ध्वनि ही 'ज' में परिवर्तित हुई-सं० अद्य>अज्ज>आज। सं० आर्यक>अज्जय>अज्जइ>अजी>जी। सं० यती>जती। संस्कृत की 'त्' और 'ज्'

ध्वनियाँ क्रमशः भावी विकास में अक्षुण्ण भी रही है। संस्कृत की 'त्' ध्वनि 'ज्' में नहीं बदलती। अतः पदाति से पाजी का विकास ध्वनि-विज्ञान के आधार पर असंगत और अनुपयुक्त है। अतः सं० पदाजि>पआजि>पाजी (=पैदल सिपाही)-यह विकास क्रम ही उचित और उपयुक्त है।

विदेशी भाषा फ़ारसी का **पाजी** शब्द जो 'बदमाश' के अर्थ में मिलता है, वह पृथक् शब्द है। इसका पदमावत के पाजी से कोई सम्बंध नहीं। जैसे हिन्दी में कुल (वंश) और कुल (=तमाम) दो भिन्न-भिन्न परम्पराओं से प्राप्त शब्द है। सं० कुल>हि.कुल=तमाम। इन्हें एक स्रोत से नहीं मानना चाहिए।
हर्ष है कि परोक्ष में आप मेरे मन-मस्तिष्क से बातचीत करते रहते हैं। समीक्षा के वे अंक मैं पढ़ना चाहता हूँ, जिनमें आपकी कुछ समीक्षाएँ प्रकाशित हुई हैं। क्या ग्रंथ-निकेतन उन अंकों को भेजा सकेगा? अपने विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में भी उन्हें देखूँगा। धन्यवाद! सस्नेह,

डा. रामस्वरूप आर्य, पी-एच.डी. — आपका
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कालेज, बिजनौर — अम्बा प्रसाद 'सुमन'

***

8/7, हरिनगर, अलीगढ़ (उ.प्र.)
दिनांक 25.10.70 ई०

प्रिय भाई आर्य जी,
सप्रेम नमस्कार!

दिनांक 20.10.70 का अन्तर्देशीय पत्र पढ़कर प्रसन्नता हुई। हर्ष है कि आप सपरिवार स्वस्थ और सानंद हैं। आज बाहर से आने पर आपका पत्र पढ़ने को मिला। उत्तर में अपनी बात लिख रहा हूँ।

संभवतः आपकी दृष्टि में कृषक-जीवन-सम्बन्धी ब्रजभाषा-शब्दावली भाग 2 न आया हो। उसमें पृष्ठ 347/1185, 352/1189, 420/1360 पर 'भात' के सम्बन्ध में लिखा गया है। उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में **भात** वही है, जो आपने लिखा है। बहुत संभव है, पूर्वी जिलों में विवाह की अन्य कोई एक रस्म भात कहाती हो और उसमें समधी को भात खिलाने की प्रणाली बरती जाती हो। किसी पूर्वी जिले के व्यक्ति से पता लगाना चाहिए। आप भी पता लगाएँ, इधर मैं भी पूछताछ करूँगा।

वाक्य-रचना में व्यास-शैली और समास-शैली होती है। संयुक्त वाक्य लिखने वाले व्यास-शैली में, और साधारण वाक्य लिखने वाले समास-शैली में

प्राय: अपनी बातें कहते हैं। कोश (हिंदी शब्द सागर, खंड 7) का वाक्य संयुक्त वाक्य है, और आपने उसे साधारण वाक्य बना दिया है, जिसमें केवल एक समापिका क्रिया है। कोशगत वाक्य में दो समापिका क्रियाएँ हैं, बुलाया जाता है, खिलाया जाता है। आपने प्रथम क्रिया को पूर्वकालिक क्रिया बनाकर द्वितीय को समापिका क्रिया के ही रूप में प्रयुक्त किया है। वाक्य दोनों ही ठीक हैं। प्राचीन वैयाकरणों के विषय में एक उक्ति प्रचलित है-''अर्द्ध मात्रा की कमी से वैयाकरण को उतनी प्रसन्नता होती है, जितनी पुत्र-जन्म से किसी व्यक्ति को हो सकती है।''

इस दृष्टि से आपका वाक्य अधिक ग्राह्य है। पछाँही जिलों में **भात** है, जो आपने लिखा है। मेरे ग्रंथ में भी वैसा ही मिलेगा। कृपया उपर्युक्त पृष्ठ देखें।

बच्चों को आशीर्वाद।

शुभैषी

डा. रामस्वरूप आर्य, नई बस्ती, बिजनौर (उ०प्र०) अम्बाप्रसाद 'सुमन'

***

24. प्रसिद्ध साहित्यकार कुँवर सुरेश सिंह, कालाकांकर (प्रतापगढ़) का पत्र

(उल्लेखनीय है कि कविवर सुमित्रानंदन पंत ने 'नौका विहार' कविता की रचना कुँवर सुरेश सिंह के आवास पर ही रहकर की थी। उक्त कविता में कालाकांकर का उल्लेख है।)

कालाकांकर-229008,
प्रतापगढ़ (उ०प्र०) 25.8.85

आदरणीय भाई,

वंदन!

आपका कृपा पत्र यथा समय मिल गया था परंतु उत्तर देने में जो इतना विलंब हुआ, उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। कारण यह था कि मेरा टाइपिस्ट जो मेरे सब पत्रों को ठीक से रखता था, वह एकाएक दूसरी जगह चला गया जिससे बाहर से आने वाले किसी के सारे पत्र इस तरह से इधर-उधर हो गये कि बहुतों का पता मुझे दो-चार दिन पहले कागजों को छाँटते वक्त हुआ, उसी में आपका भी पत्र था। इसी कारण उत्तर नहीं दे सका। क्षमा प्रार्थी हूँ। अब मैं 75 वर्ष का हो गया हूँ। आँखों में एक में मोतियाबिंद है, दूसरी भी ठीक से काम नहीं करती। गठिया के कारण चलने-फिरने में भी मजबूर हो गया हूँ। अपने ही हाथों पत्रों को ठीक से रखना और उनका उत्तर देना पड़ता है। उधर चुनाव की धूम मची है।

कोई न कोई उम्मीदवार पहुँच ही जाता है। यद्यपि मैं इन चुनावों से दूर ही रहता हूँ।

आपको मेरी पुस्तक 'यादों के झरोखे' पसंद आई, यह आपकी कृपा है और क्या कहूँ? मैंने लगभग 20 संस्मरण लिखे थे लेकिन प्रकाशक महोदय ने इनमें से लगभग आधे संस्मरण नहीं छापे और पहले से मुझे सूचना भी नहीं दी। संस्मरणों में श्री रायकृष्णदास जी, श्री रफी अहमद किदवई, श्री सियाराम शरण गुप्त, श्री चन्द्रभानु गुप्त, श्री कमलापति त्रिपाठी आदि के संस्मरण थे। वे अब वैसे ही मेरे पास पड़े हैं। यहाँ देहात में बैठकर दिल्ली आदि के प्रकाशकों से सम्पर्क करना भी बहुत कठिन है।

आपने पं. हरिऔध जी की कथा जसुमति के विषय में भी लिखा है। वह साहित्यिक सौंदर्य के ढंग से ठीक ही है। मैंने भी बाद की पंक्तियाँ बहुत दिनों बाद पढ़ी थीं। इसे आप हरिऔध जी की विनोदप्रियता के रूप में ही लें। वे प्राय: हम लोगों को इस प्रकार के चुटकुले सुनाकर पूरी कक्षा का मनोरंजन करते थे।

ग्रंथ का दूसरा विषय सारस के जोड़े के बारे में है। पक्षीशास्त्र में ऐसे किसी पक्षी का उल्लेख नहीं आता, जो एक के मर जाने पर उसके बिछोह में अपना प्राण त्याग दे। पक्षियों के जोड़ा बाँधने का ढंग इतना आश्चर्यजनक होता है कि इसे देखकर सहसा उस पर विश्वास नहीं होता। अधिकांश पक्षी ऐसे हैं जिनके नर, मादा के सामने अपने सौंदर्य, नृत्य कला, मधुर ध्वनि तथा भाँति-भाँति के अन्य उपायों का सहारा लेकर उसको जोड़ा बाँधने को राजी करते हैं। मादा सब नर पक्षियों का प्रदर्शन देखती रहती है और जिसका प्रदर्शन उसे भा जाता है, वह उसी के साथ जोड़ा बाँध लेती है। यह जोड़ा बंधन प्राय: एक वर्ष तक रहता है। कुछ पक्षी अधिक समय के लिए भी प्रेम में बँध जाते हैं।

आप विश्वास नहीं मानेंगे कि मैंने अपने जीवन के पाँच-सात वर्ष भारतीय पक्षियों के स्थानीय नामों की तलाश में लगा दिए। रामायण, महाभारत, सूरसागर, पद्मावत के पक्षियों के नाम तलाशे अजायबघरों के चक्कर लगाये। जंगल और पहाड़ियों की सैर की। तब भी सारे भारतीय पक्षियों के नाम तलाश न सका। सौभाग्य है कि मेरा गाँव गंगा के तट पर बसा है। पड़ोस में तालाब भी है। गाँव के एक छोर पर छोटा-सा जंगल भी है। इससे बस्ती, बाग तथा पानी और जंगलों के निकट रहने वाले सामान्य पक्षियों के निरीक्षण का सहज अवसर मुझे मिल गया। खैर, छोड़िए, इस पचड़े को। पत्र काफी लंबा हो गया है। आप भी ऊब गये होंगे।

श्री पंत जी पर मेरी एक पुस्तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने प्रकाशित की है, जिसमें उनके लगभग 300 पत्रों का संकलन है। ये उन्होंने मुझे, मेरी पत्नी तथा मेरे पुत्र को लिखे हैं। पुस्तक का नाम है–पंत जी और कलाकाँकर। उसमें मेरी लिखी भूमिका है। इस समय मेरे पास एक प्रति भी शेष नहीं है। नहीं तो, सेवा में अवश्य भेजता।

कलाकाँकर पर हमारे यहाँ के मदनमोहन मालवीय डिग्री कालेज के डा. लाल एक पुस्तक लिख रहे हैं। आप चाहें तो उनसे सम्पर्क कर लें। उनका पूरा नाम है–डा. के.एन. लाल।

विलंब से उत्तर देने के लिए क्षमा माँगते हुए और आपकी पत्र लिखने की कृपा के लिए आभार प्रकट करते हुए पत्र समाप्त करता हूँ। विशेष कृपा। विनम्र–

डा. रामस्वरूप आर्य, बिजनौर — सुरेश सिंह

***

25. ब्रजसाहित्य के उन्नायक और 'ब्रजभारती' के संपादक, साहित्य वारिधि बाबू वृंदावनदास के पत्र

प्रकाश भवन, मथुरा — 13.4.68

प्रिय आर्य महोदय!

कृपा पत्र मिला। आपको हस्तलिखित ग्रन्थ ब्रजवानी विनोद कवि गोपालराय कृत मिला, यह जानकर प्रसन्नता हुई। आप निःसंदेह इन पर लेख लिखें और ब्रजभारती में प्रकाशनार्थ हमें भेज दें। इसमें हमको कोई आपत्ति नहीं है।

ब्रजभाषा साहित्य के प्रकाशन की व्यवस्था कर रहे हैं, देखिए कहाँ तक सफलता मिलती है। आगरा के उत्सवों में प्रकाशित स्मारिकाओं में महाकवि ग्वाल से सम्बन्धित सामग्री तो भेज रहे हैं, कविरत्न की स्मारिका के लिए पं० रमेशचन्द्र दुबे 11 बी, डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट कम्पाउण्ड, आगरा को लिखें। निमन्त्रण पत्र के लिए धन्यवाद! मेरी ओर से अनेक बधाई।

आपका

वृन्दावनदास

***

प्रकाशन भवन, मथुरा — 5.9.70

बन्धुवर आर्य जी,

कृपा पत्र मिला। धन्यवाद! आपने जिन अशुद्धियों की ओर संकेत किया है वास्तव में वे भयावह हैं। यदि लेखक बन्धु अपने लिखे को दुबारा पढ़ लिया

करें तो इस प्रकार की त्रुटियाँ कदापि न रहें। कार्याधिक्य के कारण मैं भी पूरा ध्यान नहीं दे पाता हूँ। फिर भी इनकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने के लिए आप धन्यवादार्ह हैं।

कुछ पुस्तकें समीक्षा के लिए शीघ्र भेजूँगा, कृपा कर उनकी समीक्षा शीघ्र लिखकर भेज दें। शेष कुशल है।

शुभाकांक्षी
वृन्दावनदास

***

प्रकाश भवन, मथुरा 17.10.71

बन्धुवर डा० आर्य जी, सादर नमस्कार!

आपका कृपा पत्र लेख सहित प्राप्त हुआ। अनेकानेक धन्यवाद। आपका लेख अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण एवं शोध-परक है। आपने गहन अध्ययनशीलता और एक अनुसन्धित्सु की पैनी दृष्टि से लेख लिखा है। मेरा वश चले तो आपको इसी लेख पर डी० लिट्० की उपाधि दे डालूँ। आपके लेख की प्राप्ति के समय डॉ० नारायणदत्त शर्मा बैठे हुए थे। उन्होंने भी लेख को पढ़कर उसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की।

आपने दूसरे पत्र में जो सुझाव दिए हैं उनको कार्यान्वित करने से ग्रन्थ की उपयोगिता में वृद्धि होगी। मैंने आपके दोनों पत्र सम्पादक मण्डल के विचारार्थ सुरक्षित कर दिए हैं।

आशा है आप स्वस्थ एवं सानन्द हैं। आपकी इच्छानुसार यात्रा के अनुभवों पर ब्रज-भारती के सम्पादकीय स्तम्भों में प्रकाश डालूँगा।

वर्तनी सम्बन्धी यद्यपि दो मत हैं तथापि अधिकांशत: विद्वज्जन आपके दृष्टिकोण से सहमत हैं। अब मैं भी उसी के अनुसार चलूँगा। धन्यवाद!

आपका
वृन्दावनदास

***

प्रकाश भवन,मथुरा 21.8.72

बन्धुवर डॉ० आर्य जी,

अपनी दस दिवसीय यात्रा से लौटकर पत्रों के ढेर में आपके कृपा पत्र को भी देखा। मुझे लगता है मैं इसका उत्तर दे चुका हूँ। फिर भी आपको पत्र लिखने में आनन्दानुभूति होती है। आत्मीयता का यही तो लक्षण है।

आपका लेख ग्रन्थ में सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा, वह सुरक्षित है। नामकरण पर आपका सुझाव सम्पादक मण्डल को प्रस्तुत कर दिया जायेगा। मुझे तो वह बहुत ठीक लगा।

बी०एस०ए० के स्थान पर यदि संस्थापक के नाम पर बाबू शिवनाथ अग्रवाल ही रहे तो क्या बुराई है। यह प्रथा जो प्रचलित है, निन्द्य है। मैं इस विषय में आन्दोलन करूँगा, सभी विद्यालयों को इसी प्रकार सम्बोधित किया जाता है। नामों का अंग्रेजी पद्धति के अनुसार संक्षिप्तीकरण कर दिया गया है। इस पद्धति को बदलना ही चाहिए।

आशा है आप स्वस्थ एवं सानन्द हैं।

आपका

वृन्दावनदास

***

प्रकाश भवन, मथुरा 1.8.73

बन्धुवर आर्य जी,

आपके सभी पत्र मिल गये। धन्यवाद! मैं ता० 20 को बम्बई से लौट आया हूँ। 'आमन्त्रित मेहमान' शीर्षक आपका लेख मुद्रणार्थ प्रेषित कर दिया है। विभिन्न भाषाओं के बोलने वालों की संख्या-तालिका भी सम्पादकीय में आपके नाम से उद्धृत कर दी है।

पं० पद्मसिंह शर्मा की जयन्ती अवश्य मनावें, वे ब्रजभाषा के आचार्य थे। ब्रजभाषा उनकी परम ऋणी है। सिंघल साहब (श्री हरिश्चन्द्र सिंघल) रमज्ञ साहित्यकार हैं तथा उनका हृदय सदैव स्नेह आत्मीयता से ओत-प्रोत रहता है। आशा है आप स्वस्थ एवं सानन्द हैं।

आपका

वृन्दावनदास

***

26. डा. रमेशचंद्र मेहरोत्रा, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी एवं भाषा विज्ञान विभाग, रायपुर विश्वविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) का पत्र

बिलासपुर 2.3.07

प्रिय रामस्वरूप जी

नमस्ते।

'लोक भारती वृहत, प्रामाणिक हिंदी कोश' (2002) के अनुसार 'हरे'=हर

का संबोधन कारक वाला रूप–हे हर! (शिव)
'व्यावहारिक हिन्दी–अंग्रेजी कोश' (2004) के अनुसार 'हरे'=हरि (विष्णु–राम और कृष्ण)
बाद वाला ('हरि' से 'हरे') सही है।
(मजे की बात है कि दोनों कोशों के कोशकार एक ही हैं–बदरीनाथ कपूर।)
बहुत प्रसन्नता है कि आप स्वस्थ और सक्रिय हैं। मेरा स्वास्थ्य मुझे धोखा देने लगा है, इसलिए पढ़ना–लिखना कम है। बहुत तो हो गया–48 पुस्तकें और लगभग 2000 लेख (156 पत्र–पत्रिकाओं में) हैं।

आपका
र० मेहरोत्रा

***

27. डा. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण', पूर्व प्राचार्य तथा सदस्य, साहित्य अकादमी, दिल्ली का पत्र

74/3, न्यू नेहरु नगर, रूड़की–247667 — 30 अप्रैल, 2012

आदरणीय डॉ. साहब!

सादर नमस्कार!

लम्बे प्रवास से लौटकर आपका 17 अप्रैल का कृपा पत्र मिला, हृदय से कृतज्ञ हूँ। 'वैदुष्यमणि विद्योत्तमा' आप जैसे सहृदय विद्वान का आशीष पा सका, सौभाग्य है मेरा। अध्यात्म पुरुष मौनी बाबा की प्रेरणा और स्वयं विद्योत्तमा की कृपा–वर्षा का सुफल यह काव्य है। आपने मनोयोगपूर्वक इसे पढ़ा, यह निःसंदेह इसकी सफलता का प्रमाण है। मैं आपकी सदाशयता और विद्वत्ता को नमन करता हूँ। सादर

आपका
योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण'

***

28. प्रसिद्ध पत्रकार और दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' के सम्पादक श्री बाबूसिंह चौहान का पत्र

बिजनौर टाइम्स, हिन्दी दैनिक
बिजनौर टाइम्स रोड, बिजनौर — 29.5.95

आदरणीय आर्य जी,

मैं आपके पास अपना नया निबंध संग्रह 'उफनती नदियों के सामने' इस उद्देश्य से भेज रहा हूँ कि आप इसे देख लें और इस पर एक समीक्षा लिख

दें ताकि आपकी समीक्षा कुछ समाचार पत्रों में प्रकाशनार्थ भेजी जा सके। मेरा उद्देश्य आप समझ ही गये होंगे। मैं आशा करता हूँ कि आप मेरे निवेदन के अनुसार समीक्षा शीघ्र ही लिख देंगे।

आशा है कि आप स्वस्थ एवं प्रसन्न होंगे और साहित्य साधना में पूर्ववत जुटे होंगे। अभिवादन सहित–

डा. रामस्वरूप आर्य — भवदीय
लेखक एवं समीक्षक, बिजनौर — बाबू सिंह चौहान

***

29. प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ० कुँअर बेचैन का पत्र

कुँअर, एम.कॉम, एम.ए.
सुक्खीमल मौहल्ला, डासना गेट
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
महानंद मिशन पोस्टग्रेजुएट कालेज, गाजियाबाद — 28.3.73

आदरणीय डॉ० साहब,

सादर वन्दे!

आपका पत्र मिला। मैं किन शब्दों से आपसे अपने स्नेह को अभिव्यक्त करूँ। आपने जिन शब्दों द्वारा मेरा उत्साहवर्द्धन किया है, वे शब्द मेरे लिए अमूल्य हैं। मैं एक छोटा-सा रचनाकार, टूटे-फूटे शब्दों का संयोजक, तन्वंगी भावनाओं को स्थूल विचारों के साथ बैठाने वाला व्यक्ति और आपके 'वे' शब्द, कितना अन्तर है दोनों में।

मैं अल्पज्ञ, पिनों के बीच में बिखरा हुआ इंसान, कहाँ से वह व्यवस्थित शब्दावली लाए, जो आपके असीम स्नेह को माल्यार्पण कर सके। मेरे अग्रज! मेरे टूटे-फूटे शब्दों को ही भावांजलि की संज्ञा देकर मेरा स्नेह स्वीकार कीजिए। आपने सचमुच 'पिन बहुत सारे' का महत्व बढ़ा दिया है और न जाने मेरे मन में कैसा-कैसा हो रहा है।

आपके स्नेहा का चिर आकांक्षी

कुँअर

***

30. डा. एन.एल. शर्मा, पूर्व प्राचार्य तथा पूर्व निदेशक, खंडेलवाल कॉलेज, बरेली के पत्र

14, कीर्ति नगर, बरेली–243122 1.1.09

आदरणीय आर्य जी,

दिसम्बर माह के 'साहित्य अमृत' में भारतेन्दु जी की उस रचना का रसास्वादन आपने कराया, जिसकी मात्र-2 पंक्तियों से ही अभी तक परिचय रहा। साधुवाद, धन्यवाद एवं अभिनंदन स्वीकार करें।

मैं भी सेवा सम्पन्न करने के पश्चात एक प्रबंधन शिक्षा के महाविद्यालय से जुड़ गया हूँ। थोड़ी सक्रियता रहती है। नववर्ष की मांगलिक कामनाएँ।

सद्भाव सहित

एन.एल. शर्मा

***

14, कीर्ति नगर, बरेली–243122 28.1.11

परमादरणीय डा. साहब,

आपकी बड़ी कृपा है कि आप अपना आशीर्वाद हर शुभ अवसर पर प्रेषित कर देते हैं। नववर्ष पर प्रेषित आपकी मांगलिक भावनाएँ प्राप्त हुईं। मैं आपका स्नेहभाजन बना रहूँ, प्रभु से यही प्रार्थना है।

आप संत सरीखे नहीं अपितु स्वयं संत हैं, यह आपके उदात्त भाव से स्वयं सिद्ध है। यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे आप अपने आशीर्वाद के योग्य मानते हैं।

राम स्वयं कृपा करें बनें अवसि सब कार्य।
वाणी दृष्टि और सोच का जब स्वरूप हो आय।।

घर पर सबको यथायोग्य। अभिवादन सहित

आपका

एन.एल. शर्मा

***

31. प्रसिद्ध पत्रकार और कवि श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, सम्पादक दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' का पत्र

30.4.10

आदरणीय गुरु जी,

सप्तरंग की ओर से रविवार 9 मई की सायं 7 बजे जैन धर्मशाला, बिजनौर में एक साहित्यिक गोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है, जिसमें मेरे नये

काव्य-संग्रह 'अंदर की आग और बर्फ का फूल' के अतिरिक्त अन्य नवप्रकाशित पुस्तकों पर समीक्षात्मक चर्चा होगी तथा बाद में कवियों एवं शायरों की काव्य गोष्ठी होगी। आप अवश्य ही गोष्ठी में पधारें, यह मेरा व्यक्तिगत आग्रह है।

भवदीय

चन्द्रमणि रघुवंशी

***

32. साहित्यकार तथा 'गौड़संस टाइम्स' के संपादक श्री बी.एल. गौड़ का पत्र

गौड़संस टाइम्स

आर-8/23, राजनगर, गाजियाबाद 26.5.2010

प्रिय बंधु!

सादर नमन,

आपका 16.5.10 का पत्र मुझे अभी-अभी मिला है। आपने जो लिखा है-वही सच है। कारण मैं जैक आफ ट्रेडर्स ही हूँ और मास्टर ऑफ वन हूँ। कुछ बातें पिताजी द्वारा कही गईं, ज्यों की त्यों, दिमाग में धँसी हुई हैं और उसी तरह वे लिखी गई हैं।

मुझे वे लोग बहुत अच्छे लगते हैं, जो सही बातें बता कर मेरा मार्गदर्शन करते हैं। मैं आपका आभारी हूँ और इसके लिए धन्यवाद भी दे रहा हूँ, कृपया स्वीकार करें।

श्री बालस्वरूप राही, पराग जी और अन्य साहित्यकारों का भी मेरे संस्मरणों के विषय में यही मत है कि इन्हें पुस्तक का रूप देना चाहिये। श्री बालस्वरूप राही जी की प्रेरणा से मेरी एक पुस्तक 'लोकतंत्र में खोया लोकतंत्र' राजकमल, दिल्ली वालों के यहाँ छपने की प्रक्रिया में है।

कभी आपसे भेंट नहीं हुई है लेकिन आपकी रचनाओं के माध्यम से परिचय है। कभी इधर आना हो तो दर्शन दीजियेगा।

सेवा में शुभेच्छु

डा. रामस्वरूप आर्य, बिजनौर बी.एल. गौड़

***

33. डा. पंकज भारद्वाज, संप्रति प्रधान संपादक, हिन्दी सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन', बिजनौर का पत्र

गायत्री निवास, खातियान, धामपुर

आदरणीय डा. आर्य जी, दिनांक रहित

सादर प्रणाम।

आपका पत्र प्राप्त हुआ, पढ़कर स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया। आपने 'धामदेव की नगरी धामपुर' पुस्तक का अध्ययन कर अपनी प्रतिक्रिया से अवगत कराया, आभार। वास्तव में धामपुर की भौगोलिक स्थिति, भाषा, लोक साहित्य पर चाहकर भी मैं सामग्री न दे सका। कारण, पुस्तक के लेखक से प्रकाशन तक मेरी व्यक्तिगत विपरीत परिस्थितियाँ रहीं। सहयोगी लेखकों की अरुचि भी रही। फिर भी आपका सुझाव सिर माथे पर। अगले संस्करण में इस 'भूल' को सुधारने का वादा करता हूँ। पत्र के माध्यम से, आपका स्नेह मुझे प्रथम बार ही मिला है, किन्तु आशा करता हूँ कि भविष्य में भी स्नेह देते रहेंगे। एक बार पुनः आपको नमन...आभार

आपका पुत्र

पंकज भारद्वाज

***

34 .प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री डा. जमनालाल बायती का पत्र

प्रो. डा. जमनालाल बायती, डी.लिट्.

बी-186, डा. राधाकृष्णन नगर

भीलवाड़ा (राजस्थान)-311001 दिनांक रहित

माननीय आर्य जी,

सादर राम राम। आपकी रचना 'मृत्यु से हम क्यों डरें' इस्पात भाषा भारती पत्रिका में पढ़कर अति प्रसन्नता हुई। आपको बधाई।

यदि आप स्वीकृति दें तो इस रचना को मेरी अगली आने वाली पुस्तक में आपके नाम पते सहित शामिल कर ली जाये। पुस्तक प्रकाशनोपरान्त सादर आपको भेंट की जायेगी। इस प्रकार मेरी 10 पुस्तकें छप गई हैं और उनमें लगभग सभी राज्यों के लेखक शामिल हैं। आपके उत्तर की प्रतीक्षा रहेगी। सादर,

आपका विनम्र

जमनालाल बायती

***

35. डा. पाण्डेय रामेन्द्र, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, फीरोज गाँधी कालेज, रायबरेली का पत्र

चन्द्रमणिपुरी, 23/702, इंदिरा नगर मध्य
रायबरेली-229001 2.10.05

परमादरणीय डॉ० साहब,

सादर अभिवादन

बहुत दिनों बाद आपको पत्र लिख रहा हूँ-क्षमा करें। आपके लेख और प्रतिक्रियाएँ पढ़ने को मिलती रही हैं, जिनमें आपकी पैनी शोध दृष्टि और विषय में गंभीर पैठ का परिचय मिलता है। कृपा भाव बनाये रखें।

'मानस चंदन' में मेरा 'सुंदरकांड का वैशिष्टय' लेख छपा है। अपने विचार संपादक को भेजने की कृपा करें। यदाकदा अब राम साहित्य पर ही लिखता रहा हूँ। मेरी 'मैथिलीशरण गुप्त के राम काव्य' सन् 2002 में छपी थी। वर्धमान कालेज में तो संभवत: डा. चन्द्रप्रकाश आर्य जी ही अध्यक्ष होंगे। उन्हें मेरा नमस्कार। कृपा पत्र की प्रतीक्षा में।

पाण्डेय रामेन्द्र

***

36. डॉ० राजेन्द्ररंजन चतुर्वेदी, डी.लिट., पानीपत (हरियाणा) का पत्र

1828, हाउसिंग बोर्ड कालोनी
सैक्टर 13-17, पानीपत 3.1.09

मान्यवर!

आपने बहुत प्यारा दोहा लिखा, चित्त प्रसन्न हो गया। रहीम के क्या कहने ? ये कविता क्या है, रत्न है। आजकल के कवियों की कविता पढ़िये, जैसे माथे पर पत्थर सरका दिया हो। वे बाँचें या खुदा बाँचे। बहुत दिनों बाद पत्र मिला। आपको तथा आपके समस्त परिवार के लिए नया वर्ष मंगलमय हो।

आप दादा जी पं. बनारसीदास चतुर्वेदी जी को प्रिय थे। आचार्य पं. पद्मसिंह शर्मा की कीर्ति रक्षा के संदर्भ में उन्होंने आपका स्मरण किया है। उनके पत्र जी.एन.ए. ने छाप दिये हैं। उसमें आपके 6 पत्र हैं, आपको ज्ञात ही है। साउती ब्रजभाषा में सौतेली को कहते हैं।

राजेन्द्र रंजन

***

37. प्रसिद्ध विद्वान डा. राजमणि शर्मा, पूर्व प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का पत्र

बंधुवर, 12.9.07

सप्रेम नमन

1.9.07 का आपका सहृदयतापूर्ण पत्र मिला, आभार।

अच्छा लगा। मुझे याद हैं-आप भी, आपके सुपुत्र भी और उनका आलेख भी। बीच में एकाध बार संपर्क का प्रयास किया, किन्तु असफल रहा।

मैं जुलाई, 2003 में सेवानिवृत्त हो गया। कई जगहों से विजिटिंग प्रोफेसर के प्रस्ताव मिले, पर काशी छोड़ने का मन न हुआ। वाणी प्रकाशन ने पाँच पुस्तकें छापी हैं। हरियाणा साहित्य अकादमी ने एक। भारतीय ज्ञानपीठ ने अपभ्रंश साहित्य पर पुस्तक प्रकाशनार्थ स्वीकृत की है। वाराणसी से पाँच पुस्तकें छपी हैं। किन्तु रायल्टी के नाम पर शून्य। जब इच्छा होती है, हजार-दो हजार दे देते हैं। आचार्य द्विवेदी पर तीन संस्मरणात्मक आलेख छपे हैं-1. हरियाणा साहित्य अकादमी, 2. दैनिक जागरण और 3. हिन्दुस्तान में अब अन्तिम कार्य-अपनी आत्मकथा और द्विवेदी कोश है। इस बीच तुलनात्मक साहित्य पर तैयार हो रहे विश्व सूचना कोश में 41 प्रविष्टियाँ दी हैं।

आपका
रा.म. शर्मा

***

38. 'नई धारा', पटना (बिहार) के संपादक डॉ० शिवनारायण का पत्र

डॉ० शिवनारायण
1/सी, अशोक नगर, पटना-800020
संपादक, 'नई धारा' 15.5.04

आदरणीय डॉ० साहब,

आपका 6.4 का पत्र मिला। हार्दिक आभार। 'नई धारा' का मई, 04 का अंक आपको जा चुका है। प्राप्ति-सूचना देंगे। आप 'नई धारा' के पुराने लेखक हैं, यह जानते हुए ही मैंने आपको पत्रिका पुनः इस अपेक्षा से भिजवाना आरंभ किया है कि अब फिर से आपका जुड़ाव 'नई धारा' से होना चाहिए। आप सम्मानित लेखक हैं, इसलिए भी आपसे सहयोग की आकांक्षा हम रखते हैं।

'नई धारा' का पता बदल गया है। पत्रिका में नया पता आप देख सकते हैं। आपकी पुत्री डा. संतोष कुमारी का कोई लेख मुझे नहीं मिला। इस लेख की

प्रति पुन: शीघ्र नए पते पर भिजवा दें। शेष शुभ। आशा है आप स्वस्थ एवं सानंद होंगे।

सादर-

शिवनारायण

***

39. डा. रमानाथ त्रिपाठी, प्रोफेसर, दिल्ली विश्वविद्यालय के पत्र

प्रिय डॉ० आर्य 5.7.04

बहुत दिनों के पश्चात सम्पर्क हो रहा है। इस्पात भाषा भारती (जनवरी-मार्च, 04) में प्रकाशित आपका लेख मेरे लिए उपयोगी है। मैं आत्मकथा का द्वितीय भाग लिख रहा हूँ। उसके लिए पंचतंत्र की एक जानकारी चाहिए थी, वह आपके लेख से मिल गयी।

सियारों के नाम करटक और दमनक ही हैं न?

मेरा 'रामगाथा' उपन्यास गुजराती में अनूदित हो चुका है। अगस्त की समाप्ति तक अंग्रेजी अनुवाद भी छप जाएगा। अपने समाचार दें। परिवार में सभी सानंद होंगे।

आपका

रमानाथ त्रिपाठी

26, वैशाली, पीतमपुरा, नई दिल्ली-88

***

प्रिय डॉ० आर्य जी, 19.2.05

सप्रेम नमस्कार।

वाल्मीकि रामायण के तीन संस्करण हैं-पश्चिमोत्तरीय, गौड़ी और दाक्षिणात्य। शांता-प्रसंग प्रथम दो संस्करणों में है। तृतीय संस्करण में शांता की ओर अस्पष्ट कथन है। विद्वान ऐसा मानते हैं कि हरिवंश, मत्स्य, वायु और ब्रह्म पुराणों केअनुसार अंगराज चित्ररथ के पुत्र के दो नाम थे-दशरथ तथा लोमपाद। शांता इन्हीं की कन्या थी। उसे भ्रम-वश अयोध्या नरेश दशरथ की कन्या मान लिया गया।

पुत्रेष्टि-यज्ञ के आगे-पीछे शांता का उल्लेख नहीं मिलता। लगता है पुत्रेष्टि यज्ञ वाल्मीकि रामायण में प्रक्षिप्त है। यदि सच में शांता श्रीराम की बहिन थी तो उसे कथा के मध्य दिखाया जाना चाहिए था। इससे कथा की महत्ता बढ़ती। मैंने अपने 'रामगाथा' उपन्यास में शांता प्रसंग छोड़ दिया है।

मेरे इस उपन्यास के अनुवाद गुजराती और अंग्रेजी भाषाओं में हो चुके हैं। आत्मकथा का प्रथम खंड 'वनफूल' प्रेस में है।

आप अपनी गतिविधियों और कुशलता का समाचार दें। सपरिवार सानंद होंगे।

आपका

रमानाथ त्रिपाठी

26, वैशाली, पीतमपुरा, नई दिल्ली-110088

***

प्रिय डॉ० आर्य, 9.7.07

सप्रेम नमस्कार

'मानस चंदन' में आपका पत्र पढ़ा आभारी हूँ। अप्रकाशित आत्मकथा, भाग 2-'महानगर में रहूँ?' विषयक एक प्रसंग में आपका उल्लेख सादर हुआ है। यदि यह अंश किसी पत्रिका में प्रकाशित हुआ तो कतरन आपके पास भेजूँगा।

सपरिवार सानंद होंगे।

आपका

रमानाथ त्रिपाठी

26, वैशाली, पीतमपुरा, नई दिल्ली-110088

***

40. रामकथा के यशस्वी गायक पं. राधेश्याम कथावाचक के भाई पं. मदनमोहन लाल शर्मा का पत्र

ॐ

मोहन लोक, बिहारीपुर, बरेली 14.7.67

श्री रामस्वरूप जी नमस्ते।

पत्र प्राप्त हुआ, सहारनपुर में पं. ब्रजभूषण लाल जी रईस थे। इस बात को बीते 49-50 वर्ष हुए होंगे, भाई साहब होली पर उनके यहाँ थे। उस समय वे जो गजल लिख रहे थे, वह इस प्रकार से है-

गजल

न बरजोरी करो हमसे लला घनश्याम होली में।
हटाओ इस बने रंग का, रिवाजे खास होली में।
भरे झोली गुलालों की लिए टोली हो ग्वालों की।
बने हो आज फागुन में नये गुलफाम होली में।
यह बरसाना है हे कान्हा यहाँ पर रंग न बरसाना।

अदल है यहाँ किशोरी का करो आराम होली में।
मरदुओं को यहाँ पर गोपियाँ नारी बनाती हैं।
कहीं श्यामा न बन जाना बढ़ाकर नाम होली में।
चलो होनी थी सो होली, नई होली मुबारक हो।
पियो अब प्रेम बूटी का रंगीला जाम होली में
सुनी यह बात ललिता की हँसी इतने में राधा जी।
मिले हैं बाद मुद्दत के यह राधेश्याम होली में।

जिस पंक्ति के नीचे रेखा है, उसे श्यामा नाम वाली एक लड़की ने, जो चुपचाप कुर्सी के पीछे खड़ी हो गई थी और भाईसाहब को पता नहीं था, कान में बताई, यह चौंक पड़े। उसी पंक्ति को लिख दिया, काफी समय तक बहुत प्रसन्न रहे, फिर उसे पूरी गजल दिखाई, राय ली, गजल ठीक है? उसने कहा, है तो ठीक, पर एक जगह गलती है, कहाँ, ''तो ठीक कर दो।'' उसने कलम लेकर, राधेश्याम होली में की जगह, राधे काटकर श्यामा कर दिया था। यह ठहाका मारकर हँस पड़े, उसी रात चलकर बरेली आ गये।
आपकी इच्छानुसार बचपन की कविताओं की छपी 'राधेश्याम विलास' नाम की कविता में से निकालकर यह गजल भेज रहा हूँ। यह आपको विदित ही होगा कि अब लिखने में हाथ काँपता है। अत: अब क्षमा-

आपका
मदनमोहन लाल शर्मा

***

41. आध्यात्मिक चिंतक श्री शिवानंद जी के पत्र

परम सनेही डा. आर्य जी, 12.7.82

'जीवन और अभय' पर आपकी समीक्षा, जो 9 जुलाई को आकाशवाणी से प्रसारित हुई, परिवार में सबने सुनी और बहुत रस लिया। बहुत रोचक थी। आप ने तीन विभाग किए हैं-(1) विचारात्मक (2) व्यक्तियों के विषय में (3) सांसारिक अनुभव। आपने 'भारत भारती प्रकाशन' के प्रथम संस्करण का उल्लेख किया। उसके बाद दो संस्करण सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी से निकल चुके हैं। वाराणसी प्रकाशन का दूसरा संस्करण आपके पास है। आपने उसकी प्राप्ति की सूचना दी थी।

आपके प्रति एक गहरी आत्मीयता का अनुभव होता है, अतएव औपचारिक धन्यवाद नहीं करता हूँ। मैंने गीता पर टीका लिखना प्रारंभ किया है-प्रभू पूरा करेंगे। सदैव आपका ही

शिवानंद

***

शिवानंद, पूर्व प्रधानाचार्य
(राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित)
विजय नगर, मेरठ-1 (उ.प्र.) 2.2.97
विद्वानों के शिरोमणि डा. आर्य

नमो नमः

आपके द्वारा प्रेषित 'स्मारिका' को देखा और साहित्य जगत् के इस सार्थक प्रयास के लिए आप की प्रशस्ति करना ही चाहिए। पूर्णता तो मात्र स्वप्न है। मनुष्य अल्पज्ञ ही नहीं है बल्कि आत्म सुधार का प्रयत्न करते हुए भी अपूर्ण ही रहता है। पूर्णता के प्रयत्न में ही मनुष्य की कृतार्थता है।

मैं लौकिक दृष्टि से घर फूँक तमाशा ही करा रहा हूँ। भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति की आधुनिक प्ररिपेक्ष्य में पुनर्व्याख्या। स्वाध्याय और साधना। पुस्तकें लिखने का पैसा नहीं। अपनी पुस्तकों को खरीद कर यत्र-तत्र भेंट।

उद्देश्य-पवित्र भावों का प्रचार। मैं 'ईशावस्य दिव्यामृत' की एक प्रति भेजने का प्रयत्न शीघ्र करूँगा। अपनी स्नेह दृष्टि बनाए रखें।

सदैव आपका ही अपना
शिवानंद

***

42. गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ० विष्णुदत्त राकेश, डी. लिट्. का पत्र

प्रिय भाई, 7.11.85

कृपा-पत्र तथा पुस्तक मिली। डा. चन्द्रप्रकाश आर्य ने राष्ट्रीयता की अवधारणा की व्यख्या करते हुए पं. श्यामनारायण पाण्डेय जी के काव्य पर गहराई से विचार किया है। पाण्डेय जी पर संप्रदायवादी आक्षेप लगाने वालों को यह करारा उत्तर है। 'हल्दीघाटी' तथा 'जौहर' के कुछ छंद पाण्डेय जी की हस्तलिपि में देकर आपने स्मृतियों को धनी बनाया है। कुछ देर के लिए मैं तो स्वयं को भूल गया। पाण्डेय जी की ये दोनों कृतियाँ मुझे अच्छी लगती हैं।

मैं बरेली नहीं जा सका। इतने कम नोटिस पर जाना मुश्किल होता है। इधर आपको जानकर प्रसन्नता होगी कि 3 अक्टूबर से अध्यक्षीय कार्यभार भी देखने लगा हूँ। प्रोफेसर तो गत वर्ष ही हो गया था। दीपमाला पर शुभकामनाएँ। प्रिय चन्द्रप्रकाश को आशीर्वाद।

आपका
विष्णुदत्त राकेश

43. प्रसिद्ध कवि और सुमधुर गीतकार श्री किशन सरोज के पत्र

किशन सरोज
चौपुला रेलवे कालोनी, बरेली-243001 10.10.1986

श्रद्धेय,

प्रणाम

आपका पत्र मिला। गौरवान्वित अनुभव कर रहा हूँ। मुझे गत वर्ष हार्ट अटैक पड़ गया था। अब ईश्वर की कृपा है। कवि सम्मेलनों में भी जा रहा हूँ। इस वर्ष 13 जनवरी को सवेरा प्रकाशन, मुरादाबाद ने मेरा गीत संग्रह 'चंदन वन डूब गया' प्रकाशित किया है। 8 फरवरी 86 अर्थात् 20 दिन बाद ही भारती परिषद, उन्नाव द्वारा इसे 5000 रु. के सर्वश्रेष्ठ गीतकार पुरस्कार हेतु पुरस्कृत किया गया। निर्णायक मंडल में श्री ठाकुरप्रसाद सिंह, डा. शिव मंगल सिंह सुमन तथा नीरज जी थे। कविवर माहेश्वर तिवारी की भूमिका 'अभिशप्त बाँसुरी का सम्मोहन' तथा मेरा आत्म कथ्य इसमें पठनीय है। पुस्तकें माहेश्वर तिवारी के पास ही हैं। मैं उन्हें लिखूँगा। शेष कुशल है। घर में सबको यथायोग्य

आपका
किशन

***

किशन सरोज
3[illegible] आजादपुरम, निकट हार्टमैन कालेज, बरेली 20.8.09

श्रद्धेय,

चरण स्पर्श

आपके दो पत्र मिले। फोन आपका नहीं लगात, क्या बात है ? आप जैसे साहित्याचार्य ने मुझे पढ़ाया, इसकी गौरवानुभूति मेरे हृदय में अन्तिम श्वासों तक रहेगी। परिवार में सभी को मेरा विनत प्रणाम। और दोनों पिता-पुत्र को भी मेरा नमन। कृपा बनाये रखें। सादर,

आपका
किशन

***

44. प्रसिद्ध आर्य समाजी विद्वान डॉ० भवानीलाल भारतीय का पत्र

ओ३म्

3/5, शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर (राजस्थान) 21.7.10

डा. साहब,

नमस्ते।

आपका पत्र पाकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। आपने 'साहित्य अमृत' में छपे मेरे हिन्दी प्रकाशकों विषयक लेख को मनोयोगपूर्वक पढ़ा। यह मेरे लिए अतीव प्रेरणा का विषय है। आपने जिन भूलों की ओर संकेत किया, उनके लिए आपका कृतज्ञ हूँ। मैं अपने पुस्तकालय को अन्यत्र स्थानान्तरित कर चुका हूँ, अतः संदर्भों का सत्यापन करने में कठिनाई होती है। आपने इंडियन प्रेस का संस्थापक चिंतामणि घोष को बताया है। मेरा इस समय ध्यान एक अन्य व्यक्ति सी.वाई चिंतामणि की ओर जा रहा है, जो दाक्षिणात्य थे तथा इलाहाबाद से लीडर नाम का अंग्रेजी पत्र निकालते थे। वे नरमदली विचारधारा के राजनीतिज्ञ थे। उनके एक पुत्र श्री राव (पूरा नाम भूल रहा हूँ) आई.सी.एस. थे तथा हिन्दी के कवि भी थे। मैंने जब 1936-37 में 'बालसखा' बालोपयोगी पत्र इंडियन प्रेस से मंगाया था, तब प्रेस के मैनेजर अपूर्वकृष्ण वसु थे। हरिकेशव घोष के बारे में स्व. क्षेमचन्द्र सुमन ने दिवंगत हिन्दी सेवी में लिखा है। आपके लेख तथा स्नेहपूर्ण संबोधन के लिए पुनः आभार। कृपा बनाये रखें।

भवदीय

भवानीलाल भारतीय

***

45. 'कादंबिनी' मासिक के उपसंपादक श्री धनंजय सिंह का पत्र

कादंबिनी, 9 नवम्बर, 1989

हिन्दुस्तान टाइम्स लिमिटेड, नयी दिल्ली-1

माननीय डॉ० साहब।

सादर नमस्ते।

आपका कृपा पत्र यथासमय मिल गया था। अत्यधिक व्यस्ततावश उत्तर में विलम्ब हुआ, तदर्थ खेद है।

आपने जिस त्रुटि की ओर इंगित किया है वह अनभिज्ञतावश ही हुई थी। गजल लगभग 17 वर्ष पूर्व लिखी थी। अनेक वर्ष बाद इस भूल का पता चला तो मैंने पंक्ति में संशोधन कर लिया। मूल पंक्ति है-'खिड़कियों का खुलापन

अगर, आदमी की खिलाफत करे'। इसका संशोधित रूप बन सका–'खिड़कियों का खुलापन अगर, आदमी के मुखालिफ रहे'। इससे प्रयोग में शुद्धता तो आ गयी पर इसमें सहजता प्रतीत नहीं होती। अशुद्ध प्रयोग के कारण संप्रेषणीयता में बाधा नहीं आती किन्तु शुद्ध प्रयोग में यही कमी कुछ खटकती–सी है। विशेषतः हिन्दी वालों के लिए। इसलिए मैं यह अशुद्ध प्रयोग की छूट लेकर ही प्रायः पढ़ता हूँ। उर्दू वाले भी इस पर आपत्ति नहीं करते हैं। किन्तु इससे उसका औचित्य नहीं बनता। मैं आपकी आपत्ति से शतशः सहमत हूँ। औचित्य के लिए भाषावैज्ञानिक आधार पर छूट का बहाना किया जा सकता है। किन्तु मैं मानता हूँ कि होगा वह बहाना ही।

आपकी स्नेहशीलता एवं सदाशयता के लिए मेरे मन में गहरा आदर है। मैं आप जैसे सुहृदों से अपेक्षा भी यही करता हूँ कि मेरी त्रुटियों से अवगत कराते रहें ताकि यथासंभव परिमार्जन संभव हो सके। मैं आपके पत्र के लिए आभारी हूँ। स्नेहभाव बनाये रखिए। आपकी आत्मीयता मेरे लिए अमूल्य थाती है। यदा–कदा स्मरण कर लिया कीजिए।

स्नेहाधीन
धनंजय सिंह

***

46. डा. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर', पूर्व रीडर, हिन्दी विभाग, एस.आर.के. कालेज, फीरोजाबाद का पत्र

डा. रामसनेही लाल शर्मा 'यायावर', डी.लिट्.
86 तिलक नगर, बाईपास रोड, फीरोजाबाद, 283203

परमादरणीय डॉ० साहब — दिनांक रहित

सादर प्रणाम

आपका 12.1 का पत्र मिला। सुखद आश्चर्य हुआ। बहुत पहले संभवतः 1975–76 में मैं धामपुर मूल्यांकन हेतु गया था। तब आपका नाम सुना था। फिर विविध पत्रिकाओं और पुस्तकों में आपके वैदुष्यपूर्ण आलेख पढ़ने को मिलते रहे। मेरे गुरुवर डा. मक्खनलाल पाराशर आपको बड़ी आत्मीयता और सम्मान के साथ स्मरण करते हैं। मेरा लोकगीत आप जैसी ऋषि प्रज्ञा के धनी मनीषी को अच्छा लगा तो उसके सृजन का श्रम सार्थक हो गया। अपना नवीनतम दोहा संग्रह तथा पुस्तिका 'अहिंसा परमो धर्मः' आपको भेज रहा हूँ। आपकी प्रतिक्रिया सृजन–पथ का पाथेय होगी।

परिवार में सबाके यथायोग्य। प्राप्ति स्वीकृति दीजिएगा। कृपा भाव बनाए रहिएगा।

विनयावनत

रामसनेही लाल शर्मा

***

47. पूर्व एम.एल.ए. तथा पूर्व कैबिनेट मंत्री, उ.प्र. शासन श्रीमती चंद्रावती का पत्र

श्रद्धेय आर्य जी, 7.4.1963

सादर वन्दे।

एम.ए. का आज का पर्चा भी भगवान की असीम कृपा से अच्छा ही हो गया है। निबंध का चयन अच्छा दिया गया था। पुस्तकें आपकी वापस भेज रही हूँ। मैं कृषि फार्म पर अभी जाने के कारण स्वयं न आ सकी। शेष कृपा है। आशा है भविष्य में भी आपकी ऐसी ही कृपा दृष्टि मेरे लिये बनी रहेगी। सादर

भवदीया

चंद्रावती

***

48. कोशकार डॉ. श्यामबहादुर वर्मा, पूर्व रीडर, पी.जी.डी.ए.वी. कालेज, दिल्ली का पत्र

दिल्ली, शनिवार, 24.5.10

परमबंधुवर आर्य जी,

सप्रेम हरिस्मरण।

आशा है आप सपरिवार सानंद होंगे। मैंने कई बार बिजनौर जाने की योजना बनाई किन्तु परिस्थितिवश कार्यान्वित नहीं कर सका। इसमें एक कारण कोश के कार्य को पूर्ण करने की व्यस्तता भी है। लगभग अकेला ही इस काम के झंझटों से जूझ रहा हूँ। आपसे तत्सबंधी अनेक विषयों पर विचार विमर्श करने की आवश्यकता अनुभव करता हूँ परंतु आपका इधर आना नहीं हो पा रहा है और मैं एक बार सारी समस्याएँ छाँटने के बाद आपको लिखना चाहता हूँ या तभी मिलूँगा।

बरेली में अनुशीलन के शिक्षा वर्ग का समय 9 जून से 13 जून तक समय प्रात: 7.30 से 11.30 तक है। अपना आने का कार्यक्रम बनाइए, नहीं तो अपना कोई लेख वाचनार्थ भेज दीजिएगा। विषय-'जीवन मूल्यों की साधना'

(महापुरुषों के जीवन के आधार पर)। इस बीच अपने अध्ययन और लेखन के विषय में लिखिएगा। अपने द्वारा संपादित कालेज की पत्रिका 'नीलांबरा' का 1977 का अंक भेज रहा हूँ। इसमें आपकी कृति 'विचार-बिंदु' से भी कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की गयी हैं।

आदरणीय भाभी जी को नमस्कार। बच्चों को प्रेमाशीष सहित। पत्रोत्तर शीघ्र दीजिएगा।

भवदीय

श्यामबहादुर वर्मा

(उल्लेखनीय है कि डा. श्यामबहादुर वर्मा ने 'हिन्दुत्व कोश' तैयार करने की योजना बनाई थी किन्तु डा. रामस्वरूप आर्य ने इस कोश का नाम 'भारतीय धर्मकोश' रखने का सुझाव दिया था, जिससे अनावश्यक विवादों से बचा जा सके।)

***

49. प्रसिद्ध विद्धान तथा त्रैमा. 'परिषद-पत्रिका', पटना (बिहार) के संपादक डा. श्री रंजन सूरिदेव का पत्र

समादरणीय प्राज्ञवर आर्य जी, 1.2.97

सादर प्रणतयः।

आपके संपादन में प्रकाशित हिन्दी-विकास-संस्थान, सहारनपुर की स्मारिका (1996) प्राप्त कर आंतरिक हर्ष हुआ। इससे यह स्पष्ट है कि आप मुझे सदा अपने स्नेहिल स्मृति-कोष में सँजोये रहते हैं, जो मेरी अहोभाग्यता का सूचक है। आप मेरी सारस्वत गतिविधि से आह्लादित होते हैं, यह तो मेरे लिए उपलब्धि मूलक आनंद का विषय है। आपकी यह उदारता मुझे सदा सुलभ रहे, यही विनम्र आग्रह है।

आपकी संपादकीय मनीषा से मंडित स्मारिका केवल विवरण-प्रधान नहीं अपितु शोधगर्भ महार्घ रचनाओं से भी समलंकृत है। इस प्रकार यह स्मारिका एक संदर्भ ग्रंथ की इयत्ता आयत्त करती है। साहित्य में सदा शुद्ध मुद्रण और सार्थक उपयोगी तत्वों के विनिवेश के समर्थक संपादकों की परंपरा में आपका पांक्तेय स्थान है। आपके संपादकीय स्पर्श से किसी कृति का चमक उठना स्वाभाविक है।

मेरी भूरिशः और भूयशः साधुवाद स्वीकार करें। ससद्भाव

विनत

श्रीरंजन सूरिदेव

50. कथाकार और नाटककार भैरवप्रसाद गुप्त का पत्र

1 एफ/1, बेनीगंज, इलाबाद-16 14.4.88

मान्य बंधु,

आपके 31.3.88 के पत्र के लिए धन्यवाद। इस समय प्राप्त रचनाओं की सूची प्रकाशित हो चुकी है। मेरे सम्बन्ध में कई विश्वविद्यालयों में शोध कार्य चल रहे हैं। दिल्ली, बंबई, जयपुर और शिमला के शोध छात्रों को डाक्टरेट की उपाधि मिल गयी है।

आपने कदाचित् अखबार में पढ़ा हो कि इस वर्ष उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का सम्मान पुरस्कार मुझे भी प्राप्त हुआ है। आशा है, आप सपरिवार प्रसन्न हैं। अपने यहाँ सबको हमारी ओर से यथायोग्य कहें। इलाहाबाद आएँ तो दर्शन अवश्य दें।

आपका

डा. रामस्वरूप आर्य, बिजनौर भैरव प्रसाद गुप्त

***

51. डा. निजामुद्दीन, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, इस्लामिया कालेज, श्रीनगर (कश्मीर) का पत्र

प्रो० निजामुद्दीन 9.8.14

बी-21, बुद्धशाह नगर, नातीपोरा, श्रीनगर-(कश्मीर)

मान्य डा. रामस्वरूप आर्य जी,

सादर नमस्ते।

बस एक बार मेरठ से आपसे फोन से बात हुई थी, फिर सम्पर्क न हो सका। कहिए स्वास्थ्य कैसा चल रहा है? आशा है परिवार में सभी सकुशल होंगे। आपके विद्वान सुपुत्र प्रो. चन्द्रप्रकाश आर्य, वर्धमान कॉलेज में रीडर के ग्रेड में तो आ गए होंगे ही। ईश्वर उन्हें और तरक्की दे।

मैं जानना चाहता हूँ कि गत शती के अंतिम चरण में और इस शती के शुरू में 2014 तक कौन-कौन से महाकाव्य हिंदी में रचे गए हैं? उनके नाम-पते इधर-उधर से मालूम करके सूचित करने का कष्ट करें। प्रो. चन्द्रप्रकाश आर्य जी इस विषय में अपने सहयोगियों से पूछताछ कर यह काम कर सकते हैं। 2-4 दिनों में यह काम हो सकेगा, ऐसी आशा है।

मुझे शुगर की शिकायत मालूम होती है। पत्नी की आँख का आपरेशन कराया है। उन्हें भी शुगर है। मुझे भी डाक्टर ने आँख का आपरेशन कराने की

सलाह दी है। उम्र के साथ ये सब होते हैं, सब यही कहते हैं।

बिजनौर में मैं चार साल रहा, 1963 में वहाँ से यहाँ आ गया था। सब कुछ बदल गया। वर्धमान कालेज का भी खूब विस्तार हो गया होगा। आपके कालेज की पत्रिका 'वर्धमान', जो भगवान महावीर के 2500वें परिनिर्वाण वर्ष में निकाली गई थी, मेरे पास है, उसे देखकर ही आपकी याद आ गई। आपका पीले रंग का ठंडा कोट मेरी आंखों के सामने है। आपकी विद्वता के साथ आपका सौम्य व्यवहार भला कोई कैसे भूल सकता है। आपने कालेज को बनाया है। अक्टूबर में मेरठ आऊँगा। पत्रोत्तर की प्रतीक्षा में,

आपका

प्रो. रामस्वरूप आर्य जी, बिजनौर निजाम

52. प्रख्यात् पत्रकार श्री नारायण दत्त जी का पत्र

239, मैरीन 6, ब्लॉक-4, जयानगर, बंगलौर 12.10.04

मान्य बंधु,

श्रद्धेय पं. बनारसीदास चतुर्वेदी जी के पत्र-संकलन के अन्तिम पृष्ठ प्रूफ पढ़कर मैंने पिछले महीने के अंत में प्रकाशक के पास भेज दिये। अब अपने कार्यक्रम के अनुसार वे लोग उसे छापेंगे। मैं अपना दायित्व पूरा करके मुक्त हो गया। मुझे दुःख केवल इस बात का है कि मैं अधिक जल्दी काम न निबटा सका। आपके छह पत्र इस संकलन में लिये गये हैं और वे पुस्तक के दूसरे खंड में हैं। पुस्तक दो खंडों में है और कुल पृष्ट संख्या 11,00 से कुछ अधिक है। लगभग 1000 पत्रों व पत्रांशों का समावेश हो सका है। मैंने यह प्रयत्न किया है कि इसकी झलक पाठकों को मिल सके कि समाज के कितने व्यापक वर्ग के साथ श्रद्धेय चतुर्वेदी जी का पत्र-व्यवहार था। मैं इसमें किस सीमा तक सफल हो सका हूँ, यह तो आप लोग ही तय कर सकेंगे।

आपसे जो समर्थन और प्रोत्साहन इस कार्य में मिला, उसके लिए मैं आपका हृदय से कृतज्ञ हूँ। यही कृपा भाव आगे भी बनाए रखें, आशा है, स्वस्थ-प्रसन्न होंगे।

आपका

नारायणदत्त

***

53. डा. हरिश्चन्द्र, पी.एच.डी. डी.लिट्., आई.ए.एस. का पत्र

संस्मृति, बी-1149, इंदिरानगर लखनऊ 20.7.1995

प्रिय भाई,

प्रणाम। 7.7 के कृपा-कार्ड के लिए आभार। ध्वज-वाहक हिन्दी दिवस की वार्षिक परेड की तैयारी में जुट गए हैं। रीति-रक्षा जो करनी है और सेत मेत में दान-दक्षिणा भी हथियानी है। कोई पूछे इनसे कि हिन्दी की पहचान कराओ तो बगले झाँकने लगेंगे। इनमें से बहुत से तो हिन्दी को नागरी समझ बैठे हैं।

क्या हिन्दी भाषा संस्कृत, अंग्रेजी, अरबी-फारसी के तत्सम शब्दों का आयात कर और देवनागरी लिपि के उच्चारण को तद्रूपचित्रित कर अपने पैरों पर खड़ी हो सकेगी या आजीवन बैसाखी के सहारे चला करेगी। इस रुद्ध स्थिति को आप कब तक सहन करेंगे ?

बरेली का क्षेत्र ब्रजी से प्रभावित रहा है। यहाँ 'बहूअरबानी' शब्द आता है, जो कौरवी में 'बीरबानी' के रूप में प्रचलित है। इसकी निरुक्ति क्या होगी ? कृपया सूचित करें, क्या त्रैमासिक 'भाषा' का प्रकाशन हो रहा है। पत्रिका से पत्र-व्यवहार का पता क्या है ? गत दो मास से 'प्रकर' (दिल्ली) नहीं आया। क्या पुनः किसी दलदल में जा फँसा है ? आपको सपरिवार मंगलकामनाओं के साथ।

सादर

हरिश्चन्द्र

***

54 .डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया, प्रसिद्ध भाषाविज्ञानी तथा पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी तथा भारतीय भाषा विभाग, लालबहादुर शास्त्री प्रशासनिक अकादमी, मसूरी (उत्तराखंड) का पत्र

नंदन, भारती नगर, मैरिस रोड, अलीगढ़

प्रिय बंधु, दिनांक रहित

नववर्ष की मंगलकामनाएँ। दीर्घ काल से आपसे भेंट नहीं हो सकी। यत्र-तत्र पत्र-पत्रिकाओं में आपके लेख-आलेख पढ़ता रहता हूँ। इसी प्रकार साहित्य-साधना में तल्लीन रहकर सेवारत रहें, यही कामना है। संप्रति दुर्घटनाग्रस्त होने के बाद अस्वस्थ हूँ।

अत: अध्ययन-लेखन स्थगित-सा ही है।

आशा है चिरंजीव चन्द्रप्रकाश प्रसन्न होगा। सप्रेम,

आपका

कैलाशचन्द्र भाटिया

55. प्रसिद्ध साहित्यकार तथा पूर्व शोध छात्र डॉ० शंभुशरण शुक्ल, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, उपाधि (पी.जी.) महाविद्यालय, पीलीभीत (उ.प्र.) के पत्र

आदरणीय डॉ० साहब, 25.6.09

सादर प्रणाम

इधर कई माह से अस्वस्थ चलने के कारण पत्र न डाल सका। आशा है सकुशल एवं सानंद हैं। 'कामा' में बुढ़ापे पर आपका लेख पढ़ा था। यह लेख यथार्थ बोध कराता है।

इधर कुछ चलना फिरना आरंभ हुआ है। गर्मी के कारण लिखना नहीं हो पाता। रुकी पुस्तकों की छपाई प्रारंभ हो गयी है। सर्वप्रथम एक संकलन सं० 'घने प्रेम तरु तले'-फिर महात्मा भगवान स्मृति ग्रंथ। इसका तीसरा खंड अब लगभग तैयार है, प्रेस को जाना है। प्रो. रामप्रकाश गोयल साहब भी पूछ रहे थे तथा स्वस्थ होने के साथ ही कहा-अभी तो तुम्हें बहुत कुछ करना है। यह करना, न करना सबकुछ प्रभु का है। इधर कुछ घरेलू परिस्थितियाँ भी सामने आईं, जिन्हें स्वाभाविक मानकर धारण किया है क्योंकि ये भी जीवन का पहलू है। थीसिस प्रकाशित करा रहा हूँ। शीर्षक-

थारू लोकगीत : सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ

अथवा थारू लोकगीत : सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रतिबिम्ब

कौन सा अधिक उचित रहेगा, लिखने की कृपा करें। सादर-

आपका

शंभुशरण शुक्ल

***

आदरणीय डॉ० साहब, 25.4.12

सादर प्रणाम

स्वास्थ्य में बराबर उतार-चढ़ाव लगा हुआ है। आशा है आप सकुशल एवं सानंद हैं। आत्म संस्मरण 75% हो गए हैं। इधर कई माह से पढ़ना-लिखना नहीं हो रहा है। विश्वास है कि शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ मिलेगा। नाम सुझाएँ, मैंने तो 'एक अधूरी आत्मकथा' सोचा है, क्योंकि अधूरी है, अधूरी ही रहेगी।

दूसरा 'आत्म संस्मरण अतीत के'। एक लघु कथा लेखिका छपवाने में रुचि ले रही है। महात्मा भगवान ग्रंथ का लोकार्पण प्रो. रामप्रकाश गोयल के कर कमलों से होगा। (संभावित 6 मई, रविवार)। सुधीर विद्यार्थी मुख्य वक्ता होंगे। शेष शुभ है।

शंभुशरण शुक्ल

56. भारतीय स्टेट बैंक के प्रमुख राजभाषा अधिकारी श्री ए.बी. ब्रह्मा राव का पत्र

राजभाषा विभाग, कारपोरेट केंद्र, द्वितीय तल

स्टेट बैंक भवन, मादाम कामा रोड, मुंबई-21

पत्र : रा.वि. 2015-16 24.8.2015

डॉ. राम स्वरूप आर्य

हिन्दी शोध संस्थान

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर (उ.प्र.)

प्रिय महोदय,

हमारे बैंक की तिमाही गृहपत्रिका 'प्रयास' के संबंध में आपका दिनांक 11.6.2015 का कृपा पत्र प्राप्त हुआ, अनेक धन्यवाद।

आप जैसे हिन्दी के प्रेमियों में 'प्रयास' को इतनी तन्यता से पढ़ा जाता है, यह हम लोगों के लिए अतीव प्रेरणा और आहलाद का विषय है। पत्रिका के संबंध में आपके विचार हमारे लिए सदैव मूल्यवान बने रहेंगे। कृपया स्नेहभाव बनाए रखिए। हार्दिक शुभकामनाओं सहित।

भवदीय

ए.वी. ब्रह्मा राव

महाप्रबंधक (राजभाषा एवं कारपोरेट सेवाएँ)

***

57. आचार्य विनय मोहन शर्मा, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र (हरियाणा) का पत्र

ई-6, एम.आई. जी-7, अरोरा कालोनी

भोपाल (मध्य प्रदेश) 26.10.74

प्रिय आर्य जी,

आपका पत्र मिला। 'तुसली संदर्भ' हेतु मैं आपके सुझाए गए विषय पर लिखने का प्रयत्न करूँगा।

आशा है आप प्रसन्न और स्वस्थ हैं।

श्री अवस्थी जी (भूगोल) यहीं पर हैं न? उन्हें कहिए कि वे भी कभी-कभी लिखते रहें।

सस्नेह/आपका

विनयमोहन शर्मा

58. पद्मश्री डा. लक्ष्मी नारायण दुबे, पूर्व प्रोफेसर, सागर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) का पत्र

पद्मश्री डा. लक्ष्मी नारायण दुबे, डी.लिट्.
2, आनंदनगर, मकरोनिया, सागर-470004 (म.प्र.)
अध्यक्ष, भारतीय भाषाओं का पैनल
विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नयी दिल्ली-2 20.1.97

प्रिय आर्य जी,

आपका पत्र मिला। हार्दिक धन्यवाद। नववर्ष की अशेष शुभकामनाएँ स्वीकार कीजिए। 'स्मारिका' मिली। हिन्दी विकास संस्थान, सहारनपुर का परिचय भी मिला। मन बड़ा प्रसन्न हुआ।

मैंने विस्तार से अपनी सामग्री लिखकर डा. सरोज मार्कण्डेय को भेज दी है। आप बधाई के पात्र हैं। मेरा सदा सर्वदा पूर्ण सहयोग आपके साथ है। स्मारिका तो अनुपम है। साधुवाद स्वीकार कीजिए। मेरे योग्य सेवा सूचित करते रहिए।

आशा है आप स्वस्थ एवम् प्रसन्न हैं। आभार सहित-

आपका
लक्ष्मी नारायण दुबे

***

59. प्रसिद्ध कवि प्रो. सेवक वात्स्यायन, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, क्राइस्ट चर्च कॉलेज, कानपुर का पत्र

सेवक वात्स्यायन
ज्योतिरहम्विश्वस्य
एफ-13, किदवई नगर, कानपुर-11 9.2.07

श्रीयुत आर्य जी, नमस्कार। आपका 12 जनवरी का कृपा पत्र मिला। साथ ही वृद्धावस्था पर आपका उपयोगी और मनोरंजक लेख भी मिला। इसे कहीं और भी प्रकाशनार्थ दिया जा सकेगा। आपके पत्र से कई जानकारियाँ मिलीं। आदरणीय डॉ० जुयाल साहब के परिवार से संबंधित जानकारी एक लंबे अरसे के बाद अब आपसे ही मिल रही है। उनके कनिष्ठ पुत्र के असामयिक निधन का समाचार अतीव दुखद है। आप जानते हैं कि पंडित जी कितने सरल थे और हम सभी पर कैसा वात्सल्य रखने वाले सहृदय व्यक्ति थे। उनकी संततियों की भी आत्मीयता हमें प्राप्त थी पर समय सभी को परस्पर बहुत दूर कर देता है।

देहरादून में पं. जुयाल साहब के बड़े पुत्र का पता यदि आपके पास हो तो लिखिएगा। उन्हें पत्र लिखकर देखूँगा।

आपके आपरेशन का समाचार जाना। अनेक शारीरिक रोग मुझे भी काफी समय से ही रहे हैं। शरीर को व्याधि मंदिर कहा जाता है। लगता है कि यह बात सही है। आपने मेरी पत्र-पुस्तक का उल्लेख किया है। पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के जिन पत्रों का आपने उल्लेख किया है, वे बड़े महत्वपूर्ण हैं। हिन्दी में अधिक तो नहीं, एक अच्छी संख्या में पत्र-संग्रहों का प्रकाशन होता रहा है। प्राय: स्वयं को प्राप्त पत्रों का प्रकाशन होता है। नाना लोगों को एक ही व्यक्ति द्वारा लिखे गये पत्रों का प्रकाशन व्यावहारिक कठिनाई के कारण कम हो सका है। बिजनौर के समाचार पत्र में आपने जो समीक्षा देखी होगी, उस संग्रह में केवल मेरे लिखे कुछ पत्र हैं। पूज्य पं. भोलानाथ शर्मा जी को स्मरण करते हुए कभी मेरा एक आलेख आपने 'सरस्वती' में देखा था, तब अतीव द्रवित होकर आपने मुझे पत्र लिखा था। जब कभी मेरे पत्रों की पुस्तक आपको उपलब्ध हो जाए, तब उस पर भी अपनी प्रतिक्रिया भेजिएगा। आशा है आप स्वस्थ-प्रसन्न हैं।

आपका

सेवक वात्स्यायन

***

60. प्रसिद्ध साहित्यकार डा. रामप्रकाश गोयल का पत्र

जी-12, रामपुरबाग, बरेली 26.8.09

परम प्रिय भाई, डॉ० आर्य जी,

सादर सप्रेम नमस्ते। आशा है आप सपरिवार स्वस्थ एवं आनंद से होंगे। आपका कृपा पत्र तथा आपके दोनों लेख मिले। पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। आपने बहुत गहराई से लेख लिखे हैं। बहुत बधाई। मेरे ऊपर पी-एच.डी. हो गयी है। शोध-ग्रंथ छपकर आ गया है। शीर्षक है, 'प्रो. रामप्रकाश गोयल-व्यक्ति और रचनाकार'। मेरा एक उपन्यास 'चाहत' भी आया है। शीघ्र ही आपको भेजूँगा।

आपसे फोन पर बात करने की बहुत इच्छा है। आप अपना फोन नं. मेरे उपरोक्त नम्बरों पर देने का कष्ट करें। बरेली कब आ रहे हैं। आपकी बहुत याद आती है।

आदर और सम्मान के साथ-

सदैव आपका

रामप्रकाश गोयल

61. प्रसिद्ध कवि एवं गीतकार श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' का पत्र

एस.डी.-181, शास्त्रीनगर,
गाजियाबाद-201002 18.2.07

आदरणीय आर्य जी,

सादर, सस्नेह अभिवादन।

आपका पत्र पाकर बड़ा अच्छा लगा। भेंट हुए एक युग बीत गया है। प्रयास में हूँ कि बिजनौर आऊँ और आपके दर्शन करूँ।

'षड्रस' में आपको मेरी कविताएँ अच्छी लगीं, यह मेरा सौभाग्य है। आपका हार्निया का आपरेशन सफल हुआ होगा। मेरा दोनों ओर का हार्निया का आपरेशन हो चुका है। अपने स्वास्थ्य पर सबसे पहले ध्यान दीजिए। इस आयु में यह आवश्यक है। लेखन-गतिविधियाँ कैसी क्या चल रही हैं। डा. श्यामबहादुर वर्मा प्राय: आपको याद करते रहते हैं।

आपके स्वास्थ्य एवं सुख की कामना सँजोये,

भवनिष्ठ
पराग

***

62. शिक्षाविद् तथा लेखक श्री राजन चौधरी, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश) के पत्र

ओ३म्

C-2, सूर्य सदन, शांति शिखर
राजभवन मार्ग, सोमाजीगुड़ा, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)

आदरणीय आर्य जी, 16.2.02

ईश्वर आप सबको चिरायु, स्वस्थ, सम्पन्न, साहित्य-समाजसेवी एवं प्रसन्न रखे।

आप इस पत्र को पाकर चौंक गये होंगे। जी हाँ! लंबे अंतराल के बाद अपने गुरु जी को पत्र लिख रहा हूँ। मुझे डॉ. अजय जनमेजय ने अपना दूसरा शिशु गीत संग्रह समीक्षार्थ भेजा था। मैंने अपनी प्रतिक्रिया 'वार्ता' दैनिक को भेज दी थी। वह अब छपी है। आपके अवलोकनार्थ प्रेषित कर रहा हूँ। कृपया इसके बारे में अपनी प्रतिक्रिया से अवगत करायेंगे। यह छप गई है-मगर त्रुटियों को जानकर मैं भविष्य में सावधान रहूँगा। आपका आभारी रहूँगा। आदर सहित।

आपका कृपाभाजन
राजन

ओ३म्

हैदराबाद 13.7.04

आदरणीय आर्य जी,

नमस्ते। ईश्वर आप सबको चिरायु, स्वस्थ, साहित्य समाजसेवी, यशस्वी, सम्पन्न एवं प्रसन्न रखे।

आपका स्नेहिल पत्र 9.7 का पाकर अतीव प्रसन्नता हुई। आपने मेरे बारे में सोचा, इतना अमूल्य शोध-पत्र भेजा, मैं इसे पाकर कृतार्थ हो गया। आपने वास्तव में बहुत बड़ा कार्य किया है-गागर में सागर भर दिया है। संस्कृत देवभाषा है-उसके इतिहास, उसमें रचित महान ग्रंथों और उनके चाहने वाले देशी-विदेशी विद्वानों द्वारा किये गये अनुवाद तथा अनूदित ग्रंथों के नाम आदि देकर लेख को पूर्ण बनाया गया है। मुझे बहुत जानकारी मिली है। देवभाषा और अपने देश पर गर्व में वृद्धि हुई है। साथ ही खेद भी होता है कि अपने देश में ही संस्कृत का पूरा मान-सम्मान नहीं हो रहा है।

आपका लेख संग्रहणीय है, विचारोत्तेजक है, भाषा अनुसंधान केन्द्र को बड़ी देन है-बहुत सराहनीय प्रयास है। दूसरे देशों में अधिकांश पढ़ाई उनकी राष्ट्रभाषा में होती है-हमारी राष्ट्रभाषा नाम की है-अधिकांश अंग्रेजी का वर्चस्व छाया हुआ है। नई पीढ़ी को अपने महान इतिहास का ज्ञान नहीं है-अस्मिता की रक्षा कैसे करेंगे। हम पहले तो अपने को भारतीय और अपनी भाषा को भारती कहना शुरू करें। बहुत समय बीत गया है-हम चेतें।
आपने चेताने का पुण्य कार्य किया है। इसके लिए आपको साधुवाद-धन्यवाद। परिवार में सबको यथायोग्य।

आपका कृपाभाजन
राजन

***

63. प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० रामप्रसाद मिश्र का पत्र

दिल्ली-110091 31.3.04

सम्मान्य विद्वद्वर,

सादर नमन। 24 का कृपा पत्र आज प्राप्त हो पाया है क्योंकि पिछले दिनों कई पर्व पड़ गये थे। 'कल्पान्त' पर आपकी सम्मति आपकी विद्वता के सर्वथा अनुरूप है। आभारी हूँ।
मैं ठीक तो नहीं किन्तु ठीक-सा हूँ। 71 का शरीर, सुदीर्घ मधुमेह, चरणशोथ

इत्यादि ''शरीर व्याधिनाम् मंदिरम्'' की सार्थकता का स्मरण कराते नहीं थकते।

आपके कष्ट से दुःखी हूँ। भगवान आपको स्वस्थ रखें, जिससे आप माता हिन्दी की सेवा करते रह सकें।

सादर

राम प्रसाद मिश्र

***

64. श्री भक्तदर्शन जी, कुलपति, कानपुर विश्वविद्यालय का पत्र

भक्त दर्शन
कुलपति
कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर 09 अगस्त, 1977

संदर्भ-अ.शा.पत्र सं./का.वि./659/कु.

प्रिय डॉ० आर्य जी,

5 अगस्त का पत्र प्राप्त करके अनुगृहीत हुआ। आपने 'गढ़वाल की दिवंगत विभूतियाँ' के बारे में जो प्रशंसापूर्वक विचार व्यक्त किये हैं, उनके लिए आभारी हूँ।

मेरी स्वयं इच्छा है कि इस पुस्तक का संशोधित तथा परिवर्धित संस्करण प्रकाशित कराऊँ। पर अभी तो अवकाश ही नहीं मिल पा रहा है। कुछ दिनों बाद जब यहाँ से अवकाश ग्रहण करूँगा, तब सबसे पहले इसी ओर ध्यान दूँगा। आपके मूल्यवान सुझावों का स्वागत करूँगा।
आप उत्तरोत्तर उन्नति करें, इसके लिए शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

भवदीय

डॉ० रामस्वरूप आर्य, बिजनौर भक्तदर्शन

***

65. तुलसी साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान और हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के साहित्यान्वेषक पं. उदयशंकर दुबे का पत्र

।। श्री मारुतिः शरणं।।

साहित्य कुटीर, कठारी बाजार, पो. खमरिया, वाराणसी-221306
आदरणीय आर्य जी,
सप्रेम हरिस्मरण।

लंबी अवधि के बाद पत्र लिख रहा हूँ। आशा है स्वस्थ व सानंद हैं। मेरे मित्र डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त बरसैयां (छतरपुर, म.प्र.) ने 'रामचंद्रिका' की दो पृष्ठों

की छायाप्रति भेजी है और यह भी लिखा है कि इसे डा. रामस्वरूप आर्य जी, बिजनौर ने बहुत पहले भेजा था। क्या 'रामचंद्रिका' की उक्त प्रति आपके संग्रह में है तो सूचित करें। यह प्रति फारसी लिपि में है। आपने मुझे पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी जी के पत्र की फोटो स्टेट प्रति दी थी, वह 'हिन्दुस्तानी' पत्रिका में छप गई है। गांव में रहने से नई जानकारी नहीं मिल पाती। शेष शुभ

भवदीय,

31.12.04 ई० उदयशंकर दुबे

***

66. 'हिन्दी प्रचारक पत्रिका' (वाराणसी) के प्रबंधक श्री रामेश्वरनाथ का पत्र

हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशंस (प्रा.लि.) 21.8.09

मान्यवर डॉ० साहब,

आपका पत्र मिला, धन्यवाद।

आपने 'हिन्दी प्रचारक पत्रिका' के आमुख पर प्रकाशित त्रुटियों की ओर ध्यान आकर्षित कराया, इसके लिए हम आपके आभारी हैं। कार्याधिक्य के कारण कभी-कभी गलतियाँ होना स्वाभाविक हो जाता है। संशोधन कर लिया गया है। आपको पत्रिका का संपादन अच्छा लगता है, इसके प्रति हम पुनः आभार प्रकट करते हैं। सादर सूचनार्थ

रामेश्वरनाथ

प्रबंधक

***

67. साहित्याकार एवं पूर्व पुलिस अधीक्षक श्री पन्नालाल गुप्त 'मानस' का पत्र

40, सराय खुल्दाबाद, इलाहाबाद-211016 26.2.2002

परम आदरणीय डॉ० आर्य जी,

सादर वन्दे!

आपका नववर्ष का बधाई पत्र प्राप्त हुआ, आभारी हूँ। आप और आपके परिवार में भी सुख-समृद्धि व्याप्त रहे। यही कामना है।

इधर मैंने अपनी आत्मकथा एवं संस्मरण लिखना प्रारंभ कर दिया है। डॉ. रामकुमार वर्मा, अश्क जी और डा. जगदीश गुप्त लिखने को कहा करते हैं किन्तु संयोग नहीं बन पा रहा था। अब 19.2.2002 से 10 पृष्ठ प्रतिदिन लिख रहा हूँ। देखिए कब तक पूरा होता है। प्रकाशक मिल गया है। आजकल प्रकाशक का मिलना दुरूह है। शेष शुभ

आपका

पन्नालाल गुप्त 'मानस'

68. डा. रामसुमिरन लाल, पूर्व प्राचार्य तथा पूर्व निदेशक, प्रौढ़ शिक्षा, एम.जे.पी. रुहेलखंड विश्वविद्यालय का पत्र

रामनारायण पार्क, किला, बरेली 8.9.92

आदरणीय बंधुवर,

नमस्ते

आपका कृपा पत्र मिला, साथ ही नवप्रेरणा भी। अपने पास तो केवल हार्दिक धन्यवाद ही है और आपके पास सच्चा, सरल और नि:स्वार्थ सेवाभाव, जिससे मैं अभिभूत हूँ। सोचता हूँ कि यदि यही सद्भावना, निश्छल उपकार सभी व्यक्तियों में होता तो बंधु! 'देश' देवलोक बन जाता।

कुछ न कुछ करते रहने को तो मन उमड़ता रहता है परंतु मस्तिष्क और शरीर साथ नहीं दे पाते। बिखरी कविता, तुकबंदी अब भी बिखरी पड़ी है-प्रौढ़ शिक्षा पर कुछ संवाद और लोकगीत लिखे हैं। कुछ साहित्यिक योगदान तो नहीं किन्तु सेतु-निर्माण में 'गिलहरी-रेत-दान' सम अक्षर लिखे हैं। उनमें से चार अमरनाथ जी ने अपने 'प्रौढ़ शिक्षा' एकांकी व गीत नामक पुस्तिका में मुद्रित कराये हैं। प्रति सेवा में प्रस्तुत करूँगा। आप या अपने किसी साथी से वैद्य जी के स्मृति-ग्रंथ पर कुछ खट्टे-मीठे विचार लिखवा कर भेजें। अगले माह में उनका प्रयाण दिवस है।

सुना था कि आप वहाँ से मुक्ति पाकर बरेली रहने का मन बना रहे हैं। बड़ा उत्तम रहेगा।

हम दोस्तों को हर मोड़ पर खड़े वो लोग ताकते हैं।
सोचकर कि कोई पोटली लकुटी ले सड़क पार करा दे।।

रामसुमिरन लाल

***

69. मानस संघ, रामवन, सतना (म.प्र.) के मंत्री श्री शारदा प्रसाद का पत्र

25.5.69

प्रिय महोदय,

जयश्री सीताराम। आपका 8.5.69 का कृपा पत्र समय पर मिला था। उत्तर में अकारण ही बहुत विलंब हो गया। क्षमा करेंगे।

वास्तव में 'तुलसी शोध' में उतने ही प्रबंधों का उल्लेख है जितने लेखक ने अपने शोध-प्रबंध में सम्मिलित किए थे। छूट अनेक गये हैं। उनका पता लगाना आवश्यक है।आपने दो की सूचना दी है। यह किस विश्वविद्यालय से स्वीकृत

हुए हैं ? शोधकर्ता का वर्तमान पता मालूम हो तो वह मेरे लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होगा।

'मानसमणि' में 'तुलसी का मेरे जीवन पर प्रभाव' शीर्षक लेखमाला निकालने का विचार है। यह मानस चतुश्शती कार्यक्रम में भी उपयोगी सिद्ध होगी। मुझे हर्ष है कि लोगों का ध्यान इस ओर जाने लगा है। मैं बहुत कार्य करना चाहता हूँ लेकिन अब बूढ़ा हो गया हूँ। अधिक परिश्रम नहीं होता है। फिर भी प्रभु की कृपा का भरोसा है। वे आप महानुभावों के द्वारा रामवन की योजना सफल करायेंगे।

भवदीय
शारदा प्रसाद

***

70. डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त बरसैयां, पूर्व प्राचार्य का पत्र

श्री

12, एम.आई.जी., चौबे कालोनी, छतरपुर (म.प्र.) 22.1.07

आदरणीय डॉ० साहब,

सादर नमस्कार।

आपका 31.12.06 का पत्र मुझे 17.1.07 को मिला अर्थात् 18 दिन बाद। पत्र पाकर हार्दिक प्रसन्नता हुई। कितने दिनों-बल्कि वर्षों बाद आपका पत्र मिला। लगा जैसे भेंट हो गई हो। आपके पत्र आते रहने से मुझे सदैव कुछ न कुछ लाभ होता रहा है। कृपया पत्र-प्रवाह बनाये रखें।

'साहिय अमृत' में छपा मेरा लेख आपको पसंद आया, यह पढ़कर सुखानुभूति हुई। अधिकारी विद्वानों की सराहना से बड़ी शक्ति मिलती है। आपने मेरी भूल भी सुधार दी। सचमुच वह दोहा बिहारी का ही है, जाने किस प्रमाद में मैंने कबीर लिख दिया था। अब यह सुधार स्थायी हो गया। मैंने कहा न कि आपके पत्रों से मुझे सदैव लाभ हुआ है। मुझे इस लाभ से वंचित न करें।

इधर स्वास्थ्य कुछ गड़बड़ रहता है। लिखना-पढ़ना थोड़ा-बहुत चलता रहता है। अपने समाचार देते रहें।

शुभेच्छु
गंगाप्रसाद गुप्त बरसैयां

***

71. डॉ० मुरारीलाल शर्मा, पूर्व शोध छात्र एवं प्राचार्य, केन्द्रीय विद्यालय का पत्र

प्राचार्य, केन्द्रीय विद्यालय, पो. अलीपुरद्वार जंक्शन
जिला : जलपाईगुड़ी-736123 (प.बंगाल) 26.12.03

परमपूज्य गुरुदेव,

सादर चरण वंदन

आपका 17.12.03 का कृपा-पत्र प्राप्त हुआ। यहाँ आने के बाद यह पहला पत्र है। फिलहाल यहाँ रेलवे के अधिकारियों के लिए बने विश्राम घर में हूँ। शेष कुछ खास नहीं।

नारियल, सुपारी और ताड़ के पेड़ हैं। चाय के बागान हैं-आक्षितिज। नदियाँ हैं-तीस्ता, तोरसा, जलढाका वगैरह उत्तर बंगाल का क्षेत्र है, यह भूटान और बंगला देश के आसपास का क्षेत्र है। भूटान तो मैं भी हो आया। मेरी पुस्तक कैसी लगी, आप लिखिए, इसमें मेरे अनुभव हैं। कभी पुस्तकाकार लिखूँगा। शेष कृपा। परिवार में प्रणामादि कहें।

आपका

मुरारी

72. डा. राजेश्वर गंगवार, पूर्व महाप्रबंधक (राजभाषा), रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया तथा पूर्व उपसंपादक 'पराग' का पत्र

354, टैगोर नगर, अजमेर रोड, जयपुर-302024 14.2.08

आदरणीय आर्य जी,

आपका 8 फरवरी 08 का पत्र आज ही मिला है। रिजर्व बैंक से सेवानिवृत्त होकर लगभग डेढ़ वर्ष दिल्ली रहा और मार्च 2006 से जयपुर में हूँ। पहले दिल्ली ही स्थायी रूप से रहने का विचार था किन्तु कुछ कारणों से जयपुर चला आया।

इधर मेरा लेखन कार्य कुछ धीमा ही है। 2006 में मैंने 'कम्प्यूटर कोश' तैयार किया था। एक विज्ञान कथा संग्रह भी किताबघर प्रकाशन, दिल्ली को दिया है। पी-एच.डी. का शोध प्रबंध भी पुस्तक के रूप में प्रकाशित करने का विचार है, विषय है 'हिन्दी विज्ञान कथाओं का वैज्ञानिक विश्लेषण'। एक अन्य विज्ञान संबंधी पुस्तक 'नये क्षितिज' पर धीमी गति से कुछ कार्य कर रहा हूँ। कम्प्यूटर संबंधी लेखों को भी प्रकाशित करवाना चाहता हूँ। बैंकों की पत्रिकाओं आदि में कई लेख प्रकाशित हो चुके हैं। रिजर्व बैंक में रहकर सरकारी क्षेत्र में बैंकों में

कम्पयूटर पर हिन्दी में कार्य बढ़ाने का प्रयास किया था, उसी से कुछ अध्ययन-लेखन करना पड़ा।

आपकी क्या गतिविधियाँ हैं ? वर्षों बाद आपका पत्र पाकर बहुत प्रसन्नता हुई। एक वर्ष पहले बरेली में डॉ० भगवान शरण भारद्वाज से भेंट हुई थी। इससे पहले भी बरेली जाता रहा हूँ। तभी आपके तथा अन्य सुजनों के बारे में चर्चा हो जाती है। सभी को मेरी नमस्ते

भवदीय

राजेश्वर गंगवार

***

73. 'बिजनौर के जवाहर' (उर्दू) के लेखक श्री फुरकान अहमद सिद्दीकी का पत्र

2164, अहाता कैलाश

कासमियान जान, दिल्ली-110006 28.11.91

सम्मानीय डॉ० साहब,

मैं, 'बिजनौर के जवाहर' की एक प्रति भेज रहा हूँ। कृपया इसको एक महान हिन्दी विद्वान के रूप में विनम्र भाव से स्वीकार कीजिए।

सम्मान सहित

आपका विश्वासपात्र

फुरकान अहमद सिद्दीकी

बिजनौर के गौरव के रूप में आपका संदर्भ पृष्ठ 5, 7, 39, 40, 80 व 86 पर है।

***

74. डॉ० आर्य जी के पूर्व शोध छात्र डा. गिरिराज शरण अग्रवाल, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कालेज, बिजनौर का पत्र

हिन्दी साहित्य निकेतन

सम्भल (उ.प्र.) 23.8.71

श्रद्धेय डाक्टर साहब,

सादर नमस्कार। आपका कृपा-पत्र मिला। आभारी हूँ। आपकी सेवा में, तुलसीदास जी के संबंध में ग्रंथ योजना के अन्तर्गत जिस सूची और परिपत्र को तैयार करना है, उसकी रूपरेखा भेज रहा हूँ। आपकी स्वीकृति प्राप्त होने के बाद ही इसको तैयार कराया जाएगा, दूसरों पर भेजने के लिए।

इसके लिए जो विषय सूची तैयार की है उसको आप एक बार और देख

लें। कोई विषय दोबारा तो नहीं आ गया है, अथवा शीर्षक में कोई त्रुटि तो नहीं रह गई है। इसको तथा विद्वानों की पते की सूची को जितनी शीघ्र देंगे उतनी ही शीघ्र कार्य प्रारंभ हो जाएगा।

मेरा अपना कार्य गति से चल रहा है। मुरादाबाद के के.जी.के. कालेज में भी कई दिन तक गया था और वहां पर पुस्तकों को देखा था, यद्यपि अधिक उपयोगी पुस्तकें तो नहीं मिलीं। कुछ ऐसी थीं जो मेरे पास थीं या मैं पहले ही उनको देख चुका था।

मीना के शोध के लिए रूपरेखा विश्वविद्यालय के लिए भेज दी है। जो रूपरेखा आपने बनवायी थी, उसी को वैसा ही भेज दिया है। आशा है अब वह स्वीकृत हो ही जाएगी।

मेरे योग्य सेवा लिखें। सभी को नमस्कार।

आपका कृपाकांक्षी
गिरिराज शरण अग्रवाल

(आ) डॉ० रामस्वरूप आर्य द्वारा अन्य साहित्याकारों/विद्वानों को लिखे गये पत्र

अनुक्रमणिका

1. डॉ० हरिवंशराय बच्चन को लिखे पत्र

डा. रामस्वरूप आर्य जी ने प्रख्यात् साहित्यकार डा. हरिवंशराय बच्चन की दो पुस्तकों की समीक्षा की थी तथा आत्मकथा के आरंभिक दो खंडों पर विस्तृत टिप्पणियाँ लिखी थीं। आत्मकथा के प्रथम खंड 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' में डॉ० आर्य जी ने 29 भूलों की ओर संकेत किया था, जिनमें से 18 भूलों की ओर निम्न पत्र में उल्लेख किया गया है। शेष भूलों तथा द्वितीय खंड 'नीड़ का निर्माण फिर' की भूलें पेंसिल से लिखी होने तथा समय के अंतराल के कारण अस्पष्ट हैं।

श्रद्धेय डॉ० साहब, 28.3.1970

सादर वन्दे।

आपकी आत्मकथा का प्रथम भाग 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' कुछ विलंब से उपलब्ध हुआ। इसे पढ़कर कविता, उपन्यास और आत्मकथा सभी का आनंद एक साथ ही प्राप्त हुआ। आत्मकथाएँ अन्य साहित्याकारों ने भी लिखी हैं किन्तु आद्यंत काव्यगुणोंपेत आपकी आत्मकथा ही लगी।

इस पुस्तक को पढ़ते हुए इसमें कुछ भाषा सम्बंधी कमियों पर मेरी दृष्टि अटक गई। इनकी सूची सेवा में प्रेषित है। बहुत संभव है, इनमें कुछ प्रयोग आपको अब भी उचित जँचें। इस सम्बंध में मेरा विशेष आग्रह नहीं है। आपकी विशाल हृदयता तथा उदारता को दृष्टिपथ में रखते हुए यह पत्र आपको लिख रहा हूँ। आशा है आप इसे अन्यथा न लेंगे।

स्नेहाकांक्षी

रामस्वरूप आर्य

सूची

पृ०सं०	पंक्ति	शब्द	सुझाव
12	11	कन्या कुमारी	कुमारी कन्या
14.	10	शायद	शायद का प्रयोग अनावश्यक है क्योंकि कैथी लिपि प्रसिद्ध है।
27	24	निर्भर	आश्रित
59	2	पच्छिम	पश्चिम
71	12	कौआ मारे डखना हाथ	लोकप्रसिद्ध मुहावरा है-बगुला मारे...
74	20	वह	मोहि
86	19	सर-सामान	सरो-सामान

88	अंतिम	महाभाव	महा-भाव
99	27	बुदबुद	बुदबुदा
112	अंतिम	प्रयोग	उपयोग
118	24	हुआ था	हुए थे
142	अंतिम	भी	ही
223	5	उच्चकोटि	स्थान बदलो
242		वह अनुभव भी लिखना चाहिए	
251	20	के	की
264	23	ही	स्थान परिवर्तन
299	20-21	पुननिर्माण	पुनर्निर्माण
314	11	हूँ	होऊँ

***

श्रद्धेय डा. साहब, 10.10.1970

सादर वन्दे।

आपका 3.10.70 का कृपापत्र प्राप्त हुआ। आप अपनी गुणग्राहकता के लिए प्रसिद्ध हैं। आपने मुझे बुधजनों की कोटि में रख दिया है। मैं प्रयास करूँगा कि आपका आशीर्वाद सफल हो। आपकी शुभकामनाओं के अनुरूप स्वयं को ढालना चाहूँगा।

सुश्री शांति जोशी ने अपने ग्रंथ 'सुमित्रानंदन पंत: जीवन और साहित्य' (राजकमल प्रकाशन) में आपकी 'कवियों में सौम्य संत' पुस्तक से उद्धरण प्रस्तुत करते हुए विस्तार से टिप्पणी की है। (पृ० 254+263)।

अभी डॉ० कृष्ण भावुक की सद्यः प्रकाशित पुस्तक 'आधुनिक हिन्दी कवियों के शब्द प्रयोग' भी देखने में आई। इसमें लगभग 33 पृष्ठों में आपके द्वारा प्रयुक्त शब्दों पर विचार किया गया है।

आपके द्वारा संपादित 'पंत के सौ पत्र' की प्रति 'समीक्षा' (पटना) की ओर से मुझे समीक्षार्थ प्राप्त हुई है। सितम्बर की 'कादम्बिनी' में 'स्तंभ' के अन्तर्गत छींटाकशी की गयी है। योग्य सेवा

स्नेहाकांक्षी

रामस्वरूप आर्य

***

श्रद्धेय डॉ० साहब 2.10.72

सादर वन्दे।

आपका 25.9.72 का कृपा पत्र प्राप्त हुआ। आपने मेरी शंकाओं पर ध्यान दिया, इसमें आपकी उदारता ही प्रकट होती है।

आप शब्द की आत्मा के पारखी हैं, इसीलिए आपका ध्यान इन छोटी-छोटी बातों की ओर आकृष्ट करने का साहस हुआ।

'आशंका' और 'संभावना' के सम्बंध में आपने जो लिखा है, वह विचारणीय है-'आशंका' जब निश्चिन्तता हो। 'संभावना' तब, जब विवाद न उठे। मैं इस पर और गहराई से सोचूँगा। मुझे तो ऐसा लगता है कि 'आशंका' और संभावना-दोनों में ही संदेह अथवा अनिश्चय का भाव है। 'आशंका' में अनिष्ट अथवा भय का भाव है, जबकि 'संभावना' में शुभ का भाव मिश्रित है। यथा-'हानि की आशंका है' और 'लाभ होने की संभावना है'।

अपने पत्रों में मैंने कुछ विस्तृत चित्रों की बात भी उठाई थी। आशा है इस पर भी आप विचार करेंगे। आत्मकथा के तृतीय खंड की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा है।

एक नम्र निवेदन-

कुछ साहित्यकारों ने मेरी प्रार्थना पर अपनी रुचि की एक कविता मुझे स्वहस्तलेख में प्रदान करने की कृपा की है। आपकी कविता 'सागर तीरे' आपके चित्र सहित धर्मयुग के नवम्बर, 1970 ई० के अंक में प्रकाशित हुई थी, मेरे पास सुरक्षित है। फिर भी क्या आप मुझे अपनी एक कविता स्वहस्तलेख में प्रदान कर अनुगृहीत करेंगे। अपना एक चित्र भी भेजने की कृपा कीजिए।

कृपाकांक्षी

रामस्वरूप आर्य

***

2. हिन्दी साहित्य के इतिहास के आधार-स्तंभ तथा पूर्व प्राचार्य डॉ० किशोरीलाल गुप्त, डी.लिट्. को लिखे पत्र

डा. रामस्वरूप आर्य

नई बस्ती, बिजनौर (उ.प्र.) दिनांक 15.7.71

आदरणीय बंधुवर,

नमस्कार।

किसी भी प्राचीन कवि के सम्बन्ध में शंका उपस्थित होने पर आपके 'सर्वेक्षण' से अपार सहायता मिलती है। खोज कार्य में प्रवृत्त विद्वानों के लिए यह ग्रंथ अत्यन्त

महत्वपूर्ण है। 'सरोज सर्वेक्षण' पृ० 373 पर आपने नवीन कवि के सर्वेक्षण में लिखा है, ''नवीन का असल नाम गोपाल सिंह था।'' शिवसिंह जी ने इसका नाम 'नवीन कवि' दिया।

मिश्र बन्धु विनोद में ये 'नवीन' है। मिश्र बन्धु विनोद तृतीय भाग, पृ० 1031 हिन्दी साहित्य के प्रथम इतिहास में ग्रियर्सन ने उन्हें 'नवीन कवि' कहा है। (आपके द्वारा संपादित इतिहास, प० 322)

काशी नागरी प्रचारिणी सभा के संक्षिप्त खोज विवरण में इनका 'वास्तविक नाम गोपाल राय' बताया गया है। प्रथम खंड पृ० 474।

कृपया सूचित करें कि गोपाल सिंह का आधार क्या है ?

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मुझे 'नवीन' द्वारा संगृहीत '**सुधासर**' की हस्त लिखित प्रति प्राप्त हुई है। ग्रन्थ 972 पृष्टों में समाप्त हुआ है। इसका लिपिकाल सं. 1901 (?)। (संवत 1910 वि.) है।

उसी के साथ नवीन कवि का एक और ग्रंथ भी प्राप्त हुआ है '**बृज बानी विनोद**'। यह बड़े आकार के (12X7" के) 38 पृष्ठों में है, जिसके प्रति पृष्ठ पर 29 पंक्तियाँ हैं। ग्रन्थ का रचना काल दिया गया है–

प्रभु ग्रह सत रितु बरस वर, मंगल मंगलमूर
आस्वन द्वितिया चंद पष, भयो ग्रंथ परिपूर

इसमें सत का अर्थ अभी अस्पष्ट है। यदि इसका अर्थ शून्य लें, तो रचनाकाल 1906 वि० सिद्ध होता है। मैं यह जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रत्यनशील हूँ कि 1906 वि० की आश्विन शुक्ला चंद पष द्वितीया को कौन सा वार था। जहाँ तक मेरी जानकारी है नवीन कवि की '**बृज बानी विनोद**' रचना से हिन्दी-संसार अपरिचित है। इस दिशा में अपनी जानकारी से अवगत कराकर अनुगृहीत करेंगे।

भवदीय
रामस्वरूप आर्य

***

नई बस्ती, बिजनौर

बंधुवर, 25.7.71

सप्रेम नमस्कार।

आपका 21.7.71 का पत्र प्राप्त हुआ। आपने 'सत' के सम्बन्ध में जो सुझाव दिया है, वह पूर्ण संतोषजनक एवं मान्य है। एतदर्थ मैं हृदय से आभारी हूँ।

'सुधासर' की रचना सं० 1795 में हुई थी और 'बृजबानी विनोद' की 1906 वि० में। मेरे पास जो प्रतियाँ हैं, उन दोनों का लिपि-काल सं० 1910 है। बहुत संभव है, इनकी प्रतिलिपि लेखक के जीवन काल में ही हो गई हो।

'सुधासर' की पुष्पिका है, ''नवीन कृत पराचीन प्रवीन कवि समूह बानी सुष सानी सुधासर नाम ग्रंथ षट तरंग बरनन संपूर्ण सुभं। दसषत केवल कृष्ण के लिखी श्री वृन्दावन धामे मुकाम श्री गुरु सहाइ मिश्र जी कौ तिन्ने लिषाई। ।।श्री।। संवत् 1910। शुभ मिति कार्तिक वदी 3 गुरुवार।''

इस सम्बन्ध में विशेष बात यह है कि इसकी यह प्रतिलिपि कवि के निवास स्थान वृन्दावन में ही की गई थी। ग्रन्थ बड़े आकार के 972 पृष्ठों में है, (कलम मोटी होने के कारण ग्रन्थ का आकार अपेक्षाकृत अधिक दिखाई पड़ता है) जिसके लिए प्रकाशक मिलना कठिन है।

'बृज बानी विनोद' भी इस ग्रन्थ के साथ था। लिपिकर्ता भी एक ही प्रतीत होता है। अत: यह ग्रन्थ भी इन्हीं 'नवीन' का होगा।

मैंने अपने पिछले पत्र में हस्तलिखित ग्रन्थों के संक्षिप्त विवरण का उल्लेख किया था, जिसमें कवि का 'वास्तविक नाम गोपाल राय' बताया गया है। 35-37 का खोज विवरण मैंने नहीं देखा है। 'साहित्य समालोचक' में प्रकाशित श्री याज्ञिक के लेख की सूचना मुझे मिली थी, किन्तु वह अंक देखने को नहीं मिल सका। 'सिंह' का आधार सम्भवत: यही लेख है। पता नहीं कि श्री याज्ञिक ने कवि के नाम के साथ 'सिंह' किस आधार पर जोड़ा। एक छोटी-सी शंका यह भी है कि उत्तर प्रदेश में कायस्थों के साथ 'सिंह' लगाने की परिपाटी नहीं है। आपका 'सर्वेक्षण' खोज कार्य में काम आ रहा है, यद्यपि कहीं-कहीं मत वैभिन्न की गुंजाइश है। इस ग्रंथ के उलटते-पलटते एकाध प्रसंग ने मेरा ध्यान आकृष्ट किया। सर्वेक्षण पृ० 83 पर आपने निम्नलिखित सोरठा रहीम का बताया है-

बुंद समुद्र समान, यह अचरज कासों कहौं।
हेरनहार हेरान, अहमद आपै आप मैं।।

थोड़े पाठान्तर के साथ यह सोरठा 'रहीम रत्नावली' (पं० माया शंकर याज्ञिक सोरठा सं० 277) में भी मिलता है, किन्तु वास्तव में यह सोरठा जायसी का है, जो उनके 'अखरावट' में थोड़े पाठान्तर सहित उपलब्ध है-

बुंदहि समुद समान, यह अचरज कासों कहौं।
जो हेरा सो हेरान, मुहमद आपहि आपु मँह। सं० 7

जायसी की कोढ़ी से भेंट तथा उसके अदृश्य हो जाने के प्रसंग में आचार्य

शुक्ल जी ने इस सोरठे (आचार्य जी ने प्रमादवश इसे दोहा लिख दिया है) का उल्लेख किया है-जायसी ग्रन्थावली, भूमिका पृ० 7।

नवीन खोज के आधार पर जायसी के छह ग्रन्थ हैं--पद्मावत, अखरावट, आखिरी कलाम, कहरानामा (जिसे डॉ० माता प्रसाद गुप्त ने अनुमान करके महरी बाईसी नाम दिया था), मसलानामा और चित्ररेखा।

उर्दू के बड़े-बड़े विद्वान् नेवाज कवि (शकुन्तला का उल्था करने वाले) को एक स्वर से मुसलमान मानते हैं। जब उर्दू के डाक्टर प्रकाश मूनिस को सर्वेक्षण पृ० 398 पर उद्धत 1917 के खोज विवरण का उल्लेख दिखाया, तो वे चौंके। इसमें साफ ही 'निवाज तिवारी' लिखा है। अब वे और प्रमाण ढूँढ रहे हैं, जिससे उर्दूवालों का भ्रम दूर किया जा सके। सर्वेक्षण पर एक दोहा उद्धृत है--

तुम्हें न ऐसी चाहिए, छत्रसाल महराज
जहँ भगवत गीता पढ़ी, तहँ कवि पढ़ै नेवाज।

इसमें दूसरी पंक्ति का अर्थ स्पष्ट है। क्या इस पर प्रकाश डालने की कृपा करेंगे। आपसे सूचनार्थ निवेदन है कि मेरे पास 'रामचन्द्रिका' की भी एक प्राचीन हस्तलिखित प्रति है, जिसका लिपि काल 1169 हि० है। प्रति स्पष्ट उर्दू लिपि में है। इसके अतिरिक्त छन्द शास्त्र की भी कई पुस्तकें हैं, जिनका उल्लेख खोज विवरणों तथा सन्दर्भ ग्रन्थों में मुझे अभी तक नहीं मिला। सरस्वती, सुधा, माधुरी, चाँद आदि के भी शताधिक अंक मेरे पास हैं, जिनमें से अनेक आज बड़े-बड़े पुस्तकालयों में भी दुर्लभ हैं। योग्य सेवा।

भवदीय
रामस्वरूप आर्य

***

नई बस्ती, बिजनौर 20.8.71

आदरणीय बंधुवर

सादर नमस्कार।

आपका 3.8.71 का कृपा पत्र प्राप्त हुआ। 'सुधासर' पर मैं कार्य आरम्भ करूँगा। पता नहीं रत्नाकर जी ने इसके कितने अंश का सम्पादन किया था। कभी समय निकालकर इसके आकार प्रकार से सूचित करने की कृपा करें। ग्रन्थ के आदि तथा अन्त की दो-चार पंक्तियाँ भी लिख भेजेंगे, तो अच्छा रहेगा।

आपकी सूचना के अनुसार मैंने भारतीय साहित्य वर्ष 3 अंक 4 देखा था। इसमें डॉ० रावत ने दम्पति वाक्य विलास का जो परिचय दिया है, उससे ऐसा

प्रतीत होता है कि यह ग्रन्थ सुधासर से भिन्न है। इसी प्रसंग में मैंने जनवरी 1964 की 'सरस्वती' में प्रकाशित डॉ० चन्द्रभान रावत का लेख 'दम्पति वाक्य विलास' अतिरिक्त सूचनाएँ, भी देखा। इससे भी यही लगा कि उक्त ग्रन्थ सुधासर से भिन्न ही है।

आपने जो तर्क दिया है उसके आधार पर गोपाल के नाम के साथ सिंह भी हो। इसके लिए अभी मैं अन्त: साक्ष्य की खोज में हूँ, यदि बाह्य साक्ष्य से भी इसकी सिद्धि हो सकी तो इसे स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होगी।

यह जानकर प्रसन्नता है कि जायसी के सभी ग्रन्थ आपके पास हैं। आप जैसे शोधकर्ता, जो जागरूक हैं तथा निरन्तर अध्ययन में व्यस्त हैं, की दृष्टि में और भी अनेक नए तथ्य आये होंगे। जैसा कि आपके पत्र से विदित हुआ अब आपके पास ऐसी पर्याप्त सामग्री है। इस संबंध में विनम्र निवेदन है कि यह सब प्रकाशित होनी चाहिए। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि 'हिन्दुस्तानी' त्रैमासिक के एक अंक के रूप में यह सारी सामग्री एक साथ प्रकाशित की जाये। नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष 67 अंक 4 इसी रूप में निकला था, जिसमें केवल एक लेख था। इसमें भाई श्री कांति सागर जी ने ना.प्र. सभा के कुछ विवरणों के संशोधन प्रस्तुत किये थे। यह सामग्री बाद में सरोज सर्वेक्षण के परिशिष्ठ के रूप में पुस्तकाकार रूप ले सकेगी। आशा है, यह सुझाव आपको पसन्द आएगा।

एक अच्छी भूमिका सहित आपने नेवाज ग्रंथावली का संपादन कर लिया है, यह जानकर हर्ष है। आशा है यह शीघ्र ही प्रकाशित होगी।

"जहँ भगवत गीता पढ़ी, तहँ कवि पढ़ै नेवाज" का जो अर्थ आपने लिखा है, वह ठीक है। मुद्रा अलंकार से नेवाज का एक और अर्थ भी ध्वनित होता है, "जहाँ मैं भगवद्गीता जैसी पवित्र रचनाएँ पढ़ता था, वहां अब नेवाज कवि नमाज पढ़ता है।" उर्दू वाले इसी को ले उड़े हैं और नेवाज को मुसलमान सिद्ध कर रहे हैं। मुझे इस अर्थ की संगति तो जँचती है, पर इसके आधार पर यह कहना कि नेवाज मुसलमान थे, मान्य नही है। उर्दू के एक शोधकर्त्ता ने एक कहानी गढ़ी है कि नेवाज मूलत: हिन्दू थे और उनका नाम गोपाल था, मुसलमान होने पर उन्होंने अपना नाम नेवाज रख लिया था। अस्तु, आपकी नेवाज ग्रन्थावली प्रकाशित होने पर इस प्रकार की भ्रान्तियों का निराकरण हो सकेगा।

आपकी सद्भावनाओं के लिए हृदय से आभारी हूँ।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

3. प्रसिद्ध विद्वान आचार्य सीताराम चतुर्वेदी, मुजफ्फरनगर को लिखा पत्र

ॐ

नई बस्ती, बिजनौर 26.12.81

श्रद्धेय पंडित जी,

सादर वन्दे।

18 दिसम्बर को मेरी मुजफ्फरनगर की यात्रा सफल रही क्योंकि इस यात्रा से आपके दर्शनों का सुयोग प्राप्त हुआ। आपके श्रीमुख से कुछ संस्मरण सुने, इसे मैं अपने किन्हीं पुण्यों का ही सुफल मानता हूँ। होली के बाद फिर किसी समय, आपसे समय लेकर एक-दो दिन के लिए आपकी सेवा में उपस्थित होऊँगा तथा आपके संस्मरणों को लिपिबद्ध करने का प्रयत्न करूँगा।

डॉ० जगदीशदत्त शर्मा से यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उनकी पुत्री आपके व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर शोध कर रही है। यहाँ एक प्राध्यापक मेरे निर्देशन में भी पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर शोध कार्य कर रहे हैं।

डॉ० हरिवंशराय बच्चन ने अपनी आत्मकथा में आपका श्रद्धापूर्वक उल्लेख किया है। श्री रामनाथ सुमन ने अपनी पुस्तक 'मैंने स्मृति के दीप जलाए' में लिखा है-"1928 ई० में विक्रम परिषद के प्रतिष्ठापक पं. सीताराम चतुर्वेदी तथा अन्य लोगों ने प्रसाद के 'चंद्रगुप्त' नाटक का अभिनय किया था, जो अत्यन्त सफल रहा था। आज तक के हिन्दी नाटकों के अभिनय के इतिहास में वह बेजोड़ है।" इस अवसर पर संभवत: श्री जयशंकर प्रसाद भी उपस्थित रहे होंगे।

यदि आप अपने संगी-साथियों के कुछ संस्मरण लिपिबद्ध कर सकें तो बहुत अच्छा होगा। यदि आपने ऐसी कोई पुस्तक लिखी हो तो कृपया सूचित कर अनुगृहीत करेंगे।

आशा है अब आपके पैर का दर्द ठीक होगा। परम प्रभु से प्रार्थना है कि वे आपको शतायु करें।

विनीत

रामस्वरूप आर्य

***

4. राजस्थान के पूर्व उच्च शिक्षा मंत्री तथा 'लोक शिक्षक', जयपुर के संपादक पं. युगल किशोर चतुर्वेदी को लिखे पत्र

बिजनौर 10.4.82

श्रद्धेय पंडित जी,

सादर वन्दे।

'लोक शिक्षक' का 'ब्रजभाषा साहित्य विशेषांक' यथासमय प्राप्त हुआ। इसमें ब्रजभाषा विषयक महत्वपूर्ण सामग्री संजोई गई है। ब्रजभाषा के अतीत, वर्तमान तथा भविष्य पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया है। इसमें कई लेखों में ब्रजभाषा के अल्प अज्ञात कवियों के कृतित्व से पाठकों को परिचित कराया गया है। ब्रजभाषा के प्राण सूरदास जी के कृतित्व पर स्वतंत्र लेख का अभाव खटक रहा है। मुखपृष्ठ पर भारतीय काष्ठ कला में भगवान श्रीकृष्ण की मूर्ति का चित्र कलात्मक है। यह भी इस अंक की उपलब्धि है।

विशेषांक की साज-सज्जा आकर्षक है तथा मुद्रण भी सुंदर रूप से हुआ है। इस महान विशेषांक के प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई।

विनीत

रामस्वरूप आर्य

***

श्रद्धेय पंडित जी, 10.5.82

सादर प्रणाम।

'लोक शिक्षक' का पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी जन्मशती विशेषांक प्राप्त हुआ। 'लोक शिक्षक' के गौरवशाली विशेषांकों की परंपरा में प्रस्तुत अंक एक और महत्वपूर्ण कड़ी है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में गुलेरी जी का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वे अमर कहानीकार तो थे ही, इसके अतिरिक्त भाषा तथा पुरातत्व के क्षेत्र में भी उन्होंने मौलिक अनुसंधान कार्य किया था। हिन्दी-संसार उन्हें भूलता जा रहा है। उनकी जन्मशती के अवसर पर जैसे व्यापक आयोजन होने चाहिए थे, उनकी संभावना नहीं दिखाई पड़ रही है। इस अवसर पर जो कार्य हिन्दी में अच्छे साहित्यिक पत्र नहीं कर सके, वह 'लोक शिक्षक' ने कर दिखाया है। हार्दिक बधाई।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

5. प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण', पूर्व प्राचार्य तथा सदस्य, साहित्य अकादमी को लिखा पत्र

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर 17.4.12

मान्य बंधुवर,

सादर नमस्कार।

आपकी पुस्तक 'वैदुष्यमणि विद्योत्तमा' मनोयोगपूर्वक पढ़ी। इसमें आपने सर्वथा अनछुए विषय का चयन किया है। महान कवि कालिदास की कीर्ति-कथा का तो अनेक लेखकों ने बखान किया है पर उनकी निर्मात्री भार्या विदुषी विद्योत्तमा की ओर उनका ध्यान नहीं गया।

विदुषी विद्योत्तमा के माध्यम से आपने अपने प्रबंध-काव्य 'वैदुष्यमणि विद्योत्तमा' में नारी की महत्ता की स्थापना की है, यथा-

नारी जीती नित देने को, अर्पण ही उसका जीवन है।
मत समझो उसको देह मात्र, नारी केवल निर्मल मन है।

पुस्तक के चतुर्थ सर्ग के गीतों में सरस एवं कोमल भावों की सरिता प्रवाहित हुई है। श्री मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' के नवम सर्ग में तथा श्री जयशंकर प्रसाद ने 'कामायनी' के इड़ा सर्ग में गीतों का सफल प्रयोग किया था।

काव्य के पृ० 88, 89 तथा पृ० 90 पर काव्यांगों का सरस शैली में विवेचन किया गया है।

हिन्दी में इधर प्रबंध-काव्यों की परंपरा विरल होती जा रही है। 'वैदुष्यमणि विद्योत्तमा' की रचना द्वारा आपने उसे पुनः प्रवहमान करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है।

रामस्वरूप आय

क्षमाचायना सहित- पुस्तक के पृ० 99 पर अंतिम छंद में उपान्त का सम्यक् निर्वाह नहीं हुआ है-'बसी रही' के जोड़ पर छंद के अंत में 'रमी रहीं' के स्थान पर 'धँसी रहीं' कैसा रहता।

***

6. प्रसिद्ध पत्रकार दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' के संपादक, कवि तथा अपने प्रिय शिष्य चंद्रमणि रघुवंशी को लिखा पत्र

प्रियवर, 2.4.14

सस्नेह नमस्कार।

श्री चौहान साहब की पंद्रहवीं पुण्य-तिथि आ गई। समय कितनी तेजी से आगे बढ़ गया। चौहान साहब आज होते तो क्या सोचते, क्या लिखते। नेताओं की

बदजुबानी सीमाओं को लाँघ रही है। 'अप्रिय सत्य न बोलें' शीर्षक लेख सेवा में प्रेषित है। इत्यलम्-

सेवा में, शुभाकांक्षी
श्री चंद्रमणि रघुवंशी रामस्वरूप आर्य
संपादक 'बिजनौर टाइम्स'

***

7. डॉ० अरविंद शर्मा, ज्योतिषाचार्य तथा संपादक 'कनकप्रभा' को लिखा पत्र

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर 14.12.14

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

इस पत्र के साथ अपना एक लेख 'गंगा माता तुम्हें प्रणाम' 'कनकप्रभा' में प्रकाशनार्थ भेज रहा हूँ।

'कनकप्रभा' भारतीय संस्कृति की आदर्श पत्रिका है। 'पंचतंत्र' का धारावाहिक प्रकाशन आज भी अपना महत्व रखता है। 'दुनिया में रहना किस तरह' लेखमाला मनोरंजक, शिक्षाप्रद तथा ज्ञानवर्धक है। पत्रिका का संपादकीय राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत, सामाजिक तथा चिंतनपरक रहता है।

'कनकप्रभा' प्रगति के पथ पर अग्रसर होती रहे, परम प्रभु से यही कामना है।

श्रद्धेय आचार्य जी (पं. राजाराम शास्त्री जी) को मेरा प्रणाम निवेदन कीजिए।

भवदीय
रामस्वरूप आर्य

***

8. डा. एन.एल. शर्मा, पूर्व प्राचार्य तथा पूर्व अधिष्ठाता, वाणिज्य संकाय, एम.जे.पी. रुहेलखंड विश्वविद्यालय को लिखा पत्र

16.1.09

प्रिय बंधुवर,

सप्रेम वन्दे।

आपका 12.1.09 का कृपा पत्र प्राप्त हुआ।

'साहित्य अमृत' में प्रकाशित मेरे द्वारा प्रस्तुत किया गया भारतेन्दु जी का पद्यात्मक भाषण आपको अच्छा लगा, इससे मुझे सहज संतोष है।

आप बरेली कालेज के कार्यवाहक प्राचार्य रहे हैं। बरेली कालेज मेरे लेखन

की प्रथम पाठशाला है। पूज्य गुरुवर डॉ० गुणानंद जुयाल (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग) तथा पं. भोलानाथ जी शर्मा (अध्यक्ष, संस्कृत विभाग) की प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से मैं लेखन में प्रवृत्त हुआ था। डॉ० के.एल. जैन साहब मेरे शोध-निर्देशक थे। मैं लगभग पाँच वर्ष बरेली कालेज में हिन्दी-प्रवक्ता के रूप में सेवारत रहा था।

बरेली कालेज से सेवानिवृत्त होने के अनन्तर आप खंडेलवाल कालेज के निदेशक हो गए हैं, यह जानकर प्रसन्नता हुई। संस्था आपकी योग्यता तथा अनुभव से लाभान्वित होगी।

मेरे दो लेखों की छायाप्रति संलग्न है। इनसे कुछ क्षणों के लिए आपका अनुरंजन होगा। शुभकामनाओं सहित

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

9. श्री सुरेंद्रबीनू सिन्हा, संपादक 'विविध संवाद' (बरेली) को लिखा पत्र

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर 1.6.11

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

'विविध संवाद' का फरवरी-अप्रैल, 2011 का अंक प्राप्त हुआ। इसमें बरेली के अखिल भारतीय ख्याति प्राप्त साहित्यकार स्व. श्री निरंकार देव सेवक के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर विशेष सामग्री दी गई है। यह उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि है। इस अंक में पं. राधेश्याम कथावाचक तथा स्वराज्य शुचि ऐरन का भी पुण्य स्मरण किया गया है। बरेली के साहित्यकारों को समर्पित यह अंक संग्रहणीय है। इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए हार्दिक बधाई स्वीकार कीजिए।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

10. मधुर गीतकार और प्रिय शिष्य श्री किशन सरोज, बरेली को लिखे पत्र

14.3.08

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

आपका गीत संग्रह 'बना न चित्र हवाओं का' मनोयोग पूर्वक पढ़ा।

इसमें संकलित गीतों में विद्यापति के माधुर्य, घनानंद की गहन अनुभूति तथा महादेवी वर्मा के समर्पण भाव के साथ-साथ आधुनिक जीवन की वर्जनाओं की सहज, सरल तथा सबल अभिव्यक्ति हुई है। नूतन उपमान, नये प्रतीक तथा नवीन शिल्प इनकी अपनी विशेषता है। गीतों में प्रकृति में चेतना का आरोप महाकवि कालिदास का स्मरण कराता है।

पुस्तक पढ़ते समय कुछ गीतों को रेखांकित किया था पर इनकी संख्या इतनी अधिक है कि इस पत्र में इनमें से किन्हें उद्धृत करूँ, समझ में नहीं आ रहा है। यह तो खांड की पूरी है, जिधर से चखो उधर से मीठी है। 'यह शेख-बिरहमन के झगड़े' गीत में आपने लाख टके की बात कही है। अतीत के विवादों से मुक्ति का यही सर्वोत्तम समाधान है-

कुछ तुम भूलो, कुछ हम भूलें/ईश्वर से करें प्रार्थनाएँ ।

'इस गीत कवि को क्या हुआ', 'जीते जी मैं हार गया' तथा 'हम क्या कहें' गीतों में आत्मकथ्य उभर कर आया है। घनानंद की कविता के विषय में कहा गया है-'समुझै कविता घनआनंद की हिय नैनन नेह की पीर तकी।' यह उक्ति आपके गीतों पर अक्षरश: चरितार्थ होती है।

भवदीय
रामस्वरूप आर्य

***

1.7.09

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

जुलाई, 2009 के 'साहित्य अमृत' में 'साहित्यिक गतिविधियाँ' स्तंभ के अन्तर्गत दिल्ली में आपका 'एकल काव्य पाठ' का समाचार पढ़कर प्रसन्नता हुई।

आपने अपनी लेखमाला में अपनी माताजी के लिए 'जिया' शब्द का प्रयोग किया है। यह शब्द बरेली की क्षेत्रीय भाषा में प्रचलित है। भाषा विज्ञान की पुस्तकों में यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि 'जिया' शब्द संस्कृत के 'आर्यिका' शब्द से निष्पन्न है, जिसका अर्थ है, श्रेष्ठ स्त्री।

परिवार में सबको यथायोग्य-

भवदीय
रामस्वरूप आर्य

***

11. प्रसिद्ध साहित्यकार, पूर्व छात्र तथा उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत (उ.प्र.) के पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष डा. शंभु शरण शुक्ल को लिखे पत्र

ॐ

नइं बस्ती, बिजनौर 18.8.89

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

22/23 जुलाई में एक पत्र आपकी सेवा में लिखा था। आशा है वह आपको यथा समय प्राप्त हुआ होगा। इधर दीर्घ काल से आपके समाचार नहीं मिले। अत: चिंता स्वाभाविक है।

15 अगस्त आने पर स्वामी नारायणानंद सरस्वती जी की याद आयी। उनका स्मृति ग्रन्थ अब किस स्थिति में है। जितने साधन हैं उन्हीं के अन्तर्गत यह श्राद्ध कार्य पूर्ण करना श्रेयस्कर होगा। इस पर आप अपना ध्यान पूर्णत: केन्द्रित करें तो यह कार्य कठिन नहीं है।

परिवार में सबको यथायोग्य। अपने कुशल समाचारों से अवगत कराने की कृपा कीजिए।

'जो बनि आवै सहज में
ताही में चित देय।'

रामस्वरूप आर्य

***

ॐ

नई बस्ती, बिजनौर 26.11.89

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

आपका दिनांक रहित पत्र मिला। नाम आपने सूचीबद्ध करा दिये हैं, एतदर्थ आभारी हूँ।

जहाँ तक मेरी जानकारी है अधिकांश विद्वानों ने 'कन्हावत' को जायसी की प्रामाणिक रचना माना है। डॉ० शिवसहाय पाठक के अतिरिक्त डॉ० परमेश्वरी लाल गुप्त ने भी इसका संपादन किया है। इसका भी प्रकाशन हो चुका है। मैंने अपने पद्मावत की प्रति में 'कन्हावत' का निम्नलिखित दोहा नोट कर रखा है–

'एक नैन कवि मुहमद दरसन लोग भोलाहिं'
सरग सूक जस ऊगवै सबै नखत छपि जाहिं।। दोहा सं. 15

'पद्मावत' में यही भाव इन शब्दों में आया है-

एक नैन कवि मुहमद गुनी। सोइ विमोहा जेहि कवि सुनी।।
जग सूझा एकइ नैनाहा। उवा सूक जस नखतन्ह माहाँ।। दोहा 21

शोध समिति क संयोजक महोदय तथा सदस्यों को आप ग्रन्थ की प्रामाणिकता से आश्वस्त करा सकें तो कार्य आगे बढ़ सकता है।

'चाँद' की फाइलें किसी पुराने पुस्तकालय में ही मिल सकती हैं। संभव है हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के पुस्तकालय में हों। इसके कुछ स्फुट अंक मेरे पास भी हैं।

मेरे संयोजन काल में पीलीभीत के किसी शोधार्थी का विषय 'चण्डीप्रसाद हृदयेश' पर स्वीकृत हुआ था। आशा है वह पूर्ण हो गया होगा। श्री शम्भुशरण अवस्थी का शोध प्रबन्ध (पीलीभीत की भाषा पर) प्रकाशित हुआ है अथवा नहीं? पर्याप्त समय से 'नूतन जी' के समाचार भी नहीं मिले हैं। आशा है, उनका लेखन कार्य चल रहा होगा।

आशा है बरेली से आपको पं. धर्मदत्त वैद्य अभिनन्दन ग्रन्थ विषयक प्रपत्र प्राप्त हुआ होगा। ग्रन्थ के सम्पादक डॉ० आर.एस. लाल, रामनारायण पार्क, किला, बरेली को आपका संदर्भ देते हुए पत्र लिखा था। परिवार में सबके यथायोग्य-

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

चुनाव के शोर शराबे के बीच मैंने डॉ० अम्बाप्रसाद सुमन के ग्रन्थ का आद्यंत पारायण किया। यह उनके पत्रों का संग्रह है। ग्रन्थ पठनीय है।

***

ॐ

बी.-14, नई बस्ती, बिजनौर 17.10.94

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

आपका पत्र तथा 'सोलह सिंगार' की दो प्रतियाँ प्राप्त हुईं।

बिना किसी पूर्व सूचना के 'समर्पण' आपने मेरे नाम कर दिया। यह आपकी उदारता का ही परिचायक है। इससे मैं भावाभिभूत हूँ। मुझे अपने गुरुजनों की याद आ रही है। क्या ही अच्छा होता कि पुस्तक उनमें से किसी को समर्पित होती। वे दिन, वे लोग कहाँ खो गये-

रास्तों! कहाँ गये वे लोग जो आते-
ज 1
मेरे आदाब पे कहते थे 'जीते रहिए'

डॉ० हरित जी 'सीपियाँ दर्द की' की समीक्षा की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहे हैं। परिवार में सबको यथा योग्य।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

पुस्तक के फ्लैप पर परिचय के साथ-साथ आपका चित्र भी होता तो अच्छा रहता। प्रकाशित पुस्तकों का भी उल्लेख होना चाहिए था।

***

12. प्रसिद्ध साहित्यकार प्रो. रामप्रकाश गोयल 'सोज' को लिखा पत्र

6.7.07

आदरणीय भाई साहब,

सादर वन्दे।

आपका गजल-गीत संग्रह 'मुस्कुराते गम' प्राप्त हुआ। गमों में भी मुस्कराते हुए आपने इसमें सुंदर भाव-मणियों को पिरोया है। निराशा के क्षणों में भी आशा के तंतुओं को खोज निकाला है। संग्रह की अनेक गजलें श्रेष्ठ हैं तथा मन पर स्थायी प्रभाव छोड़ने वाली हैं। पुस्तक का सार इस शेर में निहित है-

जीस्त में गम की भी जरूरत है,
गम ही इस जिंदगी की जीनत है।

'काव्य-प्रकाश' के रचयिता आचार्य मम्मट ने काव्य-रचना के हेतुओं में शक्ति, निपुणता, निरीक्षण तथा अभ्यास का उल्लेख किया है। प्रो. रामप्रकाश गोयल 'सोज' में इनका समवेत रूप दिखाई पड़ता है। उनके साहित्य का अध्ययन करते हुए इसकी पुष्टि होती है।

सेवा में, भवदीय

प्रो. रामप्रकाश गोयल 'सोज', बरेली रामस्वरूप आर्य

***

13. पं. नित्यानंद मैठाणी, पूर्व निदेशक, आकाशवाणी नजीबाबाद को लिखा पत्र

30.6.12

मान्य बंधुवर,

सादर नमस्कार।

आपकी पुस्तक 'पं. भास्करानंद मैठाणी : व्यक्तित्व और कृतित्व' प्राप्त हुई। कृपा के लिए आभारी हूँ।

इस पुस्तक में आपने गढ़वाल की विभूति अपने पूज्य पिताजी पं. भास्करानंद

मैठाणी (1904-1990) के दैनंदिन जीवन, सामाजिक सेवाओं तथा जनजागरण हेतु किये गये उनके कार्यों के संबंध में विशद जानकारी देते हुए, उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित की है।

पुस्तक की सामग्री सुनियोजित है। इसमें संकलित विभिन्न लेखों में पं. भास्करानंद मैठाणी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। पुस्तक के अंत में उनके अनेक चित्र दिये गये हैं। ग्रंथ के लेखों में आत्मकथा, जीवनी तथा संस्मरणों का सुंदर सम्मिलन हुआ है। पुस्तक में प्रस्तुत घटनाएँ मनोरंजक, प्रेरक, उत्साहवर्द्धक तथा उपदेशपूर्ण हैं। इस श्रेष्ठ पुस्तक के लेखन, संपादन तथा प्रकाशन के लिए आप बधाई के पात्र हैं।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

14. डॉ० राजमल बोरा, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मराठवाड़ा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) को लिखा पत्र

17.7.2001

मान्य बंधुवर,

सादर नमस्कार।

आपके द्वारा प्रेषित 'राजमल बोरा : परिचय' पुस्तिका की प्रति प्राप्त हुई। इससे आपके विशद कृतित्व की जानकारी मिली। शोध एवं साहित्य के क्षेत्र में आपका योगदान सराहनीय है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित आपके शोध निबंध पुस्तक रूप में प्रकाशित हो सकें तो शोधकर्ताओं के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध होंगे। आपकी साहित्यिक उपलब्धियों के प्रति श्रद्धापूर्वक नमन।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

15. साहित्य-सेवी डा. अनिल शर्मा 'अनिल', धामपुर (बिजनौर) को लिखा पत्र

बी-14 नई बस्ती, बिजनौर 16.11.06

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

समाचार पत्रों के माध्यम से यह जानकर प्रसन्नता हुई कि धामपुर के साहित्य-प्रेमी स्व. पं. रुद्रदत्त शर्मा जी के दुष्प्राप्य ग्रंथों का पुनर्प्रकाशन करा रहे हैं। इस संबंध में सूचनार्थ निवेदन है कि पं. रुद्रदत्त शर्मा ने पं. बनारसीदास

चतुर्वेदी के आग्रह पर अपने अनुभव तथा समाचार पत्रों का इतिहास पुस्तक का लेखन आरंभ किया था पर यह कार्य पूर्ण न हो सका और उनका निधन हो गया। इस पुस्तक की पांडुलिपि मुझे पं. बनारसीदास चतुर्वेदी जी से प्राप्त हुई थी। मेरे आग्रह पर श्री बाबू सिंह चौहान ने इसे अपने दैनिक पत्र 'बिजनौर टाइम्स' के 27 सितम्बर 1993 से 15 नवम्बर 1993 तक सात साप्ताहिक अंकों में प्रकाशित कर दिया था। इसमें पं. रुद्रदत्त शर्मा के पत्रकारिता विषयक अनुभवों के साथ भारतेन्दु युगीन ऐसे अनेक पत्र-पत्रिकाओं का उल्लेख हुआ है, जिनके नाम इतिहास के बड़े-बड़े ग्रंथों में भी नहीं हैं। यह पुस्तक अपूर्ण होते हुए भी अपना महत्व रखती है। पं. रुद्रदत्त शर्मा के ग्रंथों की प्रकाशन-योजना में इसे भी सम्मिलित किया जाये तो अति उत्तम होगा।

सन् 1977 ई० में 'बिजनौर टाइम्स' का गणतंत्र अंक, पं. रुद्रदत्त शर्मा विशेषांक के रूप में प्रकाशित हुआ था। इसकी प्रति भी पं. रुद्रदत्त शर्मा पुस्तकालय में रहनी चाहिए।

शुभकामनाओं सहित-

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

16. साहित्यकार तथा 'मानस-चंदन', सीतापुर (उ.प्र.) के प्रधान संपादक डा. गणेशदत्त सारस्वत को लिखा पत्र

1.2.07

मान्य बंधुवर

सप्रेम वन्दे।

'मानस-चंदन' का अक्टूबर-दिसम्बर, 2006 का अंक प्राप्त हुआ। कृपा के लिए आभारी हूँ। इस अंक के सभी लेख शोधपूर्ण तथा प्रेरक हैं। 'ह्यि निर्गुन नयनन्हि सगुन', 'रामकथा-कल्पलता में छंद योजना', 'रामचरितमानस में सीता', 'ढोल गँवार शूद्र पशु नारी' आदि लेखों के लेखकों ने अपनी बात संतुलित रूप से सप्रमाण प्रस्तुत की है।

'रामायण का स्मरणीय पात्र: आदर्श धीर भरत' लेख से नवीन जानकारी मिली। डॉ० रमानाथ त्रिपाठी के आत्मकथांश 'साहित्य कला कुंभ : बिबुध संक्रांति' में यात्रा एवं संस्मरण का माणिकांचन योग हुआ है। इस अंक में प्रकाशित कविताएँ भी पत्रिका की रीति-नीति के अनुरूप हैं। संपादकीय 'अपनी

बात' में आपके उद्‌गार हृदयस्पर्शी हैं। 'मानस-चंदन' के माध्यम से आप जो सेवा कर रहे हैं, वह श्लाघनीय है।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

17. शोध छात्र डॉ० मुरारीलाल शर्मा, प्राचार्य, केन्द्रीय विद्यालय, बागपत को लिखा पत्र

बी-14, नयी बस्ती, बिजनौर 30/7/2003

प्रियवर,

सस्नेह वन्दे।

आपका कृपा पत्र प्राप्त हुआ। विगत कई माह से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा है। अत: अध्ययन-मनन, पत्र-व्यवहार आदि कुछ भी नहीं हो पाता है।

अब भाषण देने की शक्ति मुझमें नहीं है। अत: क्षमा करेंगे। शेष कार्य यथाशीघ्र सम्पन्न कराने का प्रयत्न करूँगा। अभी आप बागपत में ही हैं अथवा कहीं अन्यत्र स्थानान्तरण हो गया है?

आशा है आप स्वस्थ एवं सानन्द हैं। परिवार में सबको यथायोग्य-

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

18. 'परती पलार' पत्रिका अररिया (बिहार) के संपादक श्री राज राघव को लिखा पत्र

14.2.06

प्रियवर,

सस्नेह नमस्कार।

'परती पलार' का 'रेणु स्मृति विशेषांक' प्राप्त हुआ। रेणु जी की स्मृति में यह अंक अद्वितीय बन पड़ा है। विभिन्न लेखकों द्वारा लिखित रेणु जी विषयक संस्मरणों से उनके बहुआयामी व्यक्तित्व की झलक मिलती है। धीरे-धीरे वह पीढ़ी समाप्त होती जा रही है, जिसे रेणु जी का सान्निध्य प्राप्त हुआ था। अत: भावी पीढ़ियों के लिए यह संस्मरण महान थाती सिद्ध होंगे। प्रस्तुत अंक के कुछ लेखों में रेणु जी के जन्म स्थान का सजीव वर्णन हुआ है तो कुछ अन्य लेखों में रेणु जी के कृतित्व का विशद विवेचन हुआ है। इस अंक में प्रकाशित अन्य

व्यंग्य, विचारात्मक लेख, कहानियाँ तथा कविताएँ आदि भी पत्रिका की गरिमा के अनुरूप हैं। इस सर्वांग सुंदर पत्रिका के संपादन तथा प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

19. श्री राजन चौधरी, हैदराबाद को लिखा पत्र

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर बसंत पंचमी, 2014 ई०

ॐ

मान्य बंधुवर,

सादर वन्दे।

आपकी पुस्तक 'अनुभूति' की प्रति प्राप्त हुई। कृपा के लिए आभारी हूँ।

निबंध-संग्रह 'अनुभूति' भारतीय संस्कृति की अद्वितीय मंजूषा है। इसमें आपने सरल शब्दों में जीवन के व्यावहारिक पक्ष को प्रस्तुत किया है। इसे पढ़कर मन में उठने वाली अनेक जिज्ञासाओं का समाधान स्वत: ही हो जाता है। इस अद्वितीय पुस्तक के लेखन/प्रकाशन के लिए हार्दिक बधाई स्वीकार कीजिए। आपके पुत्र श्री रोहित चौधरी ने यह पुस्तक प्रस्तुत कर एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया है।

इस पत्र के साथ अपने दो लेखों की छायाप्रति सेवा में भेज रहा हूँ। आशा है कुछ क्षणों के लिए इनसे आपका अनुरंजन हो सकेगा।

आपके पूज्य पिताजी (चौधरी शूरवीर सिंह जी) का एक पत्र भी भेज रहा हूँ। 'ऋषि दयानंद के पत्र और विज्ञापन' पुस्तक पलटते हुए यह पत्र मुझे अचानक मिल गया। पिताजी का यह पत्र आपके पास सुरक्षित रहेगा।

पुस्तक 'अनुभूति' के मुखपृष्ठ पर छपे आपके दो चित्रों को देखकर मुझे एक शेर याद आ गया। यद्यपि मुझे संकोच हो रहा है तथापि इस शेर को प्रस्तुत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ-

मैंने पूछा अब कहाँ है आपका हुस्नो जमाल।
हँस के बोला वह सनम, शाने खुदा थी, मैं न था।।

परिवार में सबको यथायोग्य-

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

20. प्रसिद्ध गीतकार एवं कवि, संपादक तथा प्रिय शिष्य श्री विजयवीर त्यागी, बंबई को लिखा पत्र

प्रियवर, 13.2.87

सस्नेह वन्दे।

आपका गीत संग्रह 'सरगम तुम्हारा है' प्राप्त हुआ। गीत आपके हैं पर इनमें मुझे अपनी आत्मा की गूँज सुनाई पड़ी। इनमें से कुछ गीत मेरे पहले से सुने अथवा पढ़े हुए हैं।

गीत संख्या 2, 'मर गया विश्वास पर संभावनाएँ जी रही हैं' पंक्ति में एक शाश्वत सत्य का उद्घाटन हुआ है। इसमें विरोधाभास का सुंदर चित्रण है। कल्पनाएँ, आस्थाएँ, आराधनाएँ सभी सटीक हैं। गीत बहुत सुंदर है। संग्रह के अन्य गीत भी अपना वैशिष्ट्य लिए हुए हैं।

इधर लम्बे समय से आपका बिजनौर आना नहीं हुआ। जीवन अति व्यस्त है, इसमें संदेह नहीं पर साल दो साल में तो कभी इधर आने का कार्यक्रम बनाइए।

इस बार मैं शीत से अत्यधिक आक्रान्त रहा। खीझ बढ़कर दर्द की सीमा तक जा पहुँची। मौसम में नमी होने पर श्वांस फूलने लगती है।

संग्रह के फ्लैप पर आपकी जन्म-तिथि को देखकर पता लगा कि आप अर्धशती तक आ पहुँचे। लगा कि समय बहुत आगे बढ़ गया। परिवार में सबको यथायोग्य-

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

21. तुलसी-साहित्य के मर्मज्ञ पं. उदयशंकर दुबे, वाराणसी को लिखा पत्र

मान्य बंधुवर, 29.8.97

सादर वन्दे।

आपके द्वारा प्रेषित 'मैं पुनि निज गुरु सन सुनी....' लघु शोध प्रबंध का पारायण किया। आपने अथक परिश्रम द्वारा 'रामचरितमानस' की अनेक दुर्लभ हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर 'कुरुषेत' (कुरुखेत) की प्रामाणिकता सिद्ध की है। अब विद्वानों को यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि तुलसीदास जी ने रामकथा अपने गुरु से कुरुक्षेत्र में सुनी थी।

प्रबंध के अंत में उल्लिखित 'गुरुचरित' की प्रति भी उपलब्ध हो जाती तो विद्वद्गण और आश्वस्त हो जाते। आपका यह परिश्रम भविष्य में सार्थक होगा।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

22. प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. रामप्रसाद मिश्र, दिल्ली को लिखा पत्र

मान्य बंधुवर, 24.3.04

सादर वन्दे।

श्री भोलानाथ त्यागी के हस्ते प्रेषित 'कल्पान्त' महाकाव्य प्राप्त हुआ। कृपा के लिए आभारी हूँ। महाभारत पर आधारित आपका यह महाकाव्य अद्वितीय है। इसमें आपने महाभारत के विस्तृत कथानक को 15 सर्गों में समाहित करने का प्रशंसनीय प्रयास किया है। महाकाव्य में प्रथम सर्ग 'प्रवेश' में महाभारत के प्रमुख पात्रों के गुणों का उल्लेख करते हुए सभी के प्रति सद्भावना व्यक्त की गयी है। अंतिम सर्ग में बलराम, श्रीकृष्ण तथा द्रौपदी सहित पाँचों पांडवों का अंत मर्मस्पर्शी है। अंतिम सर्ग 'प्रतिक्रिया' के आरंभ में आपने युद्ध के संबंध में सूत्र रूप में महत् सत्य का उद्घाटन किया है।

भवदीय

रामस्वरूप आय

***

23. कवि प्रो. सेवक वात्स्यायन, पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, क्राइस्ट चर्च कालेज, कानपुर को लिखा पत्र

ॐ

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर धूलिवंदन , 4.3.07

मान्य बंधुवर,

सप्रेम वंदे।

आपका 9.2.07 का लिखा हुआ अंतर्देशीय पत्र मुझे विलंब से 28.2.07 को प्राप्त हुआ। पत्र मिल गया, इसे डाक विभाग की कृपा ही समझा जाए।

आपके निर्देशानुसार श्री भोलानाथ त्यागी आपकी पुस्तक 'पत्र-लेखक आचार्य सेवक वात्स्यायन' मुझे पढ़ने के लिए दे गए थे। इसे मैंने मनोयोगपूर्वक पढ़ा। 'आत्मकथ्य' में आपने अपने जीवन की आरंभिक घटनाओं का चित्रण किया है। इसे और विस्तार देकर 'आत्मकथा' पूर्ण होनी चाहिए। जहाँ तक मेरी जानकारी है, बरेली के साहित्यकारों में पंडित राधेश्याम कथावाचक ने ही पुस्तक रूप में आत्मकथा 'मेरा नाटक काल' लिखी है।

आपके पत्रों में हमारे गुरुजनों डॉ० गुणानंद जुयाल, पं. भोलानाथ शर्मा, डॉ० आर.ए. मिश्र तथा प्रो. डी.सी. शर्मा का उल्लेख हुआ है। डॉ० जुयाल जैसे गुणी, पं. भोलानाथ शर्मा जैसे ज्ञान गरिमा से मंडित, डा. मिश्र जैसे विद्वान और प्रो. डी.सी. शर्मा जैसे स्वाभिमानी प्राध्यापक अब कहाँ हैं। प्रो. डी.सी. शर्मा का जो चित्र आपने सँजोया है, उसमें उनकी वह कला-दाँतों के जबड़े को जिह्वा से

यथास्थान फिट करने की-का चित्र मेरी आँखों के सामने सजीव हो उठा।

आपने अपने पत्र में श्री लक्ष्मीनारायण, प्राचार्य, बरेली कालेज का उल्लेख किया है। बरेली कालेज में जब मैंने इंटर प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया था, तब श्री लक्ष्मीनारायण प्राचार्य थे। वे प्राय: कॉलेज में घूमकर शरारती छात्रों को डाँटते-फटकारते रहते थे।

पुस्तक में संकलित पत्र व्यक्तिगत संबंधों के साथ सामयिक संदर्भों को भी उजागर करने वाले हैं। पत्रों में अनेक सिद्धांत-वाक्य आए हैं। संपादक महोदय ने इस प्रकार के प्रमुख वाक्य पुस्तक के परिशिष्ट || में संकलित करके अच्छा कार्य किया है।

श्री शिव मिश्र ने आपके पत्रों को संकलित कर पुस्तक रूप में प्रकाशित कराया, एतदर्थ वे साधुवाद के पात्र हैं। ऐसे श्रद्धालु सज्जन अब दुर्लभ हैं। आप मेरी शुभकामनाएँ उन तक पहुँचाने की कृपा कीजिए।

श्री शिव मिश्र ने संपादकीय में पत्र-साहित्य संबंधी उपयोगी जानकारी दी है। कुछ और महत्वपूर्ण पत्र संग्रह इस प्रकार हैं।

ऋषि दयानंद के पत्र और विज्ञापन	सं.पं. भगवद् दत्त
चिट्ठी पत्री-दो खंड (प्रेमचंद के पत्र)	'' अमृतराय
डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल के पत्र	'' बाबू वृंदावन दास
पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र	'' बाबू वृंदावन दास
बाबू वृंदावनदास के पत्र	'' रमण शांडिल्य
साहित्यकों के पत्र (इसमें सभी पत्र पत्र-लेखकों के हस्तलेख में हैं)	'' आचार्य किशोरीदास वाजपेयी
प्रसाद के नाम पत्र	सं. रत्नशंकर प्रसाद
पंत के सौ पत्र	'' हरिवंशराय बच्चन
पंत के दो सौ पत्र	'' हरिवंश राय बच्चन
यशपाल के पत्र	'' मधुरेश
भाषा, साहित्य और संस्कृति (डॉ० अंबाप्रसाद सुमन के पत्र)	'' डॉ० कमल सिंह
पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के चुनिंदा पत्र (दो खंड)	'' नारायणदत्त

आपके पत्र-संग्रह में, जिन महानुभवों को पत्र लिखे गए हैं, उनका संक्षिप्त परिचय (चार-पाँच पंक्तियों में) दिया जाता तो अच्छा रहता। 'पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के चुनिंदा पत्र' में यह शैली अपनाई गई है। आपकी अप्रकाशित पुस्तकों

का प्रकाशन होना चाहिए।

आशा है अब तक आपको पेंशन मिलनी आरंभ हो गई होगी। दो वर्ष के वेतन का भुगतान भी हो गया होगा। अपने कुशल समाचारों से अवगत कराने की कृपा करते रहें।

सेवा में, भवदीय

प्रो. सेवक वात्स्यायन, कानपुर रामस्वरूप आर्य

रौ में है उम्र रख्श देखिए कहाँ जाकर रुके,
न लगाम हाथ में है, न पा है रकाब पर।

***

24. कविवर पं. दुर्गादत्त त्रिपाठी, मुरादाबाद को लिखा पत्र

10.6.75

आदरणीय पंडित जी,

सादर नमस्कार।

'तीर्थशिला' काव्य-संग्रह की प्रति प्राप्त हुई। आपकी इस कृपा के लिए आभारी हूँ। 'तीर्थशिला' के सोपानों पर स-हृदय विचरण कर गया। अभी गहरे में डुबकी लगाने का अवसर नहीं मिला। तट पर ही कुछ मुक्ता हाथ आ गए। गीतों में देश की दयनीय अवस्था तथा परदु:खकातरता की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। मानवता को पददलित होते हुए देखकर कवि का हृदय आक्रोश से भर उठता है।

हिन्दी में प्रगतिवादी एवं मानवतावादी स्वर बहुत देर से सुनाई पड़े जबकि 'तीर्थशिला' की रचनाओं में (जिनका रचना-काल 1920 ई. से 1965 ई. है) ये बहुत पहले से ही मुखर हैं।

भवदीय

रामस्वरूप आर्य

***

25. प्रसिद्ध पत्रकार और संपादक श्री नारायण दत्त, बंगलौर को लिखा पत्र

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर 21.10.03

मान्य महोदय,

सादर नमस्कार।

दीर्घ अंतराल के अनन्तर आपका 15.10.03 का कृपा पत्र प्राप्त हुआ। आपका इससे पूर्व का पत्र प्राप्त नहीं हुआ अन्यथा उत्तर अवश्य देता। यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता है कि स्व. पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र पुस्तक-रूप में प्रकाशित हो

रहे हैं। इस युग में आप यह श्राद्ध कर रहे हैं, यह बड़ी बात है। अपना संक्षिप्त परिचय इस पत्र के साथ भेज रहा हूँ। आपके द्वारा पूछा गया अन्य विवरण इस प्रकार है–

1. श्री विष्णुकांत मिश्र ने पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व पर पी–एच.डी. हेतु विषय पंजीकृत कराया था पर वे इसे पूर्ण नहीं कर सके। अब तो वे सेवानिवृत्त हो चुके हैं।

2. जहाँ तक मुझे स्मरण है, श्रद्धेय चतुर्वेदी से मेरा पत्र–व्यवहार तब आरंभ हुआ था, जब वे ज्ञानपुर (वाराणसी) में थे। जब वे कोटद्वार आ गए तो दो बार वहाँ जाकर मैंने उनके दर्शन किए। इसके पश्चात् एक बार फीरोजाबाद में उनके आवास पर जाकर उनके दर्शन किए थे तथा उनका पत्र–भंडार देखा था। उनके आदेश पर ही मैंने पं. पद्मसिंह शर्मा स्मृति ग्रंथ में संपादन–कार्य किया था। इस स्मृति ग्रंथ का अधिकांश भाग बिजनौर तथा मुरादाबाद में मुद्रित हुआ था।

आपने मुझे अंतर्देशीय पत्र भेजने का कष्ट क्यों उठाया। मैं इसका उपयोग नहीं कर पा रहा हूँ। अतः आपकी सेवा में लौटा रहा हूँ।

विगत कई माह से मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा है। आशा है आप स्वस्थ एवं सानंद हैं। परिवार में सबको यथायोग्य। दीपावली की शुभकामनाओं सहित।

विनीत

रामस्वरूप आर्य

***

26. 'जिला बिजनौर के जवाहर' (उर्दू) पुस्तक के लेखक श्री फुरकान अहमद सिद्दीकी, दिल्ली को लिखा पत्र

नई बस्ती, बिजनौर

10.12.91

प्रियवर,

सप्रेम नमस्कार।

आपके द्वारा प्रेषित 'जिला बिजनौर के जवाहर' पुस्तक की प्रति प्राप्त हुई। कृपा के लिए आभारी हूँ। इसमें आपने कई जगह मेरा संदर्भ दिया, यह आपकी उदारता है।

इसमें आपने बिजनौर के जाज्वल्यमान रत्नों का परिचय दिया है। इस दृष्टि से यह पुस्तक अद्वितीय है। कुछ रत्न छूट अवश्य गए हैं। आशा है अगले संस्करण में इन्हें भी सम्मिलित कर लिया जाएगा। पुस्तक के आरंभ में बिजनौर जिले का

इतिहास भी दिया ज़ाता तो अच्छा रहता। पुस्तक की सामग्री प्रस्तुत करते हुए कोई विशेष क्रम भी अपनाया जाना चाहिए था। इसके दो प्रकार प्रचलित हैं-

1. कालक्रम
2. अकारादि क्रम

क्या ही अच्छा होता अगर इनमें से किसी एक को अपनाया गया होता।

पं. रुद्रदत्त शर्मा की मृत्यु का सन आपने 1925 ई. लिखा है, पता नहीं इसका स्रोत क्या है? उनकी मृत्यु की सही तिथि 19.11.1918 ई. है।

पं. पद्मसिंह शर्मा 1928 ई. में अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गए थे। इसका वार्षिक समारोह दिल्ली में नहीं, मुजफ्फरपुर (बिहार) में हुआ था।

डा. ज्ञानचंद जैन साहब को तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी के कर कमलों से गालिब अवार्ड प्राप्त हुआ था। उनके परिचय में इसका भी उल्लेख होना चाहिए।

डॉ० ज्ञानचंद जैन साहब के बड़े भाई डॉ० प्रकाश मूनिस साहब से मेरे आत्मीय संबंध हैं। इनके पी-एच.डी. के शोध निर्देशक डॉ० मौ. उस्मान कुरैशी मेरे नजदीकी दोस्त थे। मजे की बात यह है कि हम दोनों ही उम्र में मूनिस साहब से बहुत छोटे हैं। डॉ० ज्ञानचंद जैन साहब डॉ० मूनिस साहब के साथ एक बार मेरे निवास पर आ चके हैं।

पुस्तक के पृ.सं. 197 से 258 तक जो संक्षेप में प्रशंसा की गयी है, सूची में उनके नाम भी दिये जाते तो अच्छा रहता। दो चार पृष्ठ बढ़ जाते तो कोई बात नहीं थी। श्री बाबू सिंह चौहान का नाम मुख्य लोगों में दिए जाने के योग्य था। 'दर्पण झूठ बोलता है' इनका प्रसिद्ध निबंध संग्रह है। 'श्रमवीरों के देश में' लेखमाला पर इन्हें 'सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार' मिल चुका है। ये बिजनौर से तीन दैनिक समाचार पत्र निकालते हैं-

1. बिजनौर टाइम्स 2. चिंगारी (सांध्य) और 3. बिजनौर रोजना जदीद (उर्दू)। तीसरे उर्दू दैनिक के संपादक श्री निश्तर खानकाही हैं। उनके परिचय में इसका भी उल्लेख होना चाहिए।

श्री महावीर अधिकारी (नवभारत टाइम्स के बंबई संस्करण के संपादक) भी बिजनौर के हैं। उन्होंने बंबई से कई अन्य समाचार पत्र निकाले हैं। दूरदर्शन के 'महाभारत' धारावाहिक के ये परामर्शदाता थे। पुस्तक के अगले संस्करण में इनका परिचय भी होना चाहिए।

'जिला बिजनौर के जवाहर' पुस्तक का हिन्दी संस्करण भी प्रकाशित होना चाहिए। श्री धर्मवीर जी ने भी ऐसी इच्छा व्यक्त की है। हमें उस शुभ दिन की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा है।

प्यारे भाई ! उर्दू मैंने सैकिंड फार्म में पढ़ी थी। इसका मुझे कामचलाऊ ज्ञान है। अत: आपकी इस पुस्तक की समीक्षा लिखना मेरे लिए कठिन है। इसके लिए आप श्री निश्तर खानकाही साहब से निवेदन कीजिए। वे इस काम को बखूबी अंजाम दे सकते हैं।

पुस्तक की प्रतियाँ अपने कालेज पुस्तकालय में मंगवाऊँगा। इसके लिए आदेश शीघ्र ही आपकी सेवा में भेजा जाएगा।

शेष शुभ

सेवा में, भवदीय

श्री फुरकान अहमद सिद्दीकी, दिल्ली। रामस्वरूप आर्य

समीक्षा-खण्ड

1. विचार-बिन्दु : विचारों का श्लाघनीय विस्तार-डॉ० ओमदत्त आर्य
2. विचारों और बदलाव का द्योतक है 'विचार-बिन्दु'-डा. पंकज भारद्वाज
3. डॉ० रामस्वरूप आर्य और 'विचार-बिन्दु'-डॉ० वी.के. कौशिक
4. परंपरा और आधुनिकता : उपयोगी निबंधावली-डॉ० चन्द्रशेखर शुक्ला
5. परंपरा और आधुनिकता : श्रेष्ठ निबंध संग्रह-डॉ० गणेशमणि त्रिपाठी
6. डॉ० रामस्वरूप आर्य का निबंध संग्रह 'परंपरा और आधुनिकता' - डा. राजेन्द्र रंजन चतुर्वेदी
7. निबंधों का अनुपम गुलदस्ता : चिन्तन-अनुचिन्तन - डॉ० बीना रुस्तगी और डॉ० अशोक रुस्तगी
8. चिंतन-अनुचिंतन : एक परिशीलन - देवर्षि कलनाथ शास्त्री
9. काव्यमय निबंध-संग्रह : चिंतन-अनुचिंतन - श्री वी.पी. गुप्ता
10. चिंतन का प्रवाह : चिंतन-अनुचिंतन - हरिशंकर सक्सेना
11. गहन अध्ययन एवं चिंतन का जीवंत दस्तावेज : चिंतन-अनुचिंतन - डॉ० योगेन्द्र प्रसाद
12. चिंतन-अनुचिंतन : उत्कृष्ट निबंध संग्रह - डॉ० कौशल नन्दन गोस्वामी
13. चिंतन-अनुचिंतन : ज्ञान का असीमित भंडार - पं. राजेन्द्र कुमार शर्मा
14. चिंतन-अनुचिंतन : विचारों की विशिष्ट श्रृंखला - डा. नितिन सेठी
15. शोध सामग्री का अनंत भंडार : चिंतन-अनुचिंतन - डॉ० पंकज भारद्वाज

1. विचार-बिन्दु : विचारों का श्लाघनीय विस्तार

डा. ओमदत्त आर्य

एम.ए. (हिन्दी-अर्थशास्त्र), पी-एच.डी.

वर्धमान कॉलेज, बिजनौर के सेवानिवृत्त हिन्दी विभागाध्यक्ष, हिन्दी साहित्य एवं कई भाषाओं के ज्ञाता डा. रामस्वरूप आर्य जी ने विभागीय तथा अध्यापन कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहते हुए लगभग 25 महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना की है। उनके 200 से अधिक लेख, समीक्षाएँ, कविताएँ आदि विभिन्न विख्यात पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। उनमें से एक अत्यन्त उपयोगी लघु काव्य-संग्रह, 'विचार-बिन्दु' मुझे अध्ययन एवं समीक्षार्थ प्राप्त हुआ। यह 20 पृष्ठों का संग्रह वर्ष 1995 ई० में प्रकाशित हुआ था, जिसकी प्रबुद्ध सहृदय पाठकों ने प्रशंसा की। जनहितार्थ संग्रह का कोई मूल्य नहीं रखा गया है। यह संग्रह डॉ० आर्य जी के स्वयं के तथा अन्य विद्वानों, मनीषियों तथा कवि-साहित्यकारों के प्रमुख विचार-सूत्रों का विस्तार है। डॉ० आर्य जी ने संग्रह के आत्म निवेदन-स्वरूप 'उत्स-बिन्दु' शीर्षक में लिखा है-''विशिष्ट क्षणों में महापुरुषों तथा विचारकों ने कुछ ऐसे सूत्र प्रस्तुतत किए हैं जिनमें जीवन तथा जगत् के गूढ़ रहस्य अनुस्यूत हैं। प्रस्तुत विचार बिन्दुओं में इन्हीं का विस्तार किया गया है।'' यह डॉ० आर्य जी की स्पष्टवादिता एवं ईमानदारी का प्रतीक है। उन्हीं विचार-बिन्दुओं के काव्यात्मक विस्तार का यह संग्रह है जिसे उन्होंने परम ब्रह्म असीम अनंत शक्ति को समर्पित किया है, वे लिखते हैं-''**यह समर्पित है, उस अनन्त, शक्ति को जिसकी असीम अनुकम्पा से बिन्दु सिन्धु का रूप धारण करते हैं।**'' इस समर्पण को संग्रह के निर्विघ्न पूर्ण होने के लिए मंगलाचरण के रूप में देखा जा सकता है। कबीरदास की पद्-पंक्तियों को संग्रह के प्रमुख पृष्ठ पर अंकित करने का उद्देश्य भी बूँद (बिन्दु) की उत्कृष्ट अवस्था का संकेत करना है-''बूँद समानी समुंद में, सो कत हेरी जाय।''

इस संग्रह में सोलह विचार-बिन्दुओं का संकलन तथा पल्लवन हुआ है जिसे डॉ० आर्य जी ने अद्भुत नवीन काव्य-शैली में प्रस्तुत किया है। अधिकांश विचार-बिन्दु 'वर्धमान' पत्रिका के सम्पादकीय के रूप में लिखे गये थे, जो बाद में पत्र-पत्रिकाओं में उद्धृत किए गए। ये 'विचार' निश्चय ही मानव जीवन के केन्द्र-बिन्दु हैं। विचारों पर ही मानव-जीवन पल्लवित, पुष्पित तथा फलित होता है। मेरा मत है-

सब कर्मों के बीज हैं, कहते जिन्हें विचार।
शुद्ध बीज ही बोइए, सुफल खाए संसार।।

प्रस्तुत संग्रह का प्रथम विचार-बिन्दु है---अमर कौन? यह विचार प्रश्न डॉ० आर्य जी का स्वयं का है जिसे उन्होंने पत्थर तथा फूल से जीवन की तुलना करते हुए विस्तार दिया है तथा सिद्ध किया है कि पत्थर जहाँ का तहाँ अपने स्थान पर पड़ा रहता है किन्तु फूल डाल से झरकर भी अपनी मादक सुगन्ध से वातावरण को सुवासित करता रहता है, अत: फूल को अमरत्व प्राप्त है। दूसरे विचार-बिन्दु में फूल की उपमा के माध्यम से 'धनि सोई जस कीरति जासू, फूल मरै पै मरै न वासू' चौपाई का सरल सुगम सहज पल्लवन हुआ है, यह प्रथम बिन्दु का ही और अधिक विस्तार है, विचार की परिपुष्टि है। तीसरा विचार-बिन्दु 'वर्तमान सुख' डॉ० आर्य जी के स्वयं के अध्ययन, अनुभव, अवलोकन, पर्यवेक्षण तथा हृदय की विशालता पर आधारित है। फूल के जीवन की उपमा-उपमान तथा रूपक के माध्यम से वर्तमान के सुख की उपादेयता की ओर संकेत किया है, वे लिखते हैं-''फूल आनंद से झूल रहा है, वह भूत (काल) को भूल चुका है, भविष्य की मृग-मरीचिका उसे चैन से नहीं बैठने देती किन्तु वर्तमान में वह आनन्दित है, सुखमय है, इसीलिए वर्तमान का अधिकाधिक सदुपयोग करते हुए जीना ही आधार है सुख का। निश्चय ही वर्तमान सबसे महत्त्वपूर्ण है, यही सुख का कारण है। वर्तमान पर ही भविष्य का महल खड़ा होता है।'' चौथा बिन्दु महाभारत के आख्यान पर आधारित सूक्ति 'महाजनो येन गत: सपन्था:' का पल्लवन है, यह अत्यन्त उपयोगी एवं व्यावहारिक निर्णय का उपदेश है। प्राय: यह पाया जाता है कि किसी विषय पर धर्म ग्रन्थों में मतभेद हो जाता है तथा पाठक असमंजस में पड़ जाता है कि वह किसके बताये मार्ग पर चले? हम वेद भगवान की मानें? कुरान शरीफ की मानें? गुरुग्रन्थ साहब की मानें? पवित्र बाईबिल के उपदेशों या सुझाये हुए मार्ग पर चलें? ऐसी विरोधाभासी असमंजस की स्थिति में महाभारत में युधिष्ठिर का यक्ष के प्रश्न का उत्तर देने का आख्यान ध्यान में आता है। युधिष्ठिर ने उत्तर दिया था कि जिस मार्ग से महापुरुष गये हैं उसी मार्ग को अपनाना चाहिए। यही जीवन का सर्वश्रेष्ठ व्यावहारिक निर्णय है। पाँचवा बिन्दु 'वि-नयम' है, जिसमें दर्शाया गया है कि संध्या काल में स्निग्ध वातावरण प्रबल प्रभंजन में बदल गया, सभी भयंकर रूप से भयभीत हो गए, गर्वित विशाल वृक्ष धराशाही हो जाता है, विनाश लीला रातभर चलती रही। प्रात:काल देखा, सभी विशाल वृक्ष धरा की गोद में दम तोड़ चुके हैं किन्तु पास

ही एक क्षीणकाय पतला लम्बा पौधा सूर्य की प्रथम किरण का स्वागत करने के लिए तनकर विनयपूर्वक खड़ा है, यही वि-नयम का चित्रण है। कथन का तात्पर्य यह है कि अहंकारी धराशायी हो जाते हैं और विनीतभाव वाले पौधे की भाँति खड़े रहते हैं। छठा बिन्दु 'आत्म-दीप है' प्रगति-समृद्धि की पराकाष्ठा, स्पर्धा की भावना, परानुकरण की लालसा मानव को चैन से नहीं बैठने देती, किन्तु यह प्रत्येक व्यक्ति की अपनी-अपनी प्रतिभा, ज्ञान एवं संस्कारों पर निर्भर है। यदि मानव अपनी शक्ति को तोले, अपने अन्तरपट खोले तो स्वयं ही अपने मार्ग का निर्धारण कर सकता है। इस तथ्य तथा सत्य का निरूपण भगवान गौतम बुद्ध की उस देशना पर आधारित है जो उन्होंने मृत्यु शैय्या पर पड़े हुए अपने शिष्य आनन्द को दिया था। उन्होंने कहा था, "मैं कब तक आप लोगों के साथ रहूँगा, मेरे बाद तुम स्वयं का मार्ग बनाओ और उसे उदीप्त करो, अपना दीपक स्वयं आप बनो- अत्त दीपो भव: ।" यह अत्यन्त सार्थक एवं उपयोगी उपदेश है। जीवन का यही कल्याणकारी मार्ग है, कोई सदैव किसी की सहायता नहीं करता और न ही कोई किसी के साथ रहता है।

सातवें बिन्दु में नूतनता के आनंद का परिचय हुआ है, इसमें संदेह नहीं कि पुरातन के प्रति मोह सहज स्वाभाविक है किन्तु नवीनता का भी स्वागत किया जाना चाहिए। परिवर्तन प्रकृति का नियम है, विकास-क्रम है। डॉ० आर्य जी ने इसी तथ्य का काव्यात्मक उद्घाटन इस सातवें बिन्दु 'नित्य नूतनता का आनंद' में किया है, जो महाकवि जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग की भावना को परिपुष्ट करता है। पुरातनता का मोह नहीं होना चाहिए जैसे सर्प निर्मोक (केंचुली) को सहजता से त्यागकर नये रूप में आ जाता है। डॉ० आर्य जी ने अत्यन्त सहज सरल भाव से प्रसाद जी के 'कभी मत जाओ इसको भूल' वाक्यांश की अपनी काव्य शैली में अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। वे इस आठवें बिन्दु को विस्तार देते हुए कहते हैं-रात के बाद दिन और दिन के बाद रात यह सृष्टि का चिरन्तन-क्रम है। दु:ख के दावानल में जीवन की वाटिका झुलस जाती है किन्तु सुख के जलधर (बादल) पुन: उसे प्रसफुटित कर देते हैं, नई कोपलें फूटती हैं, नये पल्लवों का विकास होता है, नये फल लगते हैं। अत: दुख भी एक प्रकार का वरदान है, इसे कभी नहीं भूलना चाहिए। प्रसाद जी के विचार बिन्दुओं में एक बिन्दु यह भी है-अपने सुख को विस्तृत कर लो। डॉ० आर्य जी कहते हैं कि सभी सुख चाहते हैं, सभी इसी की खोज में हैं। सुख का आधार व्यक्तिगत होता है किन्तु इसका सामाजिक आधार भी है, औरों को सुखी, हँसते हुए देखकर, हम

आनंद विभोर हो जाते हैं। समाज के लोगों के चित्त का भी ध्यान रखना चाहिए। परचित्तानुरंजन अत्यन्त उपयोगी उपक्रम है, इससे समाज में सुख का विस्तार होता है, इसीलिए श्रद्धा के माध्यम से प्रसाद जी ने पावन संदेश दिया है- अपने सुख को विस्तृत कर लो। इस विचार को डॉ० आर्य जी ने काव्यात्मक विस्तार दिया है।

दसवें बिन्दु समत्व-योग में समत्व की महत्ता का चित्रण हुआ है। डॉ० आर्य जी लिखते हैं-

सुख, लाभ और जय से, व्यक्ति हो जाता आनंदाभिभूत
दुःख, हानि और पराजय कर देते उसे पराभूत।

द्रोनों रूप विधाता की देन हैं, अतः स्वीकार्य हैं, यही गीता का संदेश है। दोनों को सत्य जानकर जीवन के यथार्थ को समझकर कल्याणकारी समत्वभाव अपनाना चाहिए। संग्रह का ग्यारवाँ विचार बिन्दु है-प्रकाश का स्रोत। यह वृहदारण्यक उपनिषद के एक संवाद पर आधारित है। शिष्य ने गुरु जी से पूछा, प्रकाश का स्रोत कहाँ है ? गुरु जी ने उत्तर दिया प्रकाश का स्रोत सूर्य है, और जब सूर्य देव नहीं होते तब ? तब प्रकाश का उत्स चन्द्रमा है। अमावस्या के दिन चन्द्रमा भी नहीं होता तब ? तब प्रकाश का आधार दीपक होता है। दीपक बुझ जाने पर ? तब प्रकाश का बिन्दु आत्मा में समाहित रहता है। यह प्रकाश का स्रोत सर्वोपरि है। डा. आर्य जी अन्त में सार-रूप में लिखते हैं-

जब घिर आये अन्धकार, सूझता न हो वार-पार
तब दिया मन का जलाओ, ज्योति का सोत जगाओ।

बारहवाँ विचार-बिन्दु है-है अँधेरी रात, पर...इसमें डॉ० आर्य जी ने हरिवंशराय बच्चन के कविता कोष से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विचार ग्रहण किया है, जो उन्होंने अपनी पहली पत्नी के देहावसान के पश्चात दूसरी का वरण करने पर लिखा था। जीवन में आये अंधकार (दुख) को भगाने के लिए दीपक जलाकर (अन्य विकल्प के रूप में) अंधकार को दूर किया जा सक़ता है। डॉ० आर्य जी ने इसे अत्यन्त सरल व्याख्या करके बोधगम्य बना दिया है। तेरहवाँ विचार-बिन्दु विनाश और निर्माण है, जो दोनों साथ-साथ चलते हैं। डॉ० आर्य जी ने कविवर डॉ० हरिवंशराय बच्चन की कविता 'नीड़ का निर्माण फिर' कविता से अभिभूत होकर उनके मन्तव्य को काव्यात्मक शैली में चित्रित किया है। यथा-ये महल, ये अट्टालिकाएँ, ये विशाल भवन क्रम-क्रम से धराशायी हो रहे हैं। विनाश में ही विकास है। बीज गलकर ही भरा पूरा वृक्ष बन जाता है और विकसित होता हुआ

विनाश को प्राप्त होकर पुन: बीज को जन्म देता है। बीज न गलता तो वृक्ष कहाँ से उत्पन्न होता। फिर फूल-पत्तियाँ कैसे आतीं और पंखुरियों से बीच-कोष कैसे बनता। अत: यह सत्य सिद्ध है कि निर्माण में विनाश और विनाश में निर्माण छिपा है। चौदहवें विचार बिंदु 'विज्ञान और अध्यात्म' में डॉ० आर्य जी ने यह माना है कि विज्ञान और अध्यात्म दोनों का समन्वय ही श्रेयस्कर है। मनुष्य ने विज्ञान द्वारा मंगलग्रह की खोज की, अपार भौतिक शक्तियाँ प्राप्त कर ली हैं। वह उन्नति की चरम सीमा पर आ पहुँचा है, किन्तु फिर भी मानव का दम घुट रहा है, क्यों? क्योंकि विज्ञान की भौतिक प्रगति ही मानव की एकमात्र प्रगति नहीं है। वह सुख की खोज में संलग्न है जो आत्मा में समाहित है। आध्यात्मिक सुख ही सच्चा सुख है। दोनों में समन्वय होना चाहिए।

खुद हँसें, दूसरों को हँसाया करें, विचार सूत्र को डॉ० आर्य जी ने काव्यात्मक अभिव्यक्ति दी है। डॉ० आर्य जी ने अपनी पन्द्रहवीं विचार श्रृंखला में लिखा है- वर्षा फुहार सी नन्हीं बूँद बिखेर गई, शिशिर ने तुषार कणों को दूब पर छितरा दिया। रंग बसंत में फूलों का मकरन्द सर्वत्र व्याप्त हो गया। सीपी से मोती बाहर बिखर गये। कदली-पात से ओस बिन्दू झर रहे हैं। कमल की पंखुड़ियों में सलिल-सीकर आँख के आँसु की भाँति अटक गये। पपीहे की पुकार, कोयल की कूक, टिटहरी की हूक में एक ही टीस व्याप्त है और प्रश्न उठता है कि क्या यह जीवन केवल रोने के लिए है? उत्तर 'नहीं', रुदन जीवन का लक्ष्य नहीं है, लक्ष्य है हँसना और हँसाना, इसी में जीवन की सार्थकता है।

सोलहवें विचार बिन्दु 'जो निज मन परिहरै विकारा' में डॉ० आर्य जी ने हृदय को विकारों से मुक्ति को अत्यन्त आवश्यक माना है। ये जीवन में अवरोधक हैं। डॉ० आर्य जी ने इस बिन्दु को बोधगम्य बनाने के लिए बाँसुरी के रूपक को अपनाया है, जैसे-बाँस की पोरी बाधक होती है जिससे वायु एक से दूसरे को नहीं पहुँच पाती, उसी प्रकार तन-मन में विकार बाधक होते हैं। बाँसुरी की मधुर ध्वनि पोरी की बाधा से मुक्त होकर अपने मधुर-गान में बदल जाती है। बाँसुरी के रूपक से डॉ० आर्य जी ने भाव को और अधिक स्पष्ट कर दिया है।

इस काव्य-संग्रह में जिन विचार-बिन्दुओं को विस्तार दिया गया है, उसकी आशा डॉ० आर्य जी जैसे विद्वान से ही की जा सकती है। डॉ० आर्य जी का विचार-विस्तार का उपक्रम अत्यन्त श्लाघनीय है। उनकी पावन स्मृति में यह लेख श्रद्धांजलि के रूप में समर्पित है।

बी-14, नई बस्ती, बिजनौर

***

2. विचारों और बदलाव का द्योतक है 'विचार-बिन्दु'

डॉ० पंकज भारद्वाज
एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

वरिष्ठ साहित्यकार स्व. डा. रामस्वरूप आर्य जी की सन् 1995 में प्रकाशित पुस्तक 'विचार बिन्दु' विचारों की विविधिता की द्योतक है। इसमें लेखक ने विशिष्ट विचारकों के अनेक ऐसे प्रेरणादायी विचारों को स्वयं के विचारों से मिश्रित करते हुए इस संकलन को प्रभावी बनाने का प्रयास किया है। पुस्तक की भूमिका में स्वयं डा. आर्य जी लिखते हैं कि पुस्तक में उद्धृत विचार जीवन और जगत के गूढ़ रहस्यों से अनुस्यूत हैं। डा. आर्य जी ने भूमिका में स्पष्ट कर दिया है कि चन्द्रावती जी वर्धमान कॉलेज में उनकी छात्रा रह चुकी है और पुस्तक प्रकाशन में उनकी प्रेरणा रही है। कुल 16 विषयों पर व्यक्त किए गये विचारों में जीवन के विविध पक्षों को उद्घाटित किया गया है। पुस्तक में डॉ० आर्य जी ने मूल विचारों के साथ अत्यंत दार्शनिक भाव से विभिन्न महापुरुषों के विचारों को मिश्रित करते हुए पाठकों तक सरलता से अपनी बात पहुँचाने का सफल प्रयास किया है। प्रथम रचना में ही डा.० आर्य जी लिखते हैं-"**फूल झर जाता है/ किन्तु उसकी सुगन्धि-/रहती है व्याप्त वातावरण में अनंत काल तक..।**" आर्य जी के इन विचारों में कहीं-कहीं गद्य शैली तो कहीं-कहीं पद्यात्मकता स्पष्ट होने लगती है, लेकिन विधा से हटकर उन्होंने सकारात्मक विचारों से जीवन को आगे बढ़ाने का संदेश इस पुस्तक में दिया है। वह पुस्तक में लिखते हैं-"**जब घिर आए अंधकार/सूझता न हो वार-पार/तब दिया मन का जलाओ/ ज्योति का सोता जगाओ।**" इन विचारों में महापुरुषों की प्रेरणा और उपनिषदों के संदेश भी छिपे हैं। कुल मिलाकर यह पुस्तक अपने मूल संदेश को अपने पाठकों तक सरलता से पहुँचाने में सार्थक सिद्ध हुई है। सामाजिक हित की दृष्टि से प्रकाशित इस पुस्तक का डॉ० आर्य जी ने कोई मूल्य नहीं रखा है।

(सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन', 11 जून, 2017 ई. के अंक से साभार)

संपादक, सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन',
सैंट मैरी स्कूल के पीछे, बिजनौर

***

3. डॉ. रामस्वरूप आर्य और 'विचार-बिन्दु'

डॉ० वी.के. कौशिक
एम.ए. (इतिहास), पी-एच.डी.

डॉ. रामस्वरूप आर्य जी जनपद बिजनौर की एक साहित्यिक विभूति के रूप में जाने जाते थे। बिजनौर में वर्धमान स्नानकोत्तर महाविद्यालय की स्थापना के साथ ही उनका यहाँ आगमन हुआ था। इससे पूर्व वह बरेली कॉलेज, बरेली के हिन्दी विभाग में प्रवक्ता के पद पर कार्यरत थे तथा वहाँ के साहित्यिक ज़गत् में एक गंभीर अध्येता के रूप में समादृत थे।

गेहुँआ रंग, सामान्य कद और छरहरी देहयष्टि के स्वामी डा. आर्य जी मितभाषी और विनम्र स्वभाव के प्राध्यापकों में गिने जाते थे। स्वयं को सदैव पृष्ठभूमि में रखने के अभ्यस्त, डा. आर्य जी हिन्दी तथा संस्कृत में एम.ए. तथा हिन्दी में पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त थे। इसके अतिरिक्त उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा साहित्य महोपाध्याय, विक्रमशिला विद्यापीठ, भागलपुर (बिहार) द्वारा विद्या सागर, युवा साहित्यकार संघ, धामपुर द्वारा 'सरस्वती श्री' तथा अखिल भारतीय कला मंच, मुरादाबाद द्वारा 'साहित्यश्री' आदि उपाधियों से भी सम्मानित किया गया था, जिनका उल्लेख वे कभी भी किसी के सामने नहीं करते थे।

डा. आर्य जी मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के अधिकारी विद्वान थे। 'मलिक मौहम्मद जायसी की भाषा का भाषाशास्त्रीय अध्ययन' विषय पर उन्होंने शोध कार्य किया था, जिसे उन्होंने अथक परिश्रम एवं पूर्ण निष्ठा से सम्पन्न किया था। इस शोध कार्य की प्रशंसा हिन्दी पाठालोचन के दधीचि डा. माताप्रसाद गुप्त तथा प्रसिद्ध भाषाविज्ञानी डा. रविशंकर मेहरोत्रा ने भी की है। आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त होने पर वर्धमान कॉलेज में आयोजित एक कार्यक्रम में डा. आर्य जी ने अपने व्याख्यान में महाकवि जायसी के सम्बंध में महत्वपूर्ण तथ्यों को उजागर कर श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया था। सेवानिवृत्ति के पश्चात वे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अन्तर्गत वृहत् शोध योजना को कार्यान्वित करने में संलग्न रहे। हिन्दी संत कवियों और समकालीन जैन कवियों के तुलनात्मक अध्ययन से संबद्ध यह महत्वपूर्ण शोध-कार्य अब तक अप्रकाशित है।

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के मर्मज्ञ होते हुए भी डा. आर्य जी आधुनिककालीन साहित्य में भी अपनी रुचि तथा गति बनाए रखते थे। जनपद के नये एवं पुराने कवियों तथा लेखकों के काव्यों और गद्य-संकलनों के आमुख तथा प्रस्तावनाएँ

प्राय: उनकी लेखनी से ही नि:सृत होती थीं। नगर के साहित्यिक समारोहों, उत्सवों, गोष्ठियों आदि के आयोजनों में प्राय: डा. आर्य जी को शीर्ष पर बैठे देखा जा सकता था।

वर्धमान कालेज, बिजनौर की वार्षिक पत्रिका 'वर्धमान' के संपादन तथा प्रकाशन का कार्य प्राय: डा. रामस्वरूप आर्य जी के द्वारा ही सम्पन्न होता था। यह उनके मधुर निवेदन, स्नेहाग्रह तथा अनवरत अनुरोध का ही परिणाम था कि वह ऐसे लोगों से भी लेखन-कार्य करा लेते थे, जिसे देखकर आश्चर्य होता था। पत्रिका में महत्वपूर्ण सामग्री के साथ-साथ सूक्तियों, सुभाषितों, सामाजिक साहित्यिक घटनाओं और महाविद्यालय से सम्बंधित विभिन्न समाचारों का भी यथास्थान समावेश रहता था। इससे महाविद्यालय की पत्रिका उल्लेखनीय रूप से जीवंत और पठनीय बन जाती थी।

डॉ० आर्य जी की प्रिय शिष्या श्रीमती चन्द्रावती जी, जो जनपद बिजनौर से विधानसभा तथा विधान परिषद की सदस्या और उत्तर प्रदेश शासन में गन्ना विभाग की कैबिनेट मंत्री रह चुकी हैं, अपने गुरु डॉ० आर्य जी के विचारों तथा विद्वता से बहुत प्रभावित थीं। उनके अनवरत आग्रह पर ही डॉ० आर्य जी ने एक लघु काव्य-संग्रह 'विचार-बिन्दु' नाम से प्रकाशित कराया था। इस संग्रह का कोई मूल्य नहीं रखा गया था क्योंकि इसको डॉ० आर्य जी ने समाजोपयोगी दृष्टि से प्रकाशित कराया था। संग्रह की अनेक कविताएँ 'वर्धमान' पत्रिका के अन्तर्गत संपादकीय विचार-बिन्दु, सुभाषित, लघु कविता आदि विभिन्न शीर्षकों से प्रकाशित हो चुकी हैं। संकलन की कतिपय कविताओं ने मुझे विशेष रूप से प्रभावित किया है। इन्हें मैं यहाँ उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ-

वैज्ञानिक खोज के साथ-साथ
आत्मतत्व की खोज भी परम आवश्यक है।
अन्यथा विज्ञान के मोहपाश में
मानवता का दम घुट जाएगा।

सूर्य, चन्द्र और तारों के न रहने पर-
"भीषण झंझावात में दीपक भी बुझ जाए तब ?
तब प्रकाश का बिन्दु आत्मा में समाहित रहता है।"
आत्मप्रकाश, आत्मज्ञान।
तब दिया ज्ञान का जलाओ

ज्योति का स्रोत जगाओ।
नहीं, रुदन जीवन का लक्ष्य नहीं है।
खुद हँसो, दूसरों को हँसाओ
जीवन की सार्थकता इसी में है।

पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग, वर्धमान कालेज, बिजनौर

***

4. परम्परा और आधुनिकता : उपयोगी निबन्धावली

डॉ. चन्द्रशेखर शुक्ला
एम.एस.सी., एम.एड., पी-एच.डी

हिन्दी के मूर्धन्य विद्वान डॉ० रामस्वरूप आर्य जी का प्रथम निबंध संग्रह 'परम्परा और आधुनिकता' का अवलोकन, अध्ययन-मनन करने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। यह संग्रह प्रथम बार 1997ई० में प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली द्वारा प्रकाशित हुआ था, जिसे डॉ० आर्य जी अपने दिवंगत पूज्य पिता श्री लाला बाँके लाल तथा स्व. पूज्या माता जी देवकी देवी की पावन स्मृति में समर्पित करते हैं। डॉ० आर्य जी की साहित्यिक-साधना अनवरत चलती रही। उन्होंने 25 साहित्यिक कृतियाँ हिन्दी साहित्य को प्रदान की हैं। 'परम्परा और आधुनिकता' निबन्ध संग्रह में 21 निबंध संगृहीत हैं। निबंध संग्रह के अधिकांश निबंध किसी कवि, साहित्यकार, पुस्तक, संस्था, पत्र-पत्रिका, पत्रकार, समीक्षक, विस्मृत संस्थान तथा विशेष साधकों के जीवन-परिचय तथा उनकी साहित्य-साधना से संबंधित हैं।

निबन्ध-संग्रह का नामकरण प्रथम निबंध 'साहित्य में परम्परा और आधुनिकता' के नाम पर हुआ है। इन निबन्धों की रचना, किन क्षणों , किन परिस्थितियों में कब और कैसे हुई, इसका उल्लेख डॉ० आर्य जी ने संग्रह के 'आमुख' में इस प्रकार किया है-"अध्ययन-मनन के बीच कुछ ऐसे सोपान आते रहे, जहाँ मेरी बुद्धि थोड़ी देर के लिए ठिठक गई अथवा हृदय भावापूरित हो गया और तब कुछ सोचने के लिए बाध्य होना पड़ा। प्रस्तुत संग्रह के अधिकांश निबन्ध इसी की परिणति हैं।"

अध्ययन-अध्यापन काल में ये निबन्ध समय-समय पर विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं-यथा 'सरस्वती', 'विशाल भारत', 'कादम्बिनी', 'धर्मयुग' 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'नवभारत टाइम्स' तथा 'अमर उजाला' आदि में प्रकाशित हुए थे, जिनका पाठकों, शोधार्थियों तथा विद्यार्थियों ने हार्दिक स्वागत किया और

इनसे लाभान्वित हुए। डॉ० आर्य जी के इन निबन्धों पर हिन्दी-संस्कृत के गुरुकल्प महानुभावों का अमिट प्रभाव परिलक्षित होता है। इनमें समर्पित साहित्यकार पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, भाषा वैज्ञानिक डॉ० अम्बा प्रसाद 'सुमन', डॉ० विद्या निवास मिश्र, डॉ० ज्योति स्वरूप जी प्रभृति विद्वान उल्लेखनीय हैं। डॉ० आर्य जी अपने श्रद्धेय गुरुजनों पं. भोलानाथ शर्मा, डॉ० गुणानंद जुयाल तथा डॉ० कुन्दल लाल जैन को भी स्मरण करते हैं, जिनकी कृपा से डॉ० आर्य जी का भाषा पर असाधारण अधिकार हो गया था।

इस निबन्ध संग्रह के लगभग सभी निबन्ध शोध परक हैं। लेखक ने सम्बन्धित कवियों, लेखकों तथा पत्रकारों के जीवन के अनछुए, नवीन प्रसंगों का चयन करके स्मरणात्मक तथा विश्लेषणात्मक निबन्ध रचे हैं, जो अत्यन्त हृदयस्पर्शी, मार्मिक और महत्वपूर्ण हैं। लेखक ने प्रथम निबन्ध 'परम्परा और आधुनिकता' में दोनों का अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है-''**एक युग में जो मान्यता जन्म लेकर आधुनिक कहलाती है, कालान्तर में वही परम्परा बन जाती है। परम्परा का अर्थ है-अविछिन्न क्रम चला आता हुआ अटूट सिलसिला।**'' इस संग्रह के विषय में '**दैनिक ट्रिब्यून**' का अभिमत है---''पुस्तक के निबन्ध सहित्यिक रुचि रखने वाले पाठकों के लिए उपयोगी हैं....ये पाठकों की जानकारी में वृद्धि करेंगे।'' डॉ० कौशल नन्दन गोस्वमी लिखते हैं-''निष्कर्षत: इस संग्रह के निबन्ध गहन चिंतन तथा खोजपूर्ण ही नहीं अपितु अनुभवगम्य भी हैं, इनमें प्रेरणा का प्रवाह तथा प्रबुद्ध पाठकों तथा शोध-छात्रों के लिए उपयोगी सामग्री है। यह अनुपम उपलब्धि है।''

निबन्ध संग्रह में विभिन्न विषयों---कवियों, साहित्यकारों-पुस्तकों-संस्थाओं पर लेख लिखे गये हैं। मुसलमान कवियों द्वारा श्री राम-स्तवन, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा प्रस्तावित पत्रिकाएँ-'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' के नाम की पृष्ठभूमि, काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सौ वर्ष, पत्रकारिता के दधीचि पं. रुद्रदत्त शर्मा, हिन्दी के प्रथम डी.लिट्० डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, कथावाचक पं. राधेश्याम, दिनकर की काव्य यात्रा, समीक्षक पं. पदम सिंह शर्मा, समर्पित साहित्यकार पं. बनारसी दास चतुर्वेदी, शिकार साहित्य के प्रणेता पं. श्रीराम शर्मा, भारतीय संस्कृति के चितेरे अमृत लाल नागर, कविवर चण्डी प्रसाद हृदयेश, जयशंकर प्रसाद के अविस्मरणीय प्रसंग, गुरुश्रेष्ठ पं. भोलानाथ शर्मा, बिजनौर-विभूति विजयवीर त्यागी तथा भूली बिसरी विदुर कुटी जैसे विषयों पर डॉ० आर्य जी ने दुर्लभ सामग्री प्रस्तुत की है। शोधार्थियों के लिए ये निबंध प्रेरणा-स्रोत बन गए हैं। 'गद्य कविनाम निकषं

वदन्ति' की उक्ति को डॉ० आर्य जी ने अपने इन निबन्धों में चरितार्थ किया है। इन निबंधों में डॉ० आर्य जी का व्यक्तित्व झलक रहा है तथा उनकी अध्ययनशीलता प्रमाणित हो रही है। उन्होंने शोध छात्रों के लिए साहित्यिक निबन्ध भी लिखे हैं, 'चिन्तन-अनुचिंतन' उनकी अन्तिम साहित्यिक निबन्धवली है, जो प्रकाशित हुई है। इसके अतिरिक्त और भी दुर्लभ साहित्य सामग्री उनके द्वारा पाठकों से सामने आने वाली थी, किन्तु दुर्भाग्य से उनकी दिनांक-3.10.2016 ई० को मृत्यु हो गई और वे सभी शिष्यों, पाठकों, मित्रों, परिजनों को बिलखता छोड़ गए। उनकी पुस्तक 'परम्परा और आधुनिकता' की समीक्षा मेरी ओर से 'श्रद्धा सुमन' के रूप में प्रस्तुत है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस संग्रह से शोधार्थी अवश्य लाभान्वित होंगे और डॉ० आर्य की स्मृति को चिरस्थायी बनाए रखेंगे।

अध्यक्ष, बी.एड. विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर

***

5. परम्परा और आधुनिकता : श्रेष्ठ निबंध संगह

डॉ० गणेशमणि त्रिपाठी

एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

यह पुस्तक मेरे पूजनीय गुरुदेव डॉ० रामस्वरूप आर्य, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर द्वारा लिखी गई है। यह उच्चकोटि के इक्कीस निबन्धों का संग्रह है। संग्रह के पहले निबन्ध 'परम्परा और आधुनिकता' में परम्परा का अर्थ, उसका महत्व तथा आधुनिकता में भी परम्परा की आवश्यकता पड़ती है, इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है। समाज की भाँति ही साहित्य में भी आधुनिकता के साथ-साथ परम्पराओं का निर्वाह आवश्यक दर्शाया गया है। अतः दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बंध है। डॉ० आर्य जी ने अपने मत के समर्थन में हिन्दी और संस्कृत के अनेक विद्वानों के उद्धरण प्रस्तुत किये हैं, जिनसे निष्कर्ष निकलता है कि आधुनिकता की ओर बढ़ते हुए भी परम्पराओं के मूल्यांकन से ही हम आगे बढ़ सकते हैं। यह लेख डॉ० आर्य जी का-के.वी. डिग्री कॉलेज माछरा (मेरठ) में आयोजित अन्तर्विश्वविद्यालयी गोष्ठी में दिये अध्यक्षीय भाषण का सारांश है।

संग्रह का दूसरा निबन्ध है, 'मुसलमान कवियों द्वारा श्रीराम स्तवन', इसमें दर्शाया गया है कि श्रीराम हिन्दू समाज के जनमानस में ऐसे घुल-मिल गये हैं कि चाहे सुख हो या दुख, वह राममय हो जाता है और इसी कारण वे हिन्दू कवियों के तो आराध्य हैं ही परन्तु श्रीराम के प्रभाव से मुसलमान कवि भी प्रभावित हुए

हैं। उन्होंने भी श्रीराम के प्रति अपनी अपार श्रद्धा व्यक्त की है। इस सत्य को व्यक्त करने के लिए निबन्धकार डॉ० आर्य जी ने अनेक प्राचीन और नवीन कवियों के श्रीराम के प्रति उद्‌गार व्यक्त किये हैं, जिनमें अमीर खुसरो, कबीर, रज्जब, दीन मोहम्मद, सफीक रस सिन्धु, मिर्जा हसन नासिर, शमीम कौसर सिद्दीकी, इकबाल बिसबौनी से लेकर जलाल अहमद खाँ तनवीर, इकबाल कादरी, 'शौकत' कमाल अहमद, बेकल उत्साही, कु. आसिया खातून तक के उदाहरण दिये हैं।

संग्रह के तीसरे निबन्ध में हिन्दी-पत्रकारिता के आधार स्तम्भ भारतेन्दु हरिशचन्द्र के प्रेरक व्यक्तित्व को बहुमुखी व्यक्तित्व के रूप में सिद्ध किया गया है कि वे केवल कविता, कहानी, नाटक ही नहीं बल्कि पत्रकारिता के क्षेत्र में भी 'कवि वचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र चंद्रिका', महिलाओं के लिये उपयोगी पत्रिका 'बाला-बोधिनी' तथा कुछ और नवीन विषयों के साथ कुछ नई पत्रिकाओं को भी प्रकाशित करना चाहते थे, जैसे 'कासिद', 'नीति प्रकाश', तथा 'पंच', पर विपरीत परिस्थितियों के कारण यह सम्भव नहीं हो सका। इस निबन्ध में जो उदाहरण दिये गये हैं, वे सब शोधात्मक हैं।

'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' नामकरण की पृष्ठभूमि इस संग्रह का चौथा निबन्ध है। इस निबन्ध में डॉ० आर्य जी ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की पत्रिका 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' से सम्बंधित एक गूढ़ रहस्य को प्रकट किया है, जो सामान्यत: आज नई पीढ़ी के हिन्दी के अधिकांश विद्वानों तक को पता नहीं है कि क्यों भारतेन्दु जी ने 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का नाम 'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' रखा। सामान्यत: लोगों का मानना है कि इसके अंग्रेजी पन को दूर करने के लिए 'मैगजीन' शब्द हटाया गया था। डॉ० आर्य जी के अनुसार 15 अक्टूबर 1873 ई० से हरिश्चन्द्र मैगजीन आरम्भ की गई थी किन्तु जून 1874 ई० से (आठ अंक के बाद ही) इसे 'हरिश्चन्द्र चंद्रिका' कर दिया गया था। निबन्ध में प्रकट किया गया है कि सन् 1873 ई० के आसपास एक बंगदेशीय कुलीन विधवा (मल्लिका) भारतेन्दु जी से सम्पर्क में आई और भारतेन्दु जी ने उसे अपनी धर्मगृहीता के रूप में अपना लिया। वह (मल्लिका) एक शिक्षित महिला थी। भारतेन्दु जी के सम्पर्क में आने से हिन्दी अच्छी तरह सीख गई थी तथा हिन्दी में काव्य रचना भी करने लगी थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से प्रभावित होकर उसने अपना उपनाम 'चन्द्रिका' रख लिया था। इसीलिये भारतेन्दु जी ने भी 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' का नाम बदलकर 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' रखा था। अपने इस कथन की पुष्टि में श्री ब्रजरत्नदास, डॉ० बटेकृष्ण

तथा गिरीशचन्द्र चौधरी का उल्लेख लेखक द्वारा किया गया है, जिन्हें भारतेन्दु जी के पुराने कागजों में ये प्रमाण मिले थे।

'हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं के आदर्श वाक्य' निबन्ध में डॉ० आर्य जी ने हिन्दी की सोलह प्राचीन पत्र-पत्रिकाओं के आदर्श वाक्यों को प्रस्तुत किया है। प्राचीन पत्र-पत्रिकाओं के परिचय के साथ ऐसा संग्रह अन्यत्र दुर्लभ है। ये पत्र-पत्रिकाएँ हैं-उदन्त मार्तण्ड 30 मई 1826 ई० कलकत्ता, सम्पादक थे श्री जुगल किशोर। बंगदूत-10 मई 1826 ई०, राजा राममोहन राय। बनारस अखबार-जनवरी 1845 ई०-श्री गोविन्द थत्ते और राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द। कविवचन सुधा-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र। हरिश्चन्द्र-चंद्रिका-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बाला बोधिनी, 1 जनवरी, 1874 ई०। हिन्दी प्रदीप, 1877 ई०-पं० बालकृष्ण भट्ट। भारत मित्र-निधि, 1878 ई०-पं. छोटेलाल मिश्र, पं. अम्बिका प्रसाद वाजपेयी, बाबूराम विष्णु पराड़कर, पं. लक्ष्मी नारायण गर्दे। विज्ञापन-1815 ई. पं. नारायणदत्त विद्याश्रमी। सार सुधा निधि-पं. सदानन्द मिश्र। प्रयाग समाचार-1882 ई., पं. देवकीनन्दन तिवारी। मतवाला-निराला एवं शिवपूजन सहाय। स्वदेश-पं.-दशरथ प्रसाद द्विवेदी, माधुरी-श्री दुलारेलाल भार्गव एवं श्री रूप नारायण पाण्डेय। हिन्दू पंच-1926 ई. पं. ईश्वरी प्रसाद शर्मा। डॉ० आर्य जी ने इन पत्रिकाओं के मुखपृष्ट पर लिखे आदर्श वाक्यों को अपने इस निबन्ध में उद्धृत किया है। उनका मानना है कि इस परम्परा का आज भी कुछ पत्र पत्रिकाएँ यथावत अनुपालन कर रही हैं।

'काशी नागरी प्रचारिणी सभा के सौ वर्ष' एक शोधात्मक निबन्ध है, जिसमें दर्शाया गया है कि उस समय के तीन नवयुवकों-बाबू श्याम सुन्दर दास, पं. रामनारायण मिश्र, डा. शिव कुमार सिंह ने 16 जुलाई 1893 ई० में किस प्रकार काशी नगरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की थी। 'भारत जीवन' पत्र के सम्पादक बाबू कार्तिक प्रसाद खत्री, भारतेन्दु जी के फुफेरे भाई बाबू राधाकृष्ण दास आदि ने कैसे इस सभा की स्थापना में सहयोग दिया और किस प्रकार हिन्दी के तत्कालीन विद्वान इससे जुड़ते रहे तथा वृहद हिन्दी शब्दकोश की रचना की। यही नहीं यत्र-तत्र बिखरे प्राचीन हस्तालिखित ग्रन्थों को एकत्र कर उनकी पांडुलिपियाँ भी तैयार कराई गईं। सभा से कैसे हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका 'सरस्वती' का प्रकाशन हुआ।

इस निबन्ध में सभा के कार्यों का भी उल्लेख किया गया है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा के वृहद इतिहास और कार्यों का विस्तार से उल्लेख हुआ है। हिन्दी प्रेमियों एवं अध्ययन करने वालों के लिए यह महत्वपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक है।

'रसिक शिरोमणि स्वामी हरिदास' ऐसा निबन्ध है जिसमें स्वामी जी की श्री श्याम के प्रति भक्ति और गायन रसिकता का वर्णन है। साथ ही बहुत ही आकर्षक ढंग से अकबर एवं संगीत सम्राट तानसेन तथा बाबा हरिदास जी की कथा का वर्णन है। दीपक राग से दग्ध तानसेन की कथा का वर्णन भी है। दीपक राग से दग्ध तानसेन की आत्मा को ओरछा की गायिका द्वारा मल्हार राग से शान्त करने के बाद स्वामी हरिदास जी ने तानसेन को कैसे मल्हार सिखाया तथा अकबर,हरिदास जी के दर्शनों के लिये वृन्दावन गये आदि रोचक वृतान्त इस निबन्ध में हैं।

संग्रह में एक निबन्ध 'हिन्दी पत्रकारिता के दधीचि: सम्पादकाचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा' पर भी है जिसमें उनके जीवन और साहित्य पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है।

हिन्दी साहित्य के प्रथम डी.लिट्.: डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल मेरे आराध्य रहे हैं और निबन्धकार डॉ० आर्य गुरुवर एवं पथ प्रदर्शक। इस निबन्ध में गुरुदेव ने डॉ० बड़थ्वाल की हिन्दी सेवाओं का उल्लेख किया है कि किस प्रकार उन्होंने हिन्दी के निर्गुण सन्तों के साहित्य को उजागर किया और अपने शोध कार्य से उन्हें हिन्दी की निधि बनाया। विदेशी विद्वान कैसे उनके कार्य से प्रभावित हुए तथा उनके शोध प्रबन्ध के किस अध्याय में क्या सामग्री है, इस पर भी विद्वता से प्रकाश डाला गया है।

संग्रह का दसबाँ निबन्ध प्रकृति के सुकुमार कवि सुमित्रानन्दन पंत के जीवन और साहित्य की सुन्दर झाँकी प्रस्तुत करता है। उनके विविध नामों-नन्दिनी, लक्ष्मण, साईं दा का भी भली प्रकार इस निबन्ध में परिचय दिया गया है।

दिनकर जी ने अपनी रचनाओं द्वारा इस देश के जनमानस में एक नई स्फूर्ति, चेतना एवं राष्ट्रीय भावनाओं को भरने का कार्य किया। डॉ० आर्य ने उनकी काव्य यात्रा को 'दिनकर की काव्य यात्रा' निबन्ध में दर्शाने का प्रयास किया है तथा अनेक ऐसे तथ्यों को प्रकट किया है जो सामान्य साहित्यकारों को तक को ज्ञात नहीं हैं। देश के दलित-कुचले, सर्वहारावर्ग के श्रम एवं दर्द को साहित्य में उजागर कर उनके प्रति समाज को चेताने का कार्य दिनकर जी ने किया है। रेणुका, हुंकार, कुरुक्षेत्र, द्वन्द्वगीत, बापू, धूप और धुआँ, रश्मिरथी, उर्वशी जैसी रचनाओं को रचकर कवि ने भारत और भारतीय समाज के प्रति सुधारात्मक और विकासपरक भावना दर्शायी है। परशुराम की प्रतीक्षा, दिनकर जी की राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत रचना है। डॉ० आर्य जी का मानना है कि उनकी रचनाओं

में द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता तथा राष्ट्रीय चेतना के साथ-साथ छायावादी युगीन तरलता तथा आधुनिक काल की प्रयोगात्मकता के भी दर्शन होते हैं।

'चिरस्मरणीय पं. राधेश्याम कथावाचक' निबन्ध में डॉ० आर्य जी ने उनके जीवन-साहित्य एवं दर्शन पर वृहद प्रकाश डाला है। श्री रामकथा को, उनके ऐजेन्ट बनकर पं. राधेश्याम जी ने 'राधेश्याम रामायण' द्वारा देश के कोने-कोने में पहुँचाया था। वह इतनी लोकप्रिय हुई कि पंडित जी के जीवनकाल में ही इस रामायण की एक करोड़ प्रतियाँ प्रकाशित हुई थीं और जिस छन्द में यह लिखी गई थी, उसका नाम ही 'राधेश्यामी छन्द' अथवा 'राधेश्याम तर्ज' हो गया। वे राम कथा के प्रकाण्ड कथावाचक थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने अनेक धार्मिक और पौराणिक नाटक भी लिखे थे। भारत के उस समय के अनेक साहित्यकार ही नहीं बल्कि महापुरुष भी इनके नाटकों से प्रभावित हुए तथा इनके मंचनों को देखते थे। दो-एक फिल्मों के लिये इन्होंने गीत भी लिखे थे। डॉ० आर्य जी ने यह भी स्पष्ट किया है कि अक्टूबर 1922 ई० में आपने श्री राधेश्याम प्रेस की स्थाना की जिसमें तत्कालीन हिन्दी के बड़े-बड़े विद्वानों की रचनाएँ प्रकाशित होती थीं। भारतीय संस्कृति और साहित्य की प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप में सेवा के लिये डा. आर्य उन्हें चिरस्मरणीय मानते हैं।

संग्रह का अगला निबन्ध 'सहृदय समीक्षक पं. पद्म सिंह शर्मा' पर लिखा गया है। इस निबन्ध में उनके सहृदय व्यक्तित्व की छाप उनकी समीक्षाओं पर दर्शायी गई है। बिहारी पर लिखी गई उनकी टीका और समीक्षा की डॉ० आर्य जी ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। साथ ही विद्यावारिधि पं. ज्वालाप्रसाद मिश्र जी द्वारा लिखी-बिहारी सतसई 'भावार्थ प्रकाश' टीका को पढ़कर उन्हें दुख हुआ। इसका भी उल्लेख है कि अपने 'बिहारी सतसई: तुलनात्मक अध्ययन' में पद्म सिंह शर्मा जी ने बिहारी के दोहों की तुलना संस्कृत, प्राकृत, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के समान भाव वाले छन्दों और शेरों से की है, जिसमें भी पद्म सिंह शर्मा जी की सहृदयता बराबर झलकती है।

'समर्पित साहित्यकार पं. बनारसीदास चतुर्वेदी' निबन्ध में डॉ० आर्य जी ने उनका परिचय इस प्रकार दिया है, ''पं. चतुर्वेदी जी एक ऐसे महान साहित्यकार, पत्रकार तथा समाजसेवी थे जिनका सम्पूर्ण जीवन दूसरों के लिये समर्पित था। उनकी प्रेरणा एवं प्रोत्साहन से अनेक साहित्यकार आगे बढ़े।'' पं. चतुर्वेदी जी ने प्रवासी भारतीयों के लिये महान कार्य किया। 'फिजी द्वीप में इक्कीस वर्ष' पुस्तक में भारतीयों की करुण कथा से ही अनेक हिन्दी के विद्वान प्रभावित हुए।

साहित्यकारों का ध्यान भारत के किसान और मजदूरों के उत्थान की ओर भी गया। इसके फलस्वरूप नई-नई रचनाओं का सृजन हुआ। चतुर्वेदी जी ने अपने रेखाचित्रों, संस्मरणों तथा स्मृति ग्रन्थों के समपादन से अनेकों महापुरुषों की कीर्ति-रक्षा का कार्य किया। उन्होंने 'विशाल-भारत' के माध्यम से हिन्दी के अनेक नवोदित साहित्यकारों को प्रोत्साहन भी दिया। पत्र-साहित्य के वे जनक थे। पत्र-लेखन उनका व्यसन था। डॉ० आर्य जी की श्री चतुर्वेदी जी से घनिष्ठ आत्मीयता थी। डॉ० आर्य जी का मानना है कि पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी ने अपना सम्पूर्ण जीवन दूसरों की सेवा, कीर्तिरक्षा एवं प्रोत्साहन में ही व्यतीत कर दिया।

'निर्भीक पत्रकार पं. श्रीराम शर्मा' जी का परिचय देते हुए डॉ० आर्य जी ने उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है। उनके संस्मरण एवं शिकार साहित्य पर उनके व्यक्तित्व की छाप है। श्रीराम शर्मा की लेखनी का प्रभाव भी उनकी गोली की भाँति पाठक के हृदय पर पड़ता था, क्योंकि जहां वे एक सधे हुए शिकारी थे, वहीं वह एक सधे हुए लेखक थे। उन्होंने 20 वर्ष से अधिक समय तक अपने समय के प्रसिद्ध मासिक पत्र 'विशाल भारत' का सम्पादन किया था, जिसके माध्यम से उन्होंने साहित्य, समाज एवं राजनीति सम्बंधी विषयों पर लिखा था। इस निबन्ध में मार्च 1963 ई० का पं. श्रीराम शर्मा की सम्पादकीय टिप्पणी 'अखबार के संपादक कैसे हों' का उल्लेख किया गया है। डॉ० आर्य भी मानते हैं कि पत्रकार को व्यक्तिगत स्वार्थ और पक्षपात से ऊपर रहना चाहिये। समाज के लिये हानिकर बातों, अहंकार, चाटुकारिता, अनावश्यक दबाब का अपनी लेखनी से विरोध करना चाहिये। श्रीराम शर्मा स्वयं भी ऐसे ही विशाल व्यक्तित्व के निर्भीक पत्रकार थे।

'भारतीय संस्कृति के चितेरे : अमृतलाल नागर' निबंध में नागर जी की उपन्यास लेखन-कला की प्रशंसा करते हुए डॉ० आर्य जी ने उनके प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय उपन्यासों का उल्लेख किया है। समाज में व्यक्ति के मन की बारीक से बारीक गतिविधि को नागर जी ने अपने उपन्यासों के विविध पात्रों द्वारा व्यक्त किया है। डॉ० आर्य जी ने उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द के पात्रों की तुलना में अमृतलाल नगर के पात्रों को समाज से जुड़ता हुआ दिखाया है। उनमें मानववाद एवं जीवन के प्रति आस्था दिखाई है। उनके उपन्यासों-महाकाल, सेठ बाँकेलाल, बूंद और समुद्र, शतरंज के मोहरे, मानस का हंस, अमृत और विष, सात घूंघट वाला मुखड़ा जैसे अनेक उपन्यासों पर अपनी टिप्पणी लिखकर उनकी उपन्यास

कला की विशेषताओं को उजागर किया है।

'कवि रूप में चण्डीप्रसाद हृदयेश' शीर्षक निबन्ध में डॉ० आर्य ने उनके उपन्यासकार के अतिरिक्त उच्चकोटि के कवि रूप की प्रशंसा की है। द्विवेदी युग के अन्त और छायावाद के अभ्युदय के संधिकाल के कवि हृदयेश की- शिशु, चाँद, अनुनय, वनमाला, अभिलाषा, सान्त्वना जैसी कविताओं से विद्वान आलोचक डॉ० आर्य निश्चित ही प्रभावित हुए हैं। इसीलिये हृदयेश के काव्य-सौन्दर्य को उन्होंने सराहा है।

संग्रह में 'जयशंकर प्रसाद : अविस्मरणीय प्रसंग' निबन्ध लिखकर डॉ० आर्य जी ने हिन्दी पाठकों के लिये उनके जीवन के अनेक ऐसे प्रसंगों को एकत्र किया है जिन्हें आज तक के असंख्य हिन्दी प्रेमी नहीं जानते हैं। साथ ही उन प्रसंगों में उनके जो गुण निखर कर आये हैं, डॉ० आर्य ने उन्हें शीर्षक देकर लिखा है जैसे- विनयशीलता, व्यवहार बुद्धि, वह मुस्कराहट, स्वाभिमान चेता, सरल स्वभाव, मित्रता का उच्चादर्श, अन्तरे की पूर्ति, पर धन के प्रति अन्यमनस्कता, काशी के प्रति अनन्य अनुराग। इन गुणों के माध्यम से निबन्धकार डॉ० आर्य ने प्रसाद जी के व्यक्तित्व पर चार चाँद लगा दिये हैं।

संग्रह का उन्नीसवाँ निबन्ध 'गुरुवर पं. भोलानाथ शर्मा' पर लिखा गया है। यह मात्र संस्मरणात्मक निबन्ध नहीं है बल्कि उनके पाण्डित्यपूर्ण विशाल व्यक्तित्व में छिपे दायित्व, हिन्दी-संस्कृत, संस्कृति एवं दार्शनिकता के दर्शन कराता है। निबन्ध के अंत में उनका संक्षिप्त जीवन परिचय भी दिया गया है।

'स्मृतिशेष: विजयवीर त्यागी', एक संस्मरणात्मक निबन्ध है, जो वर्धमान कॉलेज के प्रथम बैच के बी.ए. प्रथम वर्ष के छात्र थे। यों तो अध्यापक के जीवन में प्रतिवर्ष एक से एक विलक्षण व्यक्तित्व के छात्र आते हैं, पर कोई-कोई छात्र अपने मृदु व श्रद्धापूर्ण व्यवहार से गुरु के हृदय में अपनी अमिट छाप छोड़ जाता है। लेखक ऐसे ही छात्र विजयवीर त्यागी का बार-बार स्मरण करते हैं। उसका बहुमुखी व्यक्तित्व, साहित्यिक प्रतिभा, संगठन कौशल उन्हें रह-रहकर याद आता है। परिणामस्वरूप पचास वर्ष की अल्पायु में वर्ष 1987 ई० में उसके स्वर्गारोहण हो जाने के बाद भी वे उसे भूल नहीं पाये और यह संस्मरण उस पर लिखा गया है। यह एक गुरु की महानता है।

'विस्मृत प्राय: विदुर कुटी' संग्रह का अंतिम निबंध है। विदुर कुटी एक पौराणिक स्थल है जो महात्मा विदुर की तपस्थली था। विदुर जी कौन थे ? उनका जन्म कैसे हुआ ? कौरव पाण्डवों में उनका स्थान क्या था ? विदुर कुटी कहाँ है ?

शनैः-शनैः उसका क्षरण कैसे हुआ तथा बाद में समाजसेवी व्यक्तियों एवं संस्थाओं ने किस प्रकार उसका संरक्षण किया। यह सब इस निबन्ध में है। विदुर जी का बथुआ भोग, विदुर कुटी में बारह मास बथुआ उपलब्ध होना, उसका रासायनिक नाम 'क्षार पत्ता' जैसे रहस्यों को लेखक ने इस निबन्ध में उजागर किया है। विदुर कुटी के समीप दारानगर के नाम की उत्पत्ति और अर्थ बताकर विदुर कुटी की वर्तमान स्थिति का वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत ग्रन्थ हिन्दी की महान दिवंगत विभूतियों पर लेखक द्वारा समय-समय पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के लिये लिखे गये निबन्धों का संग्रह है। पुस्तक हिन्दी के प्रति जिज्ञासा रखने वाले प्रेमियों, छात्रों, शोधकर्ताओं के लिए बहुत उपयोगी है। विभिन्न विद्वानों के साहित्य और जीवन की बहुत सी उपयोगी और अछूती बातों का इसमें उद्घाटन हुआ है। हिन्दी के जाने-माने विद्वान अनेक ग्रन्थों के प्रणेता आदर्श गुरु डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की भाषा अत्यन्त सरल और सुबोध है। इसमें वर्णित प्रसंग पाठकों की जिज्ञासा को बढ़ाते हैं। इसका उद्देश्य पूर्णतः सार्थक है। इसका प्रकाशन 'प्रकाश बुक डिपो', बड़ा बाजार, बरेली से हुआ है।

सुमन मार्ग, कोटद्वार (उत्तराखंड)

6. डॉ० रामस्वरूप आर्य का निबंध-संग्रह 'परंपरा और आधुनिकता'

डा. राजेन्द्र रंजन चतुर्वेदी
डी.लिट्.

डा. रामस्वरूप आर्य दादा जी (पं. बनारसी दास चतुर्वेदी जी) के अन्तर्जनपदीय परिवार के बड़े आत्मीय सदस्य थे। दादा जी चाहते थे कि इस परिवार के सदस्यों के बीच चिठ्ठी-पत्री के माध्यम से अन्तरजनपदीय चेतना की ज्योति जलती रहनी चाहिये। इसलिये डॉ० रामस्वरूप आर्य से भी मेरा पत्राचार चलता रहता था। जब आचार्य पदमसिंह शर्मा जी की जन्म शताब्दी मनाने का अवसर आया तथा डॉ० विष्णुदत्त 'राकेश' जी ने हरिद्वार में इस महत्त्वपूर्ण आयोजन का संकल्प लिया, तब उक्त परिवार के अधिकांश सदस्य इस समारोह में एकत्र हुए। वहीं डॉ० रामस्वरूप आर्य जी से भी भेंट हुई। डॉ० आर्य जी 'ब्रज भारती' (मथुरा) के नियमित लेखक थे। जब दादा पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी जी का निधन हुआ तब डॉ० आर्य जी ने 'नव भारत टाइम्स' में एक लेख लिखा था- 'दूसरों को समर्पित : एक जीवन।'

डॉ० आर्य जी ने 25 पुस्तकें लिखी थीं। उनमें एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है- 'परंपरा और आधुनिकता'। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर प्रकाशित इन लेखों को संकलित करके उनके पुत्र श्री डॉ० चन्द्रप्रकाश आर्य ने पुस्तक का यह रूप प्रदान किया है। डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की लेखनी में प्राण है, जो लिखा, वह जैसे एक प्रवाह बन गया, निरंतरता बन गयी।

डॉ० आर्य जी स्वभाव से ही अध्येता थे और अध्ययन करते-करते तत्व की गहराई में चले जाते थे। अध्ययन करना किन्तु किसी बाध्यता से नहीं, अंदर की प्रेरणा से, जिसके परिणामस्वरूप उन्होंने बहुत सी नयी सूचनायें और नये तथ्य आगे के अध्येताओं को समर्पित किये। बहुत कम लोगों को ज्ञात होगा कि सन् 1882 में हंटर-कमीशन नाम से भारत में पहला शिक्षा आयोग बना था और उसमें भारतेंदु हरिश्चन्द्र जी की गवाही हुई थी। भारतेन्दु जी रुग्ण थे, इसलिये वे स्वयं तो आयोग के सामने उपस्थित नहीं हुए थे लेकिन अपना वक्तव्य उन्होंने आयोग को सौंपा था। भारतेन्दु बाबू का वह वक्तव्य उस जमाने की शिक्षा-संबंधी समस्याओं को उजागर करता है। बीस पृष्ठ का वह वक्तव्य भारतेन्दु जी ने अंग्रेजी में लिखा था। भारतेन्दु ने बनारस में एक प्राथमिक पाठशाला की स्थापना की थी। वे बनारस शिक्षा-समिति के सदस्य भी थे। शिक्षा विभाग के लोगों से उनका सम्पर्क प्रायः ही रहता था।

इसी प्रकार डा. आर्य जी ने कवि सुमित्रानंदन पंत की बाल्यावस्था के परिवेश का ऐसा सजीव चित्र खींचा है, वैसा कम लोगों को याद है।

उनके लेख जनपदीय, प्रदेशीय और राष्ट्रीय स्तर पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते थे। मैं डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की आत्मीय-स्मृतियों को सादर-सविनय प्रणाम करता हूँ।

1828, हाउसिंग बोर्ड कालोनी
सैक्टर 13-17, पानीपत (हरियाणा)

***

7. निबंधों का अनुपम गुलदस्ता : चिन्तन-अनुचिन्तन

डॉ0 बीना रुस्तगी
एम.ए., पी-एच.डी.

डॉ0 अशोक रुस्तगी
एम.ए., पी-एच.डी.

डॉ0 रामस्वरूप आर्य हिन्दी संसार की प्रसिद्ध विभूति रहे हैं। आपके द्वारा लिखी गयी पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्तन' (निबन्ध संग्रह) बत्तीस निबन्धों का अनुपम गुलदस्ता है। निबन्धों में लेखक का गहन चिन्तन व शोधात्मक दृष्टि के दर्शन होते हैं। सही मायने में लेखक की जिज्ञासु दृष्टि व तीव्र मेधा शक्ति का परिचय इन निबन्धों में परिलक्षित होता है।

संकलन का प्रथम निबन्ध 'शब्दार्थ-चिन्तन' अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। नारंगी, खोया, मृच्छकटिक, बड़ी (उड़द की दाल की) तथा पगड़ी शब्द के अस्तित्व में आने की दास्तां ज्ञानवर्धक और रोचक है। दुहिता, मिलाप, लोमड़ी जैसे शब्दों की व्युत्पत्ति को स्पष्ट करना लेखक के अथक श्रम को दर्शाता है।

भारतीयता के हिमायती व संस्कारों से बंधे लेखक ने 'गुरु गुन लिखा न जाइ' निबन्ध में 'गु' का अर्थ अंधकार और 'रु' का अर्थ बताया है प्रकाश। कबीर, रैदास, धर्मदास, दादू, सुंदरदास, पलटू साहब, संत भीखा, चरणदास इत्यादि प्रसिद्ध साहित्यकारों की पद्यात्मक पंक्तियों को समाहित करते हुए निबंधकार ने स्पष्ट किया है कि जो शिष्य के अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करे, वह गुरु है। वस्तुतः गुरु की महिमा का बखान अविगत की गति है।

लेखक के शोधपरक निबन्ध भारतीय जनमानस के प्राण पोषक देवाधिदेव भगवान शिव की विभिन्न कवियों द्वारा की गयी स्तुति संग्रहणीय निबन्धों में से एक है। मुस्लिम कवि नजीर, रसखान एवं दीन मोहम्मद ने भी भगवान शिव की स्तुति कर भारतीयता का उदाहरण उपस्थित किया है- "हिमाचल सुता संग विहरत लोकहित। त्रय नेत्रधारी वह शिव कहलाए हैं।" (दीन मोहम्मद दीन)

सृष्टि के आदि से गंगा माँ बनकर समस्त प्राणियों का पालन करती हैं। भारत की सांस्कृतिक विरासत की साक्षी माँ गंगा को विद्यापति ने कहा कि "हे गंगा माता तुम्हारे तीर पर आकर मैंने बड़ा सुख पाया। तुम्हारा सामीप्य छोड़ते हुए मेरे नेत्रों से अश्रु प्रवाहित हो रहे हैं। मुझे तुम्हारे दर्शन पुनः प्राप्त हों।" कवि के उद्गार मन को विह्वल कर देते हैं। तुलसीदास जी गंगा को सांसारिक दुखों को हरने वाली मानते हैं। रत्नाकर जी पतितपावनी गंगा के लिए कहते हैं कि गंगा ने इतने लोगों को तारा है, जितने आकाश में तारे भी नहीं हैं- "काहू ने न तारे तिन्है गंगा तुम तारे

और/ जेते तुम तारे तेते नभ में न तारे हैं।'' लोकमाता गंगा की स्तुति में सैकड़ों लोकगीत भी प्रचलित हैं।

भारत की आत्मा राष्ट्रभाषा हिन्दी के गौरवगान में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, श्रीधर पाठक, प0 माधव शुक्ल, भानुदत्त त्रिपाठी, गोपाल प्रसाद व्यास, डोमन साहू 'समीर' इत्यादि के महत्वपूर्ण उद्‌गार की खोजपूर्ण प्रस्तुति की गयी है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा मानते हुए लिखते हैं- ''है भव्य भारत ही हमारी मातृभूमि हरी भरी/ हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा और लिपि है नागरी।''

'जय देवनागरी चिर महान' निबन्ध में मिश्र बन्धुओं ने नागरी की वर्णमाला की शुद्धता और सरलता का उल्लेख करते हुए लिखा है- ''नागरी वर्णमाला है विशुद्ध महान/ सीखने में सरल सुगम अति सुखदान।''

एक ओर जो भाषा राष्ट्रभाषा, राजभाषा के पदासीन हो, उसकी लिपि को अदालती कार्यवाहियों में स्थान न मिलने पर संघर्ष करना पड़ा। दुनिया के नक्शे पर शायद भारत ही एकमात्र ऐसा देश होगा, जहाँ भाषा के साथ यह खिलवाड़ होता आया है। 'उत्तर प्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग: संघर्ष गाथा' निबन्ध में लेखक ने भाषाई नीति के दोहरेपन का विवेचन किया है।

मध्यकालीन कवियों में कबीर, सूर, जायसी, रहीम पर लिखे गये निबन्ध उत्कृष्ट कोटि के हैं, जिन्हें 'गागर में सागर' की संज्ञा दी जा सकती है।

'प्रथम अखिल भारतीय महिला कवि सम्मेलन' निबन्ध में लेखक ने स्पष्ट किया है कि सन् 1933 तक 'कवयित्री' शब्द प्रकाश में नहीं आया था। कवयित्रियों को महिला कवि कहा जाता था। लेखक ने स्पष्ट किया है कि यह एक ऐतिहासिक सम्मेलन था, जिसकी स्वागत नेत्री श्रीमती महादेवी वर्मा तथा अध्यक्षा श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान थीं।

'प्रेमचन्द और फिल्म-संसार' निबन्ध प्रेमचंद जी के जीवन के एक विशेष पहलू को उजागर करता है। विशेषकर जैनेन्द्र जी को लिखे पत्र का अंश लेखक की सामाजिक गिरावट के प्रति चिन्ता का उत्कृष्ट प्रमाण है, जिसमें वह लिखते हैं- ''फिल्मी हाल क्या लिखूं। मैं जिन इरादों से यहां आया था, उनमें एक भी पूरे होते नजर नहीं आते। ये प्रोड्यूसर जिस ढंग से कहानियां बनाते आये हैं, उसकी लीक से जौ भर भी नहीं हट सकते। बलगैरिटी को यह लोग इन्टरटेनमेंट वैल्यू कहते हैं। ..... यहां तो जान पड़ता है जीवन ही नष्ट हो रहा है।'' (28 नवम्बर 1934 को जैनेन्द्र जी को लिखे पत्र का अंश)

'काका हाथरसी' निबन्ध में लेखक ने कवि के जीवनवृत्त के विभिन्न पहलुओं

को उजागर किया है। साथ ही स्पष्ट किया है कि हास्य रस की कविताओं में फूहड़ता के लिए कोई जगह नहीं है। काव्य के व्यंग्य में पैनापन है, पर वे अश्लीलता की सीमारेखा से बचकर निकल जाते हैं। उनके अनुसार व्यंग्य वही है, ''जिसे मैं अपनी पुत्री के सम्मुख भी सुना सकूं।'' (चिन्तन-अनुचिन्तन, पृ0-68)।

'बहुमुखी प्रतिभा के धनी दुष्यंत कुमार' निबन्ध में कवि ने दुष्यन्त के सम्पूर्ण काव्य-संसार का अनुपम चित्रांकन किया है। डॉ० आर्य जी लिखते हैं, ''कवि का विश्वास है कि उसके हृदय की ज्वाला एक दिन विकास की बाधक दीवारों को अवश्य स्पर्श करेगी और अनाचार-अत्याचार की जड़ता भंग होगी।'' (चिन्तन-अनुचिन्तन, पृ0 71)

'दो आखर की प्रेम-कहानी' निबन्ध में लेखक ने प्रेम के नायाब मोती चुन-चुन कर एक माला में पिरोने का सफल प्रयास किया है। प्रेम की कहानी वास्तव में वर्णनातीत है। उसका आनन्द शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता- ''अकथ कहानी प्रेम की कबिरा कही न जाय। गूंगे केरी शर्करा खावै और मुस्काय।।'' (चिन्तन-अनुचिन्तन, पृ0 76)

'साहित्यिक संशोधन' निबन्ध विशुद्ध रूप से लेखक की अनुसंधानात्मक प्रवत्ति का सूचक है। निबन्ध में उद्धृत पन्द्रह चुने हुए उदाहरण ज्ञानवर्धक हैं। साथ ही लेखक का मानना है कि ''साहित्य के क्षेत्र में गुरु-शिष्य परम्परा क्षीण होती जा रही है। उत्कृष्ट एवं परिष्कृत काव्य-रचना हेतु इसका निर्वाह श्रेयस्कर है।'' (चिन्तन-अनुचिन्तन, पृ0 84)

'कविता का अचूक प्रभाव', 'अमिय हलाहल मद भरे', 'हिन्दू तुरक की एक राह है', 'मानव तुम सबसे सुन्दरतम', 'धर्म और राजनीति', 'प्रेरक प्रसंग: दो कारों का', 'कहां गये वे गांव', 'लौट चल मिट्टी की ओर', 'बूढ़ी आयु होउ तुम...', 'मृत्यु से हम क्यों डरें', 'अन्तिम इच्छा', 'नायक नगला की तीर्थयात्रा'- ये सभी निबन्ध पाठकों के मन: पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ते हैं। नि:संदेह यह कृति हिन्दी जगत में अपना विशिष्ट स्थान रखती है तथा जिज्ञासु व खोजी वृत्ति वाले पाठकों का पथ प्रशस्त करेगी।

एसो. प्रोफेसर व अध्यक्षा, हिन्दी विभाग
जे.एस.एच.पी.जी. कॉलेज, अमरोहा

एसो. प्रोफेसर व अध्यक्ष-
राजनीति विज्ञान, विभाग
जे.एस.एच.पी.जी. कालेज, अमरोहा

***

८. चिंतन-अनुचिंतन : एक परिशीलन

देवर्षि कलानाथ शास्त्री

अनेक दशकों तक उत्तर प्रदेश के महाविद्यालयों में हिन्दी विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष रहे डॉ० रामस्वरूप आर्य जी का एक नया शोध लेख संग्रह 'चिन्तन-अनुचिन्त' शीर्षक से हाल ही में प्रकाशित हुआ है जिसमें हिन्दी साहित्य के गहन अनुशीलन को समर्पित, एक व्यापक फलक का स्पर्श कर सोदाहरण विभिन्न विषयों का विवेचन करने वाले 32 निबन्ध संगृहीत हैं। डॉ० आर्य जी का एक अन्य निबन्ध संग्रह है,-'परम्परा और आधुनिकता' (1997 ई. में प्रकाशित तथा उ.प्र. हिंदी संस्थान, लखनऊ द्वारा पुरस्कृत) शीर्षक से, जो पहले प्रकाशित और विद्वज्जगत में समादृत हो चुका है। इस नये निबन्ध संग्रह में महादेव, महावीर, गंगामाता, गुरु आदि पर लिखित निबन्धों के बाद कबीर, जायसी, रहीम, सूर, तुलसी आदि से लेकर प्रेमचन्द, काका हाथरसी, दुष्यंत कुमार आदि तक के विभिन्न आयामों पर समय-समय पर लिखे तथा 'नवरभारत टाइम्स', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' आदि से लेकर 'बिजनौर टाइम्स' तक में छपे लेख संकलित हैं। किसी निबन्ध में आँखों पर विभिन्न काव्य लेखकों की सरस उक्तियाँ वर्णित हैं तो किसी में 'प्रेम' पर सरस उक्तियाँ संगृहीत हैं।

'साहित्यिक संशोधन' शीर्षक एक लेख में ऐसे अनेक अछूते और अल्पज्ञात तथ्य उद्घाटित किए गए हैं जिनमें बताया गया है कि सुप्रसिद्ध कालजयी काव्यों की कुछ पंक्तियाँ प्रथमत: किस प्रकार लिखी गई थीं अथवा उन्हें किस प्रकार लिखना चाहा गया था किन्तु स्वयं रचनाकार ने उनमें कुछ परिवर्तन करना कैसे आवश्यक समझा और आज उस परिवर्तित रूप में किस प्रकार वे प्रसिद्ध हो गईं। पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध जी ने 'प्रियप्रवास' का नाम पहले 'ब्रजांगना विलाप' रखना चाहा था किन्तु बाद में उसमें परिवर्तन कर दिया। उसकी दो पंक्तियाँ जो आज इस प्रकार हैं-

"प्रिय पति वह मेरा प्राण प्यारा कहाँ है।
दुख जलधिनिमग्ना का सहारा कहाँ है।"

पहले उपर्युक्त पंक्तियाँ इस प्रकार लिखी गई थीं। "प्रिय पति वह मेरा...दुखजलनिधिमग्ना डूबी का सहारा कहाँ है।" प्रसादजी के 'आँसू' के प्रथम संस्करण की कुछ पंक्तियों को द्वितीय संस्करण में कैसे बदला गया, इसके उदाहरण भी चुटीले हैं।

डॉ० आर्य जी का प्रत्येक निबन्ध उदाहरणों एवं संदर्भों से भरपूर है, अत:

निश्चित ही आज के शोधार्थियों, लेखकों आदि के सामने यह निबंध संग्रह एक आदर्श प्रस्तुत करेगा कि किस प्रकार विषय का सटीक विवेचन किया जाना चाहिए। स्वयं डॉ० आर्य जी के निर्देशन में 17 शोधार्थी पी-एच.डी. कर चुके हैं। भरपूर अनुभव के धनी वयोवृद्ध डॉ० आर्य शतायु हों और इसी प्रकार सारस्वत सेवा करते रहें, यही हमारी प्रभु से प्रार्थना है। ऐसे उद्भट विद्वान अमर और कालजयी हैं।

('लोकशिक्षक', जयपुर, अगस्त-सितंबर, 2015 ई० के अंक से साभार)

जयपुर (राजस्थान)

***

9. काव्यमय निबंध-संग्रह : चिंतन-अनुचिंतन

श्री वी.पी. गुप्ता

वरिष्ठ साहित्याकार एवं पत्रकार

प्रसिद्ध साहित्यकार एवं वरिष्ठ शिक्षाविद् डॉ० रामस्वरूप आर्य के निबंध संग्रह 'चिंतन-अनुचिंतन' में विविध विषयों पर लिखे गये 32 निबंध हैं, जो स्वयं उनके कथनानुसार, विगत तीस-चालीस वर्षों से विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके सौ से अधिक निबंधों में से चयनित हैं। इतनी लम्बी अवधि में लिखे गए निबंधों में विषय-विविधता होनी ही थी। कुछ निबंध विशुद्ध साहित्यिक शोध-विषय परक हैं, कुछ प्रमुख संत कवियों के काव्य सौष्ठव का निरूपण करते हैं, कुछ आध्यात्मिक धरातल पर सर्वेश्वर शिव, महावीर प्रभु और गंगा माता की महिमा का गान करते हैं। कुछ राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हैं, कुछ कतिपय विशिष्ट साहित्यकारों के कृतित्व एवं व्यक्तित्व पर केन्द्रित हैं, कुछ हिन्दू-मुस्लिम एकता, मानव की श्रेष्ठता, राजनीति और धर्म जैसे विषयों का विवेचन करते हैं, कुछ ग्राम्य जीवन को महिमा मण्डिप करते हैं और कुछ वृद्धावस्था, मृत्यु, अंतिम इच्छा जैसे विषयों की विवेचना करते हैं। सभी निबंधों का कलेवर छोटा है, परंतु लगभग सभी निबंधों की, 4-5 निबंधों को छोड़कर, अनुपम विशेषता यह है कि उनमें आरंभ से अंत तक संबंधित विषय पर विभिन्न कवियों द्वारा व्यक्त किए गए भावोद्गारों का बाहुल्य है जिसके फलस्वरूप किसी-किसी निबंध में कवियों के उद्धरण अधिक दिखलाई देते हैं। इससे यह पूरा निबंध संग्रह ही काव्यमय हो गया है और इसकी रोचकता व आकर्षण में वृद्धि हो गई है। एक ही उदाहरण पर्याप्त है। एक निबंध है-जय हिन्दी जय राष्ट्र भारतीय। केवल 3 पृष्ठों के इस निबंध में विद्वान लेखक ने राष्ट्रभाषा हिन्दी को

महिमा मण्डित करते हुए किस-किस कवि ने क्या कहा, उन 12 कवियों के चुने हुए काव्यांश को पाठकों के अनुरंजनार्थ प्रस्तुत किया है। कविगण हैं- भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, पं. गिरिधर शर्मा, 'नवरत्न' पं. श्रीधर पाठक, पं. माधव शुक्ल, डा. हरिशंकर शर्मा, श्री भानुदत्त त्रिपाठी मधुरेश, मैथिलीशरण गुप्त, गोपाल प्रसाद व्यास, गोपाल प्रसाद मुदगल, कमलाकर कमल, डा. डोमन साहू समीर, और डा. जगदीश वाजपेयी।

डॉ० आर्य जी ने जिस परिश्रम से विभिन्न विषयों पर पुराने और नए कवियों की रचनाएँ ढूंढकर और उनके चुने अंशों को उदधृत करके साहित्य प्रेमियों को प्रफुल्लित किया है, वह श्लाघनीय है। पुराने प्रमुख संत कवियों, सूफी कवियों, साध्वी कवयित्रियों, उर्दू-फारसी के प्रसिद्ध शायरों, आधुनिक कवियों की रचनाओं से उदधृत छोटे-बड़े अंश पढ़कर, सुविज्ञ पाठकों का आनन्दित हो जाना स्वाभाविक है। निबंध संग्रह में आवश्यकतानुसार संस्कृत काव्य ग्रंथों और अंग्रेजी कवियों से भी उद्धरण दिए गए हैं, यहाँ तक कि विद्वान लेखक ने कुछ स्थानीय कवियों की रचनाओं से भी प्रासंगिक उद्धरण देकर अपनी उदारता का परिचय दिया है। डॉ० रामस्वरूप आर्य ने पहले बरेली कालेज, बरेली में हिन्दी प्रवक्ता और फिर वर्धमान कालेज बिजनौर में हिन्दी विभागाध्यक्ष रहते हुए लगभग 40 वर्षों के दीर्घ अध्यापक काल में जो विशाल ज्ञान भंडार अर्जित किया, उसकी एक झलक उनके इस निबंध संग्रह में देखने को मिलती है।

यह निबंध संग्रह पाठकों की ज्ञान वृद्धि तथा उनका अनुरंजन करने में पूरी तरह सफल है। यह रोचक भी है और संग्रहणीय भी है, यह साहित्य के जिज्ञासुओं ओर काव्य प्रेमियों के लिए अत्यंत उपयोगी होने के साथ ही साहित्य की एक अनुपम निधि सिद्ध होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

(दैनिक 'बिजनौर टाइम्स', 28 जून, 2015 ई. के अंक से साभार)

जाटान, बिजनौर

***

10. चिंतन-अनुचिंतन : चिंतन का प्रवाह

हरिशंकर सक्सेना
एम.ए. , हिन्दी

'चिन्तन-अनुचिन्तन' डॉ० रामस्वरूप आर्य के शोधपरक और सारगर्भित निबन्धों का अभिनव संग्रह है। इसमें साहित्यिक और समसामयिक विषयों पर केन्द्रित बत्तीस निबन्ध हैं जो लेखक की खोजपूर्ण दृष्टि और गंभीर चिन्तन के द्योतक हैं।

'शब्दार्थ-चिन्तन' समीक्ष्य पुस्तक का पहला निबंध है जिसमें शब्द और अर्थ के घनिष्ठ सम्बंध और शब्द के स्वरूप तथा अर्थ की विचित्र यात्रा का उल्लेख किया गया है। 'गुरु गुन लिखा न जाय' में गुरु की महत्ता, 'महिमा श्री सर्वेश्वर शिव की' में भगवान शिव की महिमा और 'गंगा माता' में भगवती गंगा की महिमा पर प्रकाश डाला गया है। पुस्तक में भगवान महावीर की महानता और उनके जीवन दर्शन को फोकस किया गया है। राष्ट्रभाषा हिन्दी और देवनागरी को लेकर लेखक ने बहुत महत्वपूर्ण विचार प्रस्तुत किये हैं।

समीक्ष्य पुस्तक में कबीर, सूर, तुलसी, जायसी और रहीम की काव्य-यात्रा और सामाजिक चेतना के लिए उनके योगदान को रेखांकित किया गया है। फिल्मी दुनिया में कुछ समय के लिए प्रेमचन्द की सक्रियता और निराशा उनके पत्रों के माध्यम से उजागर की गई है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी दुष्यंत कुमार की साहित्यिक यात्रा और काका हाथरसी तथा प्रथम महिला कवि सम्मेलन (अर्थात् कवयित्री सम्मेलन) के रोचक प्रसंग भी ध्यान आकृष्ट करते हैं। संग्रह में साम्प्रदायिक सौहार्द की भावभूमि पर केन्द्रित 'हिन्दू तुरक की एक राह है' शीर्षक निबंध बहुत प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है।

'धर्म और राजनीति' चिन्तन प्रधान निबंध है जिसकी प्रासंगिकता सदैव बनी रहेगी। धर्म का वास्तविक अर्थ कर्तव्य है, रिलीजन अथवा मजहब नहीं। धर्म राजनीति को नियंत्रित करता है, उसे निरंकुश होने से रोकता है। धर्म के अभाव में राजनीति विकृत रूप धारण कर लेती है। महात्मा गांधी ने कहा था-"मैं यह नहीं मानता कि धर्म का राजनीति से कोई वास्ता नहीं है। धर्मरहित राजनीति शव के समान है जिसे दफना देना ही उचित है।" 'दो आखर की प्रेम कहानी' में प्रेम के व्यापक अर्थ में मानवता, करुणा और लोक-कल्याण की भावना को ही रेखांकित किया गया है-

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय।। (कबीर)

पुस्तक के 26 वें निबन्ध में दो कारों से सम्बंन्धित प्रेरक प्रसंग प्रस्तुत किये गये हैं। जिनमें महामना मदन मोहन मालवीय और सरदार किशन सिंह (सरदार भगत सिंह के पिता) के निस्वार्थ आचरण और उनकी सज्जनता का परिचय दिया गया है। 'कहाँ गये वे गाँव' शीर्षक निबंध में यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि पहले जमाने के गाँवों में, गरीबी के बावजूद, सहयोग और सद्भाव का वातावरण था, निश्छल मानसिकता थी, अतिथियों के प्रति सहृदयता थी और परस्पर ममत्वभाव की संस्कृति थी, परंतु अब गाँवों में भी छल-छद्म की राजनीति है, निर्दयता और निर्ममता है, लूटमार, चोरी-डकैती, लड़ाई-झगड़े और आडम्बर हैं। नवगीतकार हरिशंकर सक्सेना के अनुसार अब-

गाँव-किसानों चौपालों को मिलती धूप उधारी में
मुखिया मालामाल हो गया, मौज मिली बटमारी में।

'लौट चल मिट्टी की ओर' शीर्षक निबंध में मिट्टी की प्रधानता पर बल दिया गया है। मानव का शरीर जिन पाँच तत्वों से मिलकर बना है, उनमें पृथ्वी अर्थात् मिट्टी प्रधान है। कबीरदास के अनुसार-

माटी कहै कुम्हार से, तू क्या रूँधे मोहि।
एक दिन ऐसा आयेगा, मैं रूँधूँगी तोहि।।

'मृत्यु से हम क्यों डरें' शीर्षक निबंध 'गीता' के ही उपदेश पर केन्द्रित है। 'गीता' के अनुसार आत्मा अजर-अमर है, न कोई मरता है, न कोई किसी को मारता है। जिस प्रकार जीवात्मा को कौमार्यावस्था, युवावस्था और वृद्धावस्था प्राप्त होती है, उसी प्रकार उसे अन्य शरीर की प्राप्ति होती है। अत: धीर पुरुष इस विषय में मोहित नहीं होते हैं। जीवन और मृत्यु का यह रहस्य समझ लेने पर भय समाप्त हो जाता है। 'अन्तिम इच्छा' में हर व्यक्ति की अन्तिम मनोदशा और इच्छा की ओर संकेत किया गया है। अमर शहीद अशफाक उल्ला खाँ ने फाँसी से पूर्व कहा था-

कुछ आरजू नहीं है, है आरजू तो यह है।
रख दे कोई जरा सी खाके-वतन कफन में।।

संग्रह के अंतिम निबंध में नायक नगला की तीर्थ यात्रा का रोचक प्रसंग है। नायक नगला पण्डित पद्म सिंह शर्मा का जन्मस्थान है, जहाँ लेखक ने अपने विद्वान मित्रों और साहित्यकारों के साथ यात्रा की थी।

कुल मिलाकर, समीक्ष्य संग्रह 'चिंतन-अनुचिंतन' साहित्य-प्रेमियों, शोध-छात्रों और जागरूक नागरिकों के लिए ज्ञानार्जन हेतु बहुत उपयोगी और प्रेरणा के

स्रोत के रूप में है। यह पुस्तक विद्वान लेखक डॉ० आर्य जी की विलक्षण प्रतिभा की भी परिचायक है।

('गौड़संस टाइम्स', दिल्ली, जुलाई 16-31,2015 ई. के अंक से साभार)

145, कर्मचारी नगर, बरेली (उ.प्र.)-243122

***

11. गहन अध्ययन एवं चिंतन का जीवन्त दस्तावेज : 'चिन्तन-अनुचिन्तन'

डा. योगेन्द्र प्रसाद

जनपद बिजनौर के लब्ध-प्रतिष्ठित साहित्यकार एवं लेखक डॉ० रामस्वरूप आर्य जी का नाम उन चुनिन्दा साहित्यकारों की अग्रिम पंक्ति में गिना जाता है, जिनका लेखन गंभीर एवं गहन चिंतन युक्त होता है तथा जो छोटी से छोटी घटना अथवा विषय वस्तु पर विशद लेखन की क्षमता से ओतप्रोत होते हैं। डॉ० आर्य जी का आज तक का लेखन उनकी इसी विलक्षणता से भरा पड़ा है। उनके गहन अध्ययन, चिंतन तथा अनुभव का उत्कृष्ट नमूना, उनकी हाल ही में प्रकाशित एक निबंध कृति में सहज ही देखा जा सकता है, जिसका शीर्षक भी उन्होंने 'चिंतन-अनुचिंतन' ही रखा है। कृति को बिजनौर की प्रकाशन संस्था हरि गंगा प्रकाशन ने प्रकाशित किया है।

दीर्घ अनुभव, चिंतन एवं अध्ययन से अनुप्रमाणित 'चिंतन-अनुचिंतन' शीर्षक की यह कृति एक ऐसा निबंध संग्रह है, जिसमें डॉ० आर्य जी ने अपने सौ निबंधों में से चुनकर मात्र 32 निबंध संकलित किये हैं। इन निबंधों का पत्र-पत्रिकाओं में पूर्व प्रकाशित तथा विविध विषयक होना नितांत स्वाभाविक है, क्योंकि डॉ० आर्य जी सरीखे विद्वान लेखकों का लेखन तो पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित करने के लिए स्वयं ही लालायित रहती हैं और ऐसे लेखकों को विषय चुनने की जरूरत ही कहाँ होती है। विषय स्वयं ही उनके लेखन में आ जाते हैं। इन निबंधों में जो समानता कहें अथवा विशेषता, वह यह है कि कुछ निबंधों के अतिरिक्त सभी निबंधों में काव्य विधा का अच्छा प्रयोग हुआ है। डॉ० आर्य जी द्वारा प्रस्तुत इस लेखन वैशिष्ट्य से निबंधों का गांभीर्य रोचक एवं मनोरंजक बन पड़ा है और इससे यह निबंध संग्रह कवितामय निबंध संग्रह भी कहा जा सकता है।

वरिष्ठ साहित्यकारों एवं प्रसिद्ध शिक्षाविदों को समर्पित राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, कविवर जयशंकर प्रसाद, रामनरेश त्रिपाठी, श्रीनारायण चतुर्वेदी, नजीर

अकबराबादी, गोपाल दास नीरज, रामधारी सिंह दिनकर, सुमित्रानंदन पंत, ज्ञानचंद ज्ञानेन्द्र आदि की रचनाओं के उद्धरण देकर उनकी काव्य क्षमता एवं रचना-धर्मिता से पाठकों को परिचत कराकर रससिक्त किया गया है तथा इसके साथ ही विभिन्न प्राचीन/नवीन कृतियों का उल्लेख कर उनसे पाठकों को परिचित कराया गया है, वह सराहनीय ही नहीं स्तुत्यीय भी है। डॉ० आर्य जी ने ऐसे-ऐसे संत कवियों, रचनाकारों की काव्य कला के दर्शन कराने का सौभाग्य पाठकों को दिया है जिनमें से बहुतों के नाम से भी नई पीढ़ी के साहित्यकार अनभिज्ञ हैं।

इसके अतिरिक्त निबंध 'अंतिम इच्छा' में हमारे पूर्वज विद्वानों की मरते समय की गयी इच्छाओं एवं रचनाओं को बताया गया है। साथ ही वृद्धावस्था एवं मृत्यु आगमन के कटु यथार्थ को भी उकेरा गया है। संग्रह में संकलित निबंधों से ज्ञान वृद्धि, मनोरंजन, अनुपम जानकारी होने के साथ ही प्रेम-सद्भाव, सामाजिक समानता, धर्म एवं चिंतन/मनन का संदेश भी हमें मिलता है। डॉ० आर्य जी द्वारा हमारे प्राचीन ग्रंथों, संतों-सूफियों का उल्लेख तो किया ही गया है, उन्होंने जिस तरह रीतिकालीन, भक्ति कालीन कवियों, कवयित्रियों तथा उर्दू-फारसी के प्रसिद्ध शायरों के साथ आधुनिक रचनाकारों के उदाहरण निबंधों में प्रस्तुत किए हैं, उससे पाठकों का ज्ञानवर्धन एवं मनोरंजन तो होता ही है, डॉ० आर्य जी की अध्ययनशीलता, गहन अनुभव एवं लेखन क्षमता तथा विद्वतता भी सिद्ध होती है।

सहज और सरल भाषा में प्रस्तुत कृति 'चिंतन-अनुचिंतन' के संदर्भ में अंत में यही कहा जा सकता है कि यह कृति अपने शीर्षक से न्याय करती हुई चिंतन/मनन से परिपूर्ण है और डॉ० आर्य जी की योग्यता एवं साहित्य क्षमता को प्रतिबिम्बित करने में समर्थ दिखाई पड़ती है। उन्हें शत्-शत् नमन।

(सांध्य दैनिक 'चिंगारी', बिजनौर 30 अगस्त, 2015 ई० के अंक से साभार)

चंदक, बिजनौर

***

12. शोध सामग्री का अनंत भण्डार : चिंतन-अनुचिंतन

डॉ० पंकज भारद्वाज,
एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी

हिन्दी भाषा एवं साहित्य के विद्वान डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की अभी तक सामान्यत: पाठ्यक्रम सम्बंधी पुस्तकें सामने आई थीं, प्रशंसकों के काफी अनुरोध पर अभी हाल ही में प्रकाशित उनके निबंध संग्रह 'चिंतन-अनुचिंतन' की साहित्य-जगत में चर्चा है। डॉ० रामस्वरूप आर्य जी हिन्दी के उन विद्वानों में शामिल हैं जो अपनी सरलता, सादगी एवं हिन्दी के प्रति समर्पण भावना के लिए जाने जाते हैं। हालांकि डॉ० आर्य जी विविध विधाओं पर पकड़ रखते हैं। उनके निर्देशन में न जाने कितने लोगों ने शोध कर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की है, लेकिन डॉ० आर्य जी विद्वता का पर्याय होने के बावजूद जरा भी औपचारिकताओं में विश्वास नहीं रखते हैं, यही उनका सबसे बड़ा गुण हैं। उनकी नई पुस्तक 'चिंतन-अनुचिंतन' की चर्चा के दौरान ये स्पष्ट करना बहुत जरूरी है कि उनकी इस पुस्तक में केवल उनके द्वारा समय-समय पर लिखे गये विविध निबंध ही शामिल नहीं है बल्कि इस पुस्तक के माध्यम से उन्होंने ऐसे विषयों को एक ही स्थान पर संकलित कर भविष्य में शोधार्थियों के लिए संभावनाएँ उत्पन्न करने का भी काम किया है यानि डॉ० आर्य ने शोध को बढ़ावा देने और आने वाली पीढ़ियों के लिए एक मार्गदर्शक पुस्तक की रचना कर दी है।

इस पुस्तक में उनके 32 निबंध संगृहीत हैं जिनमें प्रथम निबंध 'शब्दार्थ चिंतन' में ही उन्होंने हिन्दी भाषा की शब्दावली को लेकर चर्चा की है। डॉ० आर्य जी शब्दों के प्रयोगों पर अत्यंत रोचक ढंग से प्रकाश डालते हैं और लिखते हैं कि शब्दों के अनन्त अर्थों की संभावनाएँ अनुसंधान का विषय है। उनके अनुसार एक शब्द का भी सम्यक् ज्ञान इस लोक में तथा परलोक में सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाला होता है। वह शब्द की महत्ता को बहुत ही रोचक ढंग से प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं। दूसरे निबंध 'गुरु गुन लिखा न जाइ' में डॉ० आर्य जी ने गुरु की महत्ता को विभिन्न संतों के शब्दों का सहारा लेकर स्पष्ट किया है जिनमें संत शिरोमणि रैदास, महात्मा धरमदास, स्वामी दादूदयाल, संत सुंदरदास, संत जगजीवन साहब, संत भीखा, संत चरणदास, संत दरिया साहब के कई गुरु-भक्ति के दोहों को शामिल किया गया है।

डॉ० आर्य जी ने अपने शोध-अध्ययन का सार इस पुस्तक में समाहित कर दिया है, हर विषय पर उनकी कलम चली है, लेकिन प्रकाशित पुस्तक में जिस

तरह उन्होंने मलिक मोहम्मद जायसी, सूर के कला पक्ष, तुलसी काव्य में लोकमंगल, सूफी पंथ में हठयोग, कविवर रहीम विषयक किवदंतियां, प्रेमचन्द और फिल्म संसार, काका हाथरसी : निकट से जैसे निबंधों में इन महान साहित्यकारों की रचनाधर्मिता को नए दृष्टिकोण से प्रतिपादित किया है। डॉ० आर्य जी का ये प्रयोग निश्चित रूप से शोध करने वाले छात्रों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। लेखक ने पुस्तक की शुरूआत के पृष्ठ पर पुस्तक को अपने गुरुत्रय को समर्पित करते हुए गुरु के ज्ञान को उन्हीं के चरणों में विसर्जित करने की परम्परा का निवर्हन किया है, जो एक विद्वान ही कर सकता है।

पुस्तक का पहला निबंध 'शब्द' की महिमा एवं महत्ता से जुड़ा है वहीं अंत में 'मृत्यु से हम क्यों डरें?' व 'अंतिम इच्छा' नामक निबंधों के माध्यम से मनुष्य के वास्तविक जीवन का सच लिखने का प्रयास किया गया है। लेखक महादेवी वर्मा की इन पंक्तियों के सहारे अपनी बात को बल देता है-"अमरता है जीवन का ह्रास, मृत्यु जीवन का चरम विकास।" इस प्रकार डॉ० आर्य जी ने तर्क के रूप में संत पलटू, कवि केशवदास, श्री नारायण स्वामी, कविवर बुधजन, जयशंकर प्रसाद, मिर्जा गालिब, गोपाल दास नीरज की विभिन्न पंक्तियों को सम्मिलित किया है। इसके अतिरिक्त 'अंतिम इच्छा' नामक निबंध में लेखक ने बादशाह औरंगजेब, लोक कवि ईसुरी, शब्द्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल, बाबा साहब अम्बेडकर, पं. माखनलाल चतुर्वेदी, देवीदयाल चतुर्वेदी 'मस्त' से जुड़े संदर्भ देकर इनकी विस्मयकारक लेकिन प्रेरणापरक एवं विशिष्ट अंतिम इच्छाओं को इंगित किया है। इस प्रकार के विषय को उठाकर लेखक मानवीय इच्छाओं की गहराई तक भी पहुँचने का प्रयास करता है। इसके बाद पुस्तक का अंतिम निबंध 'नायक नगला की तीर्थयात्रा' में पंडित पद्म सिंह शर्मा के पैतृक गाँव नायक नगला, चांदपुर (बिजनौर) की यात्रा का वृतान्त दिया गया है। इस निबन्ध में पद्म सिंह शर्मा से जुड़ी कई रोचक एवं दुर्लभ जानकारियां देते हुए डा. आर्य जी उनके पुत्र रामनाथ शर्मा के साथ बिताए दिन का उल्लेख करते हैं। गाँव में खड़ा पीपल का पेड़, जिसके नीचे बैठकर पंडित जी (पद्म सिंह शर्मा) 'रामचरितमानस' पढ़ाते थे, लेखक उसी की छाँव में बैठने का सुख वर्णन करते हैं। 126 पृष्ठों में समाहित इस पुस्तक की सभी सामग्री-प्रत्येक पंक्ति पठनीय एवं संग्रहणीय है। भाषा शैली में जहाँ रोचकता है, वहीं कहीं-कहीं व्यंग्यात्मक तो कहीं गंभीरता देखी गई है। पुस्तक की हर शैली को लेखन शैली की विशेषता का प्रमुख गुण कह सकते हैं।

(सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन', 13 जुलाई, 2015 ई० के अंक से साभार)

सम्पादक, सांध्य दैनिक 'पब्लिक इमोशन', सैंट मेरी, स्कूल के पीछे, बिजनौर

***

13. चिन्तन-अनुचिन्तन : उत्कृष्ट निबंध संग्रह

डॉ० कौशल नन्दन गोस्वामी
एम०ए०, पी-एच०डी०

डॉ० रामस्वरूप आर्य लोकप्रिय प्राध्यापक ही नहीं हैं वरन् इन्हें चिन्तनशील लेखक, सफल सम्पादक, कुशल समीक्षक एवं अनुसन्धता के रूप में भी ख्याति मिली है। आलोच्य पुस्तक 'चिन्तन-अनुचिन्त' डॉ० आर्य जी की उत्कृष्ट कृति है। इस निबन्ध संग्रह में विभिन्न विषयों से सम्बंधित 32 निबन्ध संगृहीत हैं। इस संग्रह में 'शब्दार्थ-चिन्तन' निबन्ध शब्द और अर्थ को व्याख्यायित करता है तथा 'जय देवनागरी चिर महान' जैसे निबन्ध देवनागरी के वैशिष्ट्य और उसकी उपादेयता को उजागर करते हैं।

कतिपय निबन्धों में कहीं साहित्यिक संशोधन और कविता के अद्‌भुत प्रभाव की चर्चा है और कहीं धर्म और राजनीति के सम्बंधों पर गहनता से विचार किया गया है। इस संग्रह के लगभग सभी निबंध महत्वपूर्ण हैं। इनमें विषय की उपयोगिता और संदेश की सार्थकता का बोध होता है। इन निबंधों में लेखक ने गूढ़ विषयों को भी अपनी प्रतिभा से बोधगम्य बना दिया है। विषय-वैविध्य इस संग्रह को गरिमा प्रदान करता है। उनमें लेखक का नवीन चिन्तन प्रकाश में आया है। कुछ निबंधों के विषय नवीन और कौतूहलवर्धक हैं, जिन्हें पढ़ने की पाठक को जिज्ञासा होती है तथा वह उनमें रुचि लेता है।

वस्तुत: इस संग्रह में लेखक ने लोकहित को ध्यान में रखकर विषयों का चयन किया है। डॉ० आर्य ने साहित्यिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार की भाषाओं को अपनाया है। जहाँ इन्होंने साहित्यकारों और उनके साहित्य का विवेचन किया है, वहाँ इनकी भाषा साहित्यिक और संस्कृतनिष्ठ हो गई है। इन्होंने यथास्थान प्रचलित भाषा को भी अपनाया है। अस्तु विषय और विचारानुरूप कहीं तत्सम शब्दों की प्रचुरता है तो कहीं उर्दू, फारसी, अंग्रेजी आदि के साथ-साथ तद्‌भव और देशज शब्दों का प्रयोग मिलता है। आपकी भाषा परिमार्जित, परिष्कृत और व्याकरण सम्मत है। निबंधों में प्रवाह, बोधगम्यता, सहजता, स्पष्टता आदि का गुण समाहित है। साथ ही इसमें लेखक का अनुभव, उसकी चिन्तनशीलता और उसके गहन ज्ञान का भी बोध होता है।

अत: कहा जा सकता है कि यह निबंध-संग्रह साहित्य-जगत के लिए अनुपम उपलब्धि ही नहीं है वरन् साहित्य-जिज्ञासु और ज्ञानपिपासु पाठकों के लिए भी उपयोगी और ज्ञानवर्धक है। वस्तुत: यह पुस्तक पठनीय और संग्रहणीय है।

(अक्षरा, भोपाल, मई-जून, 2016 के अंक से आभार)

25, रायल भगवान इस्टेट, गेहूँखेड़ा, कोलार रोड, भोपाल, म.प्र.

14. चिंतन-अनुचिंतन : ज्ञान का असीमित भंडार

पं. राजेन्द्र कुमार शर्मा
एम.एस-सी. (गणित-भौतिकी), ज्योतिषाचार्य

वैसे देखा जाये तो वे देखने में बड़े नहीं थे, परन्तु तथाकथित बड़े-बड़े नाम वालों से वे कहीं अधिक बड़े थे। क्षेत्र में प्रकाश स्तंभ की भाँति, ज्ञान और शालीनता के तेज से आलोकित, छोटे कद, सामान्य रूप, विशाल मस्तिष्क, कुछ खोजती सी आँखें, सीधा सरल सा व्यक्तित्व--जी, ठीक पहचाना आपने, वह नाम था डॉ० रामस्वरूप आर्य। काम-पठन-पाठन, स्वाध्याय, लेखन और एक प्रेरक मार्गदर्शक।

आदरणीय डॉ० साहब के दर्शन मैंने संभवत: 1970 ई० में किये थे, मैं वर्धमान कॉलेज में एम.एस-सी भौतिकी का छात्र था। प्रारंभ से ही साहित्य में रुचि थी। मैं अपनी एक कहानी कालेज पत्रिका में छपने हेतु डॉ० आर्य जी को देने गया था। कहानी का कथानक मौर्य साम्राज्य के बाद शुंग वंश के शासन काल से संबंधित था। शीर्षक था-'पाटलिपुत्र से दूर।' इसके बाद मैं राजकीय सेवा में आ गया। साहित्यिक रुचि होने के कारण मेरा एक और कहानी संग्रह 'दीवार में उगा बरगद' शीर्षक से छपा था। इसकी भूमिका हेतु मुझे एक साहित्यिक व्यक्तित्व की खोज थी। डॉ० आर्य जी से मिले एक मुद्दत हो गई थी, सो मैं सोचता था कि शायद अब मैं उनकी पहचान में नहीं आऊँगा। फिर वस्तुस्थिति यह भी थी कि डॉ० आर्य जी से सही, योग्य और अनुकूल व्यक्तित्व मुझे कोई सूझ भी नहीं रहा था। मैंने साहस करके डाक्टर आर्य साहब से निवेदन किया और उन्होंने लिखना स्वीकार कर लिया। इसी प्रकार जब मेरी दूसरी पुस्तक जो महाभारत के प्रसित्र पात्र द्रोपदी के विषय में काव्य के रूप में थी, उस पर उन्होंने सहर्ष अपने विचार व्यक्त किये। प्राय: साहित्यिक गोष्ठियों में उनकी उपस्थिति ही, उसकी सफलता और महत्व को प्रदर्शित करने में पर्याप्त मानी जाती थी।

डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की 'चिन्तन-अनुचिन्तन' पुस्तक में कुल बत्तीस निबन्ध हैं। पुस्तक में प्रसिद्ध साहित्यिक महानुभावों, धार्मिक देवी-देवताओं, प्रेरक-प्रसंगों, धर्म, राजनीति, हिन्दू-मुस्लिम सम्बंधों तथा हिन्दी विषयक दुर्लभ जानकारी और विशेष कर महिला कवयित्रियों से सम्बंधित ज्ञानवर्धक लेखों के साथ-साथ अनेक दार्शनिक पक्षों पर भी विद्वतापूर्वक लिखा गया है। मैंने पुस्तक के लेखों/निबंधों को निम्न प्रकार वर्गीकृत किया है-

(क) हिन्दी भाषा संबंधी निबंध, विशेषकर, 'जय हिन्दी जय राष्ट्र', 'जय

देवनागरी चिर महान', 'उत्तर प्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग', 'प्रथम अखिल भारत वर्षीय महिला कवि-सम्मेलन', 'साहित्यिक संशोधन', 'कविता का अचूक प्रभाव' आदि।

(ख) इस वर्ग में मैंने विभिन्न दैवीय शक्ति से संबंधित निबन्धों को रखा है-जैसे 'महिमा श्री सर्वेश्वर शिव की', 'महावीर प्रभु की जय जय हो', 'गंगा माता तुम्हें प्रणाम', 'सूफी पंथ में हठयोग', 'मृत्यु से हम क्यों डरें' आदि।

(ग) सन्त कबीरदास चिन्तन एवं संदेश, मलिक मौहम्मद जायसी, रहीम, प्रेमचन्द, काका हाथरसी, दुष्यंत कुमार, सूर, तुलसी आदि से सम्बंधित निबंध।

(घ) जो शेष रहे, वे इस वर्ग में रखे जा सकते हैं।

संग्रह का प्रथम निबंध बहुत ज्ञानवर्धक, उपयोगी तथा यह भी स्पष्ट करता है कि देशकाल परिस्थिति के अनुसार शब्दों के अर्थ में कैसे परिवर्तन होता है। यह तो सत्य ही है कि शब्द होगा तो उसका कोई न कोई अर्थ भी होगा। 'शब्दार्थ चिन्तन' शीर्षक के इस निबंध में इसकी विशद चर्चा हुई है। रूढ़ियों के कारण भी कैसे शब्दों के मूल अर्थ नहीं रहते जैसे-नारंगी का सामान्य अर्थ 'बिना रंग की' लिया जाता है जबकि इसका मूल अर्थ नवरंगी में निहित है। इसी प्रकार सामान्य बोलचाल में शुद्ध दूध, अर्थात् 'खरे दूध' को खरा माल बोलचाल में कहते हैं, दूध के कढ़ जाने पर दूध तो लुप्त हो जाता हैअर्थात खो जाता है, अत: खोया का सार्थक अर्थ स्पष्ट है।

शब्द संसार विचित्र है-'कटिक' शब्द का उदाहरण देकर डाक्टर आर्य साहब ने 'मृच्छकटिक' संस्कृत नाटक का भी उल्लेख किया है। कटिक का अर्थ 'गाड़ी' और अंग्रेजी में उसी के अनुरूप Cart शब्द से यदि t हटायें तो Car हो गया। अंग्रेजी तथा हिन्दी में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनके उच्चारण और अर्थ समान ही हैं, जैसे एक दोहे में आता है-

'निन्दक नीयरे राखिये' में नीयरे का अर्थ पास से है अर्थात् निकट से है, अंग्रेजी में 'नीयर' शब्द पास के ही अर्थ में लिया जाता है। इसी प्रकार बच्चे 'लुकाछिपी' खेलते हैं। यहां 'लुका' शब्द अंग्रेजी के Look के ही अर्थ अर्थ में है, अर्थात् दिखाई देना। ये शब्द हिन्दी से ही अंग्रेजी में गये होंगे।

एक अन्य दोहा तो बहुत ही मनोरंजक और ज्ञान वर्धक है तथा कवि की प्रतिभा का भी प्रदर्शन करता है-

मनमोहन सों मोहकर, तू घनश्याम निहार।
कुँज विहारी सों बिहर, गिरधारी उरधार।।

प्रथम दृष्टया पढ़ने से यही लगता है कि सब भगवान कृष्ण के ही नाम हैं- अर्थात् समानार्थक प्रतीत होते हैं किन्तु इस दोहे में, सब नामों के अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। डाक्टर साहब ने इसे 'परिकरांकुर अलंकार' के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया है।

'मनमोहन' से ही मोह करना उचित है, 'घनश्याम' को ही निहारने में आनंद है, 'कुंज विहारी' अर्थात् कुँजों में विहार करने वाले के साथ विहार करना सहज है। 'गिरिधारी' अर्थात् जिसने गिरि को धारण किया, उसी को उर में धारण करना श्रेयस्कर है।

'और' शब्द को लेकर अनेक उदाहरण दिये गये हैं। अकेले, और के अलग-अलग प्रयोग ने अर्थों में भिन्नता ला दी है।

'गुरु गुन लिखा न जाई' नामक निबन्ध में विभिन्न सतपुरुषों द्वारा गुरु महिमा का गुणगान किया गया है। कबीर ने गुरु महिमा के विषय में लिखा ही है, लेकिन इस लेख से पाठकों को पता चलेगा कि कबीर के अतिरिक्त अनेक, साधु-सन्तों, महात्माओं ने गुरु महिमा का वर्णन किया है। मुस्लिम संतों की गुरु महिमा शायद कम लोगों को ही ज्ञात हो। मुस्लिमों द्वारा गुरु महिमा पढ़कर मन प्रसन्न हुआ। इसके अतिरिक्त मीराबाई सहजोबाई और दयाबाई (संत चरण दास की शिष्या) की गुरु महिमा का ज्ञान इस निबंध से होता है।

'महिमा सर्वेश्वर शिव की'-एक ज्ञानवर्धक लेख है। शिव भारतीय समाज में देवाधिदेव, योगीराज, नटराज, त्रैलोक्याधिपति और आशुतोष आदि अनेक नामों से पूजित हैं। लेख में मुस्लिम संतों, कवियों और मीराबाई द्वारा भी शिव आराधना पढ़ने को मिली। उदासीन सम्प्रदाय के संत शिरोमणि श्रीचन्द्र जी (गुरु नानक के पुत्र) महाराज द्वारा भी शिव आराधना का उल्लेख किया गया है। इस निबंध में मैंने विशेष रूप से यह पाया कि अनेक हिन्दू कवियों ने शैवों (शिव) और वैष्णवों (विष्णु अवतारों के भक्त) के मध्य भेदभाव दूर करने के लिए अनेक पदों की रचना की है। गोस्वामी तुलसीदास तो इस सबंध में प्रसिद्ध हैं ही, सूरदास जी ने भी एक पद में कृष्ण और शिव की महिमा का एकीकृत सुन्दर वर्णन किया है।

इसके अतिरिक्त यह भी जानकारी मिली कि अनेक मुस्लिम कवियों ने भी शिव महिमा का गुणगान किया है। विशेष कर कविवर नजीर, आधुनिक रसखान अबदुर्रशीद खां 'रशीद' और श्री दीन मौहम्मद 'दीन' के नाम उल्लेखनीय हैं। कवि रशीद का एक पद दर्शनीय है-

माल में चंद विराज़ि रहियौ, औ जटान में देवि धुनी लहरैं।
हाथ सुसोभित त्यौं त्रिसूल, गरे बिच नाग परे फहरैं।।
भोजन, भाँग, धतूरन को करि, नित्य मसानहि मै ठहरैं।
नंदी सवार उमायत शंभु 'रशीद' के हिये छटा छहरैं।।

जो शोधार्थी अथवा जिज्ञासु अध्येता कबीर, जायसी, सूर, तुलसी और रहीम के साथ-साथ प्रेमचन्द, काका हाथरसी और दुष्यंत कुमार के विषय में एक ही पुस्तक में अच्छी-पठनीय सामग्री चाहते हैं तो उनके लिए इस पुस्तक में तत्सम्बंधी भरपूर सामग्री है।

हिन्दी विषय और भाषा से संबंधित अनेक दुर्लभ जानकारी पुस्तक में दी गई है। विशेषकर उत्तर प्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग और अखिल भारत वर्षीय महिला कवियों का प्रथम सम्मेलन विशेष लेख के रूप में पुस्तक में उपलब्ध है। 'मृत्यु से हम क्यों डरें?' जैसे दार्शनिक लेख भी अपना विशेष महत्व रखते हैं। 'हिन्दू तुरक की एक राह है' में अनेक पद इस संबंध में सोचने को विवश करते हैं।

सभी जानते हैं कि गाय, गंगा और गायत्री के प्रति इस देश के निवासियों में सदा से श्रद्धा का भाव रहा है। एक श्रद्धावान भारतीय प्रातः स्नान करते समय जिन सात नदियों के जल से स्नान करने की भावना रखता है, उनमें गंगा प्रमुख है। गंगा पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक समान रूप से सुपूजित है।

'दो आखर की प्रेम कहानी' में अनेक कवियों के छन्द अत्यन्त हृदयस्पर्शी हैं और जो आनंद मिलता है, वह अनिर्वचनीय है।

अकथ कहानी प्रेम की कबीरा कही न जाय।
गूँगे केरी शर्करा खावै औ मुस्काय।। (कबीर)

कलम तोड़ते बचपन बीता/पाती लिखते गई जवानी।
लेकिन पूरी हुई न अब तक /दो आखर की प्रेम-कहानी।। (नीरज)

'सूफी पंथ में हठयोग' एक अभिनव लेख है। हठयोग, भारतीय हठयोगियों को सदैव प्रिय रहा है। आदरणीय डॉ आर्य साहब ने 'प्रथम अखिल भारत वर्षीय महिला कवि सम्मेलन' विषयक लेख को पुस्तक में स्थान देकर हिंदी साहित्य प्रेमियों पर विशेष उपकार किया है। 15 अप्रैल 1933 ई. वह ऐतिहासिक दिन था जब प्रयाग महिला विद्यापीठ में सुभद्रा कुमारी चौहान की अध्यक्षता में प्रथम महिला कवि सम्मेलन सम्पन्न हुआ था। इस सम्मेलन की स्वागत मंत्री कुमारी रामेश्वरी देवी गोयल एम.ए. और स्वागत नेत्री श्रीमती महादेवी वर्मा बी.ए. थीं।

सम्मेलन में लगभग एक हजार महिलाओं ने भाग लिया था। श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान का अध्यक्षीय भाषण, कविता के साथ-साथ उनकी अध्ययन की गूढ़ता और गहनता का भी अच्छा उदाहरण था।

15 अप्रैल 1933 ई. के बाद महिला कवियों के लिए 'कवयित्री' शब्द का प्रयोग होना प्रारंभ हो गया। इस प्रकार हिन्दी शब्द संसार में एक नये शब्द का प्रवेश हुआ, इससे पूर्व कविता करने वाली महिला को महिला-कवि कहा जाता था। वैसे तो पुस्तक का प्रत्येक निबंध/लेख ज्ञान का भंडार है, फिर भी आज के संदर्भ में धर्म और राजनीति पर चर्चा करना सामयिक होगा। सही बात तो यही है कि धर्म का अर्थ, उसका मर्म संभवत: हम नहीं समझ पाते हैं। धर्म को इसी भाव में प्रयोग किये जाने वाले-मजहब तथा रिलीजन ही समझ बैठते हैं, जबकि धर्म तो धर्म ही है, वह 'मजहब' तथा 'रिलीजन' जैसे संकुचित अर्थ और संदर्भ में नहीं लिया जा सकता है। धर्म न कर्मकाण्ड है, न कोई विशेष पूजा विधि है। धर्म के लिए महात्मा वेदव्यास ने 'महाभारत' में स्पष्ट रूप से लिखा है।

भारतीय चिन्तन-परम्परा में धर्म के विषय में व्यापक चर्चा की गई है यथा-

1. कर्तव्य की चेतना का नाम धर्म है (महाभारत)।

2. वैशेषिक दर्शन (कणाद) के अनुसार धर्म के दो उद्देश्य बताये गये हैं-

(क) अभ्युदय (ख) नि:श्रेयस

परहित सरिस धर्म नहिं भाई। परपीड़ा नहिं सम अधमाई।। तुलसी

4. विद्वानों के अनुसार धर्म, ईश्वर से पुराना है। 'धर्म' शब्द का प्रयोग संसार के सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ 'ऋग्वेद' में हुआ है परन्तु ईश्वर शब्द का प्रयोग नहीं है।

धर्म का महत्व :-हमारे पूर्वजों ने चार पुरुषार्थ बताये हैं, जो इस प्रकार हैं-

(1) धर्म (2) अर्थ (4) काम (4) मोक्ष

अर्थात् धर्म सर्वोपरि है, इसी से आगे अन्य पुरुषार्थों के लिए रास्ता खुलता है।

वाल्मीकि रामायण का उद्धरण डा. साहब ने दिया है-

धर्मादर्थ: प्रभवति धर्मात् प्रभवते सुखम्।
धर्मेण लभते सर्व धर्मसारमिंद जगत।। अरण्य काण्ड 9/30

अर्थात् धर्म से ही अर्थ की प्राप्ति होती है। धर्म से सुख का उदय होता है। धर्म से ही मनुष्य सब कुछ पाता है। इस संसार में धर्म ही सार है।

शास्त्रों में कहा गया है-'धर्मचर' 1/11/1 तैत्तिरिय उपनिषद। धर्मपर चलो। आचरण सही रखो तभी राजनीति भी सही होगी। राजनीति में नैतिक पतन का मुख्य कारण धर्माचरण का अभाव है। गाँधी जी कहते थे कि मनुष्य धर्म के बिना

नहीं जी सकता।

अत: राजनीति के विकृत रूप और धर्म के सत्स्वरूप का लोप हो जाना, यह चिंता का विषय है। राजनीति के लिए तो राजधर्म बना है। पुस्तक में डॉ० आर्य जी ने सही ही लिखा है- ''मनुष्य जीवन में राजनीति आवश्यक हो सकती है तो धर्म अनिवार्य है।''

लेख संतुलित, सारगर्भित और सामयिक है। धर्म के मर्म को समझे बिना इसका हर क्षेत्र में दुरुपयोग ही संभव है। कुल मिलाकर पुस्तक में निम्निलिखित विशेषताएँ हैं-

1. किसी लेख/निबन्ध में कहीं भी अनावश्यक विस्तार नहीं है। बात को आगे बढ़ाने के लिए सीधे, सरल और सुबोध शैली अपनाई गई है।

2. यह पुस्तक 'गागर में सागर' है तथा ज्ञान का भंडार है।

3. सूर, तुलसी, कबीर और जायसी आदि के बारे में कोई हिन्दी विषय से इतर कुछ ज्ञान प्राप्त करना चाहता है तो पुस्तक में एक साथ प्रर्याप्त सामग्री है।

4. शिव एवं गंगा के विषय में तथा मुस्लिम कवियों के बारे में विशद वर्णन है। नेत्रों को केन्द्रित कर लिखा लेख अतुलनीय है। 'प्रथम महिला कवि सम्मेलन' ऐतिहासिक दस्तावेज है।

एक ही जिल्द में इतना ज्ञान वह भी कम शब्दों में, अनावश्यक विस्तार के बिना प्राय: कम ही मिलता है। मेरा सौभाग्य है कि मुझे आदरणीय डाक्टर आर्य साहब का आशीर्वाद सदैव प्राप्त होता रहा।

रामबाग कालोनी, सिविल लाइंस, बिजनौर

***

15. 'चिन्तन-अनुचिन्तन'-विचारों की विशिष्ट श्रृंखला

डॉ. नितिन सेठी
एम.ए. हिन्दी, पी-एच.डी.

मानव एक चिन्तनशील प्राणी है। किसी भी घटना-परिघटना का होना उसके अन्तर्मन को उद्वेलित करता है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव का चिन्तन-स्तर भी विकसित होता जाता है। इसी चिन्तन स्तर की सजगता एवं समग्रता से विभिन्न लेखक अपने मनोभावों को निबंध विधा के माध्यम से व्यक्त करते हैं।

डॉ० रामस्वरूप आर्य निबंध विधा के प्रमुख स्तंभ हैं। 'चिन्तन-अनुचिन्तन' नामक संग्रह में 32 निबंध हैं, जो समय-समय पर प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। इन निबंधों के माध्यम से विद्वान लेखक ने विभिन्न सामाजिक-आध्यात्मिक-दार्शनिक विषयों पर अपनी कलम चलाई है।

प्रथम निबंध 'शब्दार्थ-चिन्तन' भाषा वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लिखा गया है। लेखक ने सिद्ध किया है कि शब्द व अर्थ की सममिति ही उचित काव्य का प्रणयन किया करती है। किस प्रकार अंग्रेजी के CART से CAR बना, कैसे 'पगड़ी' पैर के घुटने पर बाँधे जाने से 'पगड़ी' बनी, कैसे 'पत्' (गिरना) के भाव का द्योतक, 'पत्ता' बना, 'दुहिता-डॉटर' में क्या समानता है, ये सब विचार प्रस्तुत निबंध में प्राप्त होते हैं। लेखक ने 'और' शब्द के सात विभिन्न प्रयोग दर्शाये हैं। 'गुरु गुन लिखा न जाइ', 'महिमा सर्वेश्वर शिव की', 'महावीर प्रभु की जय-जय हो', 'गंगा माता तुम्हें प्रणाम'...ये चार निबंध अध्यात्म भाव को जाग्रत करते हैं। लेखक ने प्रचुर उदाहरणों के माध्यम से गुरु की महिमा का बखान किया है। भगवान शिव के स्वरूप का बखान करते कई पद हैं। माँ पतित पावनी गंगा का बखान भी लेखक ने बखूबी किया है।

हिन्दी की दशा पर चिन्तन करते हुए लेखक ने तीन निबंध लिखे हैं..'जय हिन्दी जय राष्ट्रभारती', 'जय देवनागरी चिर महान' और 'उत्तर प्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग'। इनमें से एक 'उत्तर प्रदेश की अदालतों में देवनागरी प्रयोग: संघर्ष गाथा' अपने आप में अनूठा निबंध है, जिसमें ऐतिहासिक दृष्टिकोण से लेखक ने ब्रिटिश शासनकाल में हिन्दी की स्वीकृति की विस्तृत चर्चा की है। 'सूफी पंथ में हठयोग' नामक निबंध में हठ के 'ह' का अर्थ 'सूर्य' तथा 'ठ' का अर्थ 'चन्द्र' बताया गया है। अतः 'सूर्य' व 'चन्द्र' का योग ही हठयोग है। 'कविवर रहीम विषयक किंवदंतियाँ' नामक लेख रोचक शैली में लिखा गया है।

15 अप्रैल 1933 ईसवी को श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान की अध्यक्षता में प्रयाग महिला विद्यापीठ में प्रथम महिला कवि सम्मेलन सम्पन्न हुआ था। प्रस्तुत लेख में लेखक सूचित करता है कि उस समय तक महिला कवियों के लिए 'कवयित्री' शब्द प्रयोग न होकर 'महिला कवि' शब्द ही प्रयुक्त होता था।

प्रेमचंद, काका हाथरसी और दुष्यंन्त कुमार की साहित्यिक प्रतिभा व व्यक्तिगत् विचारों को अभिव्यक्ति देने वाले लेख भी सुन्दर हैं। लेखक ने प्रत्येक बात को प्रमाणित करने के उद्देश्य से प्रचुर मात्रा में काव्यपंक्तियाँ भी दी हैं। विशेष बात यह है कि ये उदाहरण भी नवीन हैं। कबीर-तुलसी-जायसी-रहीम से संबंधित लेखों में सर्वथा नवीन सामग्री तथा प्रमाण दिये गये हैं। विद्वान लेखक का गहन अध्ययन व अनुशीलन प्रस्तुत निबंधों में झलकता है। अपने आप में सर्वथा नवीन लेख है-'साहित्यिक संशोधन'। यहाँ लेखक ने कारयित्री व भावयित्री प्रतिभा के माध्यम से रचनाकार व समीक्षक, दोनों की ही अन्योन्याश्रिता पर बल दिया है। भवभूति, हरिऔध, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, हरिवंशराय बच्चन, जगन्नाथदास रत्नाकर प्रभृति कवियों की काव्यपंक्तियों के प्रचुर उदाहरण देकर लेखक ने उनमें उन्हीं या अन्य कवियों द्वारा किये गये संशोधनों व परिवर्तनों को दर्शाया है।

रोचक तथ्य यह है कि प्रेमचंद की कहानी 'पंच परमेश्वर' का शीर्षक प्रेमचंद ने पहले 'पंचों में परमेश्वर' रखा था। साहित्य में भी गुरु-शिष्य परम्परा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। किसी विद्वान की कसौटी पर कोई रचना खरी उतर जाए तो वह रचना अपना प्रभाव दो गुना डालती है। 'अमिय हलाहल मद भरे' नामक निबंध आँखों पर लिखा गया है। नेत्रों की तुलना कमल, भ्रमर, मृग, मीन, खंजन, चकोर से की गई है। लेखक की दृष्टि कितनी सटीक है, जब वह लिखता है कि ज्ञानी की आँखों में प्रकाश चमकता है, अज्ञानी की आँखों में अँधेरा सनसनाता है। अहंकारी की आँख झुकती नहीं है और अपराधी की आँख उठती नहीं है। 'मानव तुम सबसे सुन्दरतम्' नामक लेख में मानव को 'अशरफुल मखलूकात' बताया गया है। जो मानव की सर्वश्रेष्ठता को व्यक्त करता है। वर्तमान राजनीति का बदलता चेहरा दिखलाता लेख है..'प्रेरक प्रसंग : दो कारों का'। महामना मालवीय जी व सरदार भगत सिंह के पिता सरदार किशन सिंह जी की कारों के प्रसंग से लेखक दर्शाता है कि पहले के राजनेताओं में कैसी अद्वितीय त्याग भावना थी। 'कहाँ गये वे गाँव', 'लौट चल मिट्टी की ओर', 'बूढ़ी आयु होउ तुम', 'मृत्यु से हम क्यों डरें' और 'अंतिम इच्छा' नामक लेख यथार्थ परक हैं। जिनमें वर्तमान

परिस्थितियों से लड़ता हुआ, थका-हारा, अपनी जड़ों से कटा, जीवन की आपाधापी से जूझते हुए मानव की गाथा गाई गयी है। 'नायक नगला की तीर्थयात्रा' शीर्षक अंतिम निबंध में पं. पद्मसिंह शर्मा के गाँव नायक-नगला (जिला-बिजनौर) की यात्रा का रोचक वर्णन है। पं. शर्मा जी की यादों को समेटता यह लेख उनकी जन्मशती (1976 ई.) पर लेखक ने 'सम्मेलन पत्रिका' के लिए लिखा था। लेखक ने अपनी कलम के माध्यम से एक भावभीनी श्रद्धांजलि पंडित जी को दी है।

प्रस्तुत निबंध-लेख संग्रह में लेखक ने कुछ नवीन प्रकार के प्रसंगों के साथ लगभग प्रत्येक निबंध को प्रचुर उद्धरणों व काव्यांशों से सुशोभित किया है। निबंधों की भाषा सरल-सरस व प्रवाहमयी है। साहित्यिकता को साथ लेते हुए लेखक ने साधारण विषय को भी यथोचित प्रामाणिक बनाया है। लेखक ने न केवल हिन्दी साहित्य अपितु संस्कृत व उर्दू साहित्य का भी आधिकारिक विद्वान है। व्यक्तिगत तथ्यों से लेकर वैश्विक फलक तक के दिग्दर्शन से डॉ० आर्य जी के गहन अध्ययन व चिन्तन का परिचय मिलता है। लेखक ने इन निबंधों में भाषा-शैली-विचारों व तथ्यों का एक सुखद सन्तुलन रखा है। निष्कर्षतः 'चिन्तन-अनुचिन्तन' पाठकों को ज्ञानानुभूति की विशिष्ट दिशाओं का भ्रमण कराने वाली विशिष्ट चिन्तन प्रधान कृति है।

('साहित्यायन', बरेली, अप्रैल-जून, 2015 ई. के अंक से साभार)

सी-231, शाहदाना कालोनी मॉडल टाउन, बरेली।

***

रचना खण्ड

यद्यपि पूज्य पिताजी डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का अतुकांत काव्य-संग्रह 'विचार-बिन्दु 1995 ई०' तथा दो निबन्ध संग्रह 'परम्परा और आधुनिकता' (1997 ई०)और 'चिन्तन-अनुचिन्तन' (2015 ई०) प्रकाशित हो चुके हैं तथापि उनकी अनेक रचनाएँ अब भी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं और ग्रन्थों में बिखरी हुई हैं। इन बिखरी हुई रचनाओं में से कतिपय रचनाएँ इस खण्ड में प्रकाशित की जा रही हैं। पिता जी की अपने गुरुजनों के प्रति अपार श्रद्धा थी। 'चिंतन-अनुचिंतन' निबंध संग्रह उन्होंने अपने गुरुजनों को ही समर्पित किया है। इन गुरुजनों से संबद्ध तीन संस्मरण इस खण्ड में प्रकाशित किये जा रहे हैं। पुस्तकों की भूमिकाएँ और समीक्षाएँ भी नमूने के रूप में प्रस्तुत की गयी हैं।

अनुक्रम

1 . कविताएँ

प्रथम कविता : रचना-काल 1950 ई०

मैं नहीं बोलता, युग का हाहाकार बोलता है!

मैं नहीं बोलता, युग का हाहाकार बोलता है।
ये शब्द नहीं युग के शत्-शत् उद्गार बोलते हैं,
ये छन्द नहीं जीवन के उन्मत्त ज्वार उबलते हैं।
ये भाव नहीं जनयुग के भीषण घाव उघरते हैं,
स्वर नहीं हजारों इन्सानों के श्वांस उखड़ते हैं।।

मैं नहीं बोलता मानवता का प्यार बोलता है।
मैं नहीं बोलता युग का हाहाकार बोलता है।।

है इसमें तड़प कुचल जाने वाले इंसानों की,
है ज्वाला जलती इसमें घुटने वाले अरमानों की।
यह क्रांति बन गई उन पिसने वाले दीवानों की,
आवाज न मेरी यह आने वाले इन्सानों की।।

इन्सान बोलता नहीं, आज इतिहास बोलता है,
मैं नहीं बोलता, युग का हाहाकार बोलता है।।

कविता न विरह की यह युग के पाप खोलती है,
अत्याचारों की जमी हुई चट्टान तोड़ती है।
मेरे गीतों में दबी हुई आवाज बोलती है,
मेरे कदमों पर थमी हुई वह राह लौटती है।।

मैं बढ़ता कहाँ, जमाना मेरी राह छोड़ता है।
मैं नहीं बोलता, युग का हाहाकार बोलता है।

पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी ने कतिपय छंद लिखे थे। ये छंद उन्होंने अपने सुहृदजनों के लिए लिखे थे। इनमें से कुछ छंद यहाँ प्रस्तुत हैं।

श्री विजयानंद सुपुत्र पं. शोभाराम जी, शंभा बाजार, बिजनौर को पोद्दार कॉलेज, नवलगढ़ (राजस्थान) में नियुक्ति पर–

28.7.65

पुनः नवलगढ़ जीतकर हो डूबे आनंद।
नाम सार्थक कर रहे यों श्री विजयानंद।।
यों श्री विजयानंद काटते जग का चक्कर।
नित नवीन बाधा से लेते डटकर टक्कर।।
पर अब उचित यहीं बैठो निज धाम एक कर।
बहुत समय यों बिता दिया है भाग दौड़ कर।।

***

डॉ० श्यामबहादुर वर्मा, पूर्व रीडर, हिन्दी विभाग, पी.जी.डी.ए.वी. कॉलेज, नई दिल्ली को–

29.8.65

भैया क्यों यों चुप्पी साधी।
नाराजगी की भी तो होगी, बात कहीं कुछ आधी।।
यदि है ऐसा नहीं, कहो तो कौन हुआ अपराधी?
आशा है तोड़ोगे जल्दी अपनी मौन समाधि।

***

5.9.65

धारण ध्यान समाधि की चर्चा अनुपयुक्त।
बोलो कब हो रहे द्वैत भाव संयुक्त।।
द्वैत भाव संयुक्त जगत के मंगल कारण।
खान पान की चिंता का हो पूर्ण निवारण।।
इस प्रसंग का गूढ़ भेद कुछ मैंने पाया।
यद्यपि तुमने उसे अभी तक खूब छिपाया।।

***

श्री बी.के. जैन, पूर्व अध्यक्ष, बी.एड. विभाग, वर्धमान कालेज को–

9.3.66

अब तो फिरने के दिन आए।
देखो कोई बैठा है तव मग में नैन बिछाए।।
इस बासंती मादकता में निज कर्त्तव्य निभाए।
वह निश्चय ही इस जग जीवन में सुंदर फल पाए।।

सुख हो अथवा दुख हो सबमें जीवन तो कट जाए।
किन्तु वही मंजिल पाता है जो न कभी घबराए।।
आशाएँ हैं सफल तभी जब विजयश्री कर आए।
है मुझको विश्वास कि वह अब तुमको शीश नवाए।।

***

अपने प्रिय शिष्य श्री विजयवीर त्यागी को-

28.3.66

पाखंडी ले रहे निज महलों में मौज।
साहित्य स्रष्टा कर रहे निवास की खोज।।
निवास की खोज समय सब यों ही बीता।
हो जाता तब तक जीवन मधु घट रीता।।
निश्चय ही वह देश कदापि न उन्नत होता।
कलाकार का समय व्यर्थ जो यों है खोता।।

***

पन्द्रह अगस्त

पन्द्रह अगस्त आजादी का संदेश सुनाने आया है,
भूले-बिसरे वीरों की फिर याद दिलाने आया है।
आज देश के नव्य क्षितिज पर नई रोशनी छाई है,
सदियों से सोए भारत को जिसने आज जगाया है।
इसका स्वागत करो सभी मिल जिससे हो भारत उन्नत,
बड़े भाग्य से ऐसा स्वर्णिम अवसर हमने पाया है।

***

अ-कवि

मैं कवि नहीं हूँ / इसका
प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि-
मुझे औरों की तो
हजारों कविताएँ याद हैं
पर अपनी एक भी नहीं।

***

बस स्टैण्ड के रिक्शा वाले

बस स्टैण्ड के रिक्शा वाले
देख दूर से बस को आते/झपट दौड़ते
जैसे किसी फूल पर भौरे
या गुड़ की डेली पर चींटे/ और पूछते-
कहाँ जाओगे बाबू भैया
कहाँ चलेगी तुम रे मैया
इन्हें देखकर/कई बार सोचा है मैंने
मानव ने मानव को/कैसा विवश बनाया
पशु की कोटि उसे दे डाली/ और उसे यों विवश बनाया।

***

हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे

हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे।
सुन मंत्री प्रतिज्ञा मेरी यह व्रत टरत न टारे।।
भ्रष्टन काज लाज सब तज के लोकसभा में जाऊँ।
घोटालन पै परदा डारूँ सबरे तुम्हैं बचाऊँ।।
मैं कोई जल्लाद नॉय जो फांसी पै चढ़वाऊँ।
अपन हाथ से कबर खोद के स्वयं अमर हो जाऊँ।।
(दैनिक 'बिजनौर-टाइम्स' दिनांक 27 मार्च, 2013 ई० से साभार)

***

2. भावानुवाद

पूज्य पिता जी डॉ० रामस्वरूप आर्य ने कतिपय अंग्रेजी कविताओं के अनुवाद किये थे। ये भावानुवाद हिन्दी के भीष्मपितामह, प्रख्यात् हिन्दी-सेवी एवं साहित्यकार तथा 'सरस्वती' के यशस्वी संपादक पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी जी की प्रेरणा से किये गये थे और 'सरस्वती' के 1963-64 ई० के अंकों में प्रकाशित हुए थे। उनमें से चार अंग्रेजी कविताओं के भावानुवाद यहाँ प्रस्तुत हैं।

कोकिल

सुन्दर ही होंगे वे पर्वत
जिनसे तुम आती हो कोकिल
और घाटियाँ वे फल वाली
जहाँ विहँसते उजले निर्झर
सीखे तुमने वहीं कदाचित्
इतने अनुपम गीत मनोहर।
है कहाँ तरल तारक दल तरलित वे उपवन,
मैं जहाँ चाहता चिर विचरण,
उन कुसुमों के बीच कि जो स्वर्गिक वायु
में, खिलते हैं दिन रात वर्ष भर।
नहीं! नहीं!!
बीहड़ हैं वे वन प्रदेश औ' शुष्क स्रोत
इच्छाओं की प्रतिध्वनि ही है मधुर गान
जो चिरसंगिनि है स्वप्नों की
औ' मधुर वेदना अन्तस् की
दुखद कल्पना धूमिल जिसकी
गहन निराशाओं से पूरित
पूर्ण कला भी नहीं व्यक्त कर सकती है रे
दुखद् मूर्च्छना और दीर्घ निश्वास हमारे।
और रात्रि के ढलते-ढलते
मात्र अकेले ऊँचे स्वर से
मानव के गुंजित कानों में
हम करती हैं स्रवित निशा के टूटे सपने।
गोचर भूमि नाच उठती है

जब वासन्ती मोहकता में
और अंकुरित हो उठती हैं सुखद डालियाँ
तभी स्वप्न में खो जाते हैं प्राण हमारे।
उधर उषा के स्वागत में
मुखरित होती है अनगिन ध्वनियाँ।

(यह कविता रावर्ट ब्रिजोज दास रचित Nightingale का भावानुवाद है।)

***

सत्य सौन्दर्य

जो प्यासा है पाटल वर्ण कपोलों का,
या है मात्र प्रशंसक अधर प्रवालों का,
अथवा खोज रहा है जो नक्षत्रों-सी उज्ज्वल आँखें
निज अन्तस् की ज्वालाओं के शमन हेतु।
काल चक्र के साथ बदलते हैं ये ज्यों-ज्यों,
प्रेम-ज्वाल उसकी भी घट जाती है त्यों-त्यों।
किन्तु सुकोमल और अचल मन
होता इच्छुक मात्र सौम्य विचारों का
युगल-हृदय में तुल्य-प्रीति से
अमर-प्रेम की ज्योति जागती।
इनसे हीन घृणित हैं, सुन्दर-
लोचन, लोल कपोल, मृदु अधर।

(प्रस्तुत कविता अंग्रेजी कवि टी. केस्चू रचित 'The True Beauty' का भावानुवाद है।)

***

अवकाश

चिन्ताओं से परिपूरित यह क्या जीवन है?
निरख न पाएँ नैन, अरे क्या अवलोकन है?
मिली न पल भर हमें वही तरुवर की छाया।
धेनु सरीखे जीवों ने भी जिसको पाया।।
दिनकर के उजले प्रकाश में तनिक न गये निहारे।
फूलों सजे सुहाने निर्झर जैसे नभ में तारे।।
छू न सके ये नैन, नैन का आलोकित आकर्षण।
और असम्भव-सा है जैसे, लखना वह मृदु नर्तन।।
हँसी बिखरकर जो नैनों से, मुख मंडल को घेरे।
इतना भी अवकाश कहाँ मन उस आभा को हेरे।।
ऐसा दीन हीन जीवन भी क्या जीवन है?
निरख न पाएँ नैन, अरे क्या अवलोकन है?

(यह कविता डब्ल्यू.एच. डेबीज रचित अंग्रेजी कविता 'Leisure' का भावानुवाद है।

***

समाधि-गीत

तारों भरे नील अम्बर की सुखद छाँह में,
खोदो मेरी क़ब्र मुझे उसमें सोने दो।
आनंदित मैं रहा, अंत भी हर्ष पूर्ण हो,
स्वेच्छा से मैं शयन कर रहा यह होने दो।।
अंकित करना यही छंद मेरी समाधि पर,
सो जाऊँ मैं इसी धूलि में यही साध थी।
नाविक अपने घर पहुँचा है सिन्धु पार कर,
और शिकारी शैल शिखर से निज कुटिया पर।।

(यह कविता आर.एल. स्टीवेन्सन रचित अंग्रेजी कविता 'Requiem' का भावानुवाद है।)

***

3 (क) लघुकथाएँ

1. वास्तविकता

यों तो उस दिन आकाश साफ था किन्तु जैसा कि वर्षा ऋतु में प्राय: हो जाता है, अकस्मात् ही बादल घिर आए और जोर की वर्षा होने लगी।

वर्षा के पानी से बचने के लिए मैं पैर बढ़ाकर बस स्टैंड के शेड में जा पहुँचा। वर्षा का प्रवाह निरंतर बढ़ता जा रहा है। थोड़ी ही दूर पर एक आधुनिका एक वृक्ष का आश्रय लिए हुए थीं। ज्यों-ज्यों वर्षा बढ़ती गई, त्यों-त्यों उनके लिए पानी से बचना कठिन होने लगा पर वर्षा थी रुकने का नाम न लेती थी।

इसी बीच एक कोयला बीनने वाली स्त्री भी कोयले की गठरी सिर पर रखे हुए उसी वृक्ष के नीचे जा पहुँची। उसका शरीर और कपड़े कोयले की धूल से काले हो रहे थे। आधुनिका उसे देखकर नाक भौंह सिकोड़ने लगी। उसका वहाँ आना उन्हें बहुत खल रहा था किन्तु उस समय वे विवश थीं। किसी अन्य अवसर पर वे उसे अपने पास कभी न फटकने देतीं।

धीरे-धीरे जब वर्षा कम हुई तो उन दोनों स्त्रियों ने चैन की सांस ली। फैशनेबिल लेडी ने अपने बैग से रूमाल निकालकर मुख पर फेरा और उस कोयले वाली ने भी अपने बालों को निचोड़ते हुए मैले दुपट्टे से अपने चेहरे पर के पानी को पोंछा। फलस्वरूप आधुनिका के मुख मंडल के चेचक के दाग, जो पाउडर से ढके हुए थे, स्पष्ट दिखाई पड़ने लगे। इसके विपरीत कोयले वाली के चेहरे की स्वाभाविक सुन्दरता जैसे धुलकर निखर गई थी।

***

2. कर्तव्य-बोध

थके हुए मार्तण्ड ने अपने को संध्या के सुनहले आवरण में छिपा लिया और इठलाती हुई निशा ने भूमंडल पर पदार्पण किया। उसके आगमन के साथ ही उसके प्रिय चन्द्र के वैरी दिनकर का पतन हो चुका था। अपने प्रिय चन्द्र का स्वागत करने के निमित्त वह आतुर हो उठी। इधर चन्द्र को भी शांति कहाँ थी- अमावस्या के दूसरे दिन निशा की कही हुई बात-"मैं रात भर जलती रही, पर तुम...न आये।" उसे याद थी। वह भी आ पहुँचा-निशा का चन्द्र, उसका जीवन धन।

उनके इस मधुर मिलन के अवसर पर, दीप शिखा भी प्रदीप्त हो उठी- जिससे चन्द्र निशा को देख ले, उसकी ज्योति में उसे क्या मालूम था कि उसने प्रज्वलित होकर रात्रि की कालिमा को और भी घनीभूत कर दिया है।

चन्द्र हँस दिया दीप शिखा पर–वह बेचारी यह भी नहीं जानती थी कि चन्द्रमा की ज्योति, उस जैसी कितनी ही दीपशिखाओं की ज्योति से असंख्य गुनी अधिक है–फिर चन्द्र को निशा के प्रति अनुराग है। उसके रूप से चन्द्र को क्या प्रयोजन ? इधर दीपशिखा सोच रही थी–चन्द्र भी तो न समझ सका, निशा के प्रति उसके अपरिमित प्रेम को।

उधर निशा और चन्द्र परस्पर मधुर प्रेमालाप में निमग्न थे। मुग्ध दीपशिखा प्रदीप्त होकर उनकी क्रीड़ा देख रही थी...इतने में ही आ पहुँचा स्नेही शलभ–उसने एक क्षण प्रज्वलित दीपशिखा को देखा, उस दीपशिखा को जो चन्द्र और निशा के प्रेमालाप को देखने में तल्लीन थी। किंचित मात्र भी ध्यान नहीं दिया–दीपशिखा ने शलभ की चंचलता की ओर। कुछ ही क्षणों में वह विमोहित होकर दीपशिखा के समीप आ पहुँचा और आकर्षण में बँधकर उसके चारों ओर मँडराने लगा।

दीपशिखा स्वयं को भूली हुई–सी चन्द्र और निशा की प्रेम–क्रीड़ा देखने में मोदमग्न थी। शलभ की ओर उसका ध्यान ही नहीं था, जो अपना सर्वस्व अर्पण करने के लिए उसका द्वार खटखटा रहा था। दीपशिखा किंचित् भी तो विचलित नहीं हुई। अगले ही क्षण शलभ का व्यथित हृदय उसके प्रति घृणा से भर उठा। उसका मोह भंग हो चुका था। उसने निश्चय किया कि वह अब आकर्षण की कृत्रिम डोर से कदापि नहीं बँधेगा, लोभ और तृष्णा के बंधनों को सदा के लिए काट देगा और स्वयं को एकाग्रचित्त कर सत्पथ पर अग्रसर होकर कर्तव्य का निर्वाह करेगा।

***

3 (ख) लोककथा

पूज्य पिताजी डॉ० राम स्वरूप आर्य को अनेक लोकथाएँ याद थीं। जब कभी समय मिलता, तब वे इन लोककथाओं को हमें सुनाते थे। परिस्थितियों के दुष्चक्र और समय की गति को पहचान न पाने के कारण ये लोककथाएँ लिपिबद्ध नहीं हो सकीं। यहाँ स्मृति के आधार पर पिताजी से सुनी एक लोककथा प्रस्तुत है।

वरदान

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, लक्ष्मण और सीता जब अयोध्या से चौदह वर्ष के वनवास हेतु प्रस्थान कर रहे थे, तब उनके सारथि सुमंत्र उनको रथ पर अयोध्या के समीप गंगाजी तक पहुँचाने आये। उनका रथ जब सायंकाल भ्रमण करते हुए श्रृंगवेरपुर पहुँचा तो गंगा जी को देखकर सब रथ से उतर पड़े और उन्होंने गंगा जी

को प्रणाम किया।

श्रृंगवेरपुर के निवासी निषाद राज गुह ने सबका आदर-सत्कार किया, उन्हें भोजन हेतु फल-फूल और जल दिया तथा उनकी इच्छानुसार गाँव के बाहर कुशा और कोमल पत्तों का बिछौना बनाकर विश्राम हेतु प्रबंध किया। प्रातःकाल भगवान श्रीराम ने अपने सारथि सुमंत्र को समझा-बुझाकर अयोध्या को वापस भेज दिया।

सुमंत्र के अयोध्या लौटने पर, अयोध्या में सर्वत्र शोक व्याप्त हो गया। नगरवासियों के दुःख की सीमा नहीं थी। राजा दशरथ पुत्र वियोग से व्याकुल थे। महारानी कौशल्या के दुःखों का तो अंत ही नहीं था। कहाँ प्रिय पुत्र का राजमिलक होने वाला था, और कहाँ अब वह उसी पुत्र राम को चौदह वर्ष पश्चात देख सकेंगी। एक दिन माता कौशल्या अश्रुपात करती हुई उसी श्रृंगवेरपुर के रास्ते पर निकल पड़ीं, जिस मार्ग से श्रीराम ने वन को प्रस्थान किया था। रास्ते में उन्होंने कई व्यक्तियों से पूछा कि क्या उन्होंने वन-गमन के समय उनके पुत्र राम को देखा था। कुछ व्यक्तियों के मना करने पर उन्हें एक धोबी मिला, जिसने माता कौशल्या को बताया कि उसने श्रीराम को देखा था और उनके उन मलिन वस्त्रों को धोकर स्वच्छ किया था, जो मार्ग में मलिन हो चुके थे। माता कौशल्या यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुईं। उन्होंने उस धोबी से पूछा कि यह तो बताओ कि तुमने मेरे राम के वस्त्रों को सुखाया कहाँ था ? धोबी ने कहा कि माता ये पास में जो बेर के पेड़ खड़े हैं, उन्हीं बेर के पेड़ों पर मैंने श्रीराम जी के वस्त्रों को सुखाया था। तब आनंदविभोर हुई माता कौशल्या ने धोबी को वरदान दिया कि अब तुम्हें यह सदा स्मरण रहेगा कि तुम किसके घर से कौन-कौन से कितने वस्त्र धोने के लिए लाये थे। यह बेर का वृक्ष अब चाहे कितनी बार कटोगा, तब भी यह हरा-भरा रहेगा, कभी सूखेगा नहीं।

संस्मरण

पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी ने कई संस्मरण लिखे हैं। उनका प्रथम संस्मरण 'वर्धमान' पत्रिका के मार्च, 1966ई. के अंक में प्रकाशित हुआ था, जो स्व. श्रीनिवास गुप्त पर केंद्रित है। सेंट जोंस कालेज, आगरा के पूर्व छात्र प्रो. गुप्त वर्धमान कॉलेज, बिजनौर में 1961-63 ई. के मध्य वाणिज्य विभाग में प्राध्यापक थे और कार-दुर्घटना में उनका स्वर्गवास हो गया था। पिताजी की अपने गुरुजनों के प्रति अपार श्रद्धा थी। उन्होंने अपना निबंध संग्रह 'चिंतन-अनुचिंतन' उन्हें ही समर्पित किया है। उनके अपने गुरुजनों स्व. श्री रामलाल गंगवार, स्व. डा. गुणानंद जुयाल, स्व. पं. भोलानाथ शर्मा, स्व. डा. कुंदनलाल जैन, स्व. डा. जयनारायण सिंघल के अतिरिक्त अपने प्रिय शिष्य स्व. श्री विजयवीर त्यागी विषयक तथा मृत्यु से कुछ समय पूर्व 'साहित्य अमृत' पत्रिका में प्रकाशित 'वृषभ' शीर्षक संस्मरण अत्यन्त भावपूर्ण तथा प्रभावोत्पादक हैं। इनमें से तीन संस्मरण यहाँ प्रस्तुत हैं।

1. स्व. मास्साब रामलाल गंगवार

जब मैं अपने छात्र-जीवन के पृष्ठों को पलटता हूँ तब समय की पगडंडियों को पार करता हुआ मेरा ध्यान आज से लगभग 35 वर्ष पूर्व अपने उस छोटे से स्कूल पर जा टिकता है, जहां मैं कक्षा 5 का विद्यार्थी था। यह संभवत: सन् 1942 रहा होगा। तब मेरी अवस्था यही लगभग 9 वर्ष की थी। उन दिनों प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई कक्षा 4 तक समाप्त हो जाती थी और कक्षा 5 से मिडिल स्कूल की पढ़ाई आरंभ होती थी। प्राइमरी स्कलू तो हमारे घर के निकट ही था जहाँ के घण्टे की आवाज हमारे घर तक आ जाती थी। मिडिल स्कूल लगभग 2 फर्लांग की दूरी पर था। बचपन में यह दूरी भी हमें बहुत लम्बी प्रतीत होती थी और लगता था कि जैसे हम घर से काफी दूर पढ़ने जा रहे हैं।

यह वह समय था जब स्कूलों में छात्रों की पिटाई जोरों से होती थी। प्राइमरी स्कूल में हम हेडमास्टर साहब के कमरे में रखा लाल बेंत देख चुके थे, जिसका प्रयोग यदा-कदा शैतान लड़कों पर होता था। कक्षा में काम न करने अथवा सवाल आदि का गलत उत्तर आने पर तो गिनगिन कर बेंत पड़ते ही थे। अत: मिडिल स्कूल में पहुंचने पर सबसे पहले हम लोगों की निगाह मास्टरों के हाथ के बेंत पर पड़नी स्वाभाविक ही थी। उन बेंतधारी अध्यापकों के बीच में हमें एक सौम्य प्रकृति के अध्यापक भी दिखाई पड़े, जिनके हाथ में बेंत नहीं था और जो बेंत का काम आँख के इशारे या मधुर झिड़की से लेते थे। ये थे हमारे हिन्दी के

गुरुत्रय

हिन्दी के प्रति प्रेम के बीज बोने वाले
गुरुवर मास्साब रामलाल गंगवार

सर्वार्थ-त्यागी ज्ञानमूर्ति
गुरुवर डॉ. गुणानंद जुयाल

शोध निर्देशक अप्रतिम विद्वान
गुरुवर डॉ. कुन्दल लाल जैन

अध्यापक, जिनका नाम था श्री रामलाल गंगवार।

श्री रामलाल गंगवार, जिन्हें हम लोग मास्साब कहते थे, स्कूल के वातावरण से एकदम भिन्न अपना अलग ही व्यक्तित्व रखते थे। हम उनके घंटे की उत्साहपूर्वक प्रतीक्षा करते थे। उनकी वाणी में अनोखा माधुर्य तथा पाठ के प्रस्तुतिकरण का ढंग अद्वितीय था। कविता पढ़ाते समय तो वे पूर्ण तन्मय हो जाते थे। मेरे स्मृति पटल पर उनकी वह मुख मुद्रा आज भी अंकित है जब उन्होंने 'ताना जी की वीरता' कविता पढ़ाई थी। हमारी पाठ्य पुस्तक में 'रामचरितमानस' का 'लक्ष्मण शक्ति' प्रसंग था। उसे पढ़ाते हुए वे कितने भाव विभोर हो उठे थे। उनके गले का दर्द तथा नैनों की आर्द्रता आज भी मेरी आँखों के सामने जैसे सजीव है। व्याकरण जैसे नीरस विषय को भी अपनी अध्यापन शैली से वे सरस बना देते थे। जब मैं आत्म विश्लेषण करता हूँ तो मुझे लगता है कि हिन्दी के प्रति प्रेम के बीज मुझे इन्हीं अध्यापक महोदय से प्राप्त हुए थे।

मास्साब अंग्रेजी के भी जानकार थे। सम्भवत: उस समय 'स्कूल' में वे ही ऐसे अध्यापक थे, जिन्हें 'अंग्रेजी दाँ' कहा जा सकता था। उस वर्ष उन्होंने हाईस्कूल की परीक्षा दी थी और यह स्कूल के लिए गौरव की बात थी। जहाँ तक मेरा अनुमान है उस समय पूरे स्कूल में सर्वोच्च डिग्री धारी अध्यापक भी नार्मल पास ही थे।

मास्साब का कद अधिक न था। वे गोरे चिट्टे तो न थे पर उन्हें श्यामवर्ण भी नहीं कह सकते। कुल मिलाकर उनकी आकृति आकर्षक एवं प्रभावपूर्ण थी। चश्मों के अंदर से झांकती हुई उनकी आंखों में एक विशेष प्रकार की चमक थी। वे आगे से चुन्नटदार पंडिताऊ ढंग की धोती पहनते थे। उनकी धोती की फेंट बड़ी पकड़ वाली थी। अपनी जेब घड़ी वे धोती की फेंट में ही रखते थे। हम बच्चों के लिए यह बात कुछ आश्चर्यजनक सी लगती थी। ......

परीक्षा निकट आ रही थी। मास्साब लगभग एक मास तक स्कूल नहीं आए। मालूम हुआ कि वे बीमार हैं। रुग्णावस्था में ही अचानक एक दिन वे स्कूल आए। शरीर अस्थि पंजर मात्र रह गया था। अपने सहयोगी अध्यापकों तथा बच्चों से वे प्रेमपूर्वक मिले। यही उनका अंतिम दर्शन था। इसके बाद वे कभी स्कूल न आ सके। एक दिन अचानक स्कूल की छुट्टी कर दी गई। हेडमास्टर साहब ने बताया कि श्री रामलाल गंगवार साहब का स्वर्गवास हो गया है। अन्य दिनों छुट्टी होने पर बच्चे हँसते-खेलते अपने घरों को लौटते थे, लेकिन उस दिन कुछ बच्चे उदास थे तो कुछ की आँखों में आँसू थे।

आज से चार-पाँच वर्ष पूर्व (1972-73 ई०) एक इन्टर कॉलिज के पैनल इन्स्पेक्शन में मुझे शाहजहाँपुर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। कालेज के प्रधानाचार्य के आग्रह पर मैं कक्षा 6 में पहुँचा। वहाँ पर एक वृद्ध अध्यापक भावविभोर होकर कवि रसखान का निम्नलिखित सवैया पढ़ा रहे थे-

या लकुटी अरु कामरिया पै,/ राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।....

मैं चुपचाप कक्षा में जाकर बैठ गया। मुझे लगा कि जैसे मैं वही कक्षा 6 का विद्यार्थी हूँ और मास्साब स्व. श्री रामलाल गंगवार हमें पढ़ा रहे हैं।

***

2. ज्ञानमूर्ति डॉ० गुणानन्द जुयाल

1947 ई० में देश में स्वतंत्रता के नव विहान का उदय हुआ था। सभी ओर अपार उत्साह था। स्कूल कालेजों में भी नवीन चेतना दिखाई पड़ती थी। उस समय कुछ ऐसे अध्यापक भी थे, जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लिया था। डॉ० गुणानन्द जुयाल 1930 ई० में ही महात्मा गांधी द्वारा आहूत असहयोग आंदोलन में कूद पड़े थे, जिसके कारण उन्हें 6 मास का कठोर कारावास भोगना पड़ा था। देहरादून षडयंत्र केस में भी उन्हें अभियुक्त बनाया गया था किन्तु अपराध सिद्ध न होने के कारण उन्हें मुक्त कर दिया गया था। राष्ट्रीय भावना, उनके रहन-सहन, आचार-व्यवहार में पूर्णत: व्याप्त थी।

पं. गुणानन्द जुयाल का जन्म 8 मई 1905 ई० को पौड़ी गढ़वाल के जिवई ग्राम में हुआ था। हाईस्कूल की परीक्षा उन्होंने 1924 ई० में राजकीय कालिज, इलाहाबाद से उत्तीर्ण की थी तथा 1927 ई० में मेरठ कालिस से बी.एस-सी. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वे एम.एस-सी. करना चाहते थे किन्तु अर्थाभाव के कारण उन्हें सनातन धर्म कॉलेज, कानपुर में एम.ए. हिन्दी में प्रवेश लेना पड़ा। 1933 ई० में उन्होंने एम.ए. हिन्दी की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की तथा आगरा विश्वविद्यालय में भी उनका स्थान प्रथम था। 1934 ई० में उनकी नियुक्ति बरेली कालेज में हिन्दी प्रवक्ता पद पर हुई। यहाँ रहते हुए उन्होंने एम.ए. संस्कृत की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। 1954 ई० में उन्होंने आगरा विश्वविद्यालय से 'मध्य पहाड़ी भाषा (गढ़वाली, कुमाऊंनी) का अनुशीलन और उसका हिन्दी से संबंध' विषय पर पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 1965 ई० में वे बरेली कॉलेज, बरेली से हिन्दी विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त हुए। पंडित जी नियमित रूप से कालेज में आते थे। अवकाश उनके लिए विरल था। उनके अवकाश पर रहने का अर्थ था कि वे बाहर गए हुए हैं।

सर्वार्थ-त्याग का गुण पंडित जी में छात्र जीवन से ही था। एक बार उनके गुरु पं. अयोध्यानाथ शर्मा, भूतपूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष, सनातन धर्म कॉलेज, कानपुर ने बताया कि श्री जुयाल साहब जब कानपुर में एम.ए. के छात्र थे, तब पं. अयोध्यानाथ जी ने उन्हें 20 रुपये मासिक की छात्रवृत्ति दिलाई थी। उन्हीं दिनों जुयाल साहब को एक ट्यूशन मिल गई, तब उन्होंने पं. अयोध्यानाथ जी से कहा कि अब वे यह छात्रवृत्ति नहीं लेंगे। अब यह किसी अन्य साधनहीन छात्र को दी जानी चाहिए। अपने छात्रों के प्रति पंडित जी का व्यवहार ममत्वपूर्ण था। एक छात्र कक्षा में निरंतर विलंब से आता था। पंडित जी ने जब इसका कारण पूछा तो उसने बताया कि उसकी साइकिल टूट गई है। उसे सुदूर गांव से आना पड़ता है। साइकिल ठीक कराने के लिए पैसे नहीं हैं। पंडित जी ने साइकिल ठीक कराने के लिए उसे अपने पास से पैसे दे दिए। इसी प्रकार एक छात्र शुल्क जमा न कर पाने के कारण विश्वविद्यालय परीक्षा में नहीं बैठ पा रहा था। पंडित जी ने उसका शुल्क स्वयं चुकाया, जिससे वह परीक्षा में सम्मिलित हो सका।

पं. गुणानंद जुयाल निस्पृह व्यक्ति थे। उनके शिष्य डा. शिशुपाल सिंह (प्राध्यापक, राजकीय इंटर कॉलेज, बरेली) ने अपने संस्मरण सुनाते हुए मुझे बताया था कि उनकी पी-एच.डी. की मौखिकी परीक्षा हेतु पंडित जी आगरा गए थे। ट्रेन में उनकी छड़ी किसी ने उठा ली। बिना छड़ी के सहारे पंडित जी को चलने में कठिनाई होती थी। अत: श्री शिशुपाल सिंह ने आगरा से ही एक छड़ी खरीद कर उन्हें दी। पर पंडित जी ने उस छड़ी को तब तक स्वीकार नहीं किया, जब तक श्री सिंह ने उसका मूल्य नहीं ग्रहण कर लिया। पंडित जी विद्याव्यसनी थे। भाषा विज्ञान में उनकी विशेष रुचि थी। वे शब्दों के नये अर्थों के अनुसंधान में रत रहते थे। सेनापति तथा केशव काव्य के उन्होंने ऐसे अनेक अर्थ बताए थे, जो पुस्तकों में नहीं थे तथा टीकाकारों का ध्यान आज तक तक उनकी ओर नहीं गया है। पंडित जी द्वारा सम्पादित 'विद्यापति का अमर काव्य' पुस्तक अनेक वर्षों तक आगरा विश्वविद्यालय के एम.ए. हिन्दी के पाठ्यक्रम में निर्धारित रही थी। उनके द्वारा लिखित पुस्तक 'हिन्दी भाषा : उद्‌भव और विकास' से विश्वविद्यालय स्तरीय अनेक प्राध्यापक तथा छात्र लाभान्वित होते रहे।

पंडित जी सेवानिवृत्त हो चुके थे। एक बार जब मैं उनके निवास स्थान पर पहुंचा तो वे एक पाण्डुलिपि का संशोधन कर रहे थे। वह उनके किसी शोध-छात्र का शोध-प्रबंध था। पंडित जी ने उसमें इतने संशोधन किए थे कि एक प्रकार से उसका पुनर्लेखन ही हो गया था। पंडित जी एक अच्छे सामाजिक कार्यकर्ता तथा

संगठनकर्ता भी थे। वे बरेली के स्काउट कमिश्नर तथा भारत सेवक समाज के अध्यक्ष भी रह चुके थे।

डा. गुणानंद जुयाल ख्याति की कामना से दूर एक मौन साधक थे। कोटद्वार से प्रकाशित 'सत्यपथ' साप्ताहिक के सम्पादक श्री ललिता प्रसाद नैथानी ने मुझसे आग्रह किया था कि मैं उनके पत्र के लिए डॉ० जुयाल साहब पर एक लेख लिखूँ। इसका उल्लेख करते हुए मैंने डाक्टर साहब से अनुमति चाही तथा उनकी जीवन रेखा के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए उन्हें पत्र लिखा। उसके उत्तर में उन्होंने अपने 17.9.75 के पत्र में लिखा था। "रहा मेरा परिचय, क्या करोगे ? क्या जायसी पर शोध प्रबंध लिखने वाले को वह चौपाई याद नहीं जिसमें कहा गया है-यह धरती न जाने कितनों को निगल गई किन्तु अभी भी इसका पेट नहीं भरा।" जायसी के प्रसिद्ध महाकाव्य 'पद्मावत' की यह मूल अर्द्धाली इस प्रकार है-

यह धरती अस केतन लीला।/पेट गाढ़ अस बहुरि न ढीला।।

पुनः आग्रह करने पर पंडित जी ने अपने 21 नवंबर, 75 ई. के पत्र में अपना अन्तिम निर्णय देते हुए मुझे लिखा था। "मेरे जीवन संबंधी कुछ बातें यदि आप 'सत्यपथ' में प्रकाशित करें तो इससे क्या लाभ होगा ? केवल 'सत्यपथ' के कुछ स्तम्भ बेकार जायेंगे जिनमें अन्य आवश्यक बातें लिखी जा सकती हैं। जब गांधी जी जैसे महान व्यक्ति को संसार भूल गया तब भला मेरे जीवन से क्या प्रेरणा समाज ले सकता है। जीवन में मुझे जो संघर्ष करने पड़े, देश के लिए मेरे हृदय में जो अनुराग रहा और है, वह प्रकट करने से हल्का पड़ जायेगा।" 27 फरवरी 1985 ई० को अपने हृदय में इसी स्वदेशानुराग को संजोये हुए पंडित जी ने अपनी इहलीला समाप्त की।

***

3. कहाँ गए वो लोग

पूज्य गुरुवर डॉ० कुन्दन लाल जैन को सर्वप्रथम मैने अगस्त 1948 ई. में देखा था। उस वर्ष मैंने बरेली कॉलेज में इंटर प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया था। डॉ० जैन साहब की नियुक्ति भी उसी वर्ष बरेली कालेज में हिन्दी प्रवक्ता पद पर हुई थी। उन दिनों बरेली कालेज में इंटरमीडिएट से एम.ए. कक्षाओं तक अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था थी। यह संयोग की बात थी कि श्री जैन साहब ने मौहल्ला साहूकारा में किराए पर मकान लिया था और मेरा निवास-स्थान वहां से मात्र एक फर्लांग की दूरी पर था। मौहल्ला साहूकारा में हम चार-पांच छात्र सहपाठी थे

तथा सब मिलकर साहूकारे में किसी एक स्थान पर अध्ययन करते थे, मैं प्रायः डॉ. जैन साहब के यहां जाता था और उनकी पुस्तकें उलट-पुलट कर देखता रहता था। इस प्रकार सहज ही मुझे उनके संग्रह की अनेक पुस्तकें देखने का सुअवसर प्राप्त हो गया था। इन पुस्तकों में साहित्यालोचन (डा. श्यामसुन्दर दास) तथा हिन्दी साहित्य का इतिहास (आचार्य रामचन्द शुक्ल) ने मेरा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया था।

डॉ. जैन साहब इंटरमीडिएट में हमें काव्य का प्रश्न-पत्र पढ़ाते थे और यह क्रम बी.ए. तथा एम.ए. तक अनवरत चलता रहा। यहां यह उल्लेखनीय है कि मैंने तथा मेरे सहपाठी श्री विष्णुशरण अग्रवाल ने उन्हीं की प्रेरणा से एम.ए. हिन्दी में प्रवेश लिया था। बाद में उन्हीं के निर्देशन में अपना शोध कार्य किया तथा आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

डॉ० जैन साहब की अध्यापन शैली अत्यंत रोचक तथा प्रभावपूर्ण थी। उनके स्वराघात में बुंदेलखंडी का लहजा मिला रहता था, जिसमें ब्रज-भाषा का पुट और भी माधुर्य भर देता था। घर में अपने परिवार के सदस्यों के बीच वे प्रायः अपनी आंचलिक भाषा बुंदेलखंडी में ही वार्तालाप करते थे।

अपने छात्रों के प्रति डा. जैन साहब के हृदय में अतिशय ममत्व का भाव था। एक बार 'अनुशीलन' की गोष्ठी में मुझे मुख्य-वक्ता के रूप में आमंत्रित किया गया था। यह गोष्ठी बरेली की रामपुर बाग कालोनी में आयोजित की गई थी। आयोजकों ने उसमें डॉ० जैन साहब को भी आमंत्रित किया था। गोष्ठी में पहुंचने पर जब डॉ० जैन साहब को श्रोताओं की अग्रिम पंक्ति में बैठे हुए देखा तो मुझे बड़ा संकोच हुआ। मेरे बार-बार आग्रह करने पर वे वक्ता के आसन के निकट विराजे और उन्होंने मुझे अपने आशीर्वाद से अनुगृहीत किया।

इसी प्रकार एक बार आकाशवाणी नजीबाबाद से प्रसारित मेरी एक वार्ता उन्होंने अकस्मात सुनी और अपने पत्र में उस पर अपनी प्रशंसात्मक टिप्पणी लिख भेजी। अपने शिष्य के प्रति गुरुजनों में ऐसी आत्मीयता अब दुर्लभ होती जा रही है। डॉ० जैन साहब हिंदी तथा संस्कृत के सम्मानित विद्वान तो थे ही, जैन धर्म एवं दर्शन में भी उनकी अप्रतिहत गति थी। जैन धर्म के सभा-सम्मेलनों में उनके प्रवचन मंत्र-मुग्ध कर देने वाले होते थे। इसी क्रम में भगवान महावीर के पच्चीस सौवें निर्वाणोत्सव के अवसर पर डॉ. जैन साहब बिजनौर भी पधारे थे तथा उन्हें जैन समाज बिजनौर की ओर से सम्मानित किया गया था। वे जब भी बिजनौर आते थे, मेरे आवास पर ही ठहरने की कृपा करते थे।

बरेली में महावीर जैन मंदिर उनकी श्रद्धा, लगन तथा परिश्रम का जीवंत स्मारक है। इसके लिए भूमि-अधिग्रहण से लेकर निर्माण हेतु धन-संग्रह तक उन्होंने अथक प्रयास किये थे।

गुरुजनों के प्रति डॉ० जैन साहब में अपार श्रद्धा थी। उन्होंने अपना शोध-कार्य प्रो. श्रीधर पंत (पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग, बरेली कालेज, बरेली) के निर्देशन में सम्पन्न किया था। उनका यह शोध-प्रबंध, 'हिन्दी के रीतिकालीन अलंकार ग्रंथों पर संस्कृत का प्रभाव' श्रद्धेय श्री पंत जी के निधन के उपरांत प्रकाशित हुआ था किन्तु उनका समर्पण उन्होंने पूज्य पं. श्रीधर पंत की पावन-स्मृति में किया था। यह डॉ० जैन साहब की गुरु-भक्ति का ज्वलंत प्रमाण है।

अपने अन्य गुरुजनों में डॉ० जैन साहब हिंदी के अप्रतिम विद्वान बाबू गुलाबराय जी का श्रद्धापूर्वक स्मरण करते थे। बाबू जी उनके गुरु ही नहीं बल्कि उस छात्रावास के वार्डेन भी थे, जिसमें रहते हुए डॉ० जैन साहब ने सेंट जोन्स कालेज, आगरा से एम.ए. हिंदी की परीक्षा उत्तीर्ण की थी।

डॉ० जैन साहब का जन्म 15 जून 1915 ई० को महरौनी (जिला ललितपुर, उत्तर प्रदेश) में हुआ था। उनकी प्रारंभिक शिक्षा महरौनी में हुई। हाईस्कूल, इंटरमीडिएट इन्दौर से किया तथा एम.ए. हिन्दी की परीक्षा प्रथम श्रेणी में आगरा विश्वविद्यालय, आगरा से उत्तीर्ण की। कुछ समय तक मथुरा तथा अजमेर में अध्यापन करने के अनंतर वे 1948 ई० में बरेली कालेज, बरेली में हिन्दी प्रवक्ता के रूप में आ गए, जहां से विभागाध्यक्ष के रूप में 30 जून 1977 ई० को सेवानिवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के उपरांत भी वे अध्ययन-मनन एवं समाजसेवा में रत रहे। उनके निर्देशन में लगभग 25 शोधकर्ताओं ने पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। 15 सितम्बर 1992 ई० को उनके निधन से हिन्दी जगत का एक जाज्वल्यमान नक्षत्र अस्त हो गया।

महाविद्यालय स्तरीय शिक्षा के मेरे गुरुजनों में अन्य सभी परलोकवासी हो चुके हैं। डॉ० जैन साहब उस श्रृखंला की अंतिम कड़ी थे। उनके निधन से मुझे एक बड़ी रिक्तता का अनुभव होता रहता है। लगता है, वह त्रिवेणी ही सूख गई। आशीर्वाद के वे शब्द कहाँ लुप्त हो गए-

रास्तों कहाँ गए वो लोग जो आते-जाते।
मेरे आदाब पे कहते थे कि 'जीते रहिए।'

***

सामयिक प्रसंग

'वर्धमान' पत्रिका के बीस वर्षों के संपादन काल में पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी द्वारा लिखित अनेक सामयिक प्रसंगों में से दो प्रसंग यहाँ प्रस्तुत हैं।

1. महाप्राण निराला का महाप्रयाण

पसे मर्ग न समझ में आएंगे हम कौन हमदम थे।
समर ओ गुल खिजाँ में गर्मियों में आबेजमजम थे।।

निराला जी को उपरोक्त पंक्तियाँ अत्यन्त प्रिय थीं, जो उनके जीवन पर पूर्णतः चरितार्थ होती हैं। पं. सूर्यकांत त्रिपाठी का उपनाम 'निराला', 'मतवाला' पत्रिका (1923ई० में श्री महादेव प्रसाद सेठ द्वारा कलकत्ता से प्रकाशित) के अनुप्रास पर आया था। वे माँ हिन्दी के एक ऐसे सपूत थे जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन ही उनके चरणों में अर्पित कर दिया पर उनकी इस आहुति का मूल्यांकन करने वाले लोग विरल ही हैं।

उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, निबन्ध एवं आलोचना आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं को अपनी अलौकिक प्रतिभा से आलोकित कर दिया। वे हिन्दी, बंगला और संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे। अंग्रेजी भाषा और साहित्य में भी उनकी अप्रतिहत गति थी। उनका व्यंग्य एवं हास्य अनूठा था। आधुनिक हिन्दी कविता को उन्होंने भाव, भाषा, छन्द एवं शैली सभी दृष्टियों से सर्वाधिक प्रभावित किया।

निराला जी हिन्दी के एक स्वाभिमानी कवि थे। उनके जीवन का सबसे बड़ा 'दुर्भाग्य' संभवतः यही था कि उन्होंने 'आत्मसम्मान' को बेचना नहीं सीखा था। उनके आत्मसम्मान, उदारता एवं दानशीलता की कहानियाँ युगों-युगों तक चलती रहेंगी।

आज वे हमारे बीच नहीं हैं। अपने इस निराले कवि को खोकर हिन्दी जगत् एक भारी अभाव का अनुभव कर रहा है। उनके दुखद निधन पर वर्धमान परिवार साश्रुनयन अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

('वर्धमान' पत्रिका के 1962ई० के अंक से साभार)

***

2. अट्टहास अनन्त में विलीन हो गया

जिन्होंने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का मुक्त अट्टहास एक बार भी सुना है वे उसे कभी विस्मृत नहीं कर सकते। भाषण अथवा वार्तालाप में मन्द-मन्द हास्य उनके चेहरे पर उभरता और अपने चरम बिन्दु पर अट्टहास में परिणत हो जाता। हिन्दी साहित्य का यह अट्टहास 19 मई 1979ई० को अनन्त में विलीन हो गया।

आचार्य द्विवेदी जी ने हिन्दी में नाथ-सिद्ध-साहित्य की शोध के नए द्वार खोले, सूर साहित्य को अध्ययन की नवीन दिशा दी तथा कबीर को नई अर्थवत्ता प्रदान की। हिन्दी साहित्य के इतिहास में आदिकाल पर उन्होंने विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया। इस दिशा में 'नाथ सम्प्रदाय', 'नाथ-सिद्धों की बानियाँ', 'सूर साहित्य', 'हिन्दी साहित्य की भूमिका', 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' उनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी हिन्दी में ललित निबन्धों के जनक हैं। उनके 'अशोक के फूल', 'कल्पलता', 'आलोक पर्व' निबन्ध संग्रह हिन्दी निबन्ध साहित्य के अनमोल रत्न हैं। 'बाण भट्ट की आत्मकथा', 'चारुचन्द्र लेख', 'पुनर्नवा' तथा 'अनामदास का पोथा' द्विवेदी जी के प्रसिद्ध उपन्यास हैं जिनमें प्राचीन भारतीय संस्कृति का चित्रण किया गया है। इनमें जो शैली अपनाई गई है, वह सर्वथा नवीन है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने अतीत और वर्तमान का सुन्दर समन्वय किया है। उन्होंने लिखा है-''मैंने अतीत में उन्हीं चीजों की खोज की है जिनका वर्तमान से घनिष्ट संबंध है...मैं पीछे देखता हूँ क्योंकि उसी के सहारे आगे देखना चाहता हूँ।''

आज आचार्य द्विवेदी जी हमारे बीच नहीं है किन्तु अपनी कृतियों के द्वारा वे चिरकाल तक स्मरण किये जाते रहेंगे। उनकी पावन स्मृति में शत्-शत् प्रणाम।

('वर्धमान' पत्रिका के 1979ई० के अंक से साभार)

6. निबंध

इस खंड में पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी के कतिपय अप्रकाशित तथा विशिष्ट प्रकाशित निबंध संकलित हैं।

1. संस्कृत-साहित्य का विश्वव्यापी प्रभाव

संस्कृत-साहित्य की गणना विश्व के प्राचीनतम साहित्य में की जाती है। वेद विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ माने गए हैं। वेदों में ज्ञान का अगाध भंडार है, जिसका विकास आगे चलकर उपनिषदों, आरण्यक तथा ब्राह्मण ग्रंथों में हुआ। भारतीय दर्शन सांख्य, योग, वेदान्त, न्याय, वैशेषिक तथा मीमांसा में ब्रह्म, जीव, जगत्, आत्मा आदि का सूक्ष्म विवेचन हुआ है। इनका प्रभाव सम्पूर्ण विश्व में देखा जाता है। भारतीय वेदान्त ने संसार के विभिन्न धर्मों तथा विचारकों को प्रभावित किया। वेदान्त का सूत्र वाक्य 'सर्वं खल्लिवदं ब्रह्म' प्रकारान्तर से सम्पूर्ण विश्व में प्रचलित है। सूफी साहित्य में 'अनल हक' के रूप में वेदान्त के 'अहं ब्रह्मास्मि' की ही स्थापना की गई है। शाहजहाँ का ज्येष्ठ पुत्र दाराशिकोह संस्कृत का प्रेमी तथा विद्वान था। उसने उपनिषदों का फारसी भाषा में अनुवाद किया था, जिसका नाम 'सिर्रे अकबर' है।

संस्कृत के अप्रतिम ग्रंथ वेदों का विशद अध्ययन जर्मन विद्वान मैक्समूलर ने प्रस्तुत किया। इसके माध्यम से यूरोप के अन्य विद्वानों का ध्यान वेदों की ओर आकृष्ट हुआ। यूरोपीय विद्वानों में कोलब्रुक, कीथ, ब्लूम फील्ड, मैकडानल प्रभृति ने वेदों क गहन अध्ययन किया। जर्मन विद्वान विंटरनित्स तथा याकोबी ने वेदों के ज्ञान की महत्ता स्वीकार करते हुए इसकी प्राचीनता सिद्ध की। इंग्लैण्ड के मैकडानल नामक विद्वान ने वेदों का गहन अध्यन करके इनके चुने हुए सूक्तों का संग्रह 'वैदिक रीडर' के रूप में किया।

संस्कृत के 'वाल्मीकीय रामायण' तथा 'महाभारत' ग्रंथों की भी विश्व को बड़ी देन है। महर्षि वालमीकि संस्कृत के आदि-कवि माने जाते हैं और उनके द्वारा रचित रामायण को 'आदि-काव्य' की मान्यता प्राप्त है। 'वाल्मीकीय रामायण' मात्र एक काव्य ही नहीं है, इसमें भारतीय संस्कृति का भी सुंदर निदर्शन हुआ है। भारतीय संस्कृति का जैसा समुज्ज्वल, सुन्दर तथा स्वाभाविक चित्रण इस महाकाव्य में हुआ है, वैसा किसी अन्य देश के महाकाव्य में वहाँ की संस्कृति का चित्र शायद ही अंकित हुआ हो। मनुष्य के सर्वोच्च आदर्श की स्थापना के लिए महर्षि वाल्मीकि ने इसकी रचना की है। रामायण की कथा से भारत के जन-साधारण, आवाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष शिक्षा ही नहीं पाते, अलौकिक आनंद भी प्राप्त करते हैं।

वाल्मीकीय रामायण', काव्य के साथ-साथ धर्मशास्त्र भी है। इसके माध्यम से विश्व के अनेक देशों में राम-कथा पहुँची और विभिन्न रामायणों की रचना हुई।

सन् 251 ई० में काङ्.सङ्. ही ने चीनी भाषा में रामायण का अनुवाद किया था। नवीं शताब्दी के अंत में ईरान में रामायण का सार तैयार कराया गया था। चौदहवीं शताब्दी के आस-पास मलेशिया में 'हिकायत स्रिरी रामा' नाम से रामायण की रचना हुई थी। इंडोनेशिया की रामायण का नाम है-'काकबिन'। थाई रामायण 'राय कियेन' वाल्मीकीय रामायण पर आधारित है। कम्बोडिया की रामायण 'रामकेर' राम कियेन से बहुत कुछ मेल खाती है। पन्द्रहवीं शताब्दी में शाङ् शुङ् पा ने तिब्बती में छन्दोबद्ध रामायण की रचना की थी। विदेशों में रचित अधिकांश रामायणों का मूल स्रोत 'वाल्मीकीय रामायण' है।

'महाभारत' संस्कृत-साहित्य का दूसरा अप्रतिम ग्रंथ है, जिसमें भारत के धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा दार्शनिक विचारों का निरूपण हुआ है। इसमें मुख्य कथा कौरव-पांडवों के युद्ध की है किन्तु बीच-बीच में सैकड़ों आख्यान ऐसे हैं, जो मूल कथा से सीधे सम्बद्ध नहीं हैं। इसके माध्यम से भारत के प्राचीन राजाओं, घटनाओं, संत-महात्माओं के आख्यान तथा लोक प्रचलित विश्वासों को कथाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। महाभारत काल तक आते-आते वे महान आदर्श छिन्न-भिन्न हो गए थे, जिनका प्रतिपादन महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामायण में किया था।

रामायण की भाँति 'महाभारत' का विश्वव्यापी प्रचार तो नहीं हुआ किन्तु इसकी गूँज विदेशों तक अवश्य पहुँची। सन् 50 ई० में यूनानी विद्वान डायो क्रायस्टीम दक्षिण भारत के पांड्य क्षेत्र में आया था। उसने अपने संस्मरण में लिखा है कि-भारत में एक लाख श्लोकों का 'इलियड है'। इसमें संदेह नहीं कि इलियड से उसका अभिप्राय महाभारत से ही था। कम्बोडिया के 600 ई० के एक शिलालेख से यह प्रमाणित होता है कि छठी शताब्दी में महाभारत का प्रचार भारत के बाहर अन्य देशों में हो चुका था।

संस्कृत के महाकवि कालिदास के ग्रंथों का विश्व के अनेक देशों में अत्यधिक प्रचार हुआ। कालिदास रचित 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक की विश्व में धूम मची रही। इंग्लैण्ड के सर विलियम जोन्स भारत में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होकर आए थे। उन्होंने यहाँ रहते हुए संस्कृत सीखी और कालिदास के प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' का अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया। उनके इस अंग्रेजी अनुवाद से प्रेरित होकर प्रसिद्ध जर्मन विद्वान गेओर्ग

फोर्स्टर ने शाकुन्तलम् का अनुवाद जर्मन भाषा में किया था। इसकी लोकप्रियता के कारण कालिदास के अन्य ग्रंथों का भी जर्मन भाषा में अनुवाद हुआ। जर्मनी के प्रसिद्ध नाटककार गेटे ने शाकुन्तलम् के अनुवाद को पढ़कर स्वर्गिक आनंद की अनुभूति की थी।

कालिदास के 'मेघदूत' काव्य का भी विदेशों में पर्याप्त प्रचार हुआ। जर्मन कवि शिलर ने अपने 'मेरियो स्टुअर्ट' नामक काव्य में कालिदास के अनुकरण पर मेघ द्वारा संदेश भेजने की कल्पना की है। प्रो. मैक्समूलर ने मेघदूत का जर्मन पद्य तथा श्वेट्ज ने जर्मन गद्य में अनुवाद किया। प्रो. बेक्ख (Beckh) ने मेघदूत का तिब्बती भाषा में एक संस्करण प्रकाशित किया था।

विश्व को संस्कृत-साहित्य की सबसे बड़ी देन आख्यान-साहित्य की है। पंचतंत्र, हितोपदेश, वृहत्कथा, कथा सरित सागर, बेताल पंचविंशतिका, सिंहासन द्वात्रिंशिका, विक्रम चरित आदि अनेक आख्यान ग्रंथ संस्कृत में मिलते हैं। इनमें आदर्श तथा उपदेश की प्रवृत्ति मिलती है। नीति कथाओं का उद्देश्य कहानियों के माध्यम से सदाचार, राजनीति तथा व्यावहारिक ज्ञान सहज रूप में उपलब्ध कराना था, जिनका विश्व के अनेक देशों में व्यापक प्रचार हुआ। छठी शताब्दी में बादशाह खुसरू अनुशेरवाँ के आदेश से पहलवी भाषा में पंचतंत्र का अनुवाद कराया गया था। इसके रूपान्तर सीरियाई और अरबी भाषा में उपलब्ध हैं, जिनके नाम क्रमशः 'कलिलग और दमनग' तथा 'कलिलह और दिमनह' हैं। ज्ञातव्य है कि पंचतंत्र में करटक और दमनक नामक सियारों का वर्णन विस्तारपूर्वक हुआ है। ग्यारहवीं शताब्दी में अरबी पंचतंत्र का ग्रीक भाषा में अनुवाद हुआ था। ग्रीक, लैटिन, जर्मन, स्लावेक तथा अन्यान्य यूरोपीय भाषाओं में इसके अनुवाद हुए। मैकडानल के अनुसार उक्त अरबी अनुवाद का 40 भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। अंग्रेज विद्वान एफ. एडगर्टन ने पंचतंत्र का सुसम्पादित अनुवाद प्रकाशित कराया था। विन्टर नित्ज के अनुसार जर्मन-साहित्य पर पंचतंत्र का अत्यधिक प्रभाव पड़ा था।

गुणाढ्य की 'वृहत्कथा' में मनोरंजक लोक कथाएँ संगृहीत हैं। रामायण तथा महाभारत के समान वृहत्कथा का भी महत्वपूर्ण स्थान है। संस्कृत के कवियों एवं नाटककारों ने इनकी कथाओं के आधार पर अपने ग्रंथों का निर्माण किया है। नवीं शताब्दी के कम्बोडिया के एक शिलालेख में गुणाढ्य का स्पष्ट उल्लेख हुआ है, जिससे पता चलता है कि नवीं शताब्दी में कम्बोडिया में 'वृहत्कथा' पहुँच चुकी थी।

'बेताल पंचविंशतिका' के अंग्रेजी तथा जर्मन भाषा में अनुवाद उपलब्ध हैं।

मंगोलियन कहानियों की पुस्तक 'सिद्दीकूर' में बेताल पंचविंशतिका के कई अनूदित अंश उपलब्ध हैं। 1574 ई० में बदशाह अकबर के आदेश से 'सिंहासन द्वात्रिंशिका' का फारसी में अनुवाद कराया गया था। स्याम और मंगोलिया की भाषाओं में भी इनके अनुवाद मिलते हैं। 14वीं शताब्दी में 'शुक सप्तति' का फारसी में 'तूतिनामह' नाम से अनुवाद हुआ था। 'कथा सरित्सागर' की कुछ कहानियों का अनुवाद चीनी भाषा में पाया जाता है। इन अनुवादों के द्वारा भारत की कहानियों का प्रचार देश देशान्तर में हुआ और भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति ने इन्हें प्रभावित किया। अन्यत्र कहा गया है कि भारतीय आख्यान जितने विचित्र हैं उससे कहीं अधिक विचित्र संस्कृत आख्यान-साहित्य की विश्व विजय की कथा है।

संस्कृत-साहित्य में ज्योतिष-शास्त्र का भी महत्वपूर्ण स्थान है। ज्योतिष की गणना छह वेदांगों में होती है। आचार्य वराह मिहिर, आर्य भट्ट, आचार्य ब्रह्मगुप्त, भट्टोपल, भास्कराचार्य आदि प्राचीन ज्योतिषाचार्य हैं, जिन्होंने ज्योतिष ग्रंथों की रचना की थी। विश्व के अनेक देशों में भारतीय ज्योतिष को मान्यता प्राप्त थी। अरब के खलीफा हारुँ रशीद और अल मामू आदि ने भारतीय ज्योतिर्विदों को अपने यहाँ आमंत्रित कर भारतीय ज्योतिष के प्रमुख उपादानों का अरबी में अनुवाद कराया था। अरब में आर्य भट्ट के सिद्धांतों का एक महत्त्वपूर्ण अनूदित संग्रह-ग्रंथ 'अर्जवाह' नाम से प्रचलित था। अलबेरूनी ने अपने ग्रंथ 'सिंद हिंद' में इसका उल्लेख किया है। रोम के प्रो. सी.ए. नलिनो का कथन है कि 771 ई० में भारत से जो विद्वन्मंडली बगदाद गई थी, उन्हीं में से एक विद्वान ने ब्रह्मगुप्त के स्फुट सिद्धांत का सर्वप्रथम परिचय वहाँ के लोगों को कराया था। ब्रह्मगुप्त के 'खण्ड खाद्यक' का 'अलअर्कन्द' नाम से अरबी में अनुवाद हुआ था।

ईसा की लगभग सत्रहवीं शती के अंत में यूरोप और अमेरिका में भारतीय ज्योतिष के प्रति उत्सुकता बढ़ी। 1789 ई० में एस.डेविस ने 'सूर्य सिद्धान्त' का विश्लेषण कर अपना अभिमत प्रकाशित किया। संस्कृत में लिखित ज्योतिष ग्रंथों का अध्ययन करने वाले विद्वानों में बेवर, ह्विटनी और थीबो प्रमुख हैं। बेवर ने 'वेदांग ज्योतिष' तथा 'सूर्य सिद्धांत' और थीबो ने 'पंच सिद्धांतिका' का विशेष रूप से अध्ययन किया।

इस प्रकार काव्य, नाटक, आख्यायिका, ज्योतिष आदि के क्षेत्र में संस्कृत का विश्वव्यापी प्रभाव परिलक्षित होता है। अरब, ईरान, यूनान, इंग्लैण्ड तथा यूरोप के अन्य देशों ने संस्कृत साहित्य से बहुत कुछ ग्रहण किया है। प्राचीन भारतीय ज्ञान-विज्ञान, आचार-व्यवहार आदि की जानकारी उन्हें संस्कृत-साहित्य से ही प्राप्त हुई।

2. तीर्थंकर वर्धमान-महावीर-सन्मति

भगवान महावीर के चार नाम प्रसिद्ध हैं-वर्धमान, वीर, महावीर और सन्मति। इस लघु लेख में इनकी सार्थकता तथा इनसे सम्बद्ध अन्तर्कथाओं का संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है।

भगवान महावीर के जन्म लेते ही उनके पिता राजा सिद्धार्थ के यश, वैभव, पराक्रम तथा प्रताप में वृद्धि होने लगी थी, इसीलिये उन्होंने बालक का नाम 'वर्धमान' रखा। कविवर होरीलाल शर्मा 'नीरव' जी ने अपने महाकाव्य 'सत्यरथी' में लिखा है-

वृद्धि राजसत्ता-सुख-यश की
हुई जन्म से जिसके अविरत
'वर्द्धमान' अभिधेय नृपति ने
दिया पुत्र को निज मन सम्मत।

एक समय की बात है, महाभाग वर्द्धमान अन्य बालकों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। उसी समय एक मदोन्मत हाथी उधर आ निकला। हाथी का विकराल रूप देखकर बालक भयभीत होकर इधर-उधर भागने लगे किन्तु बालक वर्धमान ने गर्जना भरे स्वर में हाथी को ललकारा। उनकी सिंह गर्जनामयी वाणी सुनकर हाथी सहम के खड़ा हो गया। तब भगवान वर्धमान उसके मस्तक पर जा चढ़े और मुष्टिका प्रहार से उसका मद चूर कर दिया। उनके इस वीरता पूर्ण कार्य से 'वीर' के रूप में उनकी प्रसिद्धि हो गई।

एक बार संगम नामक एक देव भयंकर विषधर का रूप धारण करके राजकुमार वर्धमान की परीक्षा लेने के लिए आया। उस समय वर्धमान बालकों के साथ एक पेड़ के नीचे खेल रहे थे। भयंकर सांप को देखकर बालक चीत्कार करने लगे, कुछ इधर-उधर भाग गये और कुछ तो मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े, किन्तु राजकुमार वर्द्धमान रंचमात्र भी विचलित नहीं हुए और उस सर्प से क्रीड़ा करते हुए उसे दूर भगा दिया। उनकी इस निर्भीकता को देख देव प्रसन्न होकर प्रकट हुआ और राजकुमार वर्धमान की स्तुति करते हुए उन्हें अपने कन्धे पर बिठा कर नृत्य करने लगा। तभी से वर्धमान 'महावीर' के रूप में पुकारे जाने लगे।

तीर्थकर वर्धमान की ज्ञान-गरिमा की प्रसिद्धि सुनकर संजयंत और विजयन्त नामक दो चारण अपनी कुछ तत्व विषयक शंकाओं के समाधान हेतु उनकी सेवा में उपस्थित हुए किन्तु भगवान वर्धमान के दर्शन मात्र से उनकी शंकाओं का समाधान हो गया। यह आश्चर्य देखकर मुनिजनों ने तीर्थंकर वर्धमान का नाम

'सन्मति' रख दिया।

कवि श्री रमेश राजजादा ने अपने काव्य 'मंगलरथ' में भगवान महावीर के इन चारों नामों का सटीक उल्लेख किया है-

'वर्धमान' थे मात-पिता के
'सन्मति' थे तुम मुनियों के,
संगम के तुम 'महावीर' थे,
'वीर' बने दुखियों के थे।

***

3. अनेकान्त : कुछ दृष्टान्त

मानव की बुद्धि सीमित तथा देशकाल सापेक्ष है। किसी भी वस्तु के सर्वांश को एक ही दृष्टि में जानना उसके द्वारा संभव नहीं है। एक समय में हम किसी वस्तु के एक अंश को भी सम्यक रूप में जान लें तो यह बहुत है। जैन दर्शन में 'अनेकान्त' के रूप में इसका सम्यक तथा सर्वमान्य समाधान प्रस्तुत किया गया है। वस्तुत: इस तथ्य को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि जैन विचारधारा का मूल स्रोत अनेकांतवाद में ही निहित है। इस लेख में इसके कतिपय दृष्टान्त प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

दीपावली की संध्या थी। घरों मं रंग-बिरंगे कंदील लटक रहे थे। एक बड़े से कंदील के समीप कुछ बच्चे खड़े थे। कंदील हवा में हिल रहा था। उसके रंगीन पारदर्शी कागजों में से रंग-बिरंगा प्रकाश अपनी झलक दिखाता था। बच्चों में विवाद था। कोई उसका रंग लाल बताता था तो कोई हरा। किसी को उसका रंग पीला दिखाई पड़ता था तो किसी को नीला। वास्तव में उन सभी का कथन अंशत: सत्य था। यह दृष्टिकोण का ही अन्तर था। ......

एक समय की बात है गोस्वामी तुलसीदास भगवान श्रीराम की कथा बांच रहे थे। प्रसंग था अशोक वाटिका का। गोस्वामी जी ने बताया कि जिस लता-मण्डप में सीता जी बन्दिनी थीं, वह सफेद फूलों से आच्छादित था। संयोगवश उस दिन कथा में हनुमान जी भी उपस्थित थे। वे एकदम खड़े हो गये और उन्होंने गोस्वामी तुलसीदास जी के कथन का प्रतिवाद किया। उन्होंने कहा कि वह लता-मण्डप लाल फूलों से आच्छादित था। मैंने उसे स्वयं देखा था। प्रश्न उठा कि भगवान श्रीराम के इन दोनों भक्तों में से किसका कथन सत्य है ? साक्षी रूप में तब भगवान श्रीराम ने स्वयं प्रकट होकर इसका समाधान किया था-ये दोनों भक्त ठीक कहते हैं। वास्तव में वे फूल श्वेत ही थे किन्तु हनुमान ने उन्हें क्रोध के कारण रक्ताभ

नेत्रों से देखा था। अतः वे श्वेत पुष्प भी इन्हें लाल ही दिखाई पड़े। ....

एक दिन कुछ लोग एक प्राणी के रंग पर बहस कर रहे थे। एक उसे लाल बता रहा था, दूसरा हरा, तीसरा पीला और चौथा नीला। सभी अपने-अपने मत पर दृढ़ थे क्योंकि सभी ने उसे अपने-अपने दृष्टिकोण से देखा था। वह प्राणी वास्तव में गिरगिट था, जो प्रतिक्षण अपना रंग बदल रहा था।

यदि हम अनेकान्तवाद को अपने जीवन में अपना लें तो अनेक प्रकार के विवादों से सहज ही में मुक्त हो जाएंगे तथा सत्य के निकट पहुंचने में भी हमें अधिक सुविधा होगी।

***

4. हिन्दी का निर्गुण संत-काव्य और जैन संत-काव्य

भारत में सदैव से आध्यात्मिक भावों का प्राधान्य रहा है। अतः यहाँ के साहित्य में भी धर्म-तत्व प्रमुख रहा है। वास्तविक बात तो यह है कि हिन्दी के भक्ति-काव्य में भावों की जो गहराई एवं हृदय की तल्लीनता दिखाई पड़ती है, वह अन्य किसी काव्य में नहीं मिलती। भक्ति-काल को तो हिन्दी का स्वर्णयुग ही माना जाता है। भक्ति-काल में सगुण एवम् निर्गुण दो धाराएँ प्रचलित थीं तथा निर्गुण ब्रह्म के उपासक भी दो वर्गों में विभक्त थे-ज्ञानाश्रयी तथा प्रेमाश्रयी। इनमें ज्ञानाश्रयी शाखा के भक्तों के लिए सन्त शब्द रूढ़ हो गया है और उनके द्वारा कथित एवम् लिखित काव्य सन्त-काव्य कहलाता है।

हिन्दी के कबीरदास, रैदास, नानकदेव, दादू दयाल, रज्जब जी, बषना जी, सुन्दर दास, गरीबदास, मलूकदास, प्राणनाथ, दरिया साहब, भीखा साहब, चरनदास, सहजोबाई, दयाबाई, पलटू साहब आदि सन्त-कवियों के नाम एवम् कृतित्व से तो हिन्दी जगत् परिचित है किन्तु जैन सन्त-कवियों यथा-त्रिभुवन चन्द्र, पाण्डे जिनदास, कुमुद चन्द्र, ब्रह्म गुलाल, बनारसी दास, पं. भगवती दास, पाण्डे रूपचन्द्र, यशोविजय, आनन्दधन, जगजीवन, जिनरंग सूरि, भैया भगवती दास, द्यानतराय, बुलाकीदास, भूधरदास, पं. दौलतराम, वृन्दावन, बुधजन आदि के कृतित्व से हिन्दी के अधिकांश विद्वान अनभिज्ञ हैं, यद्यपि उनके साहित्य का अपना महत्व है। जैन सन्त-कवियों का हिन्दी का सन्त काव्य-धारा में महान योगदान है। यह खेद का विषय है कि जैन सन्त काव्य की ओर हिन्दी के विद्वानों का समुचित ध्यान नहीं गया।

हिन्दी साहित्य में संत साहित्य की अविच्छिन्न परम्परा हमें कबीरदास (1456 वि.) के समय से प्राप्त होती है। कुछ विद्वानों ने इसे कबीर के पहले से संबद्ध

माना है। डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल ने इसका आविर्भाव जयदेव से स्वीकार किया है। डा. रामकुमार वर्मा संत-साहित्य का प्रारंभ नामदेव से मानते हैं। कबीर के गुरु रामानन्द भी प्रसिद्ध संत हुए हैं, जिनकी प्रसिद्ध उक्ति है-

जाति-पाँति पूछे नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।

कबीर ने इसी बात को निम्नलिखित दोहे में व्यक्त किया है-

जाति न पूछौ साधु की पूछ लीजिए ज्ञान।
दाम करो तलवार का पड़ी रहन दो म्यान।।

जयदेव का उल्लेख करते हुए कबीर कहते हैं-

सनक सनन्दन जैदेव नामा। भगति करी मन उनहुं न जाना।।

जयदेव का 'गीतगोविन्द' एक प्रसिद्ध ग्रन्थ है, जो कृष्ण-काव्य परम्परा के अन्तर्गत आता है। उनकी अन्य रचनाएं भी सन्त-साहित्य से मेल नहीं खातीं। नामदेव में अवश्य संत-साहित्य की प्रवृत्तियां विद्यमान हैं, यथा ब्रह्म के विषय में वे कहते हैं-

एक, अनेक सुव्यापक पूरन जित देखो तित सोई।
माया चित विचित्र विमोहिनी बिरला बूझै कोई।।

मूर्ति पूजा के विषय में उनका कथन है-

एके पाथर किज्जे भाव। दूजे पाथर धरिये पाव।
जो वो देव तो हम भी देव। कहै नामदेव हरि की सेव।।

डॉ० प्रेमसागर जैन हिन्दी जैन-भक्ति-काव्य का आरंभ वि.सं. 1405 से मानते हैं। उन्होंने प्रारंभित जैन कवियों के रूप में राजशेखर सूरि (1405-वि.) सधारू (1411वि.), विनयप्रभ उपाध्याय (1421वि.) आदि का उल्लेख किया है। इस प्रकार हिन्दी संत साहित्य और जैन भक्ति-काव्य लगभग समकालीन हैं और उनका उदय समान परिस्थितियों में हुआ। यह दुख एवं आश्चर्य का विषय है कि हिन्दी साहित्य के आरंभिक इतिहास लेखकों ने जैन-काव्य को धार्मिक साहित्य मानकर इसकी उपेक्षा कर दी किन्तु धीरे-धीरे विद्वानों का ध्यान इसकी ओर आकृष्ट हुआ। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने स्पष्ट शब्दों में इसकी महत्ता को स्वीकार करते हुए कहा है, ''केवल नैतिक और धार्मिक या आध्यात्मिक उपदेशों को देखकर यदि हम ग्रन्थों को साहित्य सीमा से बाहर निकालने लगेंगे तो हमें आदि-काव्य से भी हाथ धोना पड़ेगा, कबीर की रचनाओं को भी नमस्कार कर देना पड़ेगा और जायसी को भी दूर से दंडवत् करके विदा कर देना होगा।''

हिन्दी सन्त साहित्य में जैन साहित्यकारों के योगदान पर विचार करते हुए हम

अपना ध्यान उनकी सामान्य प्रवृत्तियों पर केन्द्रित करेंगे। दर्शन एवं धार्मिक सिद्धांतों को लेकर उनमें मतभेद हो सकता है किन्तु सामान्य प्रवृत्तियों एवं लोक-व्यवहार की दृष्टि से उनमें पर्याप्त साम्य है। निम्नलिखित विवेचन से इस विचार की पुष्टि होगी।

संतों का ब्रह्म निर्गुंण निराकार है। न उसके मुख है, न माथा, न कोई रूप। वह 'अनूप तत्व' तो पुष्प की सुगन्धि से भी सूक्ष्म है। कबीर कहते हैं-

जाके मुँह माथा नहीं, नाहीं रूप कुरूप।
पुहुप वास तें पातरा ऐसा तत्व अनूप।।

जैन संतों ने भी 'आतमरामा' को रूप, परस, रस, गंध-सबसे ऊपर माना है। न उसे भूख प्यास लगती है और न सुख-दुख का अनुभव होता है, न उसका कोई स्वामी है और न सेवक, न उसका कोई पिता है, न माता। उसकी प्राप्ति गुरु कृपा से ही हो सकती है। कवि बुधजन कहते हैं-

मैं देखा आतमरामा।
रूप, परस, रस गंध तै न्यारा, दास-ज्ञान गुन धामा।
नित्य निरंजन जाके नाहीं, क्रोध लोभ मद कामा।
बुधजन संगति जिन गुरु कीतैं मैं पाया तुझ ठामा।।

संतों के अनुसार ब्रह्म का वास हृदय में है, उसी प्रकार जैसे तिलों में तेल और चकमक में आग। जिस प्रकार दूध में घी छिपा हुआ है उसी प्रकार ब्रह्म भी हृदय में विद्यमान है, विदग्ध जन ही उसे मथकर निकालने में समर्थ होते हैं-

ज्यों तिल माहीं तेल है ज्यों चकमक मँह आग।
तेरा साँई तुज्झ में जाग सके तो जाग।। कबीर
घीउ दूध में रमि रह्या व्यापक है सब ठौर।
दादू बकता बहुत है मथि काढ़ैं ते और।। दादू

ब्रह्म की प्राप्ति के लिए आत्मज्ञान परम आवश्यक है। जो स्वयं को नहीं पहचानता, वह कैसा ज्ञानी है? साधना के लिए देह से ऊपर उठना होगा। जैन कवि दौलतराम जी कहते हैं-

आपा नहीं जाना तू कैसा ज्ञानधारी रे?
देहाश्रित कर क्रिया आपको जानत शिवमगचारी रे।

संतों ने ब्रह्ममय होने के लिए आत्मा की शुद्धि आवश्यक बताई है तथा चित्त की एकाग्रता पर बल दिया है, यथा-

केसन कहा बिगारिया जो मूंडी सौ बार।
मन को क्यों नहीं मूंडिए जामै विषय विकार।। -कबीर

अन्तर गति रांचै नहीं बाहर कथें उदास।
ते नर जमपुर जाहिंगे सत भाषै रैदास।। -रैदास
घट में तीरथ क्यों न नहाबा।
इत उत डोलौ पथिक बने ही भरमि भरमि क्यों जनम गँवायो।। -चरणदास

जैन कवियों ने भी कहा है कि ब्रह्म रूप होने के लिए अन्तर की पुष्टि आवश्यक है। विषय वासनाओं से मुक्त होकर हृदय शुद्ध हो सकता है। कवि भूधरदास का कथन है।

अन्तर उज्जल करना रे।
जग तप तीरथ जज्ञ व्रतादिक आगम अर्थ उचरना रे।
विषय कषाय कीच नहि धेयौ योंही पचि-पचि मरना रे।।

संत कवियों ने संसार की असारता की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। यह संसार सेवल के फूल के समान है जो ऊपर से देखने में सुन्दर किन्तु अन्दर से निस्सार है। मानव का जीवन पानी के बुद-बुद के समान है यह देखते ही देखते उसी प्रकार समाप्त हो जाता है जैसे प्रात:काल के समय तारे। कबीर कहते हैं-

ऐसा यह संसार है जैसा सेमर फूल।
दिन दस के व्यवहार में झूठे रंग न भूल।।
पानी केरा बुदबुदा अस मानुस की जात।
देखत ही छिप जाएगा ज्यों तारा परभात।।

जैन कवियों ने भी इस ओर ध्यान दिया है। इनके उदाहरण देते हुए उन्होंने जीवन की क्षणभंगुरता की ओर संकेत किया है। कवि भूधरदास कहते हैं-

भगवन्त भजन क्यों भूला रे।
यह संसार रैन का सुपना तन धन वारि बबूला रे।
इस जीवन का कौन भरोसा पावक में तृण पूला रे।।

इसी प्रकार कविवर द्यानतराय का कथन है-

जीवन यों ही जाता है।
बालपने में ज्ञान न पायो खेलि-खेलि सुख पाया है।
समय निकलता है प्रतिक्षण है मूरख मद में सोया है।।

ये पद कबीर के निम्नलिखित पद से बहुत कुछ भाव साम्य रखते हैं-

भजु मन जीवन नाम सवेरा।
सुन्दर देह देख जिन भूलो झपट लेत जस बाज बटेरा।।

संसार के सभी सम्बंध मिथ्या हैं। इस संसार में न कोई किसी का पुत्र है, न

स्त्री। धन, परिवार भी कुछ अपना नहीं है। इस संसार में जो भी आया है उसे जाना होगा। बुधजन सतमई से इस आशय के दो दोहे देखिए–

को है सुत को है तिया काको धन परिवार।
आके मिले सराय में विछुरेंगे निरधार।।
आया है जो नहि रह्या दशरथ लछमन राम।
तू कैसे रह जायेगा झूठ पाप का धाम।।

कबीर कहते हैं–

चलती चाकी देख के दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में साबत बचा न कोय।
हाड़ जलै ज्यों लाकड़ी केस जलैं ज्यों घास।
सब जग जलता देख के हुआ कबीर उदास।।

कबीर दास ने प्रभु के स्मरण के लिए चरखे का रूपक बाँधा है। जुलाहा होने के कारण उनके लिए यह सहजगम्य था यथा–

चरखा चलै सुरत बिरहिन का।
काया नगरी बनी अति सुन्दर महल बना चेतन का।।

जैन कवियों में भूधरदास भी शरीर के लिए चरखे का रूपक प्रस्तुत करते हैं–

चरखा चलता नहीं चरखा हुआ पुराना।
पग खूंटे द्वय हालन लागे उर मदरा खखराना।।

संत कवियों ने माया की सविस्तार चर्चा की है और सारे संसार को उसके जाल में फँसा पाया है। यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी उससे नहीं बच सके हैं। कबीर कहते हैं–

माया महा ठगिनी हम जानी।
तिरगुन फांस लिए कर डोलै बोलै मधुरे बानी।।

जैन कवि भी माया को विश्वव्यापी मानते हैं। भूधरदास कहते हैं–

सुन ठगनी माया है सब जग ठगि खाया।
टुक विश्वास किया जिन तेरा सो मूरख पछताया।।
भूधर ठगत फिरत यह सबको भौंदू कर जग पाया।
जो इस ठगिनी को ठग बैठे मैं तिस को सिर नाया।।

संतों ने गुरु की महिमा का सविस्तार गान किया है। गुरु-भक्ति में वे इतने आगे बढ़ गये कि भगवान की अपेक्षा उन्होंने गुरु को प्राथमिकता दी क्योंकि गुरु ने ही तो भगवान से मिलन का मार्ग बताया है–

गुरु गोविंद दोऊ खड़े काके लागू पाँय।
बलिहारी गुरु आपकी गोविंद दियो बताय।। कबीर
राम तजूं पै गुरु न बिसारूं। गुरु के सम हरि को न निहारूँ।
हरि ने जन्म दियो जग माहीं। गुरु ने आवागमन छुटाहीं।। सहजोबाई

जैन साहित्य में भी गुरु को मान्यता दी गई है। जैन कवि गुरु को ईश्वर से बड़ा तो नहीं मानते पर उनकी दृष्टि में ईश्वर ही सबसे बड़ा गुरु है। गुरु के आश्रय से संसार रूपी सागर से तरा जा सकता है। कवि भूधरदास कहते हैं-

ते गुरु मेरे मन बसौ जो भव जलधि जहाज।
आप तिरै पर तारहीं ऐसे श्री ऋषिराज।।

संत कवि ब्रह्म में लीन होने पर अपने आपको अमर मानते हैं। तभी तो कबीर कहते हैं-

हम न मरै मरि है संसारा। हमको मिला जियावन हारा।
अब न मरौ मरनै मन जाना। तेई मुए जिन राम न जाना।।

जैन कवि ब्रह्म में लीन होने की अपेक्षा स्वयं ब्रह्म रूप होने के भाव को स्वीकार करते हैं। कविवर द्यानतराय का कथन है-

अब हम अमर भए न मरैंगे।
तन कारन मिथ्यात दियो तज क्यों कर देह धरैंगे।
उपजै मरै काल तें प्राणी ताते काल हरैंगे।
राग द्वेष जग बन्ध करत है इनको नाश करैंगे।

संतों ने बाह्याडम्बरों का डटकर विरोध किया। इसी आधार पर कुछ आलोचक उन्हें कवि की अपेक्षा समाजसुधारक स्वीकार करते हैं। इनमें सन्देह नहीं कि उन्होंने समाज में फैले बाह्याडम्बरों का विरोध करके समाज को इस कलुष कर्दम से निकालने का सफल प्रयास किया। कबीर दास जी कहते हैं-

माला तो कर में फिरै जीभ फिरै मुँह मांहि।
मनुआ तो दस दिसि फिरै यह तो सुमिरन नांहि।।
मस्जिद भीतर मुल्ला पुकारे क्या साहिब तेरा बहिरा है।।

जैन संतों ने भी बाह्याडम्बरों की निंदा की है। कविवर द्यानतराय कहते हैं-

मास मास उपवास किए हैं तें काया बहुत सुखाई।
क्रोध मान छल लोभ न जीत्या कारज कौन सराई।।
कर मनका लै आसन मारयो बाहिण लोक टिकाई।
कहा भये बक ध्यान धरें तें जौ मन थिर न रहाई।।

इस प्रकार हिन्दी संत-साहित्य एवं जैन भक्त कवियों के काव्य में प्रवृत्तिगत साम्य स्पष्ट लक्षित होता है। जैन भक्त कवियों के अनेक पद ऐसे हैं जिन पर से यदि उनका नाम हटा दिया जाए तो वे सहज ही हिन्दी संतों के काव्य में घुल मिल जायेंगे। इसमें संदेह नहीं कि हिन्दी सन्त-साहित्य को जैन साहित्यकारों का महान योगदान है, अभी इसका सम्यक् मूल्यांकन होना शेष है।

***

5. मुसलमान कवियों द्वारा गोस्वामी तुलसीदास की अभ्यर्थना

भारत-भूमि पर विदेशी साम्राज्य स्थापित हो जाने पर संत महात्माओं के सम्मुख भगवान की शरण में जाने के अतिरिक्त कोई उपाय न था। उनका दृष्टिकोण उदार था। जातीय विद्वेष तथा वैमनस्य से ऊपर उठकर उन्होंने मानवता का पावन संदेश प्रदान किया। स्वामी रामानंद, कबीरदास, मलिक मुहम्मद जायसी, सूरदास, नंददास, तुलसीदास, रैदास, रसखान आदि की अमृतमयी वाणी ने मुमूर्षु जनता में नवजीवन का संचार किया।

भक्त कवियों की इस माला में गोस्वामी तुलसीदास सुमेरुमणि हैं। भारतीय समाज में उन्हें सर्वाधिक मान्यता प्राप्त हुई। उनके द्वारा रचित 'रामचरितमानस' का प्रवेश राजमहलों की उच्च अट्टालिकाओं से लेकर दीन-जनों की छप्परों वाली कुटिया तक हुआ। 'गीतावली' के पद संगीतज्ञों के कंठहार बने तो 'विनयपत्रिका' ज्ञानी भक्तों की अक्षय निधि है। उनकी कवितावली, कृष्ण गीतावली, बरवै रामायण आदि कृतियों का भी अपना महत्व है।

गोस्वामी तुलसीदास सामान्य जनता में तो लोकप्रिय थे ही, तत्कालीन शासन में उच्च पदस्थ व्यक्ति भी उनके प्रति श्रद्धाभाव रखते थे। राजा टोडरमल उनके प्रति विनयावनत थे तथा अब्दुर्रहीम खानखाना की उनके प्रति भक्ति जगत्प्रसिद्ध है। गोस्वामी तुलसीदास की महिमा का गुणगान हिंदू संत-महात्माओं, कवियों तथा विचारकों ने तो किया ही है, मुसलमान कवि भी उनकी कीर्ति के बखान में पीछे नहीं रहे हैं।

कहा जाता है कि गोस्वामी तुलसीदास के प्रति रहीम की अपार श्रद्धा थी। एक बार तुलसीदास जी के पास एक निर्धन ब्राह्मण याचक के रूप में पहुँचा। उन्होंने उसे निम्नलिखित पंक्ति लिखकर दी और रहीम के पास भेज दिया-

सुर तिय मुनि तिय नाग तिय सब चाहत अस होइ।

रहीम ने उस ब्राह्मण को पर्याप्त धन दिया और दोहे की पूर्ति कर उसे गोस्वामी तुलसीदास जी के पास लौटा दिया। पूर्ति इस प्रकार थी-

गोद लिए हुलसी फिरैं तुलसी सो सुत होइ।

यहाँ यह ज्ञातव्य है कि तुलसीदास जी की माता का नाम हुलसी था।

अब्बास अली खाँ 'वास' के अनुसार गोस्वामी तुलसीदास के अवतरण से क्लांत-श्रांत विमोहित हिंदू-संस्कृति का नेत्रोन्मीलन हुआ। हिंदू-जाति की पावन परंपराओं पर छाई हुई धूलि धुल गई, संपूर्ण भ्रांतियों का निराकरण हो गया तथा भारतीय जन-मानस में भक्ति-भाव का संचार हुआ-

यवन यामिनी में क्लांत श्रमित विमोहित-सी,
सुप्त आर्य संस्कृति की आँख खुल-सी गई।
पड़ी हुई पावन पुरातन परंपरा पर,
पतन की पर्त-पर्त धूलि धुल-सी गई।
भरि गई भारतीयता में भरपूर भक्ति,
भागे भेदभाव सारी भ्रांति भूल-सी गई।
गुरु नरहरि द्वार देशादर्श निधि 'वास'
गोद तुलसी को लिए जब हुलसी गई।।

डॉ० जलाल अहमद खाँ 'तनवीर' ने तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरितमानस' को 'गागर में सागर' की मान्यता प्रदान की है। वे गोस्वामी तुलसीदास की दास्य-भावना, मानस द्वारा मानव-कल्याण एवं धर्म-भावना की प्रशंसा करते हुए इन शब्दों में तुलसी महान का गुणगान करते हैं-

दास्य भावना से मान राम को उपास्य निज,
जीत लिया पल में हृदय भगवान का।
मानस की रचना से मानव का त्राण कर,
भर दिया गागर में सागर ज्ञान का।
छलकी है तेरी स्नेह-सुधा जन-जीवन में,
चमक उठा रूप धर्म के विधान का।
मन में अमिट यही चाह 'तनवीर' नित्य,
किया करें गुण-गान तुलसी महान का।।

नजीर बनारसी तुलसी की गौरव-गरिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि जो तुम्हारे हृदय में था, उसे तुमने कागज पर लिपिबद्ध कर दिया। श्रीराम ने संसार के समक्ष महान आदर्श प्रस्तुत किया पर तुमने संसार में श्री राम के शुभ नाम को स्थापित कर दिया। तुलसी के बिरवे की भाँति मंद-मंद महक से तुमने भक्ति के क्षेत्र में अपनी धाक जमायी। जिन श्री रामचन्द्र को राजा दशरथ ने बनवास दिया

था, उन्हीं श्री राम को तुमने घर-घर में पहुँचा दिया, 'रामचरितमानस' के माध्यम से घर-घर में पूज्य बना दिया। कवि के शब्दों में-

जो दिल में था कागज पे उतारा तुमने,
मिटता हुआ हर नक्स उभारा तुमने।
संसार को राम ने सँवारा लेकिन,
संसार के राम को सँवारा तुमने।
तुलसी की तरह गमक-गमक कर,
भक्ति का भी मैदान सर किया तुमने।
जिस राम को वनवास दिया दशरथ ने,
उस राम को घर-घर पहुँचा दिया तुमने।।

तुसलीदास ने राम नाम की ऐसी मशाल जलाई, जिसके सामने पाप का अंधकार मुँह छिपा कर भाग गया। तुलसी के समान महान कवि को प्राप्त कर अवध की धरती धन्य हो गई। उनके चरणों की थोड़ी-सी धूल मिल जाए तो उसे माथे से लगाकर हम भी धन्य हो जाएँ। तुलसी तो श्री राम के गुण गाकर तर गए, तुम भी श्री राम के गुण गाकर तर जाओगे। फारूख हुसैन 'सरल' ने निम्नलिखित कवित्त में इन्हीं भावों को संजोया है-

राम नाम की मशाल बारी ऐसी तुलसी ने,
पापु को अंधेर भाग मुँह लुकवाय के।
धन्य भई धरती अवध की चरन छुई,
तुलसी समान ऊ महान कवि पाय के।
उनके चरन केरि धूरि थोरी मिल जाई,
अपनैव का धन्य जान माथु माँ लगाई के।
तरि जैहौ तुम हूँ 'सरल' राम गुन गाई,
तुलसी तो तरि गए राम गुन गाई के।।

सैयद महफूज हसन रिजवी 'पुण्डरीक' रूपक के माध्यम से कहते हैं कि तुलसीदास जी ने रघुनंदन-कानन में विचरण करते हुए संसार को मधु का दान दिया तथा स्वयं पीड़ा झेलते हुए विषपान किया। अत: कविरत्न तुलसी पर उन्हें अभिमान है-

रघुनंदन कानन में तुलसी, रमि राम मैं मानस गान कियो है।
सिगरौ सुख जीवन के अपनौ, छवि पै उनकी बलिदान कियो है।
अब लौं मधु दान करौ जग को, जग सों गहि के विषपान कियो है।
तुम पै तुलसी कविराज सुनौ, यहि देखि महा अभिमान कियो है।

फिदा बांदवी तुलसीदास जी को हजार गम में भी खुशी का संदेश देने वाले मानते हैं। उन्होंने अपनी भक्ति-भावना से सबका मन मोह लिया है। अत: फिदा साहब की दृष्टि में तुलसी का स्थान अली के समान है-

उसी की बात करो, जिसका नाम तुलसी है,
हजार गम में खुशी का पयाम तुलसी है।
दिलों को मोह लिया जिसने अपनी भक्ति से,
मेरी निगाह में अली मुकाम तुलसी है।।

वसी सीतापुरी गीत के माध्यम से तुलसीदास जी के प्रति अपनी मनोभावना व्यक्त करते हैं। उन्हें दु:ख है कि तुलसीदास जी को अब तक भारतीय समाज में उनका उचित स्थान प्राप्त नहीं हुआ है-

जीवन के हर मोड़ पे जिसने प्रेम की जोत जगाई।
जिसके स्वरों में गूँज रही है भारत की अँगनाई।
पाठक का मन रामायण के कुंज में यों लहराए।
गंगा की लहरों पर जैसे नौका बहती जाए।
राम की महिमा गाने वाला कौन था तुलसीदास।
कैसी मदिरा उसने पिलाई बढ़ गई जिससे प्यास।
राम के भक्त हैं लाखों लेकिन यह उनका अज्ञान।
दे न सकी दुनिया अब तक तुलसी को शीर्ष स्थान।

आज संसार में सच पर झूठ भारी पड़ रहा है, सब ओर घृणा-द्वेष की भावना व्याप्त है, भेद-भाव का प्रसार है, लोग कुंठाओं से त्रस्त हैं। संसार को इनसे मुक्त कराने के लिए हे तुलसीदास! आप एक बार फिर आइए और जन-जन को सत्पथ दिखाइए। श्री सलीम खान की यही कामना है-

सच पर झूठ हो रहा भारी/लगता है इतिहास भिखारी,
सभी घृणा में सने हुए हैं/ भेदभाव भी बने हुए हैं।
अमृत पीकर हैं कुछ जीते/कुछ कुंठाओं का विष पीते,
एक बार फिर आओ तुलसी/जीवन पथ दिखलाओं तुलसी।

अंत में बहाजुद्दीन 'बहाज' बाँदवी के स्वर में स्वर मिलाते हुए हम भी यही कहेंगे कि श्री राम-सीता जी की जय के साथ तुलसीदास जी की भी जय हो-

बहाज अपने जीवन को तुम भी बना लो,
कथा राम की अपने दिल में बसा लो।
कहो दिल से फिर राम-सीता की जय हो,
कहो मिल के सब आज तुलसी की जय हो।

6. प्रेम सषी की होरी

हिन्दी के अधिकांश 'होली-काव्य' राधा और कृष्ण से संबद्ध हैं। वास्तव में श्रीकृष्ण राग-रंग के देवता के रूप में प्रसिद्ध हैं। हिन्दी के रीतिकालीन कवियों ने तो श्रीकृष्ण को प्रेम का प्रतीक ही मान लिया था किन्तु श्रीराम सदैव अपनी मर्यादा की सीमाओं में बंधे रहे। तुलसी ने अपने आराध्य देव श्रीराम का जो रूप अंकित किया था, उस परम्परा को तोड़ने का साहस किसी में नहीं हुआ। प्रेमियों के उपास्य देव श्रीकृष्ण ही रहे।

सूदरदास, परमानन्द दास, आनन्दघन, कृष्णदास, गिरधरदास, देव, सरदार कवि से लेकर आधुनिक काल के भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवं हरिऔध जी तक सभी कवियों ने होली के प्रसंग में राधा और कृष्ण का ही वर्णन किया है। इनमें से किसी कवि ने होली की हुड़दंग में श्रीराम को सम्मिलित नहीं किया किन्तु अभी मेरे देखने में एक ऐसी पुस्तक आई है जिसमें श्रीराम और सीता जी को भी होली के रंग में सराबोर दिखाया गया है।

इस पुस्तक का नाम है 'प्रेम सषी की होरी'। प्रेम सषी (जोकि इनका उपनाम प्रतीत होता है) रामानुज सम्प्रदाय के सखी समाज के वैष्णव भक्त थे। यह पुस्तक इन्हीं की लिखी हुई है। इनका जन्म संवत् 1791 वि. में अयोध्या में हुआ था। पुस्तक का विस्तृत विवरण नागरी प्रचारिणी सभा के हस्तलिखित ग्रंथों के खोज विवरण (छह-308) पर दिया गया है। इसमें राम, सीता एवं उनकी सखियों के बीच होली का खेल रचाया गया है। एक ओर राम, उनके अनुज और सखा हैं तथा दूसरी ओर सीता और उनकी सखियां। पुस्तक से कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

भूषन भूषित संग सषा इत संग सषी सब कीन्हे सिंगार हैं।
को बरनै तिनकी छवि को मानहु बहुत रूप धरे रति भार हैं।।
लीन्हे उतै पिचकारी कर में इत बहु फूल के गेंद अपार हैं।
प्रेम सषी सिय के पिय के ढिंग गढ़े भए सब षेलनहार हैं।।

***

रामरूप पाइ धाइ आये कुंवरौट सबै, कंचन कलित रंग भरी पिचकारी है।
प्रेम रस मत्त वै गुमान गुन जीवन को, करषि 2 चली फौज न्यारी 2 है।।
एक कहै जीत सौज सिमरे छिनाइ लेहु, एकै कहै ठाठी होत अबला विचारी है।
प्रेम सषी लोने लोने छैल देव छौना ऐसे, बोलि बोलि चले जयति अवध बिहारी है।।

जय विदेहजा जनकजा ललित लाड़िली नाम।
जय रघुवर प्रिय बल्लभा जय जय बोलति बाम।।
प्रिय दल आवत देषि के मंद मंद मुस्क्याइ।
नैन सैन दीनों सिया चली अली हरषाई।।

***

जनक दुलारी की सहेली अलबेली एक,
लाड़िले लषन कों गुमान भरि झगरी।
दूसरी चतुर वेष पुरुष बनाइ आई,
जोइ राम पास ठाढ़ी भई छवि अगरी।।
तीसरी तुरव दौरि बेंदी भाल भारत के ल्याई,
रिपुसूदन की ल्याई छीनि पगरी।
बात कहबे के मिस प्यारे को बदन चूमि,
भागि आई तारी दै हँस लागी सगरी।।

***

जनक लड़ैती हंसि कह्यौ फगुआ दीजे लाल।
सेष हमैं सब कहत हैं तिहुपुर में तिहु काल।।

***

7. 'बिजनौर टाइम्स' द्वारा साहित्यकारों की कीर्ति-रक्षा

दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' न केवल एक समाचार पत्र है बल्कि उसका साहित्यिक अवदान भी कम नहीं है। विशिष्ट अवसरों पर उसके द्वारा साहित्यकारों की कीर्ति-रक्षा हेतु प्रशंसनीय प्रयास किये जाते रहे हैं। सन् 1975 ई० में पं. पदम सिंह शर्मा की जन्मशती के अवसर पर 'बिजनौर टाइम्स' का पं. पदम सिंह शर्मा विशेषांक प्रकाशित हुआ था, जिसमें पं. पदम सिंह शर्मा के व्यक्तित्व पर अच्छी सामग्री दी गयी थी। यह विशेषांक भारत के मूर्धन्य विद्वानों द्वारा प्रशंसित हुआ था। इसके पृष्ठ संख्या चार पर पं. पदम सिंह शर्मा के नायक नगला स्थित पैतृक निवास का चित्र भी दिया गया था, जिसके नीचे निम्नांकित पंक्तियाँ दी गयी थीं-

कुछ नक्श तेरी याद के बाकी हैं अभी तक,
दर बे सरों सामां मगर वीरां तो नहीं है।

उक्त विशेषांक का विमोचन गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार के प्रोफेसर डा. विष्णुदत्त राकेश के कर-कमलों द्वारा बिजनौर में सम्पन्न हुआ था।

इसके एक वर्ष उपरांत धामपुर (बिजनौर) के ही सम्पादाकाचार्य पं. रुद्रदत्त

शर्मा की स्मृति में 'बिजनौर टाइम्स' का पं. रुद्रदत्त शर्मा विशेषांक प्रकाशित हुआ था। इसमें पं. रुद्रदत शर्मा पर दुर्लभ सामग्री दी गयी थी। इस अंक में पं. रुद्रदत्त शर्मा के अप्रकाशित जीवन-चरित्र के कुछ अंश दिये गये थे। बाद में उनकी यह पूरी जीवनी (जो उनके असामायिक निधन के कारण अपूर्ण रह गयी थी) 'बिजनौर टाइम्स' में धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हुई थी। पं. रुद्रदत्त शर्मा ने अपना स्म्पूर्ण जीवन पत्रकारिता हेतु समर्पित कर दिया था। 'बिजनौर टाइम्स' के पं. रुद्रदत्त शर्मा विशेषांक के मुखपृष्ठ पर उनके चित्र के नीचे निम्नलिखित पंक्तियां अंकित की गयी थीं-

जिये जब तक लिखे खबरनामे,
चल दिये हाथ में कलम थामे।

1980 ई० में उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की जन्मशती के अवसर पर दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' की ओर से विशेष समारोह का आयोजन किया गया था, जिसमें प्रेमचंद साहित्य के विशेषज्ञ डा. कमल किशोर गोयनका तथा प्रसिद्ध समीक्षक डा. योगेन्द्रनाथ शर्मा अरुण विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे थे। इसमें बिजनौर के स्थानीय साहित्यकारों तथा जिले के गणमान्य साहित्यकारों की अच्छी सहभागिता रही थी। कार्यक्रम में प्रेमचंद जी के चित्रों तथा हस्तलेखों की प्रदर्शनी आकर्षण का विषय रही थी।

मेरे प्रिय शिष्य श्री विजयवीर त्यागी के निधन पर 'बिजनौर टाइम्स' का विशेष परिशिष्ट प्रकाशित हुआ था। श्री त्यागी की इच्छानुसार उनकी अस्थियां बिजनौर के बैराज गंगा घाट पर विसर्जित की गयी थीं। इस पर 'बिजनौर टाइम्स' के उद्‌गार थे-पहुंची वहीं पर खाक जहां का गुबार था।

बिजनौर के प्रसिद्ध शायर एवं पत्रकार निश्तर खानकाही के निधन पर 'बिजनौर टाइम्स' ने श्रद्धांजलि अंक प्रकाशित किया था, जिसमें निश्तर साहब का आत्मकथ्यात्मक लेख, उनकी चंद गजलें तथा उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विद्वानों के लेख प्रकाशित हुए थे। श्रद्धांजलि अंक के मुखपृष्ठ पर निश्तर साहब के चित्र के नीचे उनकी निम्नलिखित पंक्तियां दी गयी थीं-

किस किस के घर का नूर थी मेरे लहू की आग।
जब बुझ गया तो फिर से जलाया गया मुझे।।

इनके अतिरिक्त 'बिजनौर टाइम्स' ने विशिष्ट अवसरों पर साहित्यकारों की जन्मतिथियों तथा पुण्यतिथियों पर महत्वपूर्ण लेखादि प्रकाशित होते रहते हैं, जिनसे पाठकों को विशेष जानकारी मिलती रही है। 'बिजनौर टाइम्स' प्रति वर्ष

अपने संस्थापक स्व. श्री बाबू सिंह चौहान की पुण्यतिथि पर स्मृतियां शीर्षक से विशिष्ट परिशिष्ट प्रकाशित करता है, जिसमें उनके व्यक्तित्व, कृतित्व तथा उनसे सम्बद्ध स्मृतियां तथा संस्मरण आदि रहते हैं।

श्री चौहान साहब के दोनों सुपुत्र श्री चन्द्रमणि रघुवंशी (सम्पादक बिजनौर टाइम्स) तथा श्री सूर्यमणि रघुवंशी (सम्पादक चिंगारी) इस परम्परा को अग्रसर कर रहे हैं, यह देखकर प्रसन्नता होती है।

***

8. गढ़वाल में हिन्दी पत्रकारिता

समाचार पत्र तथा पत्रिकाएँ जन-जागरण तथा नूतन पुरातन ज्ञान-विज्ञान के प्रसार का सर्वोत्तम माध्यम हैं। देश-विदेश की नवीनतम घटनाओं तथा अद्यतन ज्ञान की जानकारी सामान्य-जन को पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्राप्त होती है। यद्यपि हिन्दी समाचार पत्रों का इतिहास लगभग एक सौ साठ वर्ष पुराना है (हिन्दी के प्रथम समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' का प्रथम प्रकाशन 30 मई 1826 ई० को कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था) तथापि गढ़वाल में हिन्दी समाचार पत्रों का प्रकाशन कुछ विलम्ब से हुआ। प्राप्त जानकारी के अनुसार गढ़वाल में हिन्दी के प्रथम समाचार पत्र 'गढ़वाल समाचार' का प्रकाशन कोटद्वार से 1901 ई० में हुआ था। श्री ललिता प्रसाद नैथानी सम्पादक 'सत्यपथ' ने पं. विश्वम्भर दत्त चंदोला का सन्दर्भ देते हुए अपने लेख 'गढ़वाल के पत्र और पत्रकार' में इसका प्रकाशन सन् 1901 ई० ही स्वीकार किया है। श्री भक्तदर्शन तथा चन्द्रशेखर बड़ोला ने इस समाचार पत्र का प्रकाशन सन् 1902 ई० माना है। लगभग दो वर्ष प्रकाशित होकर यह समाचार पत्र बन्द हो गया। फरवरी 1913 ई० में नैथानी जी ने दुगड्डा से इसका प्रकाशन पुन: आरंभ किया किन्तु कठिनाइयों के कारण दिसम्बर 1914 ई० में इसे बंद कर देना पड़ा।

1901 ई० में कुछ तरुण युवकों ने देहरादून में गढ़वाल यूनियन की स्थापना की थी। इसकी ओर से मई 1905 ई० में देहरादून से 'गढ़वाली' मासिक का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसके सम्पादक-मण्डल में तीन व्यक्ति थे-सर्वश्री तारादत्त गैरोला, चन्द्रमोहन रतूड़ी तथा गिरिराजदत्त नैथानी। कुछ समय बाद पं. विश्वम्भर दत्त चंदोला भी इसके सम्पादक-मण्डल में सम्मिलित हो गए थे। इसमें सन्देह नहीं कि 'गढ़वाली' अपने समय का अत्यन्त प्रभावशाली पत्र था। 20वीं शती के आरंभ में गढ़वाल में जो बौद्धिक क्रांति हुई, उसमें 'गढ़वाली' का विशेष योगदान था।

1906 ई० में श्री विशालमणि थपलियाल ने पौड़ी में 'बद्री केदार प्रेस' की

स्थापना की थी। इसमें 1907 ई० में पं. सदानन्द कुकरेती के सम्पादन में 'विशाल कीर्ति' साप्ताहिक का प्रकाशन हुआ। व्यंग्यपूर्ण लेखों के कारण यह पत्र अधिकारियों की आँखों में खटकता था। कुकरेती जी के अलग हो जाने के पश्चात श्री विशालमणि थपलियाल ने स्वयं कई वर्ष तक इसका सम्पादन किया। 'विशालकीर्ति' की अच्छी ख्याति थी। पौड़ी में जो भली-बुरी घटनाएँ होतीं-'विशाल कीर्ति' में उन पर सविस्तार प्रकाश डाला जाता था। कुकरेती जी की शैली बड़ी चुटीली तथा भाषा लच्छेदार व चटपटी होती थी। उनका सिद्धान्त वाक्य था-

करते जो जड़ विघ्न मार्ग में उनको डाँटो/ज्ञान रूप टाँकी से उनकी जड़ता छाँटो,
दिव्य-मूर्ति वे मूढ़ स्वयं ही हो जाएँगे/इससे पूरी आप सफलता भी पाएँगे।

सन् 1916 ई० में श्री गिरिराजदत्त नैथानी 'गढ़वाली' से, जो अब तक साप्ताहिक हो चुका था, पूर्णत: अलग हो गए किन्त उन्हें पत्रकारिता की धुन समाई हुई थी। अत: अक्तूबर 1917 ई० में उन्होंने 'पुरुषार्थ' साप्ताहिक का प्रकाशन आरंभ किया। यह छपता बिजनौर में था तथा इसका प्रकाशन कभी दुगड्डा और कभी नैथाना से होता था। इसके कुछ अंक बाराबंकी में भी छपे थे। इसी अव्यवस्था के कारण यह शीघ्र ही बन्द हो गया। जून 1921 ई० में इसका प्रकाशन पुन: आरंभ हुआ किन्तु यह भी स्थायी तथा नियमित न हो सका। अपनी मृत्यु से कुछ मास पूर्व नैथानी जी इसे पुनर्जीवित करना चाहते थे और उन्होंने इसका एक अंक निकाला भी था किन्तु 21 नवम्बर 1927 ई० को वे चिरनिद्रा में निमग्न हो गए और उनके साथ ही 'पुरुषार्थ' अस्त हो गया। सन् 1918-19 ई० के लगभग डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल ने अपने विद्यार्थी जीवन में हस्तलिखित पत्रिका 'मनोरंजनी' निकाली थी। हस्तलिखित पत्रिकाओं की परम्परा में यह प्रयास भी उल्लेखनीय है।

श्री जोधा सिंह नेगी के सत्प्रयासों से पौड़ी से 'क्षत्रिय वीर' पाक्षिक का प्रकाशन हुआ। इसका प्रथम अंक 15 जनवरी 1922 ई० को निकला था। यह पत्र अनियमित रहते हुए भी 1938 ई० तक चलता रहा। आरंभ में इसके सम्पादक श्री प्रताप सिंह नेगी थे। उनके पश्चात इसका सम्पादन क्रमश: श्री कोतवाल सिंह नेगी वकील तथा श्री शंकर सिंह नेगी वकील ने किया।

बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में उत्तराखंड में राजनैतिक चेतना उभार पर थी। उन दिनों कुली बेगार के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन चला था। अधिकारीगण जब दौरे पर जाते तो पर्वतीय लोगों को जबरन बेगार ढोनी पड़ती थी। इसके विरुद्ध कुमाऊँ में पं. बद्रीदत्त पाण्डेय ने तथा गढ़वाल में बैरिस्टर मुकंदी लाल

जी ने जोरदार आवाज उठाई थी। इस आन्दोलन को तीव्र करने के लि बैरिस्टर साहब ने 1923 ई० में 'तरुण कुमाऊँ' का प्रकाशन किया, जो 1925 ई० तक चलता रहा।

1928 ई० में पं. कृपाराम मिश्र ने 'गढ़ देश' सासाहिक का प्रकाशन आरंभ किया। इसके द्वारा उन्होंने कांग्रेस का संदेश गढ़वाल के घर-घर में पहुँचाया। मिश्र जी अच्छे कवि थे। उनके हृदय में देशप्रेम की ज्वाला धधकती रहती थी। वे महात्मा गाँधी के परम भक्त थे तथा काव्य के क्षेत्र में पं. गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' को अपना गुरु मानते थे।

1936 ई० में पौड़ी से श्री महेशानंद थपलियाल के सम्पादन में 'उत्तर भारत' प्रकाशित हुआ। इस पत्र का क्षेत्र व्यापक था तथा यह सम्पूर्ण गढ़वाल का प्रतिनिधित्व करता था। 1938 ई. में श्री भक्तदर्शन ने लैंसडौन (गढ़वाल) से 'कर्मभूमि' का प्रकाशन आरंभ किया था, जो अब तक चल रहा है। वर्तमान में इसके सम्पादक श्री लखपत सिंह रावत हैं।

1946 ई० में देहरादून से 'युगवाणी' का उदय हुआ। इसका शुभारंभ श्री भगवतीप्रसाद पांथरी ने किया। पांथरी जी की नियुक्ति जब काशी विद्यापीठ में प्रवक्ता के पद पर हो गई तब उन्होंने 'युगवाणी' का भार आचार्य गोपेश्वर कोठियाल को सौंप दिया। 'युगवाणी' ने टिहरी तथा देहरादून में जागृति की लहर फैलाई। उत्तराखंड की सीमान्त घाटी पर नन्द प्रयाग ग्राम है। इसकी गणना गढ़वाल के समृद्ध ग्रामों में की जाती है। नन्द प्रयाग से 'देव भूमि' सासाहिक का प्रकाशन हो रहा है। इसके सम्पादक श्री रामप्रसाद बहुगुणा हैं।

1955 ई० में देहरादून से श्री राधाकृष्ण कुकरेती के सम्पादन में 'नया जमाना' सासाहिक का प्रकाशन आरंभ हुआ। यह साम्यवादी विचारधारा का पत्र है। देहरादून, टिहरी तथा उत्तरकाशी में इसका विशेष प्रभाव है। देहरादून से ही 'भास्कर', 'निर्मल', 'दून घाटी' आदि पत्रों का प्रकाशन हुआ पर ये दीर्घजीवी न हो सके।

1956 ई० में कोटद्वार से श्री ललिताप्रसाद नैथानी के सम्पादन में 'सत्यपथ' सासाहिक का शुभारंभ हुआ जो अब तक नियमित रूप से प्रकाशित हो रहा है। इसके सम्पादक श्री ललिता प्रसाद नैथानी के शब्दों में ''सत्यपथ की नीति गाँधी जी का आदर्श और गुरुदेव का चिन्तन रहा। 'सत्यपथ' राजनीति को ही सब कुछ नहीं मानता। वह साहित्यिक और सांस्कृतिक जागरण को भी समाज के लिए अत्यावश्यक समझता है।'' उतराखण्ड की साहित्यिक-सांस्कृतिक धरोहर को

प्रकाश में लाने का इसने सराहनीय कार्य किया है।

इस समय गढ़वाल से लगभग 30 हिन्दी पत्रों का प्रकाशन हो रहा है। श्री चन्द्रशेखर बड़ोला ने 'पत्रिका जगत् निर्देशिका' में इनकी सूची दी है। उपर्युक्त पत्रों के अतिरिक्त इस समय गढ़वाल से जो प्रमुख पत्र प्रकाशित हो रहे हैं, वे इस प्रकार हैं- 'अलकनंदा' स. योगेश पाथरी (लैंसडौन), 'उत्तरांचल' पं. सोमवीर लाल उनियाल 'प्रदीप' (देहरादून), 'उपमन्यु' सं. के एस परमार (टिहरी), 'गढ़ गौरव' सं. कुँवर सिंह नेगी 'कर्मठ' कोटद्वार, 'गढ़ रैवार' सं. सुरेन्द्रदत्त (उत्तरकाशी), 'गढ़वाल मंडल' सं. वाचस्पति गैरोला (पौड़ी), 'जन लहर' सं. चन्द्रमोहन लखेड़ा (देहरादून), 'टिहरी टाइम्स' सं बरफसिंह रावत (टिहरी), 'तरुण हिन्द' सं. योगेश्वर प्रसाद धूलिया (ऋषिकेश), 'दून दर्शन' सं. राकेश चंदोला (देहरादून), 'नैतिकी' सं. महावीर प्रसाद गैरोला (टिहरी), 'पर्वत वाणी' सं. पीताम्बर दत्त जोशी (उत्तरकाशी), 'मस्ताना मजदूर' सं. रामचन्द्र उनियाल (कोटद्वार), 'मातृपद' सं. कैलाशचन्द्र जुगराण (पौड़ी), 'मैती' सं. सतेश्वर प्रसाद 'आजाद' (चमोली), 'युवा स्वप्न' सं देवानंद बलोरी (कोटद्वार), 'सिलसिला' स. त्रिनेत्र जोशी (देहरादून), 'शैल शिखर' सं. बंशीाल पुण्डीर (टिहरी), 'हिमवंत' सं. चारुचन्द्र चंदोला (पौड़ी), 'हिमाचल' सं. सत्यप्रसाद रतूड़ी (मसूरी), 'हिमानी' सं. परिपूर्णानंद पैन्यूली (देहरादून)। इनके अतिरिक्त श्री ललिताप्रसाद नैनाथी ने लेखक के नाम लिखित अपने एक पत्र में गढ़वाल से प्रकाशित होने वाले 'सीमांत प्रहरी' (मसूरी), 'फ्रंटियर मेल' (देहरादून) तथा 'हिमाचल टाइम्स' (देहरादून) का भी उल्लेख किया है।

हिन्दी पत्रकारिता के व्यापक परिप्रेक्ष्य में यदि हम गढ़वाल मंडल से प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं पर दृष्टि डालें तो निश्चय ही हमें संतोष होगा। विषम परिस्थितियों तथा सीमित साधनों के रहते हुए भी गढ़वाल के पत्रकारों ने पत्रकारिता को मिशन मानकर साहस एवं परिश्रमपूर्वक इसे अग्रसर किया। यह उन्हीं के त्याग एवं तपस्या का फल है कि आज गढ़वाल से कई उच्चस्तरीय पत्रों का प्रकाशन हो रहा है।

***

9. पं. सत्यनारायण कविरत्न

पं. सत्यनारायण कविरत्न सज्जनता, सरलता तथा सादगी की साक्षात् मूर्ति थे। ठिगने कद, दुर्बल शरीर, आकर्षण रहित आकृति, अकृत्रिम वेषभूषा, दुपल्लू टोपी, वृन्दावनी बगलबन्दी दुपट्टा और धोतीधारी पं. सत्यनारायण कविरत्न को देखकर उनके गुणों की गरिमा का अनुमान लगाना कठिन ही था। पं. पद्म सिंह

शर्मा ने कविरत्न जी की सरलता का उल्लेख करते हुए उनसे अपनी प्रथम भेंट का वर्णन इन शब्दों में किया है–मैं समझ गया हो, न हो यह सत्यनारायण है, पर फिर भी परिचय के लिए पं. मुकुन्दराम जी को इशारा कर ही रहा था कि आपने तुरंत अपना यह मौखिक 'विजिटिंग कार्ड' हृदयहारी टोन में स्वयं पढ़ सुनाया–

'नवल-नागरी-नेह रत, रसिकन ढिंग बिसराम।
आयौं हौं तुव दरस कौं, सत्यनरायन नाम।।'

मुझे याद है, उन्होंने 'निरत नागरी' कहा था। 'निरत' 'रत' में पुनरुक्ति समझ कर मैंने कहा–'नवल नागरी' कहिए तो कैसा? फिकरा चुस्त हो जाय। हस्बहाल मजाक (समयोचित विनोद) समझ कर वह एक अजीब भोलेपन से मुस्कराने लगे, बोले–"अच्छा, जैसी आज्ञा।"

वे अपने नाम के अनुरूप सत्य, ग्राम के वासी तथा तकल्लुफ से दूर थे। पं. पद्म सिंह शर्मा को अपने एक काव्यात्मक पत्र में उन्होंने लिखा था–

आई तव पाती।
नहिं बिसरायो अजहुँ मोहि यह जानि सिरानी छाती।
सदा दारू-योषित सम बेबस आज्ञा मुदित प्रमानै।
कोरो सत्य ग्राम को बासी कहा तकल्लुफ जानै।।

पं. सत्यनारायण कविरत्न की वाणी में अनोखा माधुर्य था, इसीलिए उन्हें 'ब्रजकोकिल' के विरद से विभूषित किया गया था। उनके मधुर काव्य-पाठ की प्रशंसा महात्मा गांधी, महामना मदन मोहन मालवीय जी, स्वामी रामतीर्थ तथा कवीन्द्र रवीन्द्र नाथ टैगार तक ने मुक्त कंठ से की थी। कहा जाता है कि एक बार मथुरा में स्वामी रामतीर्थ की एक सभा में सत्य नारायण जी को काव्य-पाठ के लिए केवल पांच मिनट का समय दिया गया था किन्तु स्वामी जी उनकी कंठ-माधुरी पर ऐसे मुग्ध हुए कि कविता समाप्त होने पर भी 'अभी और' 'अभी और' कहते चले गए और अपना व्याख्यान देना भूलकर पूरे पौन घंटे तक उनकी काव्य-माधुरी का रसपान करते रहे।

पं. सत्यनारायण कविरत्न ने अपने समय के महापुरुषों यथा–स्वामी रामतीर्थ, गोपाल कृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, महामना मालवीय जी, कवीन्द्र रवीन्द्र तथा श्रीमती सरोजिनी नायडू के सम्मान में भावपूर्ण काव्यांजलियों की रचना की थी, जिनमें से अधिकांश उन महापुरुषों की उपस्थिति में स्वयं कविकण्ठ से प्रस्तुत की गयी थीं। सन् 1918 ई० में अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन विश्ववंद्य महात्मा गाँधी की अध्यक्षता में इन्दौर

में सम्पन्न हुआ था। इस अवसर पर सत्यनारायण जी ने अपनी 'गाँधी स्तवन' कविता प्रस्तुत की थी, जिसे सहस्त्रों श्रोताओं ने मन्त्रमुग्ध होकर सुना था। उसकी दो पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

जय कर्मवीर त्यागी परम आत्म-त्यागी विकास कर।
जय यस-सुगंधि-बितरन करन गाँधी मोहनदास वर।।

कविरत्न जी की कविताओं का संग्रह 'हृदय तरंग' नाम से प्रकाशित है, जिसमें उनकी विनय, उपालम्भ, स्वदेश-भकित, प्रेमकली, प्रशस्ति-गान, प्राकृतिक सौन्दर्य आदि स्फुट कविताओं के साथ उनका प्रसिद्ध काव्य 'भ्रमरदूत' भी संकलित है। कविरत्न जी के विनय के पदों में पूर्ण तल्लीनता, उपालम्भ में चुटीलापन, स्वदेश भक्ति में समपर्ण-भाव, प्रशस्ति गान में गुण-वर्णन तथा प्राकृतिक सौन्दर्य में उनका सूक्ष्म निरीक्षण विद्यमान है।

कविरत्न जी ब्रजभाषा के अनन्य भक्त थे। इनी-गिनी कविताओं को छोड़कर उनका सम्पूर्ण काव्य ब्रजभाषा में ही है। ब्रजभाषा की महिमा का वर्णन करते हुए वे कहते हैं–

बरनन को करि सकै भला तिहि भाषा कोटी।
मचलि-मचलि जामैं माँगी हरि माखन रोटी।
जाको सो रस अवगाहत जाही मैं आवै।
कैसो हू गुनवान थाह जाकी नहि पावै।

कविरत्न जी देश की दुर्दशा से दुखी थे। उन्होंने भारतभूमि को दुःखिनी माता के रूप में देखा तथा उनके उद्धार के लिए वे भगवान से प्रार्थना करते हैं–

बन्दौं भारत भूमि महतारी।
शेष अस्थि पिंजर बस केवल, भययुत चकित विचारी।
'अबला' नाम किये जग साँचो जग में सकल प्रकारी।
तीस कोटि सुत अछत, दुखी तउ कैसी गति संसारी।
जात लाज ब्रजराज राखिये याकी कृष्ण मुरारी।
सत्यदेव! अब अधिक न या पै, विपदा जात सहारी।

अपने 'भ्रमर दूत' में सत्यनारायण जी ने माता यशोदा के बहाने भारत माता की दयनीय दशा का चित्रण किया है। यहाँ उनकी नवीन सूझ-बूझ द्रष्टव्य है। माता यशोदा अपने संदेश में कृष्ण को उपालंभ देती हुई भ्रमर से कहती हैं–

जननी जन्मभूमि सुनियत स्वर्गहु सों प्यारी।
सो तजि सबरो मोह साँवरे तुमनि बिसारी।

का तुम्हरी गति मति भई जो ऐसा बरताव
किधौं नीति बदली नई ताकौ पर्‌यौ प्रभाव।।

***

जे तजि मातृभूमि सों मता, होत प्रवासी।
तिन्हें बिदेसी तंग करत विपदा दै खासी।

पं. सत्यनारायण कविरत्न की रचनाओं में भवभूति की भाँति करुण रस की अजस्र धारा प्रवाहित हुई है। उन्होंने भवभूति के प्रसिद्ध नाटक 'उत्तर रामचरित' तथा 'मालती माधव' का गद्य-पद्यमय अनुवाद तथा कालिदास के 'रघुवंश' के तीन सर्गों का पद्यानुवाद किया था, जिनमें मूल जैसा सौन्दर्य विद्यमान है।

उदाहरणार्थ, 'उत्तर रामचरित' से एक छन्द प्रस्तुत है-

जब ध्यान में तन्मय होत, स्वकल्पित तासु स्वरूप ही दीसि परै।
विरहा की दशा हू में धीरज दै इमि प्यारो सदा दुख दूरि करै।
भ्रम नष्ट भये पै कछू न कछू बन जीरन जो जग रूप धरै।
घबराइ महाबिलखै दुखिया जिय मानौ तुसानल माँहि जरै।। 3/38

कविरत्न जी ने अंग्रेजी से टेनीसन की 'ईनाके आरडिन' तथा मैकाले की 'होरेशस' नामक कविताओं के भी सुन्दर पद्यानुवाद किए थे।

पं. सत्यनारायण कविरत्न का गार्हस्थिक जीवन सुखी नहीं रहा। पत्नी के कर्कश स्वभाव का भोले-भाले सत्यनारायण जी पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा, जो अनन्तः उनकी मृत्यु का कारण बना और वे 39 वर्ष की अल्पवय में ही 18 अप्रैल 1918 ई० में इस संसार से विदा हो गये। पं. बनारसीदास चतुर्वेदी ने 'कविरत्न सत्यनारायण जी की जीवनी' में इस दुखान्त प्रसंग का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है।....

भयो क्यों अनचाहत को संग।
सब जग के तुम दीपक मोहन, प्रेमी हमहूँ पतंग।
लखि तब दीपतिह-देह-शिखा में निरत विरह-लौ लागी।
खिंचति आप सो आप उतहिं, यह ऐसी प्रकृति अभागी।

***

यह स्वभाव को रोग तिहारो हिय आकुल पुलकावै।
सत्य बतावहु, का इन बातनि, हाथ तिहारे आवै।।

ऐसे पदों में कवरित्न जी की व्यथा का स्पन्दन सुनाई पड़ता है।

***

10. ऐसे कवि को बार-बार नमन

पं. सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावाद के आधार स्तंभ तो थे ही, उनकी गणना हिन्दी के कालजयी कवियों में भी की जाती है। उनका जन्म 1896 ई० में बसंत पंचमी के दिन, बंगाल में महिषादल रियासत में हुआ था, जहाँ उनके पिता पं. रामसहाय त्रिपाठी पुलिस विभाग में उच्चाधिकारी थे। बंगला भाषा के वातावरण में पले पं. सूर्यकांत त्रिपाठी ने 'सरस्वती' की प्रतियाँ लेकर हिन्दी सीखी थी। उनका उपनाम 'निराला', श्री महादेव प्रसाद सेठ द्वारा 1923 ई० में कलकत्ता में संस्थापित 'मतवाला' के अनुप्रास पर आया था। उनके उपनाम सहित प्रथम प्रकाशित रचना 'जूही की कली' है, जो 'मतवाला' के अठारहवें अंक में प्रकाशित हुई थी।

निराला जी का जीवन सतत् संघर्षों की अनवरत गाथा है। अप्रत्याशित विपरीत परिस्थितियों से वे आजीवन जूझते रहे किन्तु उन्होंने कभी पराजय स्वीकार नहीं की। तथ्य यह है कि एक ओर उनकी साहित्य-साधना चर्चा का विषय बनी रही और दूसरी ओर वे सदा विवादों से घिरे रहे। चतुर्दिक अभावों से ग्रस्त रहने के बावजूद उनके निरन्तर संघर्षरत स्वाभिमानी व्यक्तित्व के कारण उनको हिन्दी-साहित्य में महाप्राण के अभिधान से विभूषित किया गया। इस सत्य को भी नकारा नहीं जा सकता कि स्वतंत्र भारत में राजकीय सम्मानों से सजे, अभिनंदन ग्रंथों से महिमामंडित, पद्म पुरस्कारों से सुशोभित तथा स्थापित मंचों के गौरवगान से सम्पन्न होते हुए भी कोई साहित्यकार हिन्दी साहित्य-जगत् में निराला जी के समान साहित्य-प्रेमियों का श्रद्धाभाजन नहीं बन सका।

निराला जी अपने जीवन काल में ही किम्वदंती बन गये थे। उनके निधन के उपरान्त अनेक लेखकों ने उन्हें अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित किये। वे अपने समसामयिक लेखकों के श्रद्धा-भाजन थे तथा उनके मरणोपरान्त भी अनेक कवियों ने उन्हें काव्यांजलि अर्पित की। यह क्रम अब तक चल रहा है।

प्रकृति के सुकुमा कवि सुमित्रानंदन पंत ने निराला जी की रूढ़िविरोधी छवि को अंकित करते हुए लिखा था-

छंद, बंध ध्रुव तोड़, फोड़कर पर्वत कारा
अचल रूढ़ियों की कवि, तेरी कविता धारा
मुक्त, अबाध, अमंद, रजत, निर्झर-सी निःसृत
गलित, ललित, आलोक राशि/चिर अकलुष अविजित
अमृत-पुंज कवि, यशः काय तन जरामरण जित्
स्वयं भारती से तेरी हृत्तंत्री झंकृत।

डॉ० रामकुमार वर्मा ने निरालाजी के गीतों में क्रांति और माधुर्य दोनों के सामंजस्य से अमरता का संदेश स्वीकार किया है-

ताण्डव और लास्य की ध्वनि में मुक्त गीत तुमने गाये हैं,
जीवन के सम्पूर्ण चित्र परिपूर्ण अमरता से लाये हैं।

डॉ० जगदीश गुप्त ने निराला जी के बाह्य स्वरूप का चित्रांकन करते हुए उनकी तुलना गरल पान करने वाले भगवान शंकर से की है, जो विषपान करने पर भी लोक पावन सुरसरि को अपने शीर्ष पर धारण करते हैं। निराला जी ने भी इसी प्रकार सांसारिक कष्टों को भोगते हुए जग को अपने काव्यामृत से आप्यायित किया-

अमर हिन्दी के हिमालय! वंदनीय विशाल,
पर्व-पावन-प्राण ज्योतित, गर्व-उन्नत भाल।
दीर्घनासा अधर पतले, सबल वृष-स्कंध,
युग-पुरुष! युग-बाहु लंबित युग-चरण निर्बंध।
वस्त्र गैरिक, सांध्य घन के आवरण में सूर्य,
धूलि धूसर देह श्लथ, अन्तर प्रभा से पूर्य।

साहित्य के क्षेत्र में निराला जी के योगदान तथा त्याग का स्मरण करते हुए बाबा नागार्जुन जी ने लिखा था-

मरु-प्रांतर को तुमने अन्तर का नीर दिया
कविता-तपस्विनी को ज्योतिर्मय चीर दिया।
रह गये प्रतीक्षा में सारे दिक्पाल किन्तु तुम नहीं झुके
वह द्वापर वाली शर-शय्या की चुभन आज
आये कोई तुमसे सीखे युग-युग का हालामृत पीना।
आये कोई तुमसे सीखे यह स्वाभिमान।

निराला जी ने अपनी काव्य-धारा से हिन्दी-साहित्य को सिंचित किया। अपार कष्टों को झेलते हुए भी उन्होंने उसे प्रवहमान रखा। इसके बदले उन्हें उपेक्षा ही मिली। सुश्री उषा चतुर्वेदी के शब्दों में-

तुम हिमगिरि से व्यक्तित्व धरा के ऊपर,
गीतों की गंगा कभी न रुकने पाती।
तुम आग लिये सूरज की अपने उर में,
जीवन की गर्मी कभी न चुकने पाती।

सब कुछ लेकिन एक प्रश्न बचता है,
तुमने बदले में आखिर क्या-क्या पाया।
लोगों का उत्तर कुछ हो, मेरा उत्तर,
जल को क्या देगी शुष्क अधर की माया।

डॉ० हरीश ने निराला जी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व का सजीव चित्र इन शब्दों में अंकित किया है-

तुम विराट पौरुष हिन्दी के/प्राणवान! क्या सपना देखा
बना राजपथ पगडंडी को/खींच गये तुम लक्ष्मण-रेखा
गीतों के ज्योत्स्ना के नूपुर/हे चपला के चन्द्रहार तुम
कविर्मनीषी कलाकार तुम
ओ यौवन के प्रहरी! तुमने चिर कुमार-सा लिखा काव्य है
प्यास, पीर, पुलकों में डूबा/गीतों का यह महाकाव्य है
जनजन का जय लेखा खींचा/हे करुणा के चित्रकार तुम

संसार में योग्यतम व्यक्तियों की उपेक्षा होती रही है। निराला जी भी इसके अपवाद नहीं हैं। कविवर बालस्वरूप राही ने इसे इन शब्दों में व्यक्त किया है-

नाम तुम्हारा जब जब महाप्राण! सुनता हूँ,
एक कथन रह-रह कर मुझे याद आता है।
'पुत्र योग्यतम होता है जो माँ वसुधा का
सबसे अधिक उसे ही विष पीना पड़ता है।'

श्री शमशेर बहादुर सिंह ने निराला जी को अपना मार्गदर्शक स्वीकार किया था। इस सदंर्भ में उन्होंने लिखा है-

भूल कर जब राह भटका मैं/तुम्हीं झलके, हे महाकवि
सघन तम की आँख बन मेरे लिए
अकल, क्रोधित प्रकृति का/ विश्वास बन मेरे लिए।

कविवर रामनारायण सिंह 'मधुर' के अनुसार निराला जी ने अपना तन-मन-प्राण सब कुछ माँ भारती को समर्पित कर दिया। उनकी वाणी युगों-युगों तक साहित्य-प्रेमियों को अनुप्राणित करती रहेगी-

वीणावादिनि के वरद पुत्र! हे महाकृति! युगकवि नायक।
नव स्वर, नव लय, नव गति से नव गीतों के हे नव गायक।
तन, मन, प्राण समर्पित सब कर माँ भारति के श्री चरणों में।
तूने छेड़ी तान निराली जो युग-युग जीवन फलदायक।।

श्री देवनारायण त्रिवेदी 'देव' ने एक कवित्त में निराला जी की प्रमुख कृतियों का उल्लेख इस प्रकार किया है-

'जूही की कली' 'कुकरमुत्ता' कविताएँ भव्य
'तुलसीदास' भारती का एक नाम है।
'कुल्ली भाट' 'बिल्लेसुर' 'चतुरी चमार' जैसे
नव्य नायकों की अभिव्यक्ति पूर्णकाम है।
हिन्दी को मिला है अधुनातन स्वरूप दिव्य
'प्रगति-प्रयोग' का अनूठा परिणाम है।
भारत व भारती को जिससे मिला है आज,
विश्व में निराला का कृतित्व अभिराम है।।

श्री रामनिवास 'विद्यार्थी' ने निराला जी को सन्त कवियों की परम्परा में वाल्मीकि, सूर, तुलसी, मीराबाई के समकक्ष मानते हुए लिखा था-

तुम थे कवियों के सौम्य सन्त/सन्तों में अनुपम कलावन्त
तुम कलावन्त में थे द्युतिवन्त मनोहर/ कवि सन्तों की युग परम्परा
अक्षुण्ण रखी तुमने मधुरा/ वाल्मीकि, सूर, तुलसी, मीरा कवि शेखर।

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' जी ने चार पंक्तियों में निराला जी के संबंध में चार मन: स्थितियों का मार्मिक चित्र उपस्थित किया है-

तुम जीवित थे तो सुनने को मन करता था,
तुम चले गये तो गुनने को मन करता है।
तुम सिमटे तो साँसें सहमी-सहमी थीं,
तुम बिखर गये तो चुनने को मन करता है।

निराला जी ने गृहस्थ रहते हुए भी फकीरों की भाँति जीवन यापन किया। फाकामस्त होते हुए भी वे अमीरों की भाँति रहे। अपने त्याग और तपस्वी जीवन के कारण मानवी इतिहास में उनका नाम हिन्दी-साहित्य-जगत् में उदाहरण के रूप में सदैव अंकित रहेगा। श्री महेन्द्र भटनागर के अनुसार-

बेघरबार रहकर भी दिया आश्रय फकीरों की तरह
फाकामस्त रह कर भी जिये अमीरों की तरह
अंकित हो गये तुम मानवी इतिहास में कुछ इस तरह
आएगा तुम्हारा नाम होठों पर नजीरों की तरह।

कविवर नजीर बनारसी ने निरालाजी के निधन पर उनके कालजयी स्वरूप का उल्लेख करते हुए वेदनापूरित शब्दों में लिखा था-

अलग उसका रस्ता अलग उसकी मंजिल/ निराली डगर और राही निराला।
अजब सूर्य डूबा है हिन्दी जगत् में/कि डूबा तो कुछ और फैला उजाला।।

....

नहीं वो मगर उसका शोरा रहेगा/वो जिन्दा था, जिन्दा है, जिन्दा रहेगा।
मिटा देगा कितनों को इतिहास लेकिन/वो जीने के काबिल था जिन्दा रहेगा।
खटकता था आँखों में जो खार बनकर/उसे आज दिल की कली दे रहे हैं।
न लेने दिया चैन की साँस जिसको/उसे आज श्रद्धांजलि दे रहे हैं।

डॉ० विमला उपाध्याय आज के संघर्षशील, तनावयुक्त, समस्याप्रधान युग में निराला जी को पथप्रदर्शक मानती हैं। निराला जी ने बाधाओं का सदैव डटकर सामना किया था। वे आज भी साहित्यकारों के लिए प्रणम्य हैं-

आज का जीवन कितना ही हो जटिल/संघर्षशील, तनावयुक्त समस्याप्रधान
निराला सबका उत्तर बने खड़े हैं/आवे हिमायल-सी बाधा रोज
तब भी ताल ठोक कर खड़े हैं/ऐसे कवि को बार-बार नमन है।

***

11. शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले

आधुनिक हिन्दी कवियों ने उन अमर बलिदानियों की जय-जयकार से अपनी लेखनी को सदा पवित्र किया है, जिन्होंने देश के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। देशभक्तों को अपना राष्ट्र एक जीवन्त सत्ता के रूप में दिखाई पड़ता है। भारत माता की कल्पना इसी का मूर्त्त रूप है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने मातृभूमि भारत को परम ब्रह्म की सगुण मूर्ति के रूप में अंकित किया है-

नीलाम्बर परिधान हरित पट पर सुन्दर है,
सूर्य चन्द्र युग मुकुट मेखला रत्नाकर है,
नदियाँ प्रेम-प्रवाह सूर्य तारा मंडल है,
बंदी विविध विहंग शेष फन सिंहासन है,
करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस वेश की।
हे मातृभूमि तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की।।

अपनी ऐसी प्रिय मातृभूमि को परतंत्रता के बंधन में पड़े देखकर कौन स्वाभिमानी शांति से बैठ सकता है। जब-जब देश और धर्म पर संकट आया, तब-तब वीरों की टोलियाँ इनकी रक्षा के लिए निकल पड़ीं तथा उन्होंने इनके लिए अपने प्राणों की बाजी लगा दी। ऐसे ही बलिदानी वीर इतिहास के पन्नों में शहीद कहलाए।

शहीदों की इस भावना को कवियों ने अनेक रूपों में व्यक्त किया है।

श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की मान्यता है कि अपना सर्वस्व होमकर ही स्वतंत्रता प्राप्त होती है। बेड़ियों की झनझनाहट में उन्हें जीवन-मंत्र सुनाई पड़ता है। उन्हीं के शब्दों में-

नहीं बेड़ियों की झन झन यह, यह है जीवन मंत्र
काँप रहा सुन सुन जिसको क्षण-क्षण शासन तंत्र
वे पशु बल के अधिनायक क्या जाने इनका तत्त्व
निज सर्वस्व होमकर ही मिलता है मुक्त निजत्व।

इंकलाब के शायर जोश मलीहाबादी देशभक्तों की दृढ़ता को अपनी ओजमयी वाणी में प्रस्तुत करते हुए कहते हैं-

कोई कूवत राह से मुझको हटा सकती नहीं
कोई ज़रबत मेरी गर्दन को झुका सकती नहीं,
संगो आहन में मेरी नजरों से चुभ जाती है फाँस,
आँधियों की मेरे मैदां में उखड़ जाती है साँस।

पं. ब्रजनारायण 'चकबस्त' स्वदेश के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर करने की प्रेरणा देते हैं। उनकी दृष्टि में वही व्यक्ति साहसी है, जो स्वदेश के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा देता है-

मिटा जो नाम तो दौलत की जुस्तजू क्या है,
निसार न हो जो वतन पर तो आरजू क्या है,
फ़िदाए वतन जो हो आदमी दिलेर है वह,
जो यह नहीं तो फ़कत हड्डियों का ढेर है वह।

वास्तव में वे ही लोग धन्य हैं, जिन्हें अपने देश का अभिमान है, जो उसका गुणगान करते हैं तथा समय आने पर उसके लिए अपना बलिदान कर देते हैं। ऐसे पुण्यात्मा ही इस लोक से लेकर परलोक तक अमर हो जाते हैं। देश की आन पर मर मिटने वाले वीर मृत्यु से नहीं डरते। वे अपने प्राणों को हथेली पर रखकर मृत्यु को एक खेल ही मानते हैं। जीवन क्षण-भंगुर है, पर देश तो अमर है। अत: देश की रक्षा सर्वोपरि धर्म है। शहीद अशफाक उल्ला खाँ मौत को ललकारते हुए कहते हैं-

मौत को एक बार आना है तो डरना क्या है,
हम सदा खेल ही समझा किए डरना क्या है,
वतन हमेशा रहे शाद काम और आजाद,
हमारा क्या है, अगर हम रहे, न रहे।

शायर 'वर्क' भारत-भूमि की मिट्टी को कफन के रूप में स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में यह मिट्टी कस्तूरी है। खाके वतन उन्हें जन्नत से भी अधिक प्रिय है-

मरकर मिली है चादरे खाके-वतन मुझे
मिट्टी ने इस जमीं की दिया है कफन मुझे
भारत की गर्दे राह है मुश्के खुतन मुझे
जन्नत से भी अजीज है खाके वतन मुझे।

अपने देश के लिए प्राणों की आहुति चढ़ाने वालों की एक लम्बी परम्परा रही है। भारत में विदेशी शासन की स्थापना के पश्चात् ज्यों-ज्यों विदेशी सत्ता के अत्याचार बढ़ते गए त्यों-त्यों वीरों के बलिदानों की गौरव गाथाएं भी जुड़ती गईं। महाराणा प्रताप, गुरु तेग बहादुर, बंदा वैरागी जैसे वीर, बलिदानी भारतीयों के आदर्श बने। अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध जब विद्रोह की लपटें उठीं तब तो शहीदों की एक श्रृंखला ही आरंभ हो गई। 1857 ई० के स्वतंत्रता-संग्राम में वीर मंगल पांडे, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, रुहेलखंड के खान बहादुर खाँ तथा बिहार के कुंवर सिंह अंग्रेजों से लड़ते हुए शहीद हुए। भारत के अंतिम सम्राट बहादुर शाह को अंग्रेजों ने रंगून में कैद कर दिया, जहाँ अपनी प्रिय जन्मभूमि के लिए तरसते हुए उन्होंने अंतिम सांस ली। सन् 1857 ई० के स्वतंत्रता-संग्राम के असफल हो जाने पर क्रांति की चिंगारी कुछ समय तक दबी रही, किन्तु भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के पश्चात उसमें नरम दल के साथ-साथ गरम दल का भी उदय हुआ। गरम दल की ऊर्जा बाल गंगाधर तिलक और लाला लाजपतराय के रूप में प्रकट हुई, जिसने सरदार भगत सिंह जैसे शहीदों के निर्माण में योग दिया। साइमन कमीशन का बहिष्कार करते हुए लाला लाजपतराय जी पर पुलिस ने घातक प्रहार किए, जिनके कारण 17 नवम्बर 1928 ई० को उनका प्राणांत हो गया। क्रांति वीरों में दिल्ली केस के शहीद अवध बिहारी, लाहौर षडयंत्र केस के शहीद करतार सिंह, काकोरी केस के शहीद पं. रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिड़ी, ठा. रोशन सिंह तथा अशफाक उल्ला खाँ के नाम चिरस्मरणीय रहेंगे। अपने साथियों शिवराम, राजगुरु तथा सुखदेव सहित सरदार भगत सिंह 23 मार्च 1931 ई० को फाँसी के तख्ते पर चढ़ा दिए गए। इनमें सरदार भगत सिंह को आज भी लोग शहीदे आजम के रूप में याद करते हैं। फाँसी के समय उनकी आयु मात्र 24 वर्ष थी। 27 फरवरी 1931 ई० को चन्द्रशेखर आजाद पुलिस का सामना करते हुए शहीद हुए। 23 अगस्त 1945 ई० को बैंकाक से टोकियो जाने वाला वायुयान दुर्घटनाग्रस्त हो गया था, जिसमें नेता जी सुभाषचन्द्र बोस यात्रा कर रहे थे। इसके

बाद उनका पता नहीं चल सका।

स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर तो अपने सभी भाइयों को भारत माता की बलिवेदी पर चढ़ाने के लिए उद्यत थे। उनकी दृष्टि में वही व्यक्ति धन्य है जो मातृभूमि हित जीवन धारण करते हैं। उनकी एक मराठी कविता का अनुवाद इस प्रकार है-

दो क्या, यदि होते सात बंधु भी मेरे/मैया! हम तेरे लिए उन्हें बलि देते,
माता माँ की हैं तीस कोटि संतानें/पर धन्य वही जो मातृ-भाक्ति हित जीते।

शहीद अशफाक उल्ला खाँ की आखिरी आरजू थी कि उनके कफन में वतन की जरा सी खाक रख दी जाए-

कुछ आरजू नहीं है, है आरजू तो यह है,
रख दे कोई जरा सी खाके वतन कफन में।

सरदार भगत सिंह ने फाँसी का फंदा चूमने से दो दिन पूर्व अपने अनुज कुलतार सिंह को जो पत्र लिखा था, उसकी अंतिम पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

कोई दम का मेहमाँ हूँ ऐ अहले महफिल/चरागे सहर हूँ बुझना चाहता हूँ
मेरी हया में रहेगी ख्याल की बिजली/यह मुश्ते खाक है फानी रहे न रहे।

स्वतंत्रता के अनेक दीवाने 'वंदे मातरम्' का उद्घोष करते हुए फाँसी के फंदे पर झूल गए। शहीदे आजम भगत सिंह ने फाँसी का फंदा गले में पडते हुए भी 'इंकलाब जिंदाबाद' का नारा बुलंद किया था। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस का नारा था--- 'जय हिन्द'।

इस प्रकार क्रांतिचेता ही नहीं बल्कि शांति के संदेशवाहक भी भारतमाता की बलिवेदी पर शहीद हुए हैं। श्री गणेश शंकर विद्यार्थी, महात्मा गांधी आदि की गणना इसी कोटि के अन्तर्गत होगी। इनमें महात्मा गांधी की पुण्यतिथि आज सम्पूर्ण देश में शहीद दिवस के रूप में मनाई जाती है, जिससे देश की जनता को अपार प्रेरणा प्राप्त होती है। शहीदों की स्मृति में जब-जब समारोह आयोजित किये जाते हैं, तब-तब श्री जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' की निम्नलिखित कविता बरबस याद आ जाती है-

वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है,
सुना है आज मकतल में हमारा इम्तहां होगा।
इलाही वो भी दिन होगा जब अपना राज देखेंगे,
जब अपनी ही जमीं होगी व अपना आसमां होगा।
शहीदों की चिताओं पर जुड़ेंगे हर बरस मेले,
वतन पे मिटने वालों का बस यही निशां बाकी होगा।।

***

12. कवि की कसौटी : समस्या-पूर्ति

समस्या-पूर्ति काव्य-प्रणाली साहित्य में प्राचीन काल से प्रचलित रही है। विक्रमादित्य और भोज से संबद्ध अनेक किंवदंतियों में प्रसंग आते हैं कि कवि-गण इस प्रणाली से राज-दरबारों में प्रचुर मान-सम्मान पाते थे। संस्कृत के काव्य-शास्त्र संबंधी ग्रंथों में राजशेखर ने 'काव्य-मीमांसा' में कवि परीक्षा की परंपरा का वर्णन किया है। संभवत: आगे चलकर यह समस्या-पूर्ति के रूप में विकसित हो गई।

हिन्दी-साहित्य में दरबारी संरक्षण में इस परम्परा को पल्लवित होने का अच्छा अवसर मिला। भारतेन्दु-युग में अनेक कवि-समाजों की स्थापना हो जाने से यह प्रणाली व्यापक रूप में प्रचलित हो गई। इन समाजों में प्रमुख हैं-काशी-कवि-समाज, रसिक-मंडल बिस्वाँ, सीतापुर, कवि-समाज कानपुर, रसिक-मंडल प्रयाग। अनेक पत्रिकाओं में भी समस्या पूर्तियाँ प्रमुखता से प्रकाशित की जाती थीं। समस्या-पूर्ति, कवि-वचन-सुधा, काव्य सुधाकर, रसिक-वाटिका, रसिक-मित्र आदि पत्रिकाओं के नाम इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। द्विवेदी-युग में भी विरोध के बावजूद यह परंपरा चलती रही। पं. गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' के प्रोत्साहन से काव्य-कलानिधि, कवि, सुकवि, रसिक-मित्र, रसिक-रहस्य जैसी पत्रिकाओं में समस्या-पूर्ति स्तंभ के अंतर्गत सैकड़ों रचनाकारों की पूर्तियाँ प्रतिमास प्रकाशित होती थीं। विषयवस्तु की दृष्टि से राष्ट्रीयता, आधुनिकता तथा परंपरागत सभी प्रकार की पूर्तियाँ हो रही थीं। कभी-कभी क्लिष्ट समस्याएँ दी जाती थीं, जिनमें कवियों को आकाश-पाताल के कुलाबे कर देने पड़ते थे। शिल्प-पक्ष के परिमार्जन पर भी इस युग में विशेष ध्यान दिया गया। गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही' के संरक्षण में इसे विशेष बल मिला। उनके द्वारा लिखित पूर्तियाँ अपनी मौलिकता के लिए विख्यात रहीं। पं. नाथूराम शर्मा 'शंकर' की पूर्तियों में उच्च कोटि की कल्पना तथा भाव भंगिमा देखने को मिलती है। सनेही जी के समकालीन द्विवेदी-युग के कवि पं. रामचरित पांडेय 'लुच्चेश' की मान्यता है, कवि की परीक्षा तो समस्या-पूर्ति से ही होती है। उन्हीं के शब्दों में-

टोय-टोय कोश, जोय-जोय जेब औरन की,
रोय रोय होत जो छ-मास में समूची है।
ऐसी कविताई तो 'लुच्चेश' की लुगाई हू छ्वै,
बूझि लेत, मियाँ की कवित्व-मति बूँची है।
सागर की लहर पवन सूने अंबर पै,
चारु चित्र रचिबे को यहै एक कूँची है।

कवि की परिच्छा तो समस्या ही से कीनी जात,
कैसी है उड़ान, पहुँचानि कितती ऊँची है ।।

समस्या-पूर्ति का इतिहास बहुत पुराना है। प्रसिद्ध है कि मुगल बादशाह अकबर के समय में एक वृहत् कवि-सम्मेलन दिल्ली में हुआ था, जिसमें पूर्ति हेतु 'करौ मिलि आस अकब्बर की' समस्या रखी गई थी। इसमें कवि श्रीपति ने निर्भीकतापूर्वक समस्या की पूर्ति करते हुए ईश्वर के प्रति अपनी आस्था का परिचय दिया था-

अब के सुल्तान फुनियान समान हैं,
बाँधत पाग अटब्बर की,
तजि एक को दूजो भजै जो कोऊ,
तब जीभ कटै अति लब्बर की
शरनागत, 'श्रीपति' श्रीपति की,
नहिं आस जरा काउ जब्बर की।
जिनके नहिं आस कछू हरि की,
सु 'करौ मिलि आस अकब्बर की'।।

जोधपुर के वृंद कवि एक बार औरंगजेब के दरबार में गए थे। अपने दीवान मरजीदास से कवि वृंद की प्रशंसा सुन कर औरंगजेब ने उन्हें एक कठिन समस्या 'पयोनिधि पैर्‍यो जैसे मिसरी की पुतरी' पूर्ति हेतु दी थी। इस पर कवि वृंद ने तुरंत इसकी पूर्ति इस प्रकार की थी-

मेरे मन! पर ब्रह्म को भरोसो राख,
सुनि मुनि साख, जनि डोले इत-उत री।
जिन चर-जीवन को जीवन की वृत्ति दीनी,
ताही सों रुचि राँचि प्रीतिजुत री।
'वृंद' कहै साहिब समर्थ सब बातन में,
जिनकी कृपा तें होत यह अद्‌भुत री।
पंगु गिरि गाहै, मूक निगम निबाहै, क्यों न
पयोनिधि पैर्‍यो जैसे मिसरी की पुतरी।।

भूधर नामक कवि ने जो राजा हिम्मत सिंह के आश्रित थे, 'रारि सी मची है त्रिपुरारि के तबेला में' समस्या की पूर्ति इस प्रकार की थी-

एक बार बैल को निपट ऊँचो नाद सुनि,
हुँकरत बाघ बिरुझान्यो रस-रेला में।

'भूधर' गनत ताको बास पाय सोर करि,
कुत्ता कोतवाल को बगानो बगमेला में।
फुंकरत मूषक को दूषक भुजंग तासौं,
जंग करिबे को झुक्यो मोर हद मेला में।
बार-बार पारषद कहत पुकारि कछू,
'रारि सी मची है त्रिपुरारि के तबेला में'

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने समस्या-पूर्ति को विशेष प्रश्रय दिया। भारतेन्दु-मंडल के अन्य लेखकों-पं. प्रतापनारायण मिश्र, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', ठाकुर जगमोहन सिंह, पं. अंबिकादत्त व्यास आदि ने भी इसमें विशेष योगदान दिया। इनके द्वारा की गई समस्या-पूर्तियों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

समस्या-'बीस रवि दस ससि संग ही उदय भये।'

पूर्तिकार-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

आजु जल-केलि में बिलोकी ब्रज-बाला दस,
खेलैं जुमना में सोभा कमल मनो बये।
जलन उछारैं छोड़ैं हाथ सों फुहारैं महि,
भुजा कंठ डारैं महामोद मन मैं लये।
कर मेंहदी सों रँग तैसे मुखमंडल,
दिखात 'हरिचंद' सब अंग जल मैं दये।
मानौं नभ छोड़ि अनहोनी कर होनी आजु,
'बीस रवि दस ससि संग ही उदै भये।।'

समस्या-पपिहा जब पूछि है 'पीव कहाँ।'

पूर्तिकार-पं. प्रतापनारायण मिश्र

बनि बैठि है मान की मूरति सी,
मुख बोलै न 'नाहीं' न 'हाँ'।
तुम ही मनुहारि के हारि परे,
सखियान की कौन चलाई कहाँ।
चरचा है 'प्रतापजू' धीर धरौ,
अब लौं मन को समझायो जहाँ।
यह ब्यारि तबै बदलेगी कछू,
'पपिहा जब पूछि है पीव कहाँ।'

समस्या-'प्रेम को पंथ पिछानत गोपी।'

पूर्तिकार–ठाकुर जगमोहन सिंह

कौन करै इनकी सर और तज्यो जिन गेह सनेहन ओपी,
और तजी कुल की मरजाद किये प्रन प्रीति की रीति है गोपी।
देय पचाय वियोग में जो 'जगमोहन' हेतु सह्यो दुख सोपी,
ये ब्रजचंद विलोचन पुतरी 'प्रेम को पंथ पिछानत गोपी'।।

समस्या–'बहती नदी पायँ पखार ले री'

पूर्तिकार–पं. अंबिकादत्त व्यास

आवत सेद चले श्रम के कदली–दल मंजु बयारि ले री,
अंबिका दत्त पादप–मूल में बैठि के थाक उतारि ले री,
भूख लगी कुछ तो बन के फल–फूल सो ताहि निबारि ले री,
जानकी कीच लग्यो को कोऊ 'बहती नदी पायँ पखारि ले री।'

श्री जगन्नाथदास 'रत्नाकर' के काव्य–गुरु पं. नवनीत चौबे ने 'गातन मोरे गोराई न रैहे है' समस्या की पूर्ति इस प्रकार की थी–

मैं वृषभान ब्रजेश की बाल/गुपाल! तू ग्वालि न मो सम पैहे।
दूर रहौ 'नवनीत' प्रिया/तुम्हारी छवि–छाँह छिनौ परि जैहे।
तौ फिर गोकुल के कुल की/कोऊ गूजरी मोहि न ऊजरी कैहे।
साँवरे छैल छुओगे जो मोहिं/तो गातन मेरे गोराई न रैहे।।

उस समय रामकृष्ण वर्मा द्वारा की गई 'एक तैं ह्वैं गईं द्वै तसवीरैं' समस्या–पूर्ति भी बहुचर्चित रही थी–

भोरहि आज गई जमुना तट/संग लिए सखियान की भीरैं।
औचक देखि पर्‍यौ नंदनंद/बजावत बेनु कलिंदजा तीरैं।
आधिक नैन सुराधे लख्यों तहँ/आधिय दीठ लखी बलबीरैं।
दोऊ मिले मन एक भयौ पुनि/एक तै ह्वै गईं द्वै तसवीरैं।।

द्विवेदीयुगीन कवियों में पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', जगन्नाथदास 'रत्नाकर', पं. गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', पं. नाथूराम शर्मा 'शंकर', पं. रूपनारायण पाण्डेय, सैयद अमीर अली 'मीर' आदि ने समस्या–पूर्ति में अच्छा योगदान दिया था। हरिऔध जी ने यद्यपि खड़ी–बोली में महाकाव्यों की रचना की परन्तु उनकी प्रतिभा का आरंभिक प्रस्फुटन ब्रजभाषा में हुआ था और उन्होंने समस्या–पूर्तियाँ भी की थीं। उनके द्वारा 'एक ही रजाई में' समस्या की पूर्ति इस प्रकार की गई थी–

चारि सुत मेरे खरे काँपत करेजो, चाँपि,
बालिका हू सीसी करि कहै मरी माई मैं।
सात टूक सारी माहिं सिसकै हमार नारि,
प्रान की परी है पौन पूस की खटाई मैं।
'हरिऔध' याहू पै भये हैं उपवास चार,
मिलत अकाल सो न कौड़ि हूँ कमाई मैं।
मोसे मंदभागिन की मौत हू न राम
कैसे कटै रात फटी 'एक ही रजाई मैं।'

कविता के क्षेत्र में खड़ी-बोली की सत्ता महत्ता स्थापित हो जाने पर भी रत्नाकार जी ब्रज-भाषा के अनुराग में पगे रहे। उन्होंने 'ढीली परी बीनहि सुरीली करि ल्याऊँ मैं' कहते हुए ब्रजभाषा को स्थापित करने का प्रयास किया तथा ब्रजभाषा में श्रेष्ठ ग्रंथों की रचना की। समस्या-पूर्ति के क्षेत्र में भी उन्होंने अपना कौशल दिखाया। 'बहार बरखा की है' समस्या पर उनकी पूर्ति इस प्रकार है-

रहति सदाई हरियाई हिय घायनि में,
ऊरध उसास सो झकोर पुरबा की है।
पीउ-पीउ गोपी पीर-पूरित पुकारति है
सोई 'रत्नाकर' पुकार पपिहा की है।
लगी रहै नैननि सों नीर की झरी औ,
उठै चित में चमक सो चमक चपला की है।
बिनु घनस्याम धाम-धाम ब्रज मंडल में
ऊधो नित बसति बहार बरखा की है।।

बाद में यह कवित्त उनके प्रसिद्ध काव्य 'उद्धव शतक' में सम्मिलित किया गया।

द्विवेदी-युग के कवियों में समस्या-पूर्ति की रचना एवं प्रचार-प्रसार में पं. गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' तथा पं. नाथूराम शर्मा 'शंकर' का विशेष योगदान रहा। इन्होंने समस्या-पूर्ति काव्य को खड़ी-बोली की ओर मोड़ दिया तथा उसमें श्रृंगार के स्थान पर देशभक्ति तथा राष्ट्रीयता को प्रमुख रूप से उभारा। सनेही जी की अधिकांश समस्या पूर्तियाँ खड़ी-बोली में हैं। 'पानी है' समस्या पर उनकी पूर्ति देखिए-

लव-कुश अश्व बाँधकर बिना सेना लड़े,
लंक-जेता बाप से भी हार नहीं मानी है।
भूषण की बानी ने चढ़ाया ऐसा पानी यहाँ,

चमकी भवानी भक्त शिवा की भवानी है।
पहले स्वतंत्रता-समर में 'सनेही' यहीं,
नानाराव से मरी फिरंगियों की नानी है।
नाम सुनते ही हैं पकड़ते विपक्षी कान,
यह कानपुर है यहाँ का कड़ा पानी है।।

नाथूराम शर्मा 'शंकर' का नाम समस्यापूर्तिकारों में अग्रगण्य रहा है। सन् 1860 ई० के आसपास फर्रुखाबाद के हिन्दी-प्रेमी जिलाधीश ग्राउस साहब की अध्यक्षता में एक कवि-गोष्ठी का आयोजन हुआ था, जिसमें समस्या दी गई थी 'चुम्बक जुगल बीच मानो लोहो फँसिगो' इसमें सैंतीस कवियों ने भाग लिया था। इनमें श्री नाथूराम शर्मा 'शंकर' की पूर्ति सर्वश्रेष्ठ घोषित की गई थी, जो इस प्रकार है-

राजा तू सदेह स्वर्ग में रहैगो, ऐसो
'शंकर' असीस जाके मुख ते निकसिगो।
ताही गाधि-नंदन को योग-बल पाय उड़्यो,
तीर-सो त्रिशंकु नभ-मंडल में धँसिगो।
वासव ने मार्‌यो त्राहि-त्राहि सो पुकार्‌यो,
मिलो मुनि को सहारो अध्वर ही में बसिगो।
आयो न मही पर, न पायो लोक देवन को,
'चुम्बक जुगल बीच मानो लोहो फँसिगो।।'

श्री जयशंकर प्रसाद द्वारा दी गई समस्या 'रैन बंधरी' की पूर्ति पं. रूपनारायण पाण्डेय ने इस प्रकार की थी-

बुद्धि, विवेक की ज्योति बुझी/ममता, मद, मोह घटा घन घेरी।
है न सहारो, अनेकन हैं ठग/पाप के पन्नग की रहै फेरी।
त्यों अभिमान को कूप इतै/उतै कामना रूप शिलान की ढेरी।
तू चलु मूढ़! सम्हारि अरे मन/राह न जानी है, 'रैन अंधेरी'।।

देवरी कलाँ, सागर के सैयद अमीर 'अली' मीर ने भी अच्छी समस्या-पूर्तियाँ की थीं। 'भारत के' समस्यापूर्ति में उन्होंने अंग्रेजी सभ्यता से ग्रस्त भारतीय बाबुओं पर अच्छा व्यंग्य किया था-

अब के बबुआन को हाल कह्यो नहिं जात तजै पट धारत के,
निक कोट-कमीज सजैं पतलून बनैं अंगरेज बिलायत के।
इसटीक सिगार न भूलत मीर सुबूट चहैं बड़ी लागत के,
मल सोप धरैं चख पै चसमा ये बढावत गौरव 'भारत के'।।

हिन्दी में समस्या-पूर्ति मुख्यतः ब्रजभाषा में होती थीं। कालांतर में जब कविता के क्षेत्र में खड़ी-बोली स्थापित हो गई तब कवियों ने खड़ी-बोली में भी समस्या-पूर्तियाँ कीं। इनमें देश-भक्ति तथा राष्ट्रीयता की गूँज समाहित है। उदाहरणस्वरूप खड़ी-बोली की कुछ पूर्तियाँ प्रस्तुत हैं-

समस्या-चरखा

पूर्तिकार-वचनेश

जैसे सिंधु पार लंका क्षार की जला के उन,
वैसे ये करेगा लंकाशायर में करखा।
जैसे उन्हें पूँछ को बढ़ाते पेख, वैसे इसे,
सूत को बढ़ाते देख बैरी रहे डर खा।
कवि 'वचनेश' रणारंभ में कुशल वीर,
उन्हें राम जी ने, इसे मोहन ने परखा।
जैसे भूमिजा की बंदि-मोचन को हनूमान,
वैसे मातृ-भूमि-बंदि मोचन को 'चरखा'।।

समस्या-रस की

पूर्तिकार-रसिकेन्द्र

भारत के भूषण हो पूषण हो तेजधारी,
दूषण को छोड़ राह गहिए सुजस की।
सोचिए निदान ध्यान दीजिए कुपथ्य पर,
हीर पीर वालों देखो पीर परबस की।
स्वर्ण मकरध्वज की पुट ने बढ़ाया रोग,
रहा दुख भोग नाड़ी मृत्यु ओर खिसकी।
सच्चे कविराज बन राष्ट्र का इलाज कीजे,
दीजे बस आज इसे गोली 'वीर रस की'।

समस्या-मानस बिहारिणी

पूर्तिकार-उमादत्त 'दत्त'

आदिशक्ति-सी है ये प्रशंसनीया, पूजनीया,
दीन-दुखियों को है रमा-सी उपकारिणी।
धन, धान्य, सुख-बल, वैभव-प्रदायिनी है,
कामधेनु-सी है क्लेश-सागर की तारिणी।
मेट परतंत्रतासुरी को दम लेगी यह,

चंडी के समान है विकट प्राण-धारिणी।
कूटनीति-हारिणी, प्रसारिणी स्वतंत्रता की,
धन्य-धन्य! खादी गाँधी-'मानस-बिहारिणी।।'

समस्या-पूर्ति की परंपरा अब लुप्तप्राय: है तथापि साहित्य के क्षेत्र में उसके योगदान को कदापि विस्मृत नहीं किया जा सकता।

***

13. भौन भये आवा भूमि तावा सी तपति है

ग्रीष्म की गरिमा भी अपने आप में महत्वपूर्ण है। उसमें सरसता भले ही न हो किन्तु उसके ताप के प्रताप से सहृदय जन अनभिज्ञ नहीं है। वर्षा यदि जीवन दायिनी है तो ग्रीष्म पदार्थों की परिपक्वता में परम सहायक है। ग्रीष्म का ताप, तप का सच्चा प्रतीक माना जा सकता है और तप का सुफल है मुक्ति। वर्षा का जल मुक्ति रूपी मुक्ताओं का प्रदाता है।

ग्रीष्म के दीर्घ-दिन, क्षीण-क्षणदा, तप्त-परणि, प्रबल-प्रभंजन---अनन्त काल से सहृदय जनों को अपनी ओर आकर्षित करते रहे हैं। जहाँ कवियों ने ग्रीष्म की भीषणता का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। वहाँ उससे रक्षा के भी अनेक उपाय सुझाए हैं। यहाँ हम हिन्दी काव्य में वर्णित ग्रीष्म पर संक्षेप में विचार करेंगे।

सर्वप्रथम हिन्दी के आदिकालीन कवि चंदबरदाई का ग्रीष्म वर्णन देखिये-

दीरघ दिन निस हीन, छीन जलधर वैंसनर।
चक्रवाक चित मुदित, उदित रवि, थकित पंथनर।
चलत पवन पावक समान परसत सुताप तन।
सुकत सरोवर मचत कीच तलफत मीन तन।
दीसंत दिगम्बर सम सुरत, तरु लतान गय पत्त झरि।
अक्खुल दीह संपति विपति कंत गमन ग्रीष्म न करि।।

ग्रीष्म के दिन बड़े हैं और रातें छोटी। अत: चकवा चित्त में प्रसन्न है क्योंकि बड़े दिनों ने उसे अपनी प्रिया के सामीप्य का अधिकाधिक अवसर प्रदान किया है। भगवान सूर्य के उदय होने पर पथिक थकित हो जाते हैं। ग्रीष्म में शरीर को अग्नि के समान जलाने वाला प्रखर पवन चल रहा है। सरोवर सूख गये हैं। जल की कमी से उनमें कीचड़ हो गई है और मछलियाँ तड़प रही हैं। वृक्ष एवं लताओं की पत्तियां झड़ गई हैं। वे दिगंबर अर्थात नग्न हो गये हैं। सभी प्राणी विकल हैं। नायिका अपने प्रिय से प्रार्थना करती है कि ऐसी परिस्थिति में तुम विदेश गमन न करो। चक्रवात जब मुदित है तो तुम मुझे दुखित क्यों कर रहे हो। यहाँ तड़फड़ाती मछली और पत्रविहीन नग्न लताओं की व्यंजना भी द्रष्टव्य है।

उधर जेठ मास के आगमन पर जब लू चलने लगी है, बवंडर उठने लगते हैं, अंगारे बरसने लगते हैं तो जायसी की नागमती और भी अधिक विरह व्यथित हो उठती है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे वह अग्नि की लपटों के बीच जल रही हो। हनुमान जी ने जिस अग्नि से लंका को जलाया था मानो वह लंका को भस्म करके अब उसके पलंग में लग गयी है। वह अधजली हो रही है, उसके शरीर का मांस सूख गया है, विरह के कारण ग्रीष्म उसके लिए भूखे काल के समान है-

जेठ जरै जग चलै लुवारा। उठहि बवंडर परहिं अंगारा।।
चारिहु पवन झकोरै आगी। लंका दाहि पलंका लागी।।
अधजर भइऊं, मांसु तन सूखा। लागेउ विरह काल होइ भूखा।।

हिन्दी साहित्य में कविवर सेनापति का ऋतुवर्णम अद्वितीय माना गया है। उन्होंने सभी ऋतुओं का अत्यन्त सजीव, सटीक एवं सुन्दर वर्णन किया है। उनके ग्रीष्म पर लिखे गये कवित्त भी अत्यन्त सुन्दर हैं। बात आज से लगभग पौने चार सौ वर्ष पूर्व की है। जेठ मास के निकट आते ही खस की कोठरियां सुधरने लगती हैं, तहखानों की सफाई आरंभ हो जाती है। जलयंत्रों (फव्वारों) की मरम्मत होने लगती है। इत्र, गुलाब और अरगजा (लेप) तैयार कराये जा रहे हैं। इस प्रकार गर्मी के दिन बिताने के लिए राजमहलों में तैयारियाँ हो रही हैं, देखिए-

जेठ नजिकाने सुधरत खसकाने, तल
ताख तहखाने के सुधारि झारियतु हैं।
होति है मरम्मत विविध जल जंत्रन की
ऊँचे-ऊँचे अटा ते सुधा सुधारियतु हैं।
'सेनापति' अतर, गुलाब, अरगजा साजि
सारतार हार मोल लेले धारियतु हैं।
गर्मी के बासर बराइबे कौ सीरे सब,
राज-भोग, काज-साज यौं सम्हारियतु हैं।

गर्मी में वृष राशि का सूर्य तो अपनी सहस्रों किरणों को हजार गुना प्रखर करके अग्नि की लपटों की वर्षा कर देता है। संसार उन लपटों में जल उठता है, पृथ्वी तप जाती है, भयंकर गर्मी में पक्षी और पथिक विश्राम के लिए रुक जाते हैं। दोपहरी के ढलते-ढलते एक अनोखी उमस सी छा जाती है, वायु जैसे एकदम गरम हो जाती है, फिर तो एक पत्ता भी नहीं खड़कता। कविवर सेनापति कल्पना करते हैं मानो भीषण गर्मी से घबराकर वायु भी घड़ी भर के लिए कहीं शीतल स्थान में विश्राम करने के लिए चली गई है, कवि के शब्दों में-

वृष कौ तरनि तेज सहसो किरन करि
ज्वालन के जाल विकराल बरसत है।
तपति धरनि, जग जरत झरनि, सीरी
छांह कौ पकरिं पंथी पंछी बिरमत है।
'सेनापति' नैकु दुपहरी के ढरत होत,
धमका विषम ज्यौं न पात खरकत है।
मेरे जान पौनों सीरी ठौर को पकरि कौनों
घरी एक बैठि कहूँ घामै बितवत है।।

श्रृंगार की सजीव प्रतिमा बिहारी, प्रकृति के बीच प्रेम व्यापार के दर्शन करते हैं। गर्मी की लू उन्हें ऐसी प्रतीत होती मानो बसंत के बिछोह में गर्मी की उच्छवासें चल रही हों-

नाहिन ये पावक प्रबल, लुवैं चलति चहुँ पास।
मानहु विरह वसंत के, ग्रीष्म लेत उमास।।

ग्रीष्म में भयंकर गर्मी ने सारे संसार को तपाकर तपोभूमि बना दिया है। गर्मी की भीषणता से त्रस्त होकर सभी जीव अपने वैर भाव को भी भुला बैठे हैं। ऋषि मुनियों के तप के प्रभाव से उनके आश्रमों के आसपास के पशु-पक्षी अपने वैर भाव का परित्याग कर देते थे। गर्मी के भीषण ताप का भी कुछ ऐसा ही विचित्र प्रभाव है। तभी तो थकित होकर, गर्मी से घबराकर सर्प और मोर, मृग और बाघ एक स्थान पर आ बैठे हैं-

कहलाने एकत बसत, अहि मयूर मृग बाघ।
जगत तपोवन सो कियो, दीरघ दाघ निदाघ।।

महाकवि अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' द्वारा प्रस्तुत गर्मी का चित्र भी दर्शनीय है। गर्मी में सूर्य की प्रखर किरणों के सम्मुख वृक्षों की पंक्ति थर-थर कांप रही हैं। लोग जीवन विहीन होकर (जल के अभाव में निष्प्राण होकर) जले जा रहे हैं। लू के भभूके उठ रहे हैं, यहाँ तक कि छाया भी अपना मुँह छिपाने के लिए कुंजों में जा छिपी है। लपटों में जलता हुआ संसार पजावा (ईंटों का भट्टा) बन गया है, घर आग बने हुए हैं और पृथ्वी तवे के समान तप रही है-

आतप में पूखन की प्रखर-मरीचिनि ते,
थर-थर रूखन की पांति हू कँपति है।
जीवन की माखै कौन जीवन बिना हू जरि,
रज की जमाति नाम-जीव जपति है।

'हरिऔध' भभरि भभूकन औ लूकन ते,
छायावान कुंजन मैं छाया हूँ छपित है।
जोम के जलाकन ते जगत पजावा भयो,
भौन भये आवा भूमि तावा सी तपति है।।

कविवर जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' द्वारा चित्रित ग्रीष्म एवं गोपियों की विरहावस्था का संश्लिष्ट चित्र अपूर्व है। एक ओर ग्रीष्म में स्थान 2 पर जल का अभाव हो गया है तो उधर गोपियां निष्प्राण हो रही हैं। ग्रीष्म की तप्त वायु ही गोपियों के बीच चलने वाली चबाब चर्चा है। रत्नाकार जी कहते हैं कि ऐसे विषम समय में रात दिन किसी भी क्षण चैन नहीं मिलता। वृक्ष जल के अभाव में सूख कर पत्र विहीन हो गए हैं। इधर तरुणी गोपियों का समूह भी क्षीण काय होकर अपनी पत खो बैठा है। दग्ध-अंग कामदेव के विधाता बन जाने पर उसी के मन में प्रत्येक समय सबको जलाने की बात ही ठनी रहती है। कृष्ण की अनुपस्थिति में राजा वृषभान (वृष राशि का सूर्य भी) के नगर में नित्य ही भयंकर प्रभावशाली ग्रीष्म ॠतु बनी रहती है। यथा-

ठाय-ठाय जीवन-विहीन दीन दीसै सबै,
चलति चबाई-बात ताप धनी रहै।
कहै 'रत्नाकर' चैन दिन-रैन परै,
सूखी पत-छीन भर तरुनि अनी रहै।
जारयौ अंग अब तौ विधाता है इसको भयो,
तातै ताहि जारन की ठसक ठनी रहै।
बगर-बगर वृष भान के नगर नित
भीषम प्रभाव ॠतु ग्रीष्म बनी रहै।।

गरमी के समय धूप में तपती हुई धरती पर राष्ट्रकवि श्री मैथिली शरण गुप्त की कल्पना की उड़ान भी सहसा हमारा ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। आकाश में सब ओर सूर्य की किरणों का जाल बिछा हुआ है। सूर्य उसमें मकड़ी की भाँति है। उसके पद प्रहार से पृथ्वी, मकड़ी के जाल में फंसी हुई मक्खी की भाँति भिन्ना रही है-

आकाश जाल सब ओर तना/रवि तन्तुवाय है आज बना।
करता है पद प्रहार वही/मक्खी-सी भिन्ना रही मही।

प्रकृति के सुकुमार कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त के शब्दों में ग्रीष्म की गंगा का चित्र प्रस्तुत करके हम इस प्रसंग को समाप्त करेंगे। ग्रीष्म की शांत-स्निग्ध चाँदनी

रात में, जबकि पृथ्वी तल पर घोर शांति छाई हुई है, चाँदी-सी रेत की शय्या पर गंगा थकित होकर लेटी हुई है। ग्रीष्म में उसका शरीर शुष्क-क्षाम हो गया है-

शान्त स्निग्ध ज्योत्स्ना उज्ज्वल,/अपलक अनन्त नीरव भूतल
सैकत शय्या पर दुग्ध धवल/तन्वंगी गंगा ग्रीष्म विरल
लेटी है श्रांत क्लान्त निश्चल

हिन्दी काव्य की विस्तृत प्रकृति स्थली में से ग्रीष्म के कुछ चित्र इस संक्षिप्त लेख में प्रस्तुत किए गए हैं। जिज्ञासु जन थोड़े से प्रयास से और अधिक मनमोहक एवं चित्ताकर्षक चित्रों का सरलतापूर्वक चयन कर सकते हैं।

***

पूज्य पिता जी डा० रामस्वरूप आर्य जी का यह अन्तिम प्रकाशित लेख है, जो उनके नाम से उनकी मृत्यु के लगभग छह माह पश्चात् सीतापुर (उ.प्र.) से प्रकाशित 'मानस-चंदन' पत्रिका के 'जनवरी-मार्च, 2017 ई०' के अंक में प्रकाशित हुआ। (यह भी संयोग है कि मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के अनन्य उपासक डा० आर्य जी का यह अन्तिम लेख रामभक्त गोस्वामी तुलसीदास के काव्य से संबद्ध है।)

14. तुलसी-काव्य में लोकमंगल

साहित्य का आदर्श 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' माना गया है। इनमें शिवं कल्याण की ओर उन्मुख है, जो लोक-मंगल साधक है। साहित्य में सत्यं एवं सुन्दरम् की स्थापना के साथ शिवं तत्त्व भी परम आवश्यक है। साहित्य यदि लोक-मंगल की ओर उन्मुख नहीं है तो समाज के लिए उसकी उपयोगिता ही क्या है? लोक-मंगल की भावना से ओतप्रोत साहित्य शिवं का प्रतिपादक माना जाता है। शिवं के अन्तर्गत व्यक्ति के लौकिक और ऐन्द्रिक सुख से लेकर विश्व का आध्यात्मिक कल्याण तक समाहित है। जिस सत्य के पीछे शिव नहीं है, वह अग्राह्य है। इसी प्रकार सुन्दरम् भी वही सार्थक है, जिसमें शिव निहित है। इस शिव की ही परिणति लोकहित अथवा लोक-मंगल है।

गोस्वामी तुलसीदास ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रामचरितमानस' के आरंभ में इस तथ्य को इन शब्दों में व्यक्त किया है-

कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कर हित होई।।

अर्थात् संसार में यश, कविता और वैभव वे ही भले हैं, जो गंगा के समान सबके लिए हितकारी हों। इस प्रकार उनकी दृष्टि में कविता का पावन उद्देश्य लोक-मंगल है।

'रामचरितमानस' में राम-कथा के आदिवक्ता भगवान शिव हैं। जब पार्वती जी शिव जी से श्रीराम की कथा सुनाने का आग्रह करती हैं तब शिव जी कहते हैं-हे गिरिराज कुमारी, तुम धन्य हो, तुम्हारे समान उपकारी कोई अन्य नहीं है। तुमने मुझसे श्रीराम की कथा के संबंध में जिज्ञासा की है। यह कथा संसार को पवित्र करने वाली गंगा के समान है। श्रीराम के चरणों में तुम्हारा अनन्य अनुराग है। तुमने संसार के कल्याण के लिए ही यह प्रश्न पूछा है-

धन्य धन्य गिरिराज कुमारी। तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी।।
पूछेहु रघुपति कथा प्रसंगा। सकल लोक जग पावनि गंगा।।
तुम्ह रघुबीर चरन अनुरागी। कीन्हेहु प्रस्न जगत हित लागी।।

तुलसीदास जी के अनुसार जब-जब धर्म का ह्रास होता है तथा नीच, अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं तब-तब कृपालु प्रभु नाना प्रकार के दिव्य शरीर धारण करके सज्जनों की पीड़ा हरते हैं अर्थात् संसार में भगवान का अवतार लोकमंगल के लिए होता है-

जब-जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।

तुलसी के राम का यह सहज स्वभाव है कि वे अनन्य प्रेम-भाव की पहचान कर निम्न कहे जाने वाले जनों से भी स्नेह करते हैं। श्रीराम ने गुह निषाद के प्रेमभाव को पहचानकर उसे पुत्र के समान अपने हृदय से लगा लिया-

श्री रघुबीर की यह बानि।
नीच हूँ सो करत नेह, सुप्रीति मन अनुमानि।।
परम अधम निषाद पाँवर, कौन ताकी कानि।
लियो सो उर लाइ सुत ज्यों प्रेम को पहिचानि।।

निषाद को 'भरत सम भाई' कहकर मान्यता प्रदान करना, वनवासी भीलों का आतिथ्य स्वीकार करना, भीलनी शबरी के जूठे बेरों को प्रेम-भाव से ग्रहण करने में श्रीराम का लोकपालक रूप प्रकट हुआ है। खर-दूषण-संहार, सुग्रीव से मित्रता, बालि-वध तथा रावण के विनाश में राम के लोक-मंगलकारी रूप के दर्शन होते हैं।

तुलसीदास ने संत-समाज को मुदमंगलमय मान कर उनकी अभ्यर्थना की है। सन्तों के लिए न कोई मित्र है, न शत्रु। वे सबको अपना मानकर सभी के हित की कामना करते हैं-

मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथराजू।।

तुलसीदास जी स्वयं भी इस प्रकार के सन्त-स्वभाव हेतु भगवान से प्रार्थना करते हुए कहते हैं-हे प्रभु! क्या मैं कभी इस प्रकार की रहनी रहूँगा। जब कृपालु श्रीराम की कृपा से सन्तों के स्वभाव को ग्रहण करूँगा, जो कुछ भी प्राप्त होगा उसी में संतोष धारण करूँगा तथा किसी से कुछ भी कामना नहीं करूँगा। निरन्तर दूसरों की भलाई में ही लगा रहूँगा तथा मन-वचन-कर्म से इस नियम का निर्वाह करूँगा-

कबहुँक हौं यह रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ कृपालु कृपा तें संत स्वभाव गहौंगो।
जथा लाभ संतोष सदा काहू सौं कछु न चहौंगो।

गोस्वामी तुलसीदास ने राजा के धर्म को लोकोन्मुख माना है। उनके अनुसार जिस राजा के राज्य में प्रजा दुखी रहती है, वह निश्चय ही नरक का अधिकारी होता है-

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरक अधिकारी।

उन्होंने राम के आदर्श राज्य का वर्णन करते हुए लिखा है-

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीति। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति रीति।।

तुलसीदास जी ने सामाजिक मर्यादा का विशेष ध्यान रखा है। जब श्रीराम छिपकर बालि पर बाण का प्रहार करते हैं तब मरणासन्न बालि उनसे पूछता है- हे गोसाईं, आपने तो धर्म की रक्षा के लिए अवतार लिया है तो मुझे व्याध की भाँति छिपकर क्यों मारा? मुझे आपने शत्रु माना और सुग्रीव आपके लिए प्रिय हुआ। कृपया यह तो बताइए कि आपने मुझे किस अपराध के कारण मारा है? तब श्रीराम लोकमर्यादा की दुहाई देते हुए कहते हैं-हे मुर्ख सुन, छोटे भाई की पत्नी, बहिन, पुत्र की स्त्री एवं कन्या, ये चारों समान हैं। इन्हें जो बुरी दृष्टि से देखता है, उसका वध करने में कोई पाप नहीं है। ज्ञातव्य है कि बालि ने अपने अनुज सुग्रीव की पत्नी को छीनकर अपने यहाँ रख लिया था। श्रीराम ने उसे इसी का दण्ड दिया था। बालि और श्रीराम का यह वार्तालाप 'रामचरितमानस' में इन शब्दों में व्यक्त किया गया है-

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं।।
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहिं मारा।
अनुज वधू भागिनी सुत नारी। सुन सठ सम कन्या ये चारी।।
इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधे कछु पाप न होई।

इसी प्रकार रावण का वध राक्षसी वृत्तियों के संहार तथा सद्वृत्तियों के लिए हुआ है, जिसमें लोक-मंगल की भावना निहित है।

इस प्रसंग में गोस्वामी तुलसीदास ने मैत्री धर्म की ओर भी संकेत किया है। उनके अनुसार जो लोग मित्र के दुख से दुखी नहीं होते, उन्हें देखने से भी बड़ा पाप लगता है-

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी।।

समाज में मुखिया के कर्त्तव्य को लोक-मंगल की भावना से जोड़ते हुए तुलसीदास जी कहते हैं-मुखिया को मुख के समान होना चाहिए। जिस प्रकार मुख खानपान के लिए तो एक है पर वह विवेकपूर्वक शरीर के सभी अंगों का पोषण करता है। इसी प्रकार मुखिया को अपने जीवनयापन के साथ-साथ अपने आश्रित सभी जनों का हित चिन्तन करना चाहिए-

मुखिया मुख सों चाहिए, खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित विवेक।।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है-"मंगल शक्ति के अधिष्ठान राम और कृष्ण जैसे पराक्रमशाली और धीर हैं, वैसा ही उनका रूप माधुर्य और उनका शील भी लोकोत्तर है। लोक-हृदय आकृति और गुण, सौन्दर्य और सुशीलता, एक ही अधिष्ठान में देखना चाहता है।" गोस्वामी तुलसीदास ने अपने ग्रन्थों में श्रीराम के स्वरूप, शील और लोकोत्तर चरित्र द्वारा लोकमंगल का सफल संयोजन किया है। स्वयं उन्हीं के शब्दों में श्री राम की कथा मंगलकारी तथा कलियुग के पापों को हरने वाली है-

मंगलकरनि कलिमल हरनि, तुलसी कथा श्रीराम की।

'रामचरितमानस' तथा तुलसीदास द्वारा रचित अन्य ग्रन्थों से इसकी सहज ही पुष्टि होती है।

***

7. भाषा वैज्ञानिक शोध-पत्र

1. अर्थविचार

अर्थ विस्तार : जब शब्द का अर्थ अपने मूल रूप से व्यापक अथवा विस्तृत हो जाता है तो इसे 'अर्थ-विस्तार' कहते हैं। हिन्दी में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनमें अर्थ का पर्याप्त विस्तार हुआ है। उदाहरणार्थ, 'तैल' शब्द का मूलार्थ है- 'तिल का सार' किन्तु अब इस 'तैल' अथवा 'तेल' शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में होता है। अब सरसों, नारियल और मूंगफली आदि के तेल के साथ-साथ बेला और चमेली का भी तेल होता है। यहाँ तक कि अब मछली का तेल तथा मिट्टी का भी तेल है। कोई व्यक्ति कड़ा परिश्रम करते-करते पसीने से तर हो जाए तो कहता है आज तो अपना तेल निकल गया और चाटुकारी के लिए आज 'तेल मालिश' का प्रयोग चल पड़ा है।

'अतिथि' शब्द में भी पर्याप्त अर्थ-विस्तार हुआ है। इस शब्द का मूल अर्थ था-वह व्यक्ति जिसके आगमन की कोई पूर्व तिथि निर्धारित न हो किन्तु आज ऐसे सज्जन जिनके आगमन की तिथि पूर्व निर्धारित रहती है, अतिथि कहलाते हैं। अनेक ऐसे मित्र जिन्हें हम अपने यहाँ चाय आदि पर आमंत्रित करते हैं, अतिथि कहे जाते हैं। यहाँ तक कि बाहर से आने वाले अपने सम्बंधियों को भी लोग अतिथि कहते हैं। इस प्रकार अतिथि शब्द के अर्थ में पर्याप्त विस्तार हुआ है।

'गोष्ठी' शब्द गोष्ठ से निष्पन्न है। यह गो+स्थ के योग से बना है। प्राचीन काल में गायों के बाँधने के बाड़े गोष्ठ कहलाते थे।

आज 'गोष्ठी' का विस्तार मानव-समाज तक है। आरंभ में समान शीलवाले व्यक्तियों के समूह के लिए 'गोष्ठी' का प्रयोग होता था। 'संगीत दामोदर' ग्रंथ में गोष्ठी के लिए संगीत आवश्यक माना गया है, किन्तु अब गोष्ठी कवियों की हो सकती है और साहित्यकारों की भी।

इसी प्रकार अभ्यास, कुशल, गवेषणा, प्रवीण एवं स्याही आदि शब्दों में भी पर्याप्त अर्थ-विस्तार हुआ है।

अभ्यास-मूलतः बाण फेंकने के लिए प्रयुक्त।

कुशल-कुश लाने में चतुर।

गवेषणा-(मूल अर्थ) गायों की खोज।

प्रवीण- वीणा बजाने में दक्ष।

स्याही-(मूल अर्थ) काली स्याही।

कभी-कभी कुछ विशिष्ट व्यक्तिवाचक नाम सामान्य अर्थ में प्रचलित हो जाते हैं। ऐसे शब्दों में भी अर्थ-विस्तार हो जाता है। उदाहरणार्थ, 'सत्यवादी' हरिश्चन्द्र कहलाते हैं और देशद्रोही जयचंद कहे जाते हैं।

अर्थसंकोच : जब शब्द का प्रयोग सामान्य या व्यापक अर्थ की अपेक्षा संकुचित अथवा सीमित अर्थ में होता है तो इसे अर्थ-संकोच कहते हैं। यहाँ उदाहरणार्थ कुछ शब्द प्रस्तुत हैं जिनमें अर्थ-संकोच स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

'भार्या' शब्द का मूलार्थ है जिसका भरण पोषण किया जाए वह भार्या है किन्तु भरण-पोषण तो वृद्ध माता-पिता एवं संतति का भी किया जाता है पर भार्या शब्द पत्नी के अर्थ में रूढ़ हो गया है। कहीं-कहीं तो इसके विपरीत पत्नी ही पतिदेव का भरण-पोषण करती है, फिर भी वह भार्या ही कहलाती है। घृत शब्द का अर्थ है सींचना, इसलिए प्राचीन काल में घृत का अर्थ 'जल' भी प्रचलित था और आज भी कोशों में इसका यह अर्थ मिलता है किन्तु अब इसका प्रचलित अर्थ 'घी' ही है।

'पर्वत' शब्द का मूल अर्थ है पर्व अर्थात् पोरोंवाला। पोरे तो गन्ने, नरकुल एवं सरकंडे आदि में भी होते हैं किन्तु हम उन सबको पर्वत नहीं कहते। अब पर्वत का अर्थ पहाड़ है। 'सर्प' का शब्दार्थ है, जो सरकता हो या सरक कर चलता हो किन्तु हम जानते हैं कि सरक कर चलने वाले अनेक जीवों में से एक को ही हम सर्प या सांप कहते हैं। 'रदन' का अर्थ है फाड़ने वाला किन्तु यह दाँत के अर्थ में सीमित हो गया है। इसी प्रकार दूल्हा, धान्य, रसाल, वृक तथा श्राद्ध आदि शब्द भी अर्थ-संकोच के अच्छे उदाहरण हैं।

फारसी के 'मुर्ग' शब्द का अर्थ पक्षी है। शुतुरमुर्ग में इसका यही अर्थ है, अर्थात् ऊँट के आकारवाली चिड़िया किन्तु अब नित्यप्रति के व्यवहार में मुर्ग का अर्थ एक पक्षीविशेष 'मुर्गा' है। ग्रीक भाषा में 'बाइबिल' शब्द का अर्थ 'पुस्तक' था किन्तु अंग्रेजी में बाइबिल एक धर्मग्रंथ विशेष है।

अर्थादेश : जब शब्द अपने मूल अर्थ को त्याग कर कोई नवीन अर्थ ग्रहण कर लेता है तो इसे अर्थादेश कहते हैं। उदाहरणार्थ, दुहिता शब्द का मूलार्थ था गायों को दुहे वह। विद्वानों का अनुमान है कि प्राचीन काल में घर में गायों के दुहने का कार्य प्रायः पुत्रियों से कराया जाता था अतः कालांतर में दुहिता का अर्थ पुत्री हो गया। मौन का अर्थ है मुनियों का भाव अथवा आचरण। मुनिजन भगवान के ध्यान में निमग्न रहते हुए शान्त रहते थे। अतः उनके शान्त भाव के लिए मौन शब्द प्रचलित हो गया किन्तु आज मौन का अर्थ 'चुप्पी' है।

असुर शब्द भी अर्थादेश का अच्छा उदाहरण है। ऋग्वेद में असुर शब्द का प्रयोग देवता के अर्थ में हुआ है। ईरानी 'अहुर' शब्द में यह अर्थ आज भी सुरक्षित है किन्तु बाद में इसके आदि 'अ' को निषेधात्मक प्रत्यय मानकर असुर का अर्थ राक्षस किया जाने लगा और सुर शब्द देवता का वाचक हो गया।

अवधी का 'माहुर' शब्द संस्कृत 'मधुर' का विकृत रूप है, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'मधुरता से युक्त' किन्तु व्यवहार में इसका अर्थ विष है।

संस्कृत साधु के विकृत रूप 'साहु' का अर्थ हिन्दी में साहूकार है। जुगुप्सा शब्द गुप् धातु से बना है जिसका अर्थ है गुप्त रखना या छिपाना किन्तु अब इसका अर्थ घृणा अथवा निन्दा है।

अर्थोत्कर्ष-जब शब्द के अर्थ में परिवर्तन होने पर पहले की अपेक्षा उन्नत अर्थ आ जाता है तो यह अर्थोत्कर्ष कहलाता है। भाषा में ऐसे अनेक शब्द मिलते हैं जिनमें पहले निकृष्ट अर्थ निहित था किन्तु अब वे अच्छे अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।

संस्कृत में साहस का अर्थ 'बुरा कार्य' था। साहस से निर्मित 'साहसिक' शब्द का अर्थ डाकू है किन्तु हिन्दी में साहस का अर्थ 'जीवट' या 'हिम्मत' है और यह एक गुण माना जाता है।

संस्कृत कर्पट शब्द का अर्थ है जीर्ण वस्त्र किन्तु इसके हिन्दी रूपांतर 'कपड़ा' में यह भाव नहीं पाया जाता। हिन्दी में अच्छे बुरे सभी कपड़ों के लिए कपड़ा अर्थ शब्द प्रचलित है। मूल्यवान रेशमी और ऊनी वस्त्र भी यहाँ कपड़ा ही कहलाता है। संस्कृत में 'मुग्ध' का अर्थ' मोह या भ्रम में पड़ा हुआ तथा 'मूर्ख' या 'मूढ़' था किन्तु हिन्दी में 'मुग्ध' शब्द से मूढ़ता का भाव समाप्त हो गया है। आज भक्त भगवान के रूप को देखकर मुग्ध होते हैं। पहले 'फिरंगी' शब्द का अर्थ पुर्तगाली डाकू था किन्तु बाद में यह सभी यूरोपियनों के लिए व्यवहृत होने लगा।

अर्थ-परिवर्तन के कारण - यहाँ अर्थ-परिवर्तन के प्रमुख कारणों का संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है।

(1) वातावरण में परिवर्तन-वातावरण में परिवर्तन के कई रूप हो सकते हैं। अत: इन पर अलग-अलग विचार करना उपयुक्त होगा:

(क) भौगोलिक (ख) सांस्कृतिक

(ग) सामाजिक (घ) भौतिक

(क) भौगोलिक वातावरण-इसके अन्तर्गत प्राकृतिक पदार्थ यथा नदी, वन, पर्वत, वृक्ष आदि आते हैं। उदाहरणार्थ, अंग्रेजी में कॉर्न (corn) का अर्थ अन्न है पर भौगोलिक वातावरण में परिवर्तन हो जाने से अमेरिका में इसका प्रयोग

मक्का के लिए होता है।

यूरोप एक शीतप्रधान देश है। वहाँ के निवासी अपने नित्यप्रति के व्यवहार में मदिरा का प्रयोग करते हैं। अतः अंग्रेजी में ड्रिंक शब्द मदिरापान के लिए प्रयुक्त होता है किन्तु भारत में सर्वसाधारण जल का ही पान करते हैं अतः यहाँ 'पीना' साधारणतः जल पीने के लिए प्रचलित है।

(ख) **सांस्कृतिक वातावरण**-संस्कृति एवं धर्म से मानव का अटूट संबंध है, अतः इनका प्रभाव भाषा पर भी पड़ना अवश्यम्भावी है। प्राचीन भारत में स्वयंवर-प्रथा प्रचलित थी और कुमारियाँ अपने पति का वरण करती थीं। अतः वह 'वर' कहलाता था। आज स्वयंवर-प्रथा का लोप हो गया है तथापि 'वर' का प्रयोग दूल्हे के लिए आज भी चल रहा है। आज किसी भी गृहस्थ को पुरोहित 'यजमान' कहकर संबोधित करते हैं भले ही यज्ञ से उसका कोई संबंध न हो।

(ग) सामाजिक वातावरण- सामाजिक वातावरण में परिवर्तन के साथ-साथ शब्दों के अर्थों में भी पर्याप्त अन्तर हो जाता है। हिन्दी में 'बहिन जी' 'माता जी' शब्दों के अर्थ में परिवर्तन आ गया है। समाज में हम सामान्यतया किसी भी लड़की को 'बहिन जी' तथा किसी भी प्रौढ़ स्त्री को 'माता जी' कहकर सम्बोधित करते हैं।

(घ) भौतिक वातावरण-भौतिक वातावरण में परिवर्तन से भी शब्द के अर्थ में परिवर्तन आ जाता है। 'पत्र' और 'ग्रन्थ' शब्द इसके अच्छे उदाहरण हैं। प्राचीनकाल में संदेश आदि पत्ते पर लिखकर भेजे जाते थे। अतः उनका 'पत्र' नाम सार्थक था किन्तु आज अच्छे-से-अच्छे कागज पर लिखा हुआ संदेश भी पत्र कहलाता है। इसी प्रकार प्राचीनकाल में पुस्तकें भोजपत्र तथा तालपत्र पर लिखी जाती थीं और उनमें छेद करके उनका ग्रंथन कर दिया जाता था। अतः उन्हें 'ग्रन्थ' कहते थे। आज इस प्रक्रिया के अभाव में भी पुस्तक ग्रन्थ कहलाती है।

प्राचीनकाल में सींक की नोक पर रुई लपेटकर भित्तिचित्रों आदि के रंगने का कार्य करते थे, अतः उसे तूलिका कहते थे। अब चित्रों को रंगने के लिये विभिन्न पशुओं के बालों से ब्रुश बनते हैं, उन्हें भी हिन्दी में 'तूली' या तूलिका कहा जाता है।

अँग्रेजी पेन (pen) लैटिन पेन्ना (penna) से बना है, जिसका अर्थ पंख है। प्राचीन काल में कलम पंखों की बनती थी। अब लोहे की निबवाली कलम को भी 'पेन' कहते हैं।

(1) अशुभ के लिए शोभन प्रयोग- मानव अशुभ, अमंगल एवं अश्लील से बचने का प्रयास करता है। अतः ऐसे अर्थ के व्यंजक शब्दों के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है। कभी-कभी तो यह परिवर्तन सर्वथा विपरीत दिशा में होता है।

मृत्यु मानव-जीवन की एक अशुभ घटना है। मानव उसे सीधे शब्दों में व्यक्त नहीं करना चाहता अतः मृत्यु के लिए 'स्वर्ग सिधारना' 'बैकुण्ठवासी होना' 'पंचत्व प्राप्ति' आदि शब्द प्रचलित हैं। काव्य में मरण के लिए 'दशम अवस्था' शब्द का प्रयोग मिलता है।

इसी प्रकार स्त्री का वैधव्य 'माँग का सिंदूर पुछना' 'सुहाग लुटना' 'चूड़ी फूटना' आदि शब्दों द्वारा सूचित किया जाता है।

'दूकान बंद करना' तथा 'दिया बुझाना' में अमंगल का भाव निहित है। अतः इनके लिए 'दिया बढ़ाना' तथा 'दूकान बढ़ाना' शब्द प्रचलित हैं। रहीम ने अपने एक दोहे में दिया बढ़ने का सुन्दर प्रयोग किया है।

मानव कटुता एवं भयंकरता के भाव से बचना चाहता है इसीलिए सांप को 'क्रीड़ा', बिच्छू को 'टेढ़की' तथा चेचक को 'माई की किरपा' कहा जाता है, इसी प्रकार टी.बी. को 'बड़ी बीमारी' तथा प्लेग को 'महामारी' कहते हैं।

(2) शिष्टता एवं नम्रता प्रदर्शन- शिष्ट व्यवहार एवं नम्रता मानव का आभूषण है। इससे भी अर्थ में पर्याप्त परिवर्तन हो जाता है। शिष्टतावश ही हम भंगी को 'जमादार' या 'मेहतर', दर्जी को 'मास्टर', भिश्ती को 'खलीफा', धोबी को बरेठा, रसोइए को महाराज तथा बर्तन माँजने वाले को 'महरा' (मुखिया) कहते हैं। हम कम्पाउन्डर को डाक्टर साहब, सिपाही को दीवानजी तथा मुंसिफ को जज साहब भी कहते हैं।

विनम्रतावश हम दूसरे के साधारण मकान को 'दौलतखाना' तथा अपने सुसज्जित भवन को 'कुटिया' कहते हैं। दूसरा हमारे लिए 'फरमाता' है और हम स्वयं 'अर्ज' करते हैं। दूसरा 'गरीबपरवर' है और हम 'ताबेदार' हैं। दूसरे का पुत्र 'साहबजादा' है और हमारा पुत्र 'हुजूर का खादिम'।

नम्रता-प्रदर्शन में जापानी भाषा संसार में अग्रगण्य मानी जाती है। उसमें आदरसूचक शब्दावली का अलग ही विकास हुआ है और इसका प्रयोग केवल राज परिवार के सदस्यों तथा आभिजात्य वर्ग के लोगों के लिए होता है।

(3) आलंकारिक प्रयोग- अलंकारों के प्रयोग से शब्दों के अर्थ में चामत्कारिक परिवर्तन उपस्थित हो जाता है। कवि स्थूल पदार्थों में सूक्ष्म तथा मूर्त पदार्थों में अमूर्त तत्वों की स्थापना करके शब्दों में नवीन ही अर्थ का आधान कर देता है। वह स्वभाव में चाँदनी (कोमलता) तथा विचारों में बच्चों की साँस (भोलापन) की कल्पना करता है। कुछ अलंकारों में अर्थ का यह चमत्कार चरम उत्कर्ष पर दिखाई पड़ता है। वक्रोक्ति अलंकार में शब्दों का अर्थ अपने मूलार्थ से पूर्णतः

भिन्न हो जाता है। इसी प्रकार उपमा, अपह्नुति, व्यतिरेक, विशेषोक्ति आदि अलंकारों में अर्थ परिवर्तन देखा जा सकता है।

(4) कलाकारों की निरंकुशता–कवि–कलाकार नए शब्द तो गढ़ते ही हैं, वे उनमें नए अर्थों का भी आधान करते हैं। जायसी, कबीर, सूर आदि की रचनाओं में ऐसे अनेक निरंकुश प्रयोग मिलते हैं। आधुनिक काल में छायावादी कवियों में निराला और पंत ने अनेक शब्दों का नवीन अर्थ में प्रयोग किया है। जायसी ने निम्नलिखित पंक्ति में निरास (निराश) शब्द का प्रयोग 'निरपेक्ष' अर्थ में किया है :

'बहुत घूम घूँटत मैं देखे उतरु न देइ निरास'

(5) सादृश्य– कुछ स्थलों पर सादृश्य के कारण भी अर्थ–परिवर्तन देखा जाता है। 'पाद' का अर्थ 'पैर' अथवा 'चरण' है। इसी आधार पर मनुष्य 'द्विपद' तथा पशु 'चतुष्पद' कहलाते हैं। मनुष्य पैरों पर खड़ा होता है और कविता का छंद पंक्तियों पर आधारित रहता है। अत: छंद की पंक्तियों को भी 'पाद' या चरण कहा जाने लगा। कविता के अधिकांश छंद चार पंक्तियों के होते हैं। अत: इनका एक 'पाद' चतुर्थांश हुआ। अब 'पाद' का सामान्य अर्थ 'चौथाई' है।

(6) तत्सम और तद्भव शब्द रूपों में अन्तर– भाषा में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनके तत्सम और तद्भव दोनों रूप प्रचलित हैं। ये शब्द मूलत: एक होते हैं तथापि अर्थ की दृष्टि से अनेक बार इनमें भिन्नता रहती है। उदाहरणार्थ–'गर्भिणी' का प्रयोग स्त्री के लिए होता है और भैंस 'गाभिन' होती है। 'स्तन' स्त्रियों के होते हैं और 'थन' पशुओं के। 'ब्राह्मण' शब्द शिक्षित ब्राह्मण के लिए प्रचलित है तथा 'बाम्हन' में तिरस्कार का भाव आ गया है। इसी प्रकार परीक्षक, पारखी, वार्ता, बात, तथा सौभाग्य और सुहाग आदि के अर्थ में पर्याप्त अन्तर है।

(7) अज्ञान– कई बार अज्ञान एवं असावधानीवश भी शब्दों के अर्थ में परिवर्तन देखा गया है। उदाहरणार्थ, जायसी ने मूर्ख के लिए 'अमुरुख' तथा लुप्त के लिए 'अलोप' शब्द का प्रयोग किया है–

सो अमुरुख बाउर औ अंधा।
भा अलोप पुनि दिस्टि न आवा।

इसी प्रकार कोई ग्रामीण जब 'निखालिस' घी बेचता है तो उसका तात्पर्य शुद्ध घी से होता है।

अज्ञानतावश कभी– कभी शब्दों की पुनरावृत्ति भी देखी जाती है। 'गांधी कैप टोपी' लगाकर, 'गुल मेंहदी के फूल' की खोज में निकलते हैं। विविध प्रकार,

विन्ध्याचल पर्वत तथा पावरोटी इसी प्रकार के प्रयोग हैं।

(8) शब्दों का प्रयोगाधिवय- शब्दों के अधिक प्रयोग से भी उनका अर्थ क्षीण हो जाता है। आज 'धन्यवाद' शब्द हर समय व्यवहारकुशल व्यक्तियों के होठों पर रहता है। अतः इसकी गंभीरता में पर्याप्त ह्रास हुआ है। श्री, श्रीयुत्, श्रीमान और बाबू आदि शब्द भी प्रयोगाधिक्य के कारण अनेक बार निरर्थक-से प्रतीत होते हैं। आज अति आवश्यक, अत्यन्त आवश्यक तथा परम आवश्यक जैसे शब्दों का प्रयोग भी होने लगा है।

(9) राष्ट्र या जाति के प्रति सामान्य मनोभाव- किसी राष्ट्र या जाति के प्रति हमारी भावना भी अर्थ को प्रभावित करती है। 'असुर' शब्द का उदाहरण अर्थादेश के प्रसंग में दिया जा चुका है। हिन्दू-मुस्लिम-संघर्षकाल में दोनों धर्मावलम्बी एक-दूसरे को हेय दृष्टि से देखने लगे। हिन्दुओं की दृष्टि में मुसलमान का अर्थ बहुत कुछ 'भ्रष्ट' है। समाजवादी विचारधारा के प्रचार के साथ-साथ सामन्त, जमींदार, पूँजीपति आदि शब्दों के अर्थ में भी पर्याप्न अवनति हुई है।

(10) शब्दार्थसंबंधी अनिश्चिय- भाषा में कुछ ऐसे शब्द हैं जिनके अर्थ में सूक्ष्म अन्तर रहता है। जनसामान्य इस अन्तर को समझने में असमर्थ रहता है। अतः एक शब्द के स्थान पर दूसरा शब्द सहज ही प्रयोग में आने लगता है। अंहकार, गर्व, घमंड, दम्भ, दर्प आदि भी ऐसे ही शब्द हैं जिनका अर्थ-भेद अनिश्चित-सा है। अतः एक के स्थान पर दूसरे का प्रयोग सहज ही हो जाता है।

(11) संक्षेपीकरण की प्रवृत्ति- मानव समय एवं श्रम की बचत करना चाहता है। उसकी यह प्रवृत्ति भाषा के क्षेत्र में भी कार्य करती है तथा अर्थ को प्रभावित करती है। उदाहरणार्थ, संस्कृत में हाथी के लिए 'हस्तिन् मृग' का प्रयोग होता था किन्तु बाद में 'हस्तिन्' शब्द से ही हाथी का बोध होने लगा।

ऊपर अर्थ-परिवर्तन के प्रमुख कारणों का उल्लेख किया गया है। इनके अतिरिक्त मनोविज्ञान के मनीषी इनसे मिलते-जुलते कुछ और भी सूक्ष्म कारणों की ओर इंगित कर सकते हैं तथापि हमारा विश्वास है कि उक्त कारणों में लगभग सभी प्रमुख प्रवृत्तियों का समावेश हो गया है।

***

2. मलिक मुहम्मद जायसी की भाषा का भाषाशास्त्रीय अध्ययन

जायसी की भाषा के विविध पक्षों पर विचार करने के पश्चात् हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शब्द-समूह, अर्थ-वैभव एवं कलात्मक सौन्दर्य सभी दृष्टियों से उसका बड़ा महत्व है। भाषा-शास्त्रीय दृष्टि से भी हिन्दी के विकास में उसका महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी रचनाओं में तत्कालीन बोलचाल की अवधी का स्वरूप सुरक्षित है। कवि ने अवधी भाषा के ग्रंथों के साथ-साथ अपभ्रंश काव्य-परम्परा से भी यथेष्ट लाभ उठाया है जिससे उसकी भाषा में प्रौढ़ता आ गई है।

ध्वनि-विचार-जायसी की भाषा में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ओ स्वरों का प्रयोग शब्दों के आदि मध्य और अन्त सभी स्थलों पर हुआ है। अवधी की ह्रस्व ए और ओ ध्वनियों का प्रयोग जायसी में मिलता है। इनके लिए लिपि में कोई विशिष्ट चिह्न नहीं अपनाए गए हैं, तथापि उच्चारण की दृष्टि से इनका अस्तित्व प्रमाणित होता है। ऋ ध्वनि का प्रयोग सम्पूर्ण जायसी-काव्य में केवल एक शब्द ऋतु में प्राप्त होता है। अधिक संभावना यही है कि यह लिपिकर्त्ता की कृपा का परिणाम हो। ऋ ध्वनि अधिकांश स्थलों पर 'रि' में परिवर्तित हो गई है। कुछ स्थलों पर इसका परिवर्तन अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, इरि एवं र में भी हुआ है। संयुक्त-स्वर ए और औ का भी प्रयोग शब्द के आदि मध्य और अन्त सभी स्थलों पर हुआ है। उपर्युक्त सभी स्वरों के सानुनासिक प्रयोग भी प्राप्त होते हैं। जायसी में दो स्वरों के संयोग प्रचुरता से मिलते हैं। तीन स्वरों के संयोग भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होते हैं। स्वर-संयोग में भी अनेक स्थलों पर एक स्वर सानुनासिक है। जायसी की भाषा में हिन्दी में प्रचलित प्राय: समस्त व्यंजनों का प्रयोग हुआ है। श का प्रयोग केवल दो फारसी शब्दों शराब और मश्क में मिलता है तथा ष लिपि में तो पाया जाता है, किन्तु इसका उच्चारण ख अथवा स की भांति है। श के स्थान पर प्राय: स का प्रयोग हुआ है। नासिक्य व्यंजनों में ङ् का प्रयोग केवल एक शब्द में एक-एक स्थान पर हुआ है-रङ्.ग । इनमें लिपिकर्त्ता का प्रमाद दृष्टिगोचर होता है। ण का प्रयोग भी केवल एक शब्द वेणी में एक स्थान पर मिलता है। डा. माताप्रसाद गुप्त ने इसके इसी पाठ की पुष्टि की है। शेष स्थलों पर ङ्. के स्थान पर अनुस्वार तथा ण के स्थान पर न् का प्रयोग मिलता है। जायसी की भाषा में न्, म् और ल् के महाप्राण रूप क्रमश: न्ह्, म्ह् और ल्ह् भी प्राप्त होते हैं। र् के महाप्राण रूप रह् का प्रयोग जायसी में नहीं मिलता है। विसर्ग (:) का जायसी में पूर्ण अभाव है। संयुक्त व्यंजनों में क्ष् का प्रयोग जायसी में नहीं मिलता है, त्र् का प्रयोग तत्सम एवं तद्भव दोनों प्रकार के शब्दों में पाया जाता है तथा ज्ञ् का प्रयोग केवल

एक शब्द ज्ञान में प्राप्त होता है। इनमें ज्ञ् का प्रयोग कविकृत होने में संदेह है। दो व्यंजनों के संयुक्त रूप का प्रयोग जायसी में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। जायसी में अनेक व्यंजनों के द्वित्व रूप भी प्राप्त होते हैं। इनमें अधिकांश रूप प्रा.भा.आ.भा. से प्रभावित हैं।

जायसी की भाषा में स्वरों को परिवर्तन शब्दों के आदि, मध्य और अन्त सभी स्थलों पर प्राप्त होता है। स्वर-विपर्यय की प्रवृति भी अनेक शब्दों में मिलती है। कुछ शब्दों के आदि में अ का आगम विपरीत अर्थ का भ्रम उत्पन्न करता है, यथा-अस्थूल (वृथा अर्थ में)। जायसी में क्षतिपूर्ति दीर्घीकरण के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं। स्वरों के समान ही शब्द के आदि, मध्य और अन्त सभी स्थानों पर व्यंजनों में भी परिवर्तन पाया जाता है। इसमें महाप्राणीकरण, अल्पप्राणीकरण, घोषीकरण, अघोषीकरण तथा मूर्धन्यीकरण की प्रवृत्ति पाई जाती है। इन परिवर्तनों में त् के स्थान पर ट्, द् के स्थान पर ज् तथा व् के स्थान पर म् का परिवर्तन द्रष्टव्य है। मध्य व्यंजन परिवर्तन में त् के स्थान पर द्, ग् के स्थान पर य् तथा त् के स्थान पर य् आदि परिवर्तन विशेष ध्यान देने योग्य हैं। शब्दों के आदि और मध्य में य्, व्, श् का परिवर्तन सामान्यतया ज्, ब्, स् में हुआ है। स्वरों की भाँति व्यंजनों में भी आगम, लोप और विपर्यय देखा जाता है। जायसी की भाषा में आदि तथा अन्त्य व्यंजन लोप के उदाहरण बहुत कम हैं तथा मध्य व्यंजन लोप के उदाहरण पर्याप्त हैं। जायसी में व्यंजनागम की प्रवृति बहुत कम है। व्यंजनों में, प्राय: ह् का आगम हुआ है। व्यंजन-विपर्यय भी बहुत कम शब्दों में मिलता है। स्वर-परिवर्तन में ह् का आगम हुआ है। स्वर-परिवर्तन में ह्रस्वीकरण की अपेक्षा दीर्घीकरण की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। इस प्रकार के अधिकांश परिवर्तन मात्रापूर्ति एवं तुकान्त-निर्वाह हेतु किये गए हैं।

शब्द-समूह-जायसी का शब्द-भण्डार अत्यन्त विस्तृत है। कवि ने बोलचाल की भाषा को अपनाकर उसमें पूर्ववर्ती तथा समकालीन देशी-विदेशी भाषाओं के शब्दों का मिश्रण कर उसे उच्च साहित्यिक स्तर पर स्थापित किया है। देशी-विदेशी शब्दों में चयन में कवि का प्रयास सराहनीय है। जायसी की भाषा में संस्कृत शब्द लगभग 14 प्रतिशत, प्राकृतपालि अपभ्रंश आदि म.भा.आ.भा. से प्रभावित शब्द लगभग 5 प्रतिशत, तद्भव शब्दों का प्रयोग लगभग 70 प्रतिशत, अरबी-फारसी आदि विदेशी भाषाओं के शब्द लगभग 3 प्रतिशत तथा देशज और अनुकरणात्मक शब्द लगभग 5 प्रतिशत हैं। इनके अतिरिक्त उसमें कुछ क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। विभिन्न ग्रंथों में विचारधारा विशेष

अथवा शैली भेद से इस प्रतिशत में अन्तर हो सकता है तथा इस्लामी विचारधारा से ओतप्रोत होने के कारण 'आखिरी कलाम' में अरबी, फारसी शब्दों, 'कहरानामा' में कहार का रूपक होने के कारण देशज शब्दों तथा 'मसलानामा' में लोकोक्तियों के प्राधान्य के कारण क्षेत्रीय बोलियों के शब्द अपेक्षाकृत अधिक हैं। जायसी ने विदेशी शब्दों के मूल रूप की अपेक्षा उनके विकृत रूपों को प्रधानता दी है। इन्हें अवधी के साँचे में ढालने का कवि ने सफल प्रयास किया है। जायसी की भाषा में ठेठ अवधी शब्दों का सौन्दर्य देखने योग्य है। कवि ने कुछ नवीन शब्दों का भी निर्माण किया है, यथा-मुखवचन सरग संदेशी तथा सहदेसी आदि। मलिक मुहम्मद जायसी ने कहीं-कहीं किसी वर्ग अथवा सम्प्रदाय विशेष की पारिभाषिक शब्दावली को भी ज्यों का त्यों अपना लिया है, यथा- 'अखरावट' में जुलाहों की शब्दावली उल्लेखनीय है। जायसी भाषा के संबंध में भी उसी प्रकार उदार थे जैसे धर्म और दर्शन के संबंध में उदार थे। जायसी ने पुनरुक्त शब्दों की सफल योजना की है। इनका प्रयोग विशेष रूप से बलात्मकता एवं निरंतरता के सूचन के लिये हुआ है। जायसी की भाषा में समास प्रायः दो पदों के योग से बनाए गए हैं। अधिकांश समासों की रचना तत्सम तथा तद्भव पदों के योग से हुई है। विदेशी के साथ तत्सम पदों का योग केवल दो स्थानों पर प्राप्त होता है। जायसी की वाक्य-रचना सरल है। उनकी भाषा में जटिल वाक्यों का प्रयोग विरल है। कुछ वाक्यों में लिंगदोष की आशंका होती है, किन्तु ऐसे स्थलों पर भाववाच्य प्रयोग मान लेने पर उक्त शंका का समाधान हो जाता है। मलिक मुहम्मद जायसी के कुछ वाक्य खड़ी बोली से प्रभावित प्रतीत होते हैं। वाक्यों में अनेक स्थानों पर क्रमभंग देखा जाता है किन्तु इससे अभिप्रेत अर्थ तक पहुंचने में विशेष बाधा नहीं पड़ती है।

रूपात्मक अध्ययन की दृष्टि से जायसी की भाषा में जहाँ एक ओर अपभ्रंशकालीन हिन्दी की कुछ पृवत्तियां पाई जाती हैं, वहाँ उसमें प्राचीन अवधी की भी प्रायः सभी विशेषतायें मिलती हैं। जायसी द्वारा प्रयुक्त अधिकांश संज्ञायें अकारान्त हैं। इनकी संख्या लगभग 71 प्रतिशत है। आकारान्त, इकारान्त और उकारान्त संज्ञायें इनकी अपेक्षा बहुत कम हैं। ए, ऐ, ओ और अन्तवाली संज्ञाओं का प्रयोग विरल है। पुल्लिग संज्ञाओं के स्त्रीलिंग रूप बनाने के लिए प्रायः इ, इन, इनि-इइनी प्रत्ययों का प्रयोग किया गया है। बहुवचन रूपों का निर्माण एकवचन रूपों में प्रायः न और न्ह के योग से हुआ है। स्त्रीलिंग में न्ह के स्थान पर न्हि प्रत्यय जोड़ा गया है। भाववाचक संज्ञाओं का निर्माण, विशेषण, क्रिया,

सर्वनाम एवं जातिवाचक संज्ञाओं में विभिन्न प्रयासों के योग से हुआ है। विभिन्न कारकों का बोध प्राय: विभक्ति सूचक प्रत्ययों के योग से कराया गया है। अधिकांश स्थलों पर संज्ञा के मूल रूप से ही कारक का बोध हो जाता है। कुछ स्थलों पर अन्त्य स्वर को अनुनासिक करके कारक का बोध कराया गया है। ऐसे प्रयोग प्राय: सभी कारकों में मिलते हैं। कारकों का निर्देश करने के लिए परसर्गों का प्रयोग अपेक्षाकृत कम हुआ है। परसर्गों का प्रयोग सर्वनामों में अधिक हुआ है। कहीं-कहीं पश्चिमी हिन्दी के परसर्ग 'में', 'मो', 'पर' आदि का प्रयोग भी मिलता है। रूप-निर्माण की दृष्टि से जायसी में संज्ञामूलक, विशेषणमूलक, क्रियामूलक एवं सर्वनाममूलक विशेषण प्राप्त होते हैं। आधिक्यसूचन के लिए विशेषणों में 'अति' 'परम' तथा 'महा' का प्रयोग किया गया है। संख्यावाचक विशेषणों में यत्र-तत्र संस्कृत रूपों, यथा-सप्त, अष्ट, नव तथा सहस्र के साथ-साथ म.भा.आ.भा. से प्रभावित रूपों तथा-तिरि, दह और एगारह आदि का भी प्रयोग मिलता है किन्तु अधिकता तीन, पाँच, सात, आठ जैसे आ.भा.आ.भा. रूपों की ही है। जायसी की भाषा में आ.भा.आ.भा. की क्रियाओं की प्रधानता है। कुछ क्रियायें संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश तथा अरबी-फारसी से भी गृहीत हैं। इनका प्रयोग अत्यंत विरल है। जायसी ने अनेक क्रियायें ठेठ जनभाषा से ग्रहण की हैं, यथा घाला, डफारा, ढारी आदि। प्रेरणार्थक क्रियायें प्राय: 'वा' के योग से निर्मित हुई हैं। विभिन्न कालों की रचना में प्रत्ययों का विधान अत्यंत विस्तृत है। अनेक स्थलों पर एक ही प्रत्यय विभिन्न कालों का बोध कराता है। इसमें एक ओर जहाँ कवि भाषा के क्षेत्र में स्वतंत्रता का उपयोग कर सका है, वहाँ दूसरी ओर इस प्रवृत्ति के कारण कहीं-कहीं अर्थ समझने में भी कठिनाई होती है। अनेक स्थानों पर काल का बोध कराने के लिए मूल धातु का प्रयोग हुआ है। ऐसे स्थलों पर प्राय: धातु में 'अ' प्रत्यय स्वीकार किया गया है। जायसी की भाषा में संयुक्त कालरचना का निर्माण करने वाली सहायक क्रियाओं का प्रयोग कम हुआ है। अधिकांश स्थलों पर इसका प्रयोग स्वतंत्र रूप में देखने में आता है। सहायक क्रियाओं में वर्तमान काल एक वचन में अस् धातु के 'अहै' 'आहि' और 'हैं' तथा बहुवचन में 'आहि' और 'है' रूपों की प्रधानता है। वर्तमानकाल में सहायक-क्रिया आछ (आ क्षे) का भी प्रयोग मिलता है। भूतकाल एकवचन में 'अहा' और 'हुत' तथा बहुवचन में 'अहे' और 'हुते' रूपों की प्रधानता है। जायसी में संयुक्त क्रियायें प्राय: क्रियार्थक संज्ञा, पूर्वकालिक कृदंत, वर्तमान कालिक कृदंत तथा भूतकालिक कृदंतों के योग से निर्मित हुई हैं। वाच्य की दृष्टि से जायसी की

भाषा में कर्तृवाच्य रूपों की प्रधानता है। कर्मवाच्य के प्रयोग अत्यल्प हैं। इनक निर्माण कर्तृवाच्य रूपों में 'आ' तथा 'वा' के योग से हुआ है। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि जायसी की भाषा यद्यपि अवधी है तथापि उस पर पश्चिमी हिन्दी, मागधी और यत्र-तत्र ब्रज का प्रभाव पाया जाता है। उस पर म.भा.आ.भा. का प्रभाव भी है जो कुछ विशेषण एवं क्रियारूपों पर स्पष्ट लक्षित होता है। इस प्रकार का मिश्रण जायसी की उदारवृत्ति तथा भाषा के लोकप्रचलित रूपों की ओर उनके झुकाव का परिचायक है।

अर्थ विचार-जायसी की भाषा में तत्कालीन ऐसे अनेक शब्द सुरक्षित हैं, जिनका अर्थ-विकास की दृष्टि से बड़ा महत्व है। यथा भाषा (हिन्दी), भारत (भीषण युद्ध), पंडित (विद्वान), सबद (शास्त्र-वचन) आदि। जायसी ने कुछ शब्दों में नवीन अर्थ का आधान किया है, यथा-अछूत, अस्पृष्ट तथा निरास (निरपेक्ष) आदि।

व्यावहारिक पक्ष-विषय के अनुसार जायसी की भाषा में अधिकांश स्थलों पर भाषा पर ठेठ रूप पाया जाता है, जिसमें तद्भव शब्दों की प्रधानता है। सिद्धान्त-निरुपण में पारिभाषिक एवं प्रतीकात्मक शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। विषय के अनुसार भाषायोजना में कवि को सर्वत्र सफलता मिली है। कवि ने पात्रों एवं उनके मनोभावों के अनुरूप भाषा-प्रयोग में विशेष सजगता दिखाई है। संवादात्मक स्थलों पर भी भाषा पात्रानुकूल तथा उनकी योग्यता एवं स्तर के अनुरूप है। जायसी की भाषा में सूक्तियों का चमत्कार देखने योग्य है। कहावतों और मुहावरों के प्रयोग से कवि की भाषा सशक्त और सजीव हो उठी है।

काव्यशास्त्रीय पक्ष-जायसी की भाषा का काव्य-शास्त्रीय पक्ष भी प्रबल है। उनकी भाषा में शब्द की अभिधा-शक्ति के साथ-साथ लक्षणा और व्यंजना-शक्ति का भी प्रसार देखा जाता है। जनसामान्य में अपने विचारों के प्रसार हेतु कवि ने विशेष रूप से अभिधामूलक शब्दों को अपनाया है किन्तु गंभीर अर्थ-व्यंजना के हेतु लक्षणा और व्यंजना शक्तियों का आश्रय लिया गया है। जायसी ने अवधी भाषा में दोहा-चोपाई छंद का सफल प्रयोग किया है। उनके छंदों में यत्र-तत्र मात्राओं तथा यति-गति भंग का दोष अवश्य आ गया है तथापि उनकी भाषा मधुर, गत्यात्मक तथा प्रवाहपूर्ण है। विभिन्न रसों के अनुरूप उपयुक्त शब्द-चयन में भी जायसी को पूर्ण सफलता मिली है। जायसी की भाषा में अलंकारों का प्रयोग सहज स्वाभाविक रूप से हुआ है। उसमें शब्दालंकारों के स्थान पर सादृश्यमूलक अर्थालंकारों का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक हुआ है। ये अलंकार भी

कवि की भाषा की सौंदर्य वृद्धि में सहायक हुए हैं। भाषा-सौष्ठव एवं प्रांजलता की दृष्टि से जायसी की कृतियों में पद्मावत का स्थान सर्वप्रथम है।

जायसी ने अवधी भाषा की अभिव्यंजनाशक्ति को प्रकट करके उसके विकास में महान योग दिया। अवधी को काव्यभाषा के मान्य पद पर प्रतिष्ठित करने का बहुत कुछ श्रेय जायसी को है। जायसी को प्राप्त कर अवधी भाषा सचमुच धन्य हो गई।

***

3-जायसी की भाषा में समास-रचना

भाषा के अध्ययन में समास का स्थान महत्त्वपूर्ण है। समास में एक शब्द का दूसरे शब्द के साथ निकट का संबंध स्थापित किया जाता है। समास दो अथवा दो से अधिक पदों के योग से बनता है। सजातीय एवं विजातीय शब्द परस्पर मिलकर किस प्रकार एक-दूसरे से संबद्ध हो जाते हैं, इनके उदाहरण समासों में मिलते हैं। जायसी की भाषा में विशुद्ध तत्सम एवं तद्भव शब्दों के समासों के साथ-साथ इसके परस्पर योग से भी समास बनाए गए हैं, साथ ही अनेक स्थानों पर देशज एवं विदेशी शब्दों के संयोग से भी समास निर्मित हुए हैं। समास-रचना के अध्ययन से इन प्रश्नों का उत्तर सहज ही मिल जाता है कि कवि ने विभिन्न भाषाओं के शब्दों में क्या, क्यों और कैसे संबंध स्थापित किया है। जायसी की समास-रचना देखने के पश्चात् ही कवि की इस प्रवृत्तियों के संबंध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। अतः मलिक मुहम्मद जायसी की रचनाओं से कुछ समास यहाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं-

तत्सम-तत्सम-कनक-दंड दुइ भुजा कलाई।
सारा प्रेम-ज्ञान नाहिं वाहा।
हंसगामिनी कोकिल बैनी।

तत्सम-तद्भव-कहौं राज बड़ ताकर कनक छात मन्हि पाठ।
राजमंदिल पूत अवतरा।
तेहि पर वाज राजघरिआरू।
चंदन आँक दाग होइ परे।

तद्भव-तत्सम-पदुम गंध बेधा जग बासा।
राजा कहै गरब कै हौं रे इंद्र सिवलोक।
पोथी-पत्र आनि सब खोले।

तद्भव-तद्भव-हम तौ बुद्धि गँवाई बिख-चारा अस खाइ।
खीर समुंद का बरनौं नीरू।

जाहु सुरुज किरन हुति काढ़ी।

नञ् समास-सत्र अछूत तुमका भरि राखे।

बड़ परताप अखंडित राजू।

दारिवैं दाख फरे अनचाखे।

तत्सम-देशज-छुद्रघंटि कटि कंचन तागा।

चंदन चोप पवन अस पीऊ।

तद्भव-देशज-बरुनि बान अस ओपहिं बेधे रन बन ढंख।

नाच कोड भूला सब कोई।

देशज-तद्भव-करिल केस बिसहर बिस भरे।

तद्भव-प्राकृत-भैं जेंवनार फिरा खंडवानी।

विदेशी-संस्कृत--(फा+सं०) औ निहंग दरिया-जल माहाँ।

(अ०+सं०) यामे सार इस्क जानेहु।

विदेशी-तद्भव--(फा+तद्) कागद पुतरी जैस सरीरा।

(फा+तद्) आवहु करहु गुदर मिस साजू।

तद्भव-विदेशी--(तद्+फा०) खरग पोलाद निरँग सब काढ़े।

(तद्+फा०) पेय पियाला जेहि पिया।

(तद्+अ०) का बरनौं धनि देस दियारा।

विदेशी-विदेशी--(फा०+अ०) कूच मुकाम जाइ फिरि आवन।

(फा०+अ०) कोहनूर रावट होइ गएऊ।

(अ०+फा०) मुहमद तहाँ निचित पथ जेहि संग मुरसिद पीर।

अपभ्रंश-विदेशी-सुक्ख सुहेला उग्गवइ दुक्ख झरइ जेउँ मेह।

जायसी की समास-रचना का अध्ययन करने के पश्चात् हम निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं-

(1) अधिकांश समासों की रचना तत्सम एवं तद्भव पदों के योग से हुई है।

(2) अनेक स्थलों पर विदेशी और तद्भव पदों के योग से समास बनाये गए हैं। विदेशी के साथ संस्कृत तत्सम पद का योग केवल दो स्थानों पर प्राप्त होता है-

दरिया-जल और इस्क-पथ।

(3) नञ् समास का निर्माण पद के आदि में अ और अन् उपसर्गों के योग से हुआ है।

(4) कुछ स्थलों पर विदेशी शब्दों के योग से समासों का निर्माण हुआ है। इनमें शब्दों के मूल एवं विकृत दोनों रूपों का उपयोग किया गया है।

(5) विदेशी समासों के अतिरिक्त कुछ अन्य समासों की रचना पर भी फारसी-शैली का प्रभाव लक्षित होता है, यथा-

भँवर वास चंपा नहिं लेई।

ससि चौदसि जो दइअ सँवारा।

***

4. जायसी-कृत मसलानामा के कुछ महत्त्वपूर्ण मसले

'मसलानामा' जायसी की एक नवोपलब्ध लघु रचना है, जिसका उद्धार श्री अमर बहादुर सिंह 'अमरेश' ने किया है। जायसी की एक अन्य कृति 'कहरानामा' के साथ 'कहरानामा मसलानामा' नाम से इसका प्रकाशन हुआ है।

'मसलानामा', जैसा कि इसके नाम से ही प्रकट है, मसलों (मसायल) का संग्रह है। इसमें कवि ने जीवन के गहन अनुभवों को मसलों द्वारा व्यक्त किया है। 'मसला' शब्द अरबी 'मसल' से निष्पन्न है, जो 'मिस्ल' से बना है और जिसका अर्थ समान, तुल्य होता है। मसला का अर्थ है-कहावत, लोकोक्ति अथवा विचारणीय विषय। जायसी के मसलानामा पर उपर्युक्त सभी अर्थ ठीक बैठते हैं। इसमें कवि ने अपने जीव-जगत सम्बंधी विचारों को लोकोक्तियों द्वारा प्रस्तुत किया है।

'मसलानामा' में जो लोकोक्तियाँ अपनाई गई हैं, वे अवधी भाषा की हैं। आज से लगभग साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व ही जायसी ने लोकोक्तियों का संकलन करके साहित्य के क्षेत्र में एक नवीन परम्परा को जन्म दिया था। उन्होंने सीधे-सादे शब्दों में जनभाषा में लोकोक्तियों के द्वारा अपने भावों को व्यक्त करके मौलिकता का परिचय दिया था। इन लोकोक्तियों में कुछ सार्वभौम के भी संकेत मिलते हैं। इसी बात को दृष्टिपथ में रखते हुए यहाँ हम मसलानामा के कुछ मसलों पर विचार करेंगे।

दूध-क-दूध, पानि-का-पानि। /धाही आगे पेट छपावै।

दिना-चार की चाँदनी, फिरि अंधियारा पाख।

घर के भेदिहा लंका डाह।

जैसा कुत्ता धोबि को, भयो न घर को घाट।।

नाच न जाही टेढ़ आँगन।

मसलानामा के कुछ मसले ऐसे हैं, जिनमें तत्कालीन कुछ विशेष प्रवृत्तियों के संकेत प्राप्त होते हैं। यथा, निम्नलिखित मसलों से स्वामी की प्रशंसा, शक्ति का बोलबाला एवं बलप्रयोग की पुष्टि होती है-

जोहि का खाई, तेहि का गाई। / छूछ पछोरै, उड़ि-उड़ि जाई।

जिसकी लाठी, तिसकी भैंस। / सूधी अँगुरी न निकसत धीऊ।

कई बार लोकोक्तियों में हमें तत्कालीन समाज एवं उसके विभिन्न वर्गों की झलक भी मिल जाती है। मसलानामा से इस प्रकार के दो मसले उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत किये जाते हैं-

जेहि घर सासु-तरुनियाँ, बहुवा कौन सिंगार।

तरुणी सास के सामने भला बहू क्या शृंगार कर सकती है। यहा परिवार में सास की सत्ता का संकेत मिलता है। पदमावत की निम्नांकित पंक्तियों से भी इसकी पुष्टि होती है-

सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं।

सासु ननद के भौंह सिरकोरे। रहब सँकोचि दुबौ कर जोरे।।

इसी प्रकार, निम्नलिखित मसले में परम्परागत वणिक्-वृत्ति का संकेत प्राप्त होता है-

माँगे बनियाँ गुर नहि देई।

कुछ मसलों में प्रदेश-विशेष के महत्त्व एवं वहाँ के लोगों की विशेषताओं पर प्रकाश पड़ता है। यथा-

संभल बसै, अलोना खाई। /थोरा खाइ बनारस बसै।

भूखा बंगाली भातै-भात।

इस प्रकार, मसलनामा के मसलों के आधार पर तत्कालीन जीवन-पद्धति एवं समाज के कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य हमारे सम्मुख प्रकट होते हैं।

***

पूज्य पिता जी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी ने पचास से अधिक पुस्तकों की भूमिकाएँ तथा सौ से अधिक पुस्तकों की समीक्षाएँ लिखीं थीं। इनमें से दो-दो रचनाएँ नमूनार्थ प्रस्तुत हैं।

8. भूमिकाएँ

1. कर्म-बोध (दोहा कृति)-डॉ० बुद्धिप्रकाश शर्मा, प्र.सं. 6 अक्टूबर 2012 ई०, पृ. सं. 184, मूल्य 200 रु०, स्वयं प्रकाशित, 315, नई बस्ती बिजनौर (उ०प्र०)

कर्म-बोध : भावात्मक अभिव्यक्ति

'कर्म-बोध' रचयिता डॉ० बुद्धिप्रकाश शर्मा अध्यात्म-प्रेमी चिन्तक-विचारक हैं। साहित्य के प्रति उनका आकर्षण सहज स्फूर्त है। इससे प्रेरित होकर उन्होंने दोहों की रचना की है। 'कर्म-बोध' दोहा-संग्रह उनकी तृतीय कृति है। इससे पूर्व उनके दो दोहा-संग्रह 'मैं 'मैं' हूँ' तथा 'अविकल्प' प्रकाशित हो चुके हैं। विद्वानों

ने मुक्त-कण्ठ से इनकी सराहना की है।

शास्त्रों के अनुसार, किये हुए शुभ-अशुभ कर्मों का फल मनुष्यों को अवश्य भोगना पड़ता है। किये हुये कर्मों का क्षय शत-कोटि कल्पों में भी नहीं होता-

अवश्यमेव भोक्तव्यं कृत कर्म शुभाशुभम्।
कृत कर्म क्षयो नास्ति कल्प कोटि शतैरपि।। रामचरितमानस

भक्तिमयी मीराबाई कर्मों की अटल गति का वर्णन करती हुई कहती है-

करम गति टारे नाहिं टरे।।
सतवादी हरिचंद से राजा (सो तो) नीच घर नीर भरे।
पाँच पांडु अरु कुंती द्रौपदी, हाड़ हिमालय गरे।।
जग्य किये बलि तेन इन्द्रासण, सो पाताल धरे।
मीरा के प्रभु गिरिधर नागर विख ते अमृत करे।।

डॉ० बुद्धि प्रकाश शर्मा के अनुसार भी कर्म-सिद्धान्त अटल है। अतः व्यक्ति को शुभ तथा सत्कर्मों में प्रवृत्त रहना चाहिए-

समझ कर्म-सिद्धान्त को, अटल कर्म-सिद्धान्त।
करे विवेकी इसलिए, शुभ सद् कर्म नितान्त।।

लोकोक्ति प्रसिद्ध है-जैसा बोओगे वैसा काटोगे। अतः मानव को निष्पाप कर्म ही करणीय हैं-

काट नहीं सकते कभी, बोए बिन कुछ आप।
यही कर्म-सिद्धान्त है, करना कर्म अपाप।।

कवि के अनुसार कर्म मर्यादाओं की सीमा में रहने चाहिए। जो व्यक्ति ऐसा करते हैं उन्हें दूसरों पर निर्भर नहीं रहना पड़ता है-

जिन कर्मों पर कस लिये, मर्यादा के बन्ध।
नहिं कदापि तब ताकने, पड़ें अन्य के कन्ध।।

प्राकृतिक न्याय यही है कि सुख देने से सुख की प्राप्ति होती है। अतः दान, उपकार में ही अपने साधनों तथा श्रम का समायोजन करना चाहिए-

सुख देने से सुख मिले, यह नैसर्गिक योग।
अतः दान उपकार में, निज साधन श्रम भोग।।

मानव का शत्रु भाव त्याग कर मैत्री-भाव अपनाना चाहिए। इससे मन, बुद्धि में स्वच्छता का वास होगा-

एक ठौर टिकती नहीं, जस पानी की धार।
शत्रु-भाव रुकने न दे, तस मन बुद्धि, बुहार।।

कवि का कथन है कि पानी का बदला बुराई से न चुकाएँ क्योंकि पाप से पाप का निस्तारण नहीं हो सकता-

करें बुराई से नहीं, पानी का प्रतिकार।
क्योंकि पाप से पाप का, सम्भव नहिं प्रतिहार।।

कवि ने भाग्य की अपेक्षा उद्यम तथा पुरुषार्थ को अधिक महत्व दिया है-

उदित भाग्य को कर सके, मात्र घोर उद्योग।
यत्न करें नहिं, कोसते, बैठ भाग्य को लोग।
झुका न आगे भाग्य के, अस्थिर होकर माथ।
बल असीम पुरुषार्थ का, बढ़, विवेक के साथ।

कवि की मान्यता है कि जब तक मनुष्य अहंकार से ग्रस्त है तब तक आत्मिक आनन्द प्राप्त नहीं कर सकता-

अहंकार के पाश में, जब तक बँध मनुष्य।
आत्मा के आन्नद से, रहता वंचित शुष्य।।

जो व्यक्ति अपनी आलोचना नहीं सह सकता तथा अहंकार में मदमत्त रहता है, सभी उसका साथ छोड़ देते हैं। यहाँ तक कि उसका अपना परिवार भी उससे विमुख हो जाता है-

सहे नहीं आलोचना, कर गाढ़ा हंकार।
सजग! साथ तब छोड़ता, निज का भी परिवार।।

संयम हृदय को हृदय से जोड़ता है। इसके विपरीत असंयम प्रेम की धारा को विपरीत दिशा में ले जाता है-

उर से डर उर को जोड़ता, संयम का संसार।
किन्तु असंयम नेह की, उलटे, बहती धार।।

जो व्यक्ति उठते हुए क्रोध को आगे बढ़ने से पहले ही रोक लेता है, वह जीवन में सफलता प्राप्त करता है-

है वह साँचा सारथी, जीवन रथ का भ्रात।
उठे क्रोध को रोक ले, करने से उत्पात।।

जीवन में उत्थान-पतन का क्रम चलता रहता है, जो व्यक्ति इन दोनों को सहज भाव से स्वीकार करता है, वह सफल होता है-

उठता जो गिरता वही, उठता कभी न क्लीव।
गिरना उठना दे बना, नर को सबल सजीव।।

स्वर्ग और नरक दोनां मानव के अंतः करण में बसते हैं। यह मानव के मन पर

निर्भर करता है कि वह इनमें से किसका वरण करता है-

स्वर्ग नर्क दोनों बसे, नर के अन्तरस माहिँ।
निर्भर यह मन पर करे, रहता किसके पाहिँ।।

डॉ० बुद्धि प्रकाश शर्मा के प्रस्तुत दोहा-संग्रह 'कर्म-बोध' में अध्यात्म तथा दर्शन का प्राधान्य है। कुछ दोहों में नीति और लोक-व्यवहार का भी सफल निर्देशन हुआ है। उनकी साधना सफल हो, मेरी यही कामना है।

गांधी जयंती — -डॉ० रामस्वरूप आर्य
2 अक्टूबर 2012 ई० — बी-14, नई बस्ती, बिजनौर (उ०प्र०)

***

2. बेटियाँ (काव्य-संग्रह)-श्री हितेश कुमार शर्मा, प्र०सं० 2015 ई०-पृ०सं० 64, मूल्य 50 रु०, हरिगंगा प्रकाशन, गणपति भवन, सिविल लाइंस, बिजनौर (उ०प्र०),

समावलोकन

बेटी, नारी का परम पवित्र रूप है। अत: भारतीय समाज में प्राचीन काल से ही बेटी को महत्त्व मिलता रहा है। बेटा एक कुल को आलोकित करता है जबकि बेटी बधू बनकर दो कुलों की शोभा बढ़ाती है। श्रीराम की अनुगामिनी सीता को वनवासी रूप में देखकर पिता जनक जी कहते हैं-

पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ।
सुजस धवल जगु कह सब कोऊ। रामचरितमानस

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने 'साकेत' में इसी भाव को और अधिक विशद रूप देते हुए लिखा है-

दो वंशों में प्रकट करके पावनी लोक लीला।
सौ पुत्रों से भी अधिक जितनी पुत्रियाँ पूतशीला।।

समय के दुष्चक्र तथा सामाजिक विषमताओं के कारण बेटी की स्थिति विषम होती चली गई और उसे भार समझा जाने लगा। यहाँ तक कि उसकी भ्रूण हत्या की जाने लगी। हमारे मनीषियों, समाज सुधारकों तथा विचारकों का ध्यान इस ओर गया और उन्होंने बेटी के महत्व, संरक्षण तथा उत्थान हेतु समाज को प्रेरित किया। इसी क्रम में भारत के प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी ने नारा दिया 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ'। श्री हितेश कुमार शर्मा ने इस उद्‌घोष से प्रेरणा लेकर 'बेटियाँ' पुस्तक की रचना की है, जिसमं पचहत्तर चौपदियाँ हैं। पुस्तक की शीर्ष चौपदी में इसकी झलक मिलती है-

बेटियों को बचाओ, पढ़ाओ इन्हें।
हो सके जितना आगे बढ़ाओ इन्हें।
आपका नाम ऊँचा करेंगी यही-
करके सहयोग ऊँचा उठाओ इन्हें।

जब किसी की बेटी घर में बहू बनकर आती है तब ही कुल के दीपक का जन्म होता है और इस प्रकार वंश परम्परा का क्रम आगे बढ़ता है-

कुल का दीपक न हो, गर न हों बेटियाँ।
घर में सुनसान हो, गर न हों बेटियाँ।
जन्म लेता है कुलदीप घर में तभी-
जब बहू बन के आती हैं घर बेटियाँ।

कवि के अनुसार बेटियाँ ही माता बनकर देश भक्तों को जन्म देती हैं, जो देश की सुरक्षा में तत्पर रहते हैं-

जब कभी मात बनती हैं ये बेटियाँ।
देशभक्तों को देतीं जन्म बेटियाँ।
जन्मदाता हैं ये वीर की शूर की-
देश की हैं सुरक्षा का बल बेटियाँ।

पुत्र एक कुल का सम्मान बढ़ाता है जबकि बेटी दो कुलों के सम्मान में वृद्धि करती है-

दो कुलों की निगहबान हैं बेटियाँ।
सिर्फ सन्तान ही नहीं बेटियाँ।
एक ही कुल का सम्मान है पुत्र पर-
दो कुलों का भी सम्मान हैं बेटियाँ।

कवि का अनुभव है कि जो लोग बहुओं के प्रति आत्मीय भाव रखते हैं उनकी बेटियाँ भी सुखी रहती हैं। अतः बहुओं के प्रति सद्भाव परम आवश्यक है-

प्यार बहुओं को जितना करोगे हितेश।
आपकी बेटियों का मिलेगा विशेष।
प्यार बहुओं को करना अगर आ गया-
बेटियों को न होगा कभी भी क्लेश।

बहू को भी बेटी जैसा प्यार मिलना चाहिए। ध्यान रहे कि तुम्हारी बेटी भी किसी घर की बहू बनेगी-

बहू में, बेटियों में ना अन्तर करो।
प्यार बहुओं को भी बेटी जैसा करो।
है तुम्हारी भी बेटी किसी की बहू-
मात जैसा ही व्यवहार उससे करो।

बेटियाँ ईश्वर की अनुपम कृति हैं। कवि ने उसकी तुलना वेद, उपनिषद, गीता, सूरदास के पदों तथा तुलसीदास की चौपाइयों से की है, जो कवि हितेश जी की मौलिक सूझ-बूझ की परिचायक हैं-

पूर्ण अनुपम कृति ईश की बेटियाँ।
ज्ञान-गीता सरिस हैं, सभी बेटियाँ।
सूर के पद, तुलसी की चौपाई हैं-
उपनिषद वेद का मर्म हैं बेटियाँ।

कवि की इस अनुपम कृति का अधिकाधिक प्रचार-प्रसार हो, मेरी यही कामना है।

बुद्ध पूर्णिमा -डॉ० रामस्वरूप आर्य
4 मई 2015 ई० बी-14, नई बस्ती, बिजनौर

***

9. समीक्षाएँ

पूज्य पिताजी डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की प्रथम प्रकाशित समीक्षा, जो 'अभिव्यक्ति-आलांचना' (धामपुर) में 1966 ई० में प्रकाशित हुई थी।

1. धरती का कज (गीत-संग्रह)-श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग', प्र.सं. 1966 ई०, पृ.सं. 96 मूल्य तीन रुपये, रामा प्रकाशन, एल०एस० रस्तौगी एंड संस, बिजनौर (उ.प्र.)

'धरती का कर्ज' श्री ओम प्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' का प्रथम गीत संग्रह है। इसमें कवि के 45 गीत संगृहीत हैं।

कवि ने संसार की पीड़ा को अपने रक्त की मसि से अंकित किया है। जब कवि अन्न उत्पन्न करने वाले कृषक को भ़ुखा देखता है, जब वह संसार की देह सजाने वालों को नग्न और संसार को हँसाने वालों को फूट-फूट कर रोते देखता है, तब यह सब उसे मानव के माथे पर कलंक प्रतीत होता है और उसकी लेखनी उस कलंक को धोने के लिए रक्तिम मसि से कुछ लिखने के लिए बाध्य हो जाती है-

जब भूखा मरता गेहूँ चावल उपजाने वाला।
जब नंगा रहता दुनिया की देह सजाने वाला।

जब संसार हँसाने वाला फूट-फूट खुद रोता।
तब कलंक मानव माथे का मैं लोहू से धोता।।

कवि इस संसार में और अधिक दिन रहना चाहता है क्योंकि वह यहाँ के अनेक बुझते दीपों को प्रकाशित करना चाहता है। संसार के दुख दर्द को दूर करने की यह कामना सचमुच स्पृहणीय है-

हर घट रीता सा, कोरी-सी हर निगाह है।
हर चौखट उदास-सी, हर आँगन सूना है।
हर पीड़ा कराहती, हर मातम को गम है।
हर पूनम सहमी, मावस का तम दूना है।
प्राण-पखेरु, उड़ने को अकुला न अभी से।
मुझे बुझ रहे दीप जलाने हैं धरती के।।

कवि मानवतावाद का पोषक है। उसे अटल विश्वास है कि एक दिन मानवता की विजय होगी। उसकी वाणी का भी इसमें योग होगा। कवि, मानवता के उद्धार के लिए चिरपरिचित किन्तु नित नवीन स्वरों को दुहराता है। वह इन स्वरों को उस समय तक सुनाता जाएगा, जब तक मानवता विजयिनी नहीं हो जाती-

तुम सुनो, मत सुनो, पर मैं तुमको नित्य सुनाता जाऊँगा
तुम आँखें फेरो झपकी लो, पर मैं तो गाता जाऊँगा
विश्वास है मुझे मानवता विजयी होगी, तुम जीतोगे
उस दिन तक हारे मानव को, मैं धीर बँधाता जाऊँगा
बस इसीलिए, मैं रोज वही पहचाने स्वर दुहराता हूँ।
मैं कविता तुम्हें सुनाता हूँ।

'पराग' जी के संग्रह में अनेक श्रृंगारिक गीत भी हैं जिन पर काव्यरसिक भ्रमर मुग्ध हो सकते हैं। इसमें संकलित स्वदेश-प्रेम विषयक कविताओं में अपार ओज है। श्रद्धांजलियों में भी कवि के अन्तर्मन की व्यथा तथा दिवंगत आत्माओं के गुणों का सुन्दर निदर्शन हुआ है। संग्रह के सभी गीत सरस एवं प्रसादगुण युक्त हैं। इस सुन्दर रचना के लिए कवि बधाई का पात्र है।

***

अन्तिम प्रकाशित समीक्षा, जो मृत्यु के दो माह पश्चात् 'डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त : अभिनंदन ग्रंथ' (बरेली) में दिसम्बर 2016 ई० में प्रकाशित हुई।

2. **स्मृति के वातायन** (संस्मरण)-डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त, प्र०सं० 2015 ई०, मूल्य 125 रु०, प्रकाश बुक डिपो, बड़ा बाजार, बरेली (उ०प्र०)

स्मृति के वातायन : संस्मरण की नई बयार

डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार हैं। कवि, जीवनी, संस्मरण लेखक, साहित्यिक शोधकर्ता, समीक्षक, निबन्धकार, सम्पादक के रूप में उन्होंने साहित्य के क्षेत्र में अपना स्थान बनाया है। 'संस्मरण' उनकी प्रिय विधा है। उनके द्वारा सम्पादित 'साहित्यायन' त्रैमासिक के प्रत्येक अंक में उनका 'संस्मरण' प्रकाशित होता है।

'संस्मरण' आधुनिक युग की महत्त्वपूर्ण साहित्यिक विधा है। इसमें एक ओर कहानी की सरसता रहती है तो दूसरी ओर जीवन की उभरी-गहरी अनुभूतियों का चित्रण। संस्मरण में जहाँ युग और समाज का प्रतिबिम्ब रहता है, वहाँ उसमें व्यक्ति की छाप भी स्पष्ट दिखाई पड़ती है। हमारे नित्य-प्रति के जीवन में ऐसी अनेक घटनाएँ एवं पात्र आते रहते हैं, जो हमारे मानस-पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। संस्मरण-लेखक इन्हीं को अपनी लेखनी के पारस-स्पर्श से सजीवता प्रदान करता है।

विगत लगभग साठ-सत्तर वर्षों से हिन्दी में संस्मरणात्मक साहित्य की बहुत उन्नति हुई है। हिन्दी के संस्मरण-लेखकों में पं. पद्म सिंह शर्मा, पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, श्रीमती महादेवी वर्मा, पं. श्रीराम शर्मा, श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति आदि प्रसिद्ध हैं। पं. पद्म सिंह शर्मा के 'पदम पराग' में संकलित संस्मरण, चतुर्वेदी जी के 'संस्मरण' एवं 'हमारे आराध्य', महादेवी वर्मा की 'स्मृति की रेखाएं' तथा 'अतीत के चलचित्र', पं. श्रीराम शर्मा की 'बोलती प्रतिमा' बेनीपुरी जी की 'माटी की मूरतें' तथा इन्द्र जी की 'मैं इनका ऋणी हूँ' आदि संस्मरणात्मक कृतियाँ हिन्दी-साहित्य की अमूल्य निधि हैं। उर्दू शैली से प्रभावित लेखकों में उपेन्द्र नाथ 'अश्क' एवं कृष्ण चन्दर के नाम लिये जा सकते हैं। इनकी क्रमशः 'मन्टो मेरा दुश्मन' एवं 'मेरी यादों के चिनार' कृतियाँ पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुकी हैं। कई प्रसिद्ध कवियों तथा समीक्षकों ने भी उच्च कोटि के संस्मरण लिखे हैं। इनमें प्रमुख हैं श्री हरिवंशराय बच्चन, श्री रामधारी सिंह दिनकर तथा डॉ० रामकुमार वर्मा। यह संस्मरण की लोकप्रियता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

'स्मृति के वातायन' पुस्तक में डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त के नौ संस्मरण संकलित हैं,

जो मुख्य रूप से उनके परिवारीजनों, सहपाठियों तथा मोहल्ले-टोले के निवासियों पर आधारित हैं। अत: स्वाभाविक है कि ये आत्मीयतापूर्ण तथा भावुकता से पूरित हैं। लेखक ने इनमें वर्णित पात्रों के गुण-स्वभाव, उदारता, परोपकार, दया-दाक्षिण्य का सूक्ष्म वर्णन किया है।

पुस्तक का प्रथम संस्मरण 'माता बिनु आदर कौन करै' में लेखक ने अपनी स्वर्गीय माता जी का सजीव चित्रण करते हुए लिखा है-''अम्मा के कितने ही रूप मेरी स्मृति में जीवंत हैं-स्तनपान कराती माँ, नहलाती धुलाती, कपड़े पहनाती माँ...। अम्मा के अनेक चित्रों में सबसे आकर्षक रूप वह प्रतीत होता है जब आँगन में चारपाई पर अम्मा लेटी हुई थीं और हम दोनों भाई उनकी बाँह का तकिया बनाए कहानियाँ सुना करते।'' पृ. 13 लेखक की दीर्घकालीन रुग्णावस्था से परेशान माँ ''कभी इस पंडित के पास जातीं तो कभी उस ज्योतिषी के पास। कुंडली दिखातीं कि बीमारी क्या है? कैसे ठीक होगी? अम्मा श्रद्धापूर्वक उनके चरणों में रुपया रखतीं और उनके द्वारा बतलाये गये उपायों पर आचरण करतीं। वैद्य को दिखाने ले जातीं और जैसे-जैसे सेवन विधि बताते, उसी का अनुपालन कर दवा खिलातीं। कभी-कभी दवा की पुड़िया हाथ से छूट जाती। दवा गिरने पर कहतीं कि अब ठीक हो जाओगे, भगवान कह रहे हैं। पृ. 16 अम्मा की कामना थी कि बेटा सुरेश खूब पढ़-लिख जाये। साधनों की कमी के कारण ''अम्मा दौड़ धूप करतीं कि पुरानी किताबें मिल जायें, फीस माफ हो जाये। वे कोशिश करके सब कुछ जुटा लेतीं। बिना शिकवा शिकायत के यह सब कर पाना, यह एक अम्मा ही कर सकती है। कैसे किया यह सब, आज तो सोचने में भी आँसू आ जाते हैं।'' पृ. 19 अम्मा की यह साधना प्रणम्य है।

द्वितीय संस्मरण 'मेरे दादा' लेखक के बड़े भाई सूरज प्रसाद पर आधारित है। सामान्यतया पिता के पिता अर्थात् पितामह को दादा कहा जाता है पर लेखक अपने बड़े भाई को 'दादा' कहते थे। 'दादा' की शादी मात्र पन्द्रह वर्ष की अवस्था में कर दी गई थी। पिताजी की असामयिक मृत्यु हो जाने पर 'दादा' पर परिवार को बोझ आ पड़ा जिसका निर्वहन उन्होंने पूर्ण जिम्मेदारी से किया। लेखक की पढ़ाई, रुग्णावस्था, देख-भाल तथा लौकिक-व्यवहार में वे सदैव सहायक रहे। उनका भावपूर्ण स्मरण लेखक ने इन शब्दों में किया है-''कितना सम्बल था दादा का। हम बरेली में और दादा शाहजहाँपुर में, परस्पर दूरी कभी दूरी न लगी। हर बाधा विपत्ति में सबसे आगे। काल की करालता के बारे में सोचने का अवसर ही न मिला। इतना स्नेह संरक्षण मिला दादा से कि पिताजी को

भी भुला बैठा था। पिता समान ही तो थे वे। मरने से पूर्व भी, वे मुझे आश्वस्त करने आये थे कि सब कुशल-मंगल होगा। हाँ, सब मंगलमय है। परिवार सुख-समृद्धि से संतुष्ट है। पर, दादा की स्मृति हर पारिवारिक प्रसंग में आती है-शिशु के जन्म में, पुत्रों के विवाह में, उत्सव-उल्लास में।'' पृ. 29

'तान के सीना चली हसीना' संस्मरण में लेखक ने मोहल्ले के ही एक मुस्लिम परिवार की युवती के चित्रण में अपनी गुणग्राहकता का परिचय दिया है। लेखक के अनुसार ''तान के सीना चली हसीना हमारे सामाजिक सांस्कृतिक जीवन की त्रासदी का रोचक, सरस लेकिन विडम्बनापूर्ण चित्रण है।''

लेखक ने अपने अध्यापकीय जीवन का आरंभ ब्रह्मावर्त कॉलेज, मंधना, कानपुर से किया था। वहाँ उन्होंने मात्र दो माह अध्यापन कार्य किया। इसी बीच बरेली कॉलेज में नियुक्ति हो जाने के कारण ब्रह्मावर्त कालेज से विदाई ली। ब्रह्मावर्त कालेज में मात्र दो माह की अल्पावधि में लेखक का प्राचार्य, प्राध्यापकों तथा छात्रों से आत्मीय भाव स्थापित हो गया था। अत: वहाँ से चलते हुए लेखक को भावपूर्ण विदाई दी गई थी। इसी का वर्णन 'बिछुरत एक प्रान हर लेहीं' शीर्षक संस्मरण में किया गया है। उस अवसर पर कालेज के प्राचार्य महोदय डॉ० शर्मा ने जो उद्गार व्यक्त किये वे इस प्रकार थे-''बिछुरत एक प्रान हरि लेहीं, मिलत एक दारुन दुख देहीं।'' यह समाज है, यहाँ अच्छे-बुरे, सज्जन-दुर्जन सभी प्रकार के व्यक्ति हैं। कोई-कोई ऐसे मिल जाते हैं, जिनका मिलना भी अशुभ होता है। उनसे मिलते ही दु:ख की अनुभूति होती है और कुछ ऐसे होते हैं जिनसे मिलना ही नहीं, बिछुड़ना भी कष्टदायक होता है। डॉ० गुप्त का यहाँ आना हम सबके लिए प्रेरणाप्रद था, अच्छा था। पर, आज ये जा रहे हैं। हमारे कालेज को छोड़कर अपने घर जा रहे हैं, अपनों के बीच जा रहे हैं। पर, इनसे बिछुड़ना अच्छा नहीं लग रहा फिर भी, हम सब इन्हें याद रखेंगे।'' पृ. 43

सन् 1975 ई० के आसपास देश में उच्छृंखलता बढ़ गई थी। सभी क्षेत्रों में अनुशासनहीनता पैर पसार रही थी। ऐसी स्थिति में कालेजों में विश्वविद्यालय स्तरीय परीक्षाएँ भी प्रभावित हुई थीं। उस समय डॉ० सुरेशचन्द्र गुप्त बरेली कॉलेज में प्रवक्ता पद पर कार्यरत थे। उन दिनों बरेली कालेज में घोर अव्यवस्था थी। अत: मई 1975 ई० में वहाँ जो परीक्षाएँ हुईं, उसमें अव्यवस्था चरम सीमा पर पहुँच गई। इसके समाचार आकाशवाणी, बी.बी.सी. तथा रेडियो मास्को तक से प्रसारित हुए। अन्तत: परीक्षाएँ अनिश्चितकाल के लिए स्थगित कर दी गईं। डॉ० गुप्त ने इन अव्यवस्थित रूप में होने वाली परीक्षाओं का ब्यौरेवार वर्णन

'ईश्वर मुझे परीक्षा में मत डाल' संस्मरण में किया है। इसी बीच 26 जून 1975 ई० में देश के आपातकाल लागू हो गया। अन्ततः 1975 ई० की परीक्षाएं सितम्बर,1975 ई० में विधिवत सुचारू रूप से सम्पन्न हुईं।

सन् 1998 ई० में लेखक को श्री अमन सिंह आत्रेय हिन्दी विकास संस्थान, मेरठ द्वारा उनके शोध प्रबंध 'पंत की दार्शनिक चेतना' पर सर्वश्रेष्ठ शोध ग्रन्थ के लिए 21,000.00 रुपये, मानपत्र, स्मृति चिह्न का पुरस्कार प्राप्त हुआ था। पुरस्कार के दो पक्ष हैं। पुरस्कार मिलने पर स्वयं उसे उसके परिजनों, आत्मीयजनों का प्रसन्न होना स्वाभाविक है। इसका एक दूसरा पक्ष भी है। कभी-कभी पुरस्कृत व्यक्ति को ईर्ष्या-द्वेष का दंश भी झेलना पड़ता है। पर लेखक इसके प्रति उदासीन तथा स्वयं में संतुष्ट है। उसे श्री सुमित्रान्दन पंत की 'पुरस्कार' शीर्षक कविता से आत्मतोष है, जिसकी कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

पुरस्कार भगवान दिलाये नहीं किसी को।
मित्र शत्रु हो जाते इससे, और प्रशंसक
कटु आलोचक बन, कृतित्व के साथ अपने
लघु चरित्र को बना दूषणों का पहाड़ पृथु
आत्म तुष्टि पाते हैं, तिल का ताड़ बनाकर।

'जातस्य हि ध्रुवं मृत्युः' शीर्षक के अन्तर्गत लेखक ने अपने परिजनों तथा पुरजनों की मृत्यु का सजीव तथा मार्मिक वर्णन किया है। जो जन्मा है उसकी मृत्यु अवश्यभावी है। यह जानते हुए भी व्यक्ति मृत्यु के नाम से ही डरता है। इसके विपरीत मृत्यु को निकट से देखकर लेखक का आत्मबल बढ़ता है। शरीर के जर्जर रहते हुए भी वह आत्मविश्वास से भरा हुआ है। जिजीविषा की ऐसी ललक सामान्यतया दुर्लभ है। लेखक के अनुसार दोनों घुटनों का आपरेशन सन् 1965 में हो चुका था, सन् 1993 में पथरी निकालने के लिए पेट का आपरेशन हुआ, मोतियाबिन्द के सन्दर्भ में दोनों आँखों का आपरेशन हो चुका है और अभी दो-तीन वर्ष पूर्व 25 मई 2007 को स्नानगृह में गिर जाने से जांघ की हड्डी टूट गई। अब वाकर की सहायता से चलता हूँ, नेत्र-ज्योति क्षीण हो गयी है, पर कार्यशीलता उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है, सामान्य स्वास्थ्य अच्छा है, यद्यपि मधुमेह, सोराइसिस, संधिवात् जैसे अनेक रोगों ने आक्रान्त कर रखा है, पर तन-मन से मैं अत्यन्त स्वस्थ एवं सबल हूँ। कभी सोचता था कि सत्तर-बहत्तर तक जी सकूँगा-आर्थिक परिवारिक विषयों से संबंधित योजनाएँ सत्तर तक की ही बनाई थीं। पर, अब विश्वास है कि पच्चासी वर्ष तक तो जिऊँगा ही, 90-92 तक

भी जी सकता हूँ। पृ. 80

'सुन्दर' संस्मरण लेखक के बाल-सखा सुन्दर पर आधारित हैं। बाल्यकाल में ही सुन्दर के साथ एक दु:खद घटना घटित हो गई। उसके पिता को चोर समझकर मोहल्ले के लोग पीट रहे थे। सुन्दर वहाँ मौजूद था किन्तु लेखक उसकी सहायता करने की बजाय उससे नजर बचाकर ओट में हो गया। लेखक को अपने इस व्यवहार पर आज तक संताप है। ''संभवत: पचपन-छप्पन वर्ष पुरानी बात है। मैंने तब से सुन्दर को नहीं देखा। पता नहीं कहाँ होगा? होगा भी या नहीं? पर इतने वर्ष बाद भी मैं उसे नहीं भुला पाया हूँ-शायद भूल जाऊँ क्योंकि मन में यह बात हमेशा कौंधती रही है कि किसी कहानी, उपन्यास आदि में उसके बारे में कुछ लिखूँ अवश्य।'' पृ. 86

पुस्तक का अन्तिम संस्मरण है 'ठाकुर'। ठाकुर लखनऊ विश्वविद्यालय में लेखक के सहवासी थे। दोनों लखनऊ विश्वविद्यालय के हबीबुल्ला छात्रावास में एक ही कमरे में रहते थे। उनका पूरा नाम था रामचन्द्र सिंह एम.ए., एल.एल.बी. एडवोकेट। वे अपने पिता के समान ही बिगड़े हुए रईस थे। लेखक ने उनका सहानुभूति एवं करुण-भाव से पूरित चित्र उकेरा है।

पुस्तक की भाषा सहज सरल तथा प्रवाहपूर्ण है। सूक्तिपरक उक्तियों से उसमें और भी अर्थवत्ता का संचार हुआ है। ऐसी कुछ सूक्तियाँ इस प्रकार हैं।

''दु:खती अंगुली को ही सहलाया जाता है।'' पृ. 25

''पुरस्कार किसी को बड़ा नहीं बनाते, पर समकालीनों-सहकर्मियों से ईर्ष्या-द्वेष अवश्य उत्पन्न करते हैं।'' पृ. 67

''सच तो यह है कि मनुष्य ही ईश्वर है, मनुष्य ने ही ईश्वर और देवी-देवताओं को जन्म दिया है।'' पृ. 88

स्पष्टत: 'स्मृति के वातायन' हमेशा स्मरण रखने योग्य श्रेष्ठ साहित्यिक कृति है।

डॉ० रामस्वरूप आर्य
हिन्दी शोध संस्थान,
बी-14, नई बस्ती बिजनौर (उ.प्र.)

डॉ० रामस्वरूप आर्य : प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व

संपादक

पूज्य पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य का अध्ययनशील एवं सरल निश्छल व्यक्तित्व लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत रहा। उनसे मार्गदर्शन प्राप्त कर अनेक साहित्य-प्रेमी उपकृत हुए। डॉ० प्रकाश मूनिस, डॉ० शंभुशरण शुक्ल, श्री राजनारायण मिश्र शास्त्री 'नूतन' ने उनको अपने ग्रंथ समर्पित किए। इसी क्रम में अन्य अनेक रचनाकारों ने भी अपने भाव प्रदर्शित किए हैं।

डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल (पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर) ने 'तीर और तरंग' (प्रथम संस्करण, अक्टूबर, 1964 ई०) काव्य-संकलन प्रेषित करते हुए लिखा है, "श्रद्धेय आचार्यवर श्री रामस्वरूप जी आर्य को जिनकी प्रेरणा सदैव मेरे लिए अग्रसर रही है और मैं जिनके कारण इस अवस्था तक पहुँच सका हूँ।"

श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी 'पराग' जी (प्रसिद्ध साहित्यकार एवं गीतकार, गाजियाबाद) 'धरती का कर्ज' (प्रथम संस्करण 1966 ई०) काव्य-संग्रह में 'मैं लिखता इसलिए...' शीर्षक के अन्तर्गत लिखते हैं, "मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, वर्धमान डिग्री कालेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष श्री रामस्वरूप आर्य का, जिनके सत्परामर्श ने पग-पग पर मेरा पथ-प्रदर्शन किया है। भाषा संबंधी प्रत्येक उलझन को सुलझाने में उन्होंने मेरी बड़ी सहायता की है। भाषा-उद्यान में भटकते मुझको उन्होंने तिरंतर सहारा दिया।"

डॉ० रामाभिलाष त्रिपाठी (पूर्व प्रधानाचार्य, राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, अलवर, राजस्थान)ने अपने काव्य-संग्रह 'जीवन-रश्मि' (प्रथम संस्करण 2029 वि.) में 'दो-शब्द' के अन्तर्गत लिखा है, "मैं ऋणी हूँ अपने गुरुवर डॉ० रामस्वरूप आर्य, हिन्दी विभागाध्यक्ष, वर्धमान कालेज, बिजनौर का, जिनका मेरे साहित्यिक संस्कारों के निर्माण में विशिष्ट हाथ है।"

डॉ. प्रकाश मूनिस (उर्दू साहित्य के अधिकारी विद्वान) ने अपने शोध प्रबन्ध 'उर्दू अदब पर हिन्दी अदब का असर' (प्रथम संस्करण 1979ई०) को डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को समर्पित करते हुए लिखा है, "डॉ. रामस्वरूप आर्य, अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, वर्धमान पोस्टग्रेजुएट कालेज, बिजनौर के नाम, जिनकी कृपा मुझ पर न हुई होती तो संस्कृत और हिन्दी के अनेक दुष्प्राप्य ग्रंथ मेरी पहुँच से बाहर रह जाते।"

डॉ० ज्ञानेश दत्त हरित जी(पूर्व अध्यक्ष, बी.एड्. विभाग, वर्धमान कालेज,

बिजनौर) अपने बहुचर्चित गीत-संग्रह 'सीपियां दर्द की' (प्रथम संस्करण 1994 ई०) में 'अपनी बात' के अंतर्गत लिखते हैं ''आदरणीय डॉ० रामस्वरूप आर्य से इक्कीस वर्षों से संबंध जुड़ा हुआ है, इस अवधि में जो स्नेह, प्रेरणा व सहयोग मिला है, उसका मै ऋणी हूँ और उस ऋण से उऋण होने की क्षमता भी मुझमें नहीं है। मेरे अनुरोध पर उन्होंने इस काव्य-संग्रह की भूमिका लिखना स्वीकार किया, यह मेरा सौभाग्य है।''

डॉ० रामसुमिरन लाल जी (पूर्व प्राचार्य, राजेन्द्र प्रसाद डिग्री कॉलेज, मीरगंज, बरेली तथा पूर्व प्रौढ़ शिक्षा निदेशक, एम.जे.पी. रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली) अपने काव्य 'अंतर्द्वन्द्व' (प्रथम संस्करण 1995 ई०) में 'प्राक्कथन' के अंतर्गत लिखते हैं, ''प्रस्तुत पुस्तिका समस्त उपेक्षित वृद्ध-वर्ग की कल्पनात्मक लघु कृति है। इस विषय पर कुछ लिखने और मुद्रित कराने की प्रथम प्रेरणा उदारमना डा. रामस्वरूप आर्य (बिजनौर) से मिली।''

श्री राजेन्द्र कुमार शर्मा जी (साहित्यकार एवं ज्योतिषाचार्य)ने 'अग्निसुता' (प्रथम संस्करण 2005 ई०) खंड काव्य के आरंभ में लिखा है, ''आदरणीय डॉ० रामस्वरूप आर्य जी का शुभ आशीर्वाद मुझे सदैव मिलता रहा है। 'अग्निसुता' के लिए आशीर्वचन लिखकर भी उन्होंने मेरा उत्साहवर्धन किया है।''

डॉ० शंभुशरण शुक्ल जी (पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग उपाधि महाविद्यालय, पीलीभीत) ने अपना ललित निबंध-संग्रह 'सोलह सिंगार' डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को समर्पित करते हुए उन्हें 'अनंत प्रेरणा-प्रवाह' कहकर सम्बोधित किया है। उन्होंने स्वसंपादित 'चंडीप्रसाद हृदयेश स्मृति ग्रंथ' (प्रथम संस्करण 2011 ई०) के आरंभ में डॉ० आर्य जी को प्रेरक के रूप में अंकित किया है तथा ग्रंथ की भूमिका में लिखा है, ''डॉ० रामस्वरूप आर्य जी ने 'सुधा' और 'माधुरी' के पुराने अंकों में हृदयेश जी की कविताएँ, कहानियाँ ही नहीं अपितु उनकी निधन-तिथि भी खोज निकाली, जिसके लिए हम उनके कृतज्ञ हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में भी इसी प्रकार उनकी प्रेरणा और प्रोत्साहन हमें मिलता रहेगा।''

डॉ० बुद्धिप्रकाश शर्मा जी (पूर्व अध्यक्ष, शिक्षा शास्त्र विभाग)का 'कर्म-बोध' काव्य-संग्रह(दोहा कृति, प्रथम संस्मरण अक्टूबर, 2012 ई०) में 'हृदय के दो शब्द' के अन्तर्गत मत है, ''जिनका अविरत आशीर्वाद साहित्य-साधना की मेरी प्रेरणा है, उन साहित्य मनीषी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कालेज, बिजनौर के प्रति मैं हृदय से ही नहीं, वरन आत्मा से भी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। डॉ० आर्य जी ने अस्वस्थता और जीर्णता की शारीरिक

स्थिति में भी पर्याप्त वृहद कृति 'कर्म-बोध' का पारायण कर आशीर्वाद के दो शब्द भी लिपिबद्ध किये हैं। परम आदरणीय डॉ० आर्य जी ने मेरी दोनों पूर्व पुस्तकों (अविकल्प और मैं 'मैं' हूँ) का परिष्करण करके मार्ग-दर्शन किया था। उनका यही सतत् आशीर्वाद मुझे आह्लादित करके आगे बढ़ने का संबल प्रदान कर रहा है। मेरी आत्मा उनकी गहन कृतज्ञ है और उनके चिर सहयोग की ईश्वर से प्रार्थना करती है।''

श्रीमती सुमन चौधरी (साहित्यकार एवं समाज सेविका) ने अपने व्यंग्य-संग्रह 'चाय-पानी जिंदाबाद' (प्रथम संस्मरण 2014 ई०) में 'अपनी बात' के अन्तर्गत लिखा है, ''मैं विशेष रूप से आभारी हूँ अपने श्रद्धेय गुरुजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी की, जिन्होंने स्वास्थ्य ठीक न होने पर भी, अपनी इस पूर्व छात्रा के संकलन को आद्योपांत पढ़ा और मार्गदर्शन किया तथा पुस्तक के बारे में लिखा। इसके लिए मैं उनके प्रति अपनी श्रद्धा ही व्यक्त कर रही हूँ।''

श्री हितेश कुमार शर्मा जी (बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न प्रसिद्ध साहित्कार)ने निर्विवाद रूप से पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी को अपने साहित्यिक गुरु के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने अपनी विभिन्न पुस्तकों की भूमिकाओं में इसका उल्लेख भी किया है। स्वसंपादित राष्ट्रीय काव्य-संकलन 'दस्तक' (प्रथम संस्मरण 2010 ई०) में 'क्या कहूँ' शीर्षक के अन्तर्गत उनके उदगार हैं, ''आदरणीय डॉ० रामस्वरूप आर्य ने मेरे आग्रह पर जो भूमिका लिखी है, उसने संकलन को अधिक महत्वपूर्ण तथा अनमोल बना दिया है। जो बात संकलन के विषय में डॉ० आर्य जी ने लिखी है, वह मेरी सोच से परे है, जिसके लिए मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ।''

'बेटियाँ' काव्य (प्रथम संस्मरण 2015 ई०, यह श्री हितेश कुमार शर्मा जी की अंतिम पुस्तक है, जिसमें डॉ० आर्य जी ने आरंभ में 'समावलोकन' शीर्षक से अपने विचार व्यक्त किए हैं।) की 'भूमिका' में श्री शर्मा जी लिखते हैं, ''मैं आभारी हूं, डॉ० रामस्वरूप आर्य का, जिन्होंने मेरे अनुनय-विनय को स्वीकार करके इस पुस्तक की भूमिका लिखने की कृपा की। इसके लिए मैं उनका सदैव ऋणी रहूँगा। डॉ० रामस्वरूप आर्य ने मुझ पर सदैव कृपा की है। आशा है भविष्य में भी उनकी कृपा बनी रहेगी।''

अपने प्रथम कहानी-संग्रह 'फर्जन्दे काश्मीर' (प्रथम संस्करण, 2015 ई०) के अन्तिम पृष्ठ पर, अपने रचना-कर्म के प्रति डॉ. रामस्वरूप आर्य जी का आभार प्रकट करते हुए श्री हितेश कुमार शर्मा जी लिखते हैं, ''वर्तमान में डॉ. रामस्वरूप

आर्य मेरे मार्गदर्शक के रूप में मुझे सदैव सुझाव देते रहते हैं, मेरा उत्साहवर्द्धन करते रहते हैं और प्रत्येक प्रकार से मुझे प्रेरणा प्रदान करते रहते हैं, मैं वन्दना करता हूँ डॉ. रामस्वरूप आर्य की और ईश्वर से प्रार्थना है कि मुझे उनका मार्गदर्शन सदैव प्राप्त होता रहे।''

जनपद बिजनौर के प्रसिद्ध समीक्षक डॉ. योगेन्द्र प्रसाद जी ने दैनिक 'बिजनौर टाइम्स' (5 अप्रैल, 2009 ई०) में प्रकाशित अपने समीक्ष्य आलेख में लिखा है, ''डॉ. राम स्वरूप आर्य जी इतने वरिष्ठ साहित्य सेवी है कि जनपद के कई साहित्यकारों ने उनसे मार्गदर्शन प्राप्त किया है, इसलिए उनकी वरिष्ठता को नजर अंदाज नहीं किया जाना चाहिए।''

इस प्रकार पिताजी डॉ० रामस्वरूप आर्य जी का प्रभावोत्पादक एवं प्रेरक व्यक्तित्व सदा प्रेरणा का स्रोत बना रहा और उससे अनेक साहित्य-सेवियों तथा काव्य-प्रेमियों को मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

***

डॉ. रामस्वरूप आर्य : चित्रकार के रूप में

पूज्य पिताजी डॉ. रामस्वरूप आर्य जी की चित्रकला में भी अभिरुचि थी। उनके द्वारा बनाये हुए अनेक सादे तथा रंगीन चित्र अब भी सुरक्षित हैं। इनमें से कतिपय चित्र यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे है। इन चित्रों से डॉ. आर्य जी की चित्रकला विषयक अभिरुचि तथा ज्ञान का पता चलता है।

बिजनौर

श्रीकृष्ण की कथाएं प्रतीकात्मक हैं

बिजनौर (बि.टा.)।

'योगीराज कृष्ण का जीवन बहु आयामी है। एक ओर वे साधारण व्यक्ति के रूप में गायें चराते हैं, वंशी बजाते हैं, ग्वाल-बालों के साथ खेलते हैं, दूसरी ओर कुशल सेनानायक और राजनीतिज्ञ के रूप में अर्जुन का मार्गदर्शन करते हैं, तीसरी ओर महान दार्शनिक के रूप में गीता का उपदेश देते हैं। उनके बारे में प्रचलित पौराणिक कथाएं केवल प्रतीकात्मक हैं, जो उनके गुणों का आलंकारिक वर्णन करती हैं। श्री कृष्ण एक महापुरुष थे जिनके अन्दर लोक कल्याण और देश-भक्ति की भावना कूट-कूटकर भरी हुई थी।'' ये विचार प्रसिद्ध साहित्यकार डा. राम स्वरूप आर्य ने आर्य समाज, बिजनौर में आयोजित जनसभा में मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए व्यक्त किये।

दैनिक बिजनौर टाइम्स, बिजनौर 16 सितम्बर 1987 (4)

बिजनौर

किसी भी देश की उन्नति उसकी राष्ट्रभाषा से संभव

--डा. रामस्वरूप आर्य

बिजनौर 15 सितम्बर। 'प्रत्येक देश अपनी ही राष्ट्रभाषा के माध्यम से उन्नति कर सकता है और भाषा वही समृद्ध होती है जो अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों को आत्मसात कर ले।'

उक्त विचार गत रात्रि 'हिंदी दिवस' के अवसर पर आयोजित एक गोष्ठी के अध्यक्ष पद से प्रगट किये वर्धमान कालेज, बिजनौर के हिन्दी विभागाध्यक्ष डा. रामस्वरूप आर्य ने।

निवास स्थान पर 'दर्पण' के तत्वावधान व हुक्का बिजनौरी के संचालन में आयोजित इस गोष्ठी में सर्वश्री डा. ओमदत्त आर्य, डा. बलजीत सिंह, डा. मदन गोपाल अग्रवाल, हरीश कुमार शर्मा, प्रो. बुद्धि प्रकाश गौड़, आनन्द नार्ई, धर्मवीर, डा. विदुषी भारद्वाज, डा. हरित, प्रो. चन्द्रशेखर शुक्ला व हुक्का बिजनौरी ने जहां हिंदी के विकास एवं प्रचार व प्रसार के लिये अपने विचार प्रस्तुत किये

गया था।

हिन्दी पत्रकारिता दिवस समारोह

भारतीय पत्रकारिता श्रेष्ठ है : डॉ.आर्य

बिजनौर 31 मई। 'भारतीय पत्रकारिता की मूल भावना लोकहित है, इसका चिंतन सोद्देश्य है, जबकि विश्व पत्रकारिता के मूल में भौतिकता प्रधान है; इस आधार पर हम भारतीय पत्रकारिता को विश्व पत्रकारिता से श्रेष्ठ कह सकते हैं।' -यह मत है सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. राम स्वरूप आर्य का। वे आज यहां जैन धर्मशाला में 'पं. रूद्रदत्त शर्मा सभागार' में आयोजित हिन्दी पत्रकारिता दिवस समारोह में मुख्य अतिथि पद से बोल रहे थे।

के तत्वावधान में किया गया था।

डॉ. रामस्वरूप आर्य ने विश्व और भारतीय पत्रकारिता की विभिन्नता को अनूठे ढंग से रेखांकित करते हुए बताया कि विश्व पत्रकारिता का मूल 'न्यूज' शब्द है, जिसके चारों अक्षर चारों दिशाओं का संकेत करते हुए उसे व्यापकता प्रदान करते हैं। जबकि भारतीय पत्रकारिता प्रदान करते हैं, जबकि भारतीय पत्रकारिता की मूल भावना 'सम्यक्' है। उन्होंने उदाहरण देते हुए बताया कि समाचार पत्र, सम्पादक,

चाहा कि पत्रकार अपनी कल्पना और कलम से समाज के साथ-साथ अपने सहधर्मियों (पत्रकारों) को भी सुरक्षा प्रदान करें। श्री विश्वामित्र शर्मा (राष्ट्रवेदना) ने सरकार की लघु समाचार पत्र विरोधी कागज तथा विज्ञापन नीति की कड़ी आलोचना की। साथ ही उन्होंने पत्रकारिता में बढ़ रही प्रतिस्पर्धा के लिए पूंजीपतियों को दोषी ठहराते हुए कहा कि वे समाचार-पत्रों की आड़ में अपने काले धन को सफेद बना रहे हैं। श्री सुरेन्द्र कुमार गर्ग

अमर उजाला ८ नवम्बर १९९६

नागार्जुन के कथा साहित्य का लोकार्पण

मुंशी प्रेमचंद ने भारत की आत्मा को वाणी दी-डॉ. रामस्वरूप आर्य

डा. रामस्वरूप आर्य को अनुशंसा पुरस्कार

बिजनौर कार्यालय

बिजनौर, 21 जनवरी। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान द्वारा डा. रामस्वरूप आर्य को अनुशंसा पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया है। यह पुरस्कार उन्हें उनके निबंध संग्रह 'परम्परा और आधुनिकता' पर प्रदान किया गया है।

इस निबंध संग्रह में उनके शोध परक, संस्मरणात्मक तथा पत्रकारिता विषयक निबंध संग्रहीत है। इससे पूर्व उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा 'साहित्य महोपाध्याय, विक्रमशिला विद्यापीठ भागलपुर द्वारा 'विद्या सागर', उत्तर प्रदेश युवा परिषद धामपुर द्वारा 'सरस्वतीश्री' की मानद उपाधियों तथा साहित्यांचल बोरदार द्वारा सम्मानित किया जा चुका है।

दैनिक जागरण
22 जनवरी 2001

डॉ. रामस्वरूप आर्य उत्तर प्रदेश हिंदी-संस्थान द्वारा पुरस्कृत

बिजनौर, 18 जनवरी (बि.टा.)। डॉ. रामस्वरूप आर्य को उत्तर प्रदेश हिंदी-संस्थान द्वारा अनुशंसा पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया है। यह पुरस्कार उन्हें उनके निबंध संग्रह 'परम्परा और आधुनिकता' पर प्रदान किया गया है। इसमें

उनके शोधपरक, संस्मरणात्मक तथा पत्रकारिता विषयक निबंध संग्रहित हैं। इससे पूर्व उन्हें हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा 'साहित्य महोपाध्याय', विक्रमशिला विद्यापीठ, भागलपुर द्वारा 'विद्यासागर' तथा उत्तर प्रदेश युवा परिषद धामपुर द्वारा 'सरस्वती श्री' की मानद उपाधियों से सम्मानित किया जा चुका है।

बिजनौर टाइम्स
१९ जनवरी २००१

एजाज अली हाल में जिले के तीनों प्रमुख पत्रकार संगठनों द्वारा आयोजित 'हिन्दी पत्रकारिता दिवस समारोह' को संबोधित करते डा. रामस्वरूप आर्य तथा उ.प्र. श्रमजीवी पत्रकार यूनियन (पंजी.) के अध्यक्ष चन्द्रमणि रघुवंशी

संवारने का कार्य करेंगे। ... स्वास्थ्य को खतरे में डाल रहे हैं।

साहित्य सदैव हितकारी होता है-आर्य

बिजनौर। यहां हितेश कुमार शर्मा एडवोकेट के आवास पर डा. रामस्वरूप आर्य की अध्यक्षता एवं मनोज अबोध के संचालन में एक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें कई कवियों ने अपनी रचनाएं प्रस्तुत की।

डा. अनिल चौधरी ने कहा-अगर आंगन का पीपल सो गया छाया करेगा कौन, मेरी ऊंचाईयों के वास्ते सोचा करेगा कौन। इसके बाद मनोज अबोध ने अपने भाव इस प्रकार व्यक्त किये-धान कद से बड़ी हो गई, एक उलझन खड़ी हो गई, फूल घर में बिखरने लगे, जबसे बिटिया बड़ी हो गयी। चन्द्रवीर सिंह गहलौत 'बेदाग' ने फरमाया- कौन रोकेगा किसी को, राह चौतरफा खुली। इसके बाद बारी आई शकील बिजनौरी

गोष्ठी का आयोजन

की। उन्होंने अपने चिरपरिचित अंदाज में सुनाया- सांप की चाहत डसना भी हो सकती है, आंख बची, दुर्घटना भी हो सकती है। इसके बाद श्री वी.पी. गुप्ता का अंदाज कुछ इस प्रकार रहा-विहगों पंछी सावधान हो नील गगन में, श्याम वर्ण दिखते सफेद टुकड़े बादल के। श्वेत बगुल के पंख आज लगते धूमिल से, मंद-मंद सुगंध बयार को तरसे, मन इस घुटन भरे जीवन में। सबसे अंत में मेजबान हितेश कुमार शर्मा द्वारा कहा गया-नदी सूखी पड़ी है, रुक गया है झील में पानी, कहो क्या हश्र होता मैं अगर प्यासा हुआ तो। इस अवसर पर डा. रामस्वरूप आर्य ने साहित्य को सर्वहितकारी बताया। डा. आर्य ने कहा कि साहित्य लोक हित के लिए लिखा जाता है और वह सदैव हितकर होता है। उन्होंने गोष्ठी की सार्थकता को परिभाषित करते हुए ऐसे आयोजन यदा-कदा किये जाने को समाज के लिए हितकर बताया।

7 हरिद्वार, 8 मार्च 2008 — विविध

साहित्यजगत में याद किए जाते रहेंगे खानकाही : डॉ. रामस्वरूप

बिजनौर। [illegible]

निश्तर खानकाही की पुण्यतिथि पर साहित्यकार डा. रामस्वरूप आर्य को सम्मानित करते अतिथि

ब्राह्मण अंतर्राष्ट्रीय समाचार, नवम्बर 2014

श्री ओमप्रकाश चतुर्वेदी, डॉ. रामस्वरूप आर्य तथा श्री जय नारायण अरुण

ISSN 2455-5649

ब्राह्मण अंतर्राष्ट्रीय समाचार

अक्टूबर 2016 वर्ष : 21 अंक : 10

दिनांक 13, 14, 15 सितम्बर 2016 को श्रीनाथद्वारा (उदयपुर) में आयोजित साहित्यिक कार्यक्रम में बिजनौर के मूर्धन्य विद्वान डॉ॰ रामस्वरूप आर्य, बी-14 नई बस्ती, बिजनौर को हिन्दीभाषा भूषण की मानद उपाधि प्रदान की गई। डॉ॰ रामस्वरूप आर्य अस्वस्थ होने के कारण श्रीनाथद्वारा नहीं जा सके थे। अतः आयोजकों ने डॉ. रामस्वरूप आर्य का सम्मान पत्र हितेश कुमार शर्मा के द्वारा भिजवाया, जिसको दिनांक 21-9-16 को डॉ॰ रामस्वरूप आर्य के निवास स्थान पर जाकर प्रदान किया गया, जिसमें श्री अशोक मधुप, श्री बी.पी. गुप्ता, डॉ. अनिल चौधरी, श्री राजेन्द्र कुमार शर्मा, डॉ. अजय जनमेजय तथा हितेश कुमार शर्मा उपस्थित रहे।

डा.रामस्वरूप आर्य का निधन

बिजनौर। वर्धमान कालेज बिजनौर के हिन्दी विभाग के पूर्व अध्यक्ष एवं प्रसिद्ध साहित्यकार डा. रामस्वरूप आर्य का आज तड़के गुरु तेगबहादुर अस्पताल शाहदरा (दिल्ली) में निधन हो गया। डा. आर्य कई वर्षों से गले के कैंसर से पीड़ित थे, उन्हें 26 सितम्बर को राजीव गांधी कैंसर इंस्टीट्यूट में भर्ती कराया गया था। जहां बायोप्सी के बाद उनका नियमित उपचार होना था लेकिन डाक्टरों की सलाह पर उन्हें राजीव गांधी कैंसर इंस्टीट्यूट में भर्ती नहीं किया गया, जिस पर उनके परिजनों ने उन्हें गुरु तेगबहादुर अस्पताल में भर्ती करा दिया। डा.आर्य ने अंतिम सांस आज तड़के गुरु तेगबहादुर अस्पताल में ही ली। उनके निधन से जनपद के हिन्दी साहित्य पर वज्रपात हो गया। डा. आर्य का पार्थिव शरीर आज दोपहर दो बजे उनके निवास स्थान नई बस्ती,बिजनौर में लाया गया, जहां उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए वर्धमान कालेज के कई प्रवक्ता,साहित्यकार, कवि एवं लेखक उपस्थित थे।

डा.आर्य की पार्थिव देह पर बिजनौर टाइम्स ग्रुप के प्रधान संपादक चन्द्रमणि रघुवंशी ने चादर चढ़ाकर बि.टा.ग्रुप की ओर से श्रद्धांजलि दी। प्रमुख कवि हितेश कुमार शर्मा, वर्धमान कालेज के पूर्व प्राचार्य डा. जी.एस. गुप्ता आदि ने भी डा. आर्य की पार्थिव देह पर चादर अर्पित करके भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

डा. रामस्वरूप आर्य अपने पीछे शोकाकुल पत्नी के अलावा तीन पुत्र तथा एक पुत्री को शोक विह्वल छोड़ गये हैं। डा. रामस्वरूप आर्य का बिजनौर टाइम्स से अटूट सम्बंध रहा है तथा उन्हें बिजनौर टाइम्स के दो विशेषांकों आचार्य पद्म सिंह शर्मा, विशेषांक तथा सम्पादकाचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा का पत्रकार शिरोमणि, पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के निर्देशन में संपादक किया था। मूर्धन्य साहित्यकार एवं भाषाविद् डा. रामस्वरूप आर्य को बिजनौर टाइम्स परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि।

बिजनौर टाइम्स, 4 अक्टूबर, 2016

बिजनौर टाइम्स 6अक्टूबर, 2016

डा. रामस्वरूप आर्य के निधन पर शोक

चंदक। क्षेत्र के वरिष्ठ साहित्यकार व पत्रकार डा. योगेन्द्र प्रसाद ने प्रसिद्ध साहित्यकार व शिक्षाविद् डा. रामस्वरूप आर्य के निधन पर गहरी शोक संवेदना व्यक्त करते हुए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। डा. योगेन्द्र प्रसाद ने कहा कि श्री आर्य हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनका निधन हिन्दी साहित्य जगत की अपूर्णीय क्षति है। उन्होंने हिंदी की अनेक पुस्तकें लिखीं जो विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल हैं। हिंदी साहित्य में उनका योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकेगा। अपनी साहित्यिक सेवाओं से वे हमेशा अमर रहेंगे।

बिजनौर टाइम्स
6 अक्टूबर, 2016

चिंगारी (सांध्य दैनिक), बिजनौर — आसपास — 06 अक्टूबर 2016 — 13

सच्चे हिन्दीसेवी और अच्छे इंसान थे डा. रामस्वरूप

बिजनौर। अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू की एक शोकसभा में हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान, समीक्षक व भाषाविद् डा. रामस्वरूप आर्य एवं हिन्दी साहित्य के प्रख्यात कवि व साहित्यकार [illegible] के आकस्मिक निधन पर शोक व्यक्त किया गया। [illegible]

अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू की शोकसभा

[illegible] आपकी पुस्तकों की संख्या लगभग 25 है। डा. आर्य को साहित्यिक कार्यों पर अनेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया। [illegible] अन्त में दोनों [illegible] को श्रद्धांजलि अर्पित की गई [illegible]

अपने साहित्य में अमर रहेंगे डा.रामस्वरूप

चंदक। क्षेत्र के वरिष्ठ साहित्यकार व पत्रकार डा. योगेन्द्र प्रसाद ने प्रसिद्ध साहित्यकार व शिक्षाविद् डा. रामस्वरूप आर्य के निधन पर गहरी शोक संवेदना व्यक्त करते हुए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। डा. योगेन्द्र प्रसाद ने कहा कि श्री आर्य हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनका निधन हिन्दी साहित्य जगत की अपूर्णीय क्षति है। उन्होंने हिन्दी की अनेक पुस्तकें लिखीं, जो विभिन्न विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल हैं। हिन्दी साहित्य में उनका योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकेगा। अपनी साहित्यिक सेवाओं से वे हमेशा अमर रहेंगे।

अमर उजाला 5 अक्टूबर, 2016

साहित्यकार डा.रामस्वरूप आर्य का निधन

बिजनौर। प्रसिद्ध साहित्यकार 80 वर्षीय डा.रामस्वरूप आर्य का सोमवार को दिल्ली के एक अस्पताल में निधन हो गया। रामस्वरूप आर्य पिछले कुछ समय में गले के कैंसर से पीड़ित थे। वे हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान थे और उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं। बिजनौर में उनकी शवयात्रा में नगर के अनेक गणमान्य व साहित्यकारों ने भाग लिया। गंगा बैराज घाट पर उनका अंतिम संस्कार किया गया।

पब्लिक इमोशन बिजनौर — खबरें

मरणोपरांत डा. रामस्वरूप आर्य का संस्कार भारती ने किया सम्मान

हिमानी त्यागी ने बीफार्म में 69 प्रतिशत पाकर विद्यालय किया टॉप

चित्रवीथी

डॉ. रामस्वरूप आर्य : विविध छवियाँ

1952 ई० 1956ई० 1960 ई० 1967 ई०

हिन्दी परिषद्, आर.एस.एम. कॉलेज, धामपुर के वार्षिक समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए, 1965 ई०

पी-एच.डी. उपाधि प्राप्त करने के उपलक्ष्य में जिला साहित्यकार एवं पत्रकार संघ द्वारा सम्मानित, 1967 ई०, बायें से श्री बाबू सिंह चौहान, हरीश खुराना प्रेमी, सम्मानित करते हुए श्री फतहचंद शर्मा 'आराधक', श्री ईश्वर दयालु आर्य, वैद्य रामकुमार आदि।

अभिनन्दन समारोह में श्री गोपाल दास नीरज काव्य पाठ करते हुए, बैठे हुए डॉ. आर्य एवं श्री डंठल 1968ई०

प्रख्यात् हिन्दी-सेवी तथा साहित्यकार सेठ गोविंददास जी से वर्धमान कॉलेज में वार्तालाप करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य, 1968ई०

विद्यार्थी परिषद, नजीबाबाद के कार्यक्रम में मुख्य अतिथि के रूप में, 1968ई०
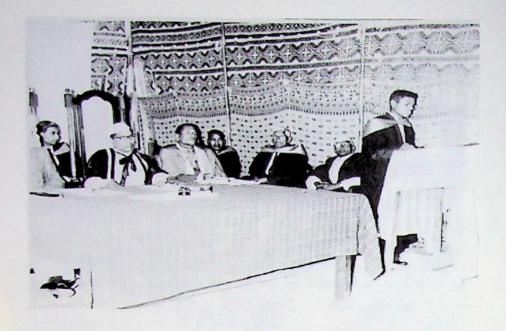
वर्धमान कॉलेज वार्षिकोत्सव में डॉ. रामस्वरूप आर्य वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए। मंच पर विराजमान केन्द्रीय वित्त राज्य मंत्री श्री जगन्नाथ पहाड़िया एवं प्राचार्य डॉ. श्रीराम त्यागी 1969 ई०

डॉ. आर्य जी 15 अगस्त, 1974 ई० को ग्राम रामपुर बकली में एन.एस.एस. कैम्प में ध्वजारोहण करते हुए। दाये योजनाधिकारी डॉ. ओमप्रकाश गर्ग

डॉ. आर्य जी एवं हास्य कवि श्री काका हाथरसी वार्तालाप करते हुए, 1974 ई०

यशस्वी साहित्यकार पं. पद्मसिंह शर्मा के पुत्र पं. रामनाथ शर्मा से वार्तालाप करते हुए डॉ. आर्य जी, 1974 ई०

वर्धमान कालेज वार्षिकोत्सव पर डॉ. आर्य जी वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए, 1978ई०

डॉ. आर्य जी प्रसिद्ध पत्रकार पं. बनारसीदास चर्तुवेदी के साथ, 1977 ई०

अ.भा. वादविवाद प्रतियोगिता के अवसर पर मंच पर श्री ओ. प्रसाद, सचिव, प्रबन्ध समिति, श्री अक्षय कुमार जैन सम्पादक नवभारत टाइम्स और संयोजक डॉ. रामस्वरूप आर्य, 1978ई०

महान साहित्यकार नागार्जुन के साथ डॉ. रामस्वरूप आर्य, 1979 ई०

पत्रकारिता दिवस पर उपजा के कार्यक्रम में मुख्य अतिथि डॉ. आर्य जी, 1979 ई०

उ.प्र. युवा सहित्याकार संघ, धामपुर द्वारा 'सरस्वती श्री' की उपाधि से विभूषित, डॉ. ऑर्य जी बाये से तीसरे, 1981 ई०

हिन्दी परिषद, वर्धमान कालेज, 1982 ई०, बैठे हुए बाये से दूसरे डॉ. उषा जैन, डॉ. पी.सी. जैन, डॉ. रामस्वरूप आर्य, डॉ. चन्द्र प्रकाश आर्य

उ.प्र. श्रमजीवी पत्रकार संघ, बिजनौर के पत्रकार प्रशिक्षण शिविर में मुख्य अतिथि के रूप में भाषण करते हुए डॉ. आर्य जी, जनवरी 1994 ई०, दाये से प्रथम श्री अशोक मधुप जी

आर.जे.पी. कालेज के वार्षिकोत्सव पर विजेताओं को शील्ड प्रदान करते हुए डॉ. आर्य जी, 1994 ई०

आर.जे.पी. कालेज के वार्षिकोत्सव पर प्रबन्धक श्री उद्दयन वीरा डॉ. आर्य जी को सम्मानित करते हुए, 1994 ई०

बाबू सिंह चौहान अभिनंदन समारोह की अध्यक्षता करते हुए डॉ.आर्य जी, 1998ई०

कृषि एवं औद्योगिक प्रदर्शनी में कवि सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए डॉ. आर्य जी, दाये से प्रथम, पुलिस अधीक्षक श्री राधेश्याम, कवि हरिओम पंवार, जिलाधिकारी श्री दर्शन सिंह बैंस

पी.एन.बी. बिजनौर में हिन्दी कार्यशाला में मुख्य अतिथि रूप में भाषण देते हुए डॉ. आर्य जी, १९८८ई०

जिला कृषि एवं औद्योगिक प्रदर्शनी में कवि सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए डॉ. आर्य जी दाये संयोजक हितेश कुमार शर्मा, बायें जिलाधिकारी श्री परमेश्वरन अय्यर

आर.बी.डी. कालेज में प्रसाद-जयंती का उद्घाटन करते हुए डॉ. आर्य जी, दायें प्राचार्या डॉ. उषा किशोर, बायें विभागाध्यक्षा डॉ. विदुषी भारद्वाज, 1989 ई०

'पत्थर अजंता के' लोकापर्ण के अवसर पर बाये डॉ. रामस्वरूप आर्य, पं. नित्यानन्द मैठाणी, केन्द्र निदेशक आकाशवाणी नजीबाबाद एवं काव्य संग्रह के रचयिता श्री हितेश कुमार शर्मा

अ.भा. वाद-विवाद प्रतियोगिता के अवसर पर बाये से जिलाधिकारी श्री श्याम सुन्दर, मण्डलायुक्त श्री नागेन्द्र सिंह, पुलिस अधीक्षक डॉ. कश्मीरा सिंह, प्राचार्य डॉ. जी.एस. गुप्ता एवं संयोजक डॉ. रामस्वरूप आर्य

वर्धमान कॉलेज वार्षिकोत्सव के अवसर पर रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली के कुलपति डॉ. वाई.बी. सिंह को अभिनन्दन पत्र भेंट करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य जी, 1990 ई०

प्रसाद जनशती समारोह के अवसर पर संयोजक डॉ. रामस्वरूप आर्य भाषण करते हुए, दायें अध्यक्ष डॉ. जी.एस. गुप्ता एवं मुख्य अतिथि डॉ. उषा किशोर, 1990 ई०

'तिनके तिनके नीड़' (सं. डॉ. महेश सांख्यधर) के विमोचन समारोह के अवसर पर अध्यक्ष डॉ. आर्य जी, कवि शत्रुघ्न वर्मा, मुख्य अतिथि विधान परिषद सदस्य श्री ओमप्रकाश शर्मा, 1992 ई०

एक कार्यक्रम में प्रसिद्ध शायर श्री यामीन खाँ 'शौक बिजनौरी' डॉ. आर्य जी को सम्मानित करते हुए, दायें विधान परिषद सदस्य श्री ओमप्रकाश शर्मा

कॉलेज की वार्षिक रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य, 1992 ई०

अर्थशास्त्र विभाग के विदाई समारोह में मध्य में कार्यवाहक प्राचार्य के रूप में डॉ. रामस्वरूप आर्य, 1992 ई०

वार्षिक खेलकूद समारोह में खेल चैम्पियन को ट्राफी प्रदान करते डॉ. रामस्वरूप आर्य

हिन्दी के छात्र-छात्राएं डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए। सबसे दायें प्राचार्य डॉ. जी.एस. गुप्ता

वयोवृद्ध शिक्षक डॉ. के.पी. सिंह, डॉ. आर्य जी को सम्मानित करते हुए। सबसे बायें डॉ. ओ.पी. गुप्ता

शिक्षक संघ के अध्यक्ष डॉ. जे.पी. शर्मा, डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए।

जिला कृषि एवं औद्योगिक प्रदर्शनी में कवि सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए डॉ. आर्य जी, मंच पर स्वागत करते हुए डॉ. ज्ञानेश दत्त हरित, बायें प्रसिद्ध कवि श्री हुक्का बिजनौरी, 1993 ई०

श्री राजकुमार रसिक के उपन्यास 'धीरज' का विमोचन करते हुए डॉ. आर्य जी, बायें श्री बाबू सिंह चौहान, दायें पं. राजेन्द्र शर्मा, श्री रसिक एवं डॉ. अनिल चौधरी, 1993 ई०

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद द्वारा डॉ. आर्य जी को 'साहित्य महोपाध्याय' उपाधि से विभूषित करने पर बिजनौर की विभिन्न संस्थाओं द्वारा उनका सम्मान किया गया। चित्र में चौ. वीरेन्द्र सिंह, डॉ. आर्य जी का तिलक करते हुए। मंच पर डॉ. अजय जनमेजय, श्रीमती चन्द्रवती, पूर्व मंत्री, डॉ. उषा जैन एवं प्रसिद्ध पत्रकार श्री बाबू सिंह चौहान, अक्टूबर 1994 ई०

'परम्परा' संस्था के अध्यक्ष डॉ. अजय जनमेजय, डॉ. आर्य जी का सम्मान करते हुए, अक्टूबर, 1994 ई०

'साहित्य संगम' के अध्यक्ष श्री जननारायण 'अरुण', डॉ० आर्य जी को शॉल ओढ़ाकर सम्मानित करते हुए। बायें प्रसिद्ध पत्रकार श्री बाबू सिंह चौहान, अक्टूबर, 1994 ई०

डॉ. आर्य जी माता सरस्वती के समक्ष दीप प्रज्जवलित करते हुए, बायें प्राचार्या डॉ. उषा किशोर

प्राचार्या डॉ. उषा किशोर, डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए। दायें सनातन धर्म कॉलेज, मुजफ्फरनगर के प्राचार्य डॉ. एल.एन. मित्तल

अभिनंदन समारोह में प्राचार्या डॉ. उषा किशोर तथा डॉ. सी.एस. शुक्ला, अध्यक्ष, बी.एड. विभाग, वर्धमान कॉलेज, डॉ. आर्य जी के चरण स्पर्श करते हुए।

समारोह में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए 'हरित प्रदेश टाइम्स' के सम्पादक श्री मदन गोपाल कार्तिक

अपनी गृह वाटिका में
डॉ. रामस्वरूप आर्य, 1995 ई०

भारतीय साहित्य कला मंच, चांदपुर के वार्षिकोत्सव के अवसर पर जिलाधिकारी डॉ. सूर्य प्रताप सिंह, डॉ. आर्य जी को सम्मानित करते हुए, 1996ई०

उ.प्र. श्रमजीवी पत्रकार यूनियन के समारोह में प्रसिद्ध पत्रकार श्री बाबू सिंह चौहान, डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए, साथ में डॉ. सूर्यमणि रघुवंशी तथा श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, 1998ई०

बिजनौर टाइम्स ग्रुप के वार्षिकोत्सव के अवसर पर जिलाधिकारी श्री रमाशंकर सिंह, डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए, साथ में 'बिजनौर टाइम्स' के संपादक श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, 2001 ई०

स्वतंत्रता दिवस के समारोह के अवसर पर जिलाधिकारी श्री एस.के. वर्मा, साहित्यकार के रूप में डॉ. आर्य जी को सम्मानित करते हुए। बायें श्रीमती सुशीला पाल, अध्यक्षा, जिला पंचायत तथा दायें अपर मुख्य अधिकारी, श्री सुनील यादव, 2004 ई०

वर्धमान कॉलेज में अखिल भारतीय सेमिनार का उद्घाटन करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य, बायें प्राचार्य डॉ. ए.के. जैन तथा दायें डॉ. के.सी. गुप्त, अध्यक्ष राजनीति शास्त्र विभाग, मेरठ विश्वविद्यालय, 26फरवरी, 2005 ई०

वर्धमान कॉलेज में अखिल भारतीय सेमिनार में भाषण करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य जी, दायें अपर जिलाधिकारी श्री पुष्यपति सक्सेना, 26फरवरी, 2005 ई०

वर्धमान कॉलेज में अखिल भारतीय संस्कृत सेमिनार के अवसर पर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए प्राचार्य डॉ. ए.के. जैन, बायें श्री वेदप्रकाश शास्त्री, उपकुलपति गुरुकुल कागड़ी, हरिद्वार एवं डॉ. कृष्ण कुमार, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, एच.एन.वी. विश्व. श्रीनगर गढ़वाल, 5 मार्च, 2005 ई०

शिक्षक दिवस के अवसर पर उपजिलाधिकारी श्री आर.एन. धामा, आदर्श शिक्षक के रूप में डॉ. आर्य जी को सम्मानित करते हुए, 2006ई०

हिन्दी दिवस की पूर्व संध्या पर श्री रमेश राजहंस के लघुकथा संग्रह 'मोती से आँसू' का विमोचन करते हुए डॉ. आर्य जी, बायें श्री रमेश राजहंस, डॉ. ए.के. जैन होम्योपैथ, दायें श्री जयनारायण अरुण, 2006ई०

प्रसिद्ध शायर श्री निश्तर खानकाही के स्मृति समारोह के अवसर पर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए साहित्यकार एवं पत्रकार श्री वी.पी. गुप्ता तथा शायर श्री शकील बिजनौरी, 2008ई०

'अन्तस्' काव्य संग्रह का विमोचन करते हुए डॉ. आर्य जी, बायें श्री जयनारायण अरुण, दायें श्री पी.के. गुर्टू, श्रीमती इंदिरा गुर्टू और ए.के. गुर्टू, 2008ई०

पत्रकारिता दिवस के अवसर पर उ.प्र. श्रमजीवी पत्रकार यूनियन के समारोह की अध्यक्षता करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य जी, दायें श्री चन्द्रमणि रघुवंशी एवं बायें श्री अखिलेश मिश्र

वरिष्ठ नागरिक वैलफेयर सोसाइटी, बिजनौर के तत्वाधान में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए डॉ. उषा किशोर, अक्टूबर 2009 ई०

प्रसिद्ध अधिवक्ता श्री चन्द्रवीर सिंह गहलौत की पुस्तकों का विमोचन करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य जी, दायें श्री चन्द्रवीर सिंह गहलौत एवं सबसे बायें श्री हितेश कुमार शर्मा जी, 2010 ई०

प्रसिद्ध साहित्यकार श्री हितेश कुमार शर्मा जी के संग्रह 'जय हो हिन्दुस्तान की' का विमोचन करते हुए चित्र के मध्य में डॉ. आर्य जी, बायें श्री हितेश कुमार शर्मा, श्रीमती सुमन चौधरी, डॉ. जे.पी. शर्मा, डॉ. आर.पी. शर्मा, दायें डॉ. के.पी. सिंह, डॉ. जी.एस. गुप्ता एवं डॉ. ओमदत्त आर्य, 2010 ई०

श्री हितेश कुमार शर्मा के आवास पर एक काव्य गोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए मध्य में डॉ. आर्य जी, दायें श्री चन्द्रमणि रघुवंशी, श्री चन्द्रवीर सिंह गहलौत, बायें डॉ. आर.पी. शर्मा, श्री वी.पी. गुप्ता, पीछे श्री हितेश कुमार शर्मा, डॉ. अजय जनमेजय, डॉ. बुद्धि प्रकाश शर्मा, 2011 ई०

वर्धमान कॉलेज के स्वर्ण जयंती समारोह के अवसर पर विजेता विद्यार्थियों को पुरस्कृत करते हुए डॉ. रामस्वरूप आर्य, बीच में डॉ. के.पी. सिंह, फरवरी 2011 ई०

धरोहर स्मृति न्यास कार्यक्रम में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को प्रतीक चिन्ह प्रदान कर सम्मानित करते हुए बायें डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण', दायें डॉ. नवनीत गर्ग, सबसे दायें डॉ. योगेन्द्र प्रसाद, 2012 ई०

धरोहर स्मृति न्यास कार्यक्रम में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को प्रशस्ति-पत्र प्रदान कर सम्मानित करते हुए दायें डॉ. योगेन्द्र नाथ शर्मा 'अरुण' और बायें श्री शकील बिजनौरी

श्रीमती सुमन चौधरी के संग्रह 'चाय-पानी ज़िन्दाबाद' के विमोचन समारोह में मंच पर बायें से संचालक श्री अशोक निर्दोष, अध्यक्ष डॉ. रामस्वरूप आर्य, मुख्य अतिथि डॉ. हरिओम पंवार तथा लेखिका श्रीमती सुमन चौधरी, 2014 ई०

नगर के एक साहित्यिक कार्यक्रम में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी मध्य के साथ बायें प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. अजय जनमेजय और दायें प्रसिद्ध शायर श्री शकील बिजनौरी, 2012 ई०

व्यंग्य-संग्रह 'चाय-पानी ज़िन्दाबाद' के विमोचन के अवसर पर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. अशोक चौधरी एवं लेखिका श्रीमती सुमन चौधरी, 2014 ई०

'चाय-पानी ज़िन्दाबाद' के विमोचन के अवसर पर डॉ. रामस्वरूप आर्य जी को सम्मानित करते हुए श्री संजीव बबली एडवोकेट, पूर्व अध्यक्ष जिला बार एसोसिएशन, 2014 ई०

धरोहर स्मृति न्यास समारोह के अवसर पर बैठे हुए बायें से दूसरे डॉ. रामस्वरूप आर्य जी, चौथे श्री जयनारायण 'अरुण', पीछे बायें प्रथम डॉ. विपिन कुमार गिरि, तीसरे डॉ. अजय जनमेजय और चौथे योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण', नवम्बर 2015 ई०

विभिन्न क्षेत्रों में योगदान के लिए धरोहर स्मृति न्यास, बिजनौर द्वारा आयोजित समारोह में समग्र सेवा पुरस्कार से सम्मानित करते हुए अनेक गणमान्य अतिथि, मध्य में डॉ. रामस्वरूप आर्य जी, दायें संस्था के कार्यकारी सचिव डॉ. अजय जनमेजय, डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' तथा डॉ. गजेन्द्र बटोही, नवम्बर 2015 ई०

डॉ० राम स्वरूप आर्य

पिता का नाम- लाला बाँके लाल

जन्म-स्थान- बरेली (उ०प्र०)

शिक्षा- एम.ए.हिन्दी-संस्कृत, पी-एच.डी. (हिन्दी), साहित्यरत्न, साहित्य महोपाध्याय, विद्या सागर, सरस्वती श्री, साहित्य श्री, समग्र सेवा पुरस्कार, हिन्दी भाषा भूषण (सम्मानित)

अध्यापन- प्रवक्ता, हिन्दी-विभाग, बरेली कॉलेज तथा अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर (उ०प्र०)

प्रकाशित पुस्तकें-

1. भाषा ज्ञान एवं रचना भाग-1 2. भाषा ज्ञान एवं रचना भाग-2
3. राज हिन्दी -भाषा प्रकाश भाग-1 4. राज हिन्दी -भाषा प्रकाश भाग-2
5. भाषा-आलोक भाग-1 6. भाषा-आलोक भाग-2
7. साहित्यिक निबंध 8. सूरदास: एक विश्लेषण
9. भ्रमरगीत सार सटीक 10. बिहारी- सतसई सार
11. बिहारी- सतसई सुधा 12. संक्षिप्त रामचंद्रिका
13. प्रेमचंद विश्वकोश: पत्र-खंड 14. गाँठ: समीक्षात्मक अध्ययन
15. मैला आंचल-समीक्षात्मक अध्ययन 16. ध्रुवस्वामिनी:समीक्षात्मक अध्ययन
17. यशोधरा: एक अध्ययन 18. कुरुक्षेत्र: एक अध्ययन
19. कालजयी:एक अध्ययन 20. विचार-बिन्दु
21. परम्परा और आधुनिकता, निबंध संग्रह, 1997, उ.प्र. हिन्दी, संस्थान द्वारा पुरस्कृत
22. प्रयोजनमूलक हिन्दी 23. हिन्दी-भाषा का विकास
24. हिन्दी-भाषा एवं साहित्य का इतिहास 25. चिंतन-अनुचिंतन, निबंध संग्रह, 2015

सम्पादित ग्रंथ तथा पत्रिकाएँ-

1. तुलसी-मानस सदंर्भ, 2. सूर-साहित्य संदर्भ, 3. पद्मसिंह शर्मा स्मृति-ग्रंथ, 4. सम्बोधि (तन्त्र शास्त्र), 5. रत्नावली (सूक्ति कोश) 6. बिजनौर टाइम्स: पं. पद्मसिंह शर्मा अंक 7. बिजनौर टाइम्स: पं. रुद्रदत्त शर्मा अंक, 8. अन्तर्ज्वाला: गणतंत्र अंक, 9. वर्धमान (1960-1980)। 200 से अधिक लेख , समीक्षाएँ, कविताएँ आदि विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। 50 से अधिक पुस्तकों की भूमिकाएँ लिखीं।

आकाशवाणी नजीबाबाद से अनेक वार्ताएँ तथा परिचर्चाएँ प्रसारित। रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय की हिन्दी पाठ्यक्रम-समिति तथा हिन्दी शोध-समिति के संयोजक और विद्या-परिषद् एवं कार्यकारिणी-परिषद् के सदस्य रहे।

पूर्व मुख्य अनुसंधाता, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, नई दिल्ली।

पूर्व सदस्य, परामर्श समिति, आकाशवाणी, नजीबाबाद।

अवैतनिक निरीक्षक-प्राचीन हस्तलिखित खोज ग्रंथ-विभाग, नागरी-प्रचारिणी सभा, काशी। 300 पांडुलिपियों के विवरण तैयार कराकर प्रेषित किये।

17 शोध-छात्रों ने निर्देशन में आगरा तथा रुहेलखंड विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

स्वर्गवास- 03 अक्टूबर, 2016ई०